हिंदी के कवि और काव्य

(भाग ३)

श्री गणेशप्रसाद द्विवेदी

हिंदुस्तानी एकेडेमी

संयुक्त प्रांत, इलाहाबाद

१९४१

प्रकाशक—
हिंदुस्तानी एकेडेमी, संयुक्त प्रांत,
इलाहाबाद

मूल्य { कपड़े की जिल्द ३॥)
सादी जिल्द ३)

मुद्रक—
ओंकार प्रसाद गौड़, मैनेजर,
कायस्थ पाठशाला प्रेस व प्रिंटिंग स्कूल, प्रयाग

भूमिका

'हिंदी के कवि और काव्य' के प्रथम और द्वितीय भाग प्रकाशित हो चुके हैं। यह संतोष का विषय है कि विद्वन्मंडली तथा विशेष कर हिंदी साहित्य के विद्यार्थियों के लिये यह उपयोगी सिद्ध हो सके हैं। इसी बीच प्रथम भाग को प्रयाग विश्व-विद्यालय ने हिंदी की एम० ए० परीक्षा के लिये पाठ्य-पुस्तक बनाने का निश्चय कर लिया है। यह प्रथम भाग वीरगाथा काल से संबंध रखता है।

द्वितीय भाग में कबीर आदि प्रमुख संतों की श्रेष्ठ रचनाएँ तथा संत साहित्य का समालोचनात्मक अनुशीलन है। यह भाग हाल ही में प्रकाशित हुआ है, अतः हिंदी जगत् का यथोचित ध्यान अभी तक नहीं आकृष्ट कर सका है।

अब यह तृतीय भाग हिंदी संसार के सामने उपस्थित किया जा रहा है। इस का संबंध हिंदी के प्रेमगाथा या दूसरे शब्दों में आख्यानक काव्य से है। इस में जायसी, नूरमुहम्मद, उसमान, निसार तथा आलम की रचनाएँ संगृहीत हैं।

इन में से निसार कृत 'यूसुफ-ज़ुलेखा' तथा आलम कृत 'माधवानल-काम-कंदला अप्रकाशित ग्रंथ हैं। इस संग्रह में पहले-पहल उक्त दोनों की रचनाएँ प्रकाशित हो रही हैं। स्मरण रहे कि यह आलम 'आलमकेलि' नामक ग्रंथ के रचयिता आलम से भिन्न हैं। खेद है कि अभी तक भ्रमवश सभी हिंदी साहित्य के इतिहास लेखक इन दोनों को अभिन्न मानते आये हैं। समालोचना खंड (पृ० १४) में इस संबंध में विशेष कहा गया है।

इस संग्रह में सुविधा के लिये समालोचना खंड तथा संग्रह खंड अलग-अलग रक्खे गये हैं। पहले पाँचों कवियों की जीवनी तथा गवेषणा आदि फिर संग्रह—ऐसा क्रम रक्खा गया है।

संग्रह का क्रम ऐसा रक्खा गया है कि सब पढ़ने पर मूल कथा का सारांश स्पष्ट हो जाता है।

'माधवानल-कामकंदला' अद्यावधि अप्रकाशित तथा छोटा होने के कारण पूरा ले लिया गया है।

गणेशप्रसाद द्विवेदी

विषय-सूची

नूर मुहम्मद-कृत इंद्रावती

इन्द्रावती का केवल पहला भाग काशी नागरी-प्रचारिणी-सभा से प्रकाशित हुआ है। इसका दूसरा भाग अभी तक प्रकाशित नहीं हो सका है अतः इस की कहानी अभी तक अधूरी ही प्राप्त हो सकी है, जिससे पूरी कहानी का अटकल लगाना कठिन है। पहले भाग में जो अंश सुंदर जान पड़े वह इस संग्रह में ले लिये गये हैं। हाँ, कथा का रचना काल आदि का पता प्रथम भाग से ही चल जाता है।

कवि

इस के रचयिता नूरमुहम्मद अपना जन्मस्थान पूरब में 'सबरहद' नामक एक स्थान बताते हैं--

कबि अस्थान कीन्ह जेहि ठाऊं। सो वह ठाऊं सबरहद नाऊं॥
पूरब दिस कइलास समाना। अहै नसीरुद्दी को थाना॥

पूर्व दिशा में कैलास के समान रम्य यह 'सबरहद' नामक स्थान कहाँ है इसका पता गजेटियर आदि से भी नहीं चलता। यह कोई मामूली गाँव या क़स्बा होगा जो अभी तक कोई प्रसिद्धि नहीं पासका।

यह एक तरुण कवि की रचना है। कवि स्पष्ट कहता है कि मैंने नई तरुणाई की अवस्था में इस की रचना की है। मेरा लड़कपन अभी नहीं छूटा है, मेरी वुद्धि अभी अपरिपक्व है। मैं तो खेल खेलना जानता हूँ 'पोथी कहना' मैं नहीं जानता अतः विद्या वयोवृद्ध गुरुजन मेरी रचना देख कृपया नाक भौं न सिकोड़ें। मैंने तो भूतपूर्व कवियों के खेतों से बालें चुनकर एक बड़ा सा ख़लिहान खड़ा करने का प्रयासमात्र किया है। मेरी अपनी पूँजी बहुत परिमित है, इत्यादि—

कवि है नूर मुहम्मद नाऊं। है पछलग सब को जग ढाऊं॥
चुनि कविजन खेतन सों बाला। करै चहत खलिहान बिसाला॥
है कवि समै नई तरुनाई। छूट न अबहीं कवि लरिकाई॥
जाके हिए लरिक बुधि होई। बहुतै चूक कहत है सोई॥
विनवत कवि जन कहँ कर जोरी। है थोरी बुधि पूँजिय मोरी॥

चूका देखि सँभारिकै, जोरेहु अच्छर टूट।
दाया कर मोहि दीन पर, दोस न लायहु कूट॥

हौं हीना विद्या बुधि सेती। गरब गुमान करौं केहि सेती॥
हौं मैं लरिकाई को चेला। कहौं न पोथी खेलहुँ खेला॥
गुरुजन सों यह बिनती मोरी। कोप न मानहिं भौंह सिकोरी॥

विनयशीलता में यह कवि उसमान से भी बाज़ी मार ले जाता है। पर जो भी हो, एक नवयुवक कवि की कविता में यौवन की स्फूर्ति और उमंग का होना स्वाभाविक है, जिसका परिचय हमें बराबर इस काव्य में मिलता है।

कवि ने अपनी बंशावली या गुरु परंपरा का वर्णन नहीं किया है। स्तुति के रूप में इन्होंने 'सिरजनहार' ईश्वर का स्मरण किया है और उस के बाद अपने 'अरबी' नबी मुहम्मद साहब का स्मरण किया है। 'अपने कुल की रीति' का पालन करने के ये क़ायल थे। ये कहते हैं—

है मगु बहुत जगत महँ, तिन मगु की नहिं चाव।
आपन पंथ देखावहु, राखौं तापर पाँव॥
सुमिरौं चेत धरें मन ठाऊँ। अरबी नबी मुहम्मद नाऊँ॥
जा कहँ करता दरस देखाएउ। कै किरपा सब भेद बताएउ॥

रचना काल

ये अंतिम मुगल सम्राट मुहम्मद शाह के सम-कालीन थे और पैग़म्बर की स्तुति के बाद ही इन्होंने शाह की प्रशंसा की है—

करौं मुहम्मद साह बखानूं। है सूरज दिल्ली सुलतानू॥
धरम पंथ जग बीच चलावा। निबरन सबरै सौ दुख पावा॥
पहिरे सलातीन जग केरे। आये सुहँस बने हैं चेरे॥
इहै साह नित धरम बढ़ावे। जेहि पहराँ मानुस सुख पावै॥
सब काहू पर दाया करई। धरम सहित सुलतानी करई॥

कला प्रेमी, कवि, तथा निपुण संगीतज्ञ मुहम्मद शाह उपनाम "रँगीले" का नाम अब भी प्राचीन परिपाटी के गायकों तथा शायरों की ज़बान पर रहता है। इन का जीवन ही संगीत-साहित्यमय था। इन के रचे हुए सैकड़ों ख्याल अस्थायी अब भी गवैयों को याद हैं। ऐसी अवस्था में कोई आश्चर्य नहीं कि सुदूर पूर्व सबरहद निवासी नूरमोहम्मद तक इन से प्रभावित हुए हों। अस्तु

अपने ग्रंथ का रचना काल नूर मोहम्मद ने सन् ११५७ हिजरी (संवत १८०१) दिया है—

सन इग्यारह सौ रहेउ, सत्तावन उपनाह।
कहै लगेउ पोथी तबै, पाय तपी कर बाँह॥

इस हिसाब से इनकी रचना उसमान १०२२ हिजरी से १३५ वर्ष और जायसी ९४७ हि० से २१० वर्ष बाद की ठहरती है। पंडित रामचंद्र शुक्ल के हिंदी साहित्य के इतिहास में कहा गया है कि 'इस ग्रंथ' (इंद्रावती) को सूफ़ीपद्धति का अंतिम ग्रंथ मानना चाहिये। पर तब तक शायद शेख़ निसार का पता नहीं लग सका था। यह इन के बाद के हैं और अभी तक इन की रचना अप्रकाशित रही हैं। हो सकता है कि इन के 'सूफी पद्धति' के कवि होने में मतभेद हो। पर इतना निश्चय

है कि यूसुफ-जुलेखा सोलहो आने प्रेम-गाथा काव्य हैं और इन का सभी ढंग 'पद्मावत' आदि के समान है। सूफी ढंग के रहस्यवाद का दृष्टिकोण कुछ कवियों के सामने कम रहा है और कुछ के सामने अधिक। आलम और निसार (मुख्यतः आलम) अपेक्षाकृत यदार्थ-वादी कवि हुए हैं। और निसार का कथानक अपना आदर्श ईरानी संस्कृति से अधिक लेता है, बजाय भारतीय के। जो हो, उक्त तिथि से नूर मोहम्मद की जन्म तथा निधन तिथि का अटकल लगाना असंभव है। सिवाय इंद्रावती के इन के रचे हुए अन्य किसी ग्रंथ का पता नहीं चल सका है, अभी तक।

कथा का रूप

उसमान की भाँति इन की कथा भी पूर्णतः काल्पनिक प्रतीत होती है[1]। उधर उसमान कहते हैं 'कथा एक मैं हिए उपाई, और इधर नूरमुहम्मद को स्वप्न में इस की प्रेरणा मिली !

एक रात सपना मैं देखा। सिंधु तीर वह तपिय सरेखा ॥
अहै ठाढ़ मोहि लीन्ह बुलाई। कहेसि कि सिंधु में बूड़हु भाई ॥
असा छोड़ पोढ़ा कै हीया। मोती काढ़हु होइ मरजीया ॥
ससि मोती को हार सँवारहु। इंद्रावति की गोद महँ डारहु ॥
लै मोती दोउ हाथन माहाँ। झारू रतन सीर उपराहाँ ॥
तेहि पल तपसी दरस देखाएउ। मोहि संग एहिबात सुनाएउ ॥
राज कुँवर रानी इंद्रावती। हैं रवि कमल औ भँवर मालती ॥
चुनि परसुन दुइ हार सँवारहु। तिनके ग्रीव बीच लै डारहु ॥
अज्ञा मान तपी कर, चलेउ जहाँ कुलवार।
खुला न पायउँ द्वार को, मालिहि दिएउँ पुकार ॥
माली कहा जएत सन होई। कोहु फूल नहिं बरजित कोई।
तन पलुहा बारी की नाँई। मन भा फूलवारी तेहि ठाँई ॥
किरपा सों बारी मँह, माली दीना साथ।
आडे कीउ न आएउ, भै फुलवारी हाथ ॥

स्पष्ट है कि नूर मोहम्मद को स्वप्न में किसी तपस्वी द्वारा इस कथा की अंतः-प्रेरणा मिली और माली गुरु ने रास्ता दिखाया। कवि का हृदय ही एक फुलवारी है। और वहीं माला गूंथने की सामग्री मिल जाती है। यदि माली द्वार खोल देता है तो दर-दर भटकने की जरूरत नहीं है।

फिर कहते हैं मन ही समुद्र है और उस में गहरा गोता लगाने से ही मुक्तावत्

---

[1] चूंकि कथा अधूरी है और कोई ऐतिहासिक आधार नहीं है अतः इसका संक्षेप देना व्यर्थ समझा गया। हां संग्रहीत अंश इस ढङ्ग से रखे गये है कि कथा का संबंध लगता चला जायगा।

कवि-वचन-सुधा की प्राप्त हो सकती है और उन्हीं मोतियों से दोहा चौपाई की शकल में हार गूंथे जा सकते हैं।

फिर इनके हृदय ने कहा कि दो हार बना कर एक राजकुँवर के और एक इन्द्रावती के गले में पहिनावो।

कथा की उपज के संबंध में कवि के इन प्रवचनों से उसका रहस्यवादी दृष्टिकोण स्पष्ट हो जाता है। कालिंजर नाम अवश्य ऐतिहासिक है (यहाँ का किला देश-प्रसिद्ध है) पर पात्र कल्पित हैं, जैसा कि नाम ही से प्रगट है। राजा का नाम 'भूपति'; राजकुमार का नाम 'राजकुँवर'; और यह नाम ज्योतिषियों ने बहुत विचार तथा गणना के बाद तय किया!

राजैं पंडित बेगि हँकारेउ। पंडित आइ सुजनम विचारेउ॥
कहा पुत्र के हीयरे, बाढ़ै प्रेम वियोग।
रूप एक पर रीझै, वेहि नित साधै योग॥
'राजकुँवर' तेहि राखा नाऊँ। जनम नछत्र घड़ी के भाऊँ'।

ख़ैर, कालिंजर के इन्हीं राजकुंवर का प्रेम 'आगमपुर'[1] की राजकुमारी से होता है; स्वप्न दर्शन विधि के अनुसार। फिर नाना प्रकार की चौरासी भागते हुए (वही जोगी खंड, सुवा खंड युद्ध, खंड आदि होते हुए) अंत में इन का मिलन होता है।

आगमपुर इंद्रावती कुवर कलिंजर राय।
प्रेम हुतें दोउन्ह कहँ, दीन्हा अलख मिलाय॥

यहां पर 'अलख' शब्द ध्यान देने योग्य है। 'अलख' 'निरंजन' माया आदि नाथपंथियों और फिर कबीर दादू आदि संतों की बोली में ही ज्यादातर आते हैं; और सूफ़ी कवि भी इनकी विचारधारा से काफी प्रभावित हैं। फिर इस संबंध में कवि के निम्नलिखित प्रवचन भी ध्यान देने योग्य हैं—

आपुहु भोग रूप धरि, जग मो मानत भोग।
आपुहि जोगी भेस होई, निस-दिन साधत जोग॥
अलख प्रेम कारन जग कीन्हा। धन जो सीस प्रेम महँ दीन्हा॥
जाना जेहिक प्रेम महँ हीया। मरै न कबहूँ सो मर जीया॥
प्रेम खेत है यह दुनियाई, प्रेमी पुरुष करत बोवाई।
जीवन जाग प्रेम को अहई। सोवन मोच वो प्रेमी कहई॥
आग तपन जल चाल समूझो। पुनि टिका मौंटी कहं बूझो॥

इन पंक्तियों से स्पष्ट है कि कवि नाथ पंथियों या संतों के एकेश्वर वाद को मानता हुआ भी हठयोगी मार्ग का क़ायल नहीं था। उस की प्रणाली प्रेम की

---

[1] यह नाम भी काल्पनिक है, ऐतिहासिक नहीं।

थी। और प्रेम ही उस का मार्ग तथा ध्येय दोनों एक साथ था। इस से यह स्पष्ट हो जाता है कि सूफी दृष्टिकोण के रहस्यवाद में एक साथ ही कबीर और खैयाम के रहस्यवाद का कितना मधुर सम्मिश्रण है।

प्रबंधशैली

इन्होंने भी प्रबंधरचना जायसी और उसमान के ढंग पर ही किया है। खंड-विभाग और कथा का किकास प्रायः समान है। भाषा की प्रौढ़ता उसमान से घट कर है। नव-युवक कवि की रचना तो है ही। ढाँचे में एक ख़ास फर्क है कि इन्होंने पाँच-पाँच चौपाई के बाद दोहा बैठाया है और जायसी आदि ने सात-सात के बाद। हाँ निसार ने नौ चौपाई का क्रम रक्खा है; और इन्होंने (निसार ने) दोहा चौपाई के सिवा सोरठा, कवित्त सवैया आदि अन्य छंदों का भी यथास्थान उपयोग कियाँ है और उन स्थानों पर इन की भाषा में ब्रजभाषा की छटा आये बिना नहीं रह सकी है।

भाषा

पर नूर मोहम्मद की भाषा शुद्ध अवधी है और उसमान की भाँति परिमार्जित नहीं है। ठेठ और ग्रामीण प्रयोग बहुत आये हैं। इन्होंने कहा भी तो है कि 'पोथी कहना' मेरा काम नहीं; मैं ने तो खेल खेल में यह कथा लिख डाली है।

उसमान-कृत चित्रावली

अन्य प्रेमगाथाओं की भांति चित्रावली में भी कवि ने ग्रंथ का रचनाकाल और व्यक्तिगत परिचय तथा निवासस्थान आदि का पर्याप्त विवरण दे दिया है। इन्होंने अपनी कथा के आदर्शस्वरूप तीन कथाओं का स्मरण आरंभ में किया है। मृगावती (मिरगावति) मधुमालती और पद्मावत। इन में से जायसी कृत पद्मावत अभी तक इस कोटि का पहला काव्य माना जाता था (९४७ हिजरी या १५४० ईसवी) पर जायसी ने स्वयं अपने काव्य में कुछ कथाओं का उल्लेख किया है। जब तक ये ग्रंथ मिले नहीं थे तब तक जायसी की इन पंक्तियों पर यथोचित ध्यान आलोचकों ने नहीं दिया। जायसी ने कहा है—

> विक्रम धँसा प्रेम के बारा, सपनावति लगि गयो पतारा।
> सिरी भोज खँडरावति लागी, गगनपूर होइगा बैरागी॥
> राजकुँवर कंचनपुर गैऊ, मिरगावति तजि जोगी भैऊ॥
> साधा कुंवर मनोहर जोगू, मधुमालति कहँ कीन्ह वियोगू॥

इस में से मिरगावति का पता काशी नागरीप्रचारिणी सभा को सन १९०० में लगा। इस के रचयिता कुतुबन के अनुसार इसकी रचना ९०९ हिजरी अर्थात् १५०२ ईसवी में हुई।

मधुमालती की भी एक खंडित प्रति चित्रावली के संपादक श्री जगमोहन वर्मा को मिली थी (सन् १६१२) इस के आदि अंत के पन्ने गायब होने के कारण रचना काल तथा कवि का परिचय आदि ठीक न प्राप्त हो सका। कवि का ठीक नाम भी नही मालूम हो सका। 'मंझन' नाम मिलता है जो स्पष्टतः उपनाम सा जाँचता है। कवि अपना परिचय आमतौर से आदि या अंत के पन्नों में देता है और वही पन्ने गायब हैं। प्रतिलिपिकार ने एक जगह ११ रबी उस्सानी सन् १०६९ हिजरी की तारीख़ लिखी है। इस हिसाब से इसकी प्रतिलिपि सन् १६५३ ई० की ठहरती है तो फिर असल रचना काफी पहले की होगी। पर इस संबंध में ज्यादा से ज्यादा अटकल ही हो सकते हैं। जो हो, आशा यह की जा सकती है कि शायद किसी दिन सपनावति और खँडरावति का भी अनुसंधान मिल जाय।

पर उसमान ने सपनावति और खँडरावति का स्मरण नहीं किया। शायद इनके समय तक इन कथाओं को लोग भूल चुके हों या कवि ने इनको इतनी महत्वपूर्ण न समझा हो।

मृगावली मुख रूप बसेरा। राज कुवँर भयो प्रेम अहेरा॥
सिंघल पदुमावति भो रूपा। प्रेम कियो है चितउर भूपा॥
मधुमालति होइ रूप दिखावा। प्रेम मनोहर होइ तहँ आवा॥

कवि

उसमान अपना जन्म स्थान गाजीपुर बतलाते हैं। तत्कालीन नगर का बड़ा सुन्दर और सजीव वर्णन इन्होंने किया है।

गाज़ीपुर उत्तम अस्थाना। देवस्थान आदि जग जाना॥
गंगा मिलि जमुना तहँ आई। बीच मिली गोमती सुहाई॥
तिरधारा उत्तम तट चीन्हा। द्वापर तहँ देवतन्ह तप कीन्हा॥ इत्यादि

शेख

इनके पिता का नाम शेख़ हुसेन था और ये पाँच भाई थे। हुसेन के पाँचो पुत्र योग्य और किसी न किसी कला में पारंगत थे।

कवि उसमान बसै तेहि गाऊँ। सेख हुसेन तनै जग नाऊँ॥
पाँच भाई पाँचो कवि हीये। एक-एक भाँति सो पाँचो लीये॥
शेख़ अजीज पढ़े लिखि जाना। सागर सील ऊँच कर दाना॥
मानुल्लह बिधि मारग गहा। जोग साधि जो मौन होइ रहा॥
शेख़ फैजुल्लह वीर अपारा। गनै न काहु गहे हथियारा॥
शेख़ हसन गायन भल अहा। गुन बिद्या कहँ गुनी सराहा॥

अन्य मसनवी कवियों की भाँति उसमान ने अपनी या अपने पिता की वंश-परंपरा या गुरू परंपर की तालिका नहीं दी है। निसार अपने को विख्यात मौलवी रूम का वंशज कहता है। जायसी प्रसिद्ध औलिया शेख़ निज़ामउद्दीन चिश्ती की शिष्य परंपरा में थे। पर इस तरह की कोई बात उसमान ने अपने संबंध में नहीं कही है। यहाँ, ग्रंथारंभ में, शाह निज़ामउद्दीन चिश्ती तथा एक बाबा हाजी की प्रशंसा इन्होंने की है। हाजी बाबा को इन्होंने अपना गुरू कहा है।

बाबा हाजी सिद्ध अपारा। सिद्ध देत जेहि लाग न पारा॥
मोहि माया कै एक दिन, श्रवन लागि गहि माथ।
गुरू मुख बचन सुनाय कै, कलिमहँ कीन्ह सनाथ॥

निसार ने अपने को अरबी फ़ारसी आदि अन्य भाषाओं का ज्ञाता तथा इन भाषाओं में ग्रंथ रचना करने की बात भी कही है, पर उसमान (उपनाम "मान") ने इस तरह का कोई दावा नहीं किया। यह बहुत निरभिमानी और ख़ाकसार तबियत के कवि थे। अपनी विद्याबुद्धि आदि के संबंध में इन्होने सिर्फ इतनाही कहना उचित समझा कि चार अच्छर पढ़ना हमने भी सीख लिया था और सो भी माथे में लिखा था इस वजह से हो गया।

आदि हुता बिधि माथे लिखा। अच्छर चारि पढ़े हम सिखा॥
देखत जगत चला सब जाई। एक बचन पै अमर रहाई॥
बचन समान सुधा जग नाहीं। जेहि पाय कबि अमर रहाहीं॥
औ जो यह अमिरित सों पागे। सोऊ अमर जग भये सभागे॥
पढ़ि गुनि देखा 'मान' कवि, बैठि खोई संसार।
और जगत सब थोथरा, एक बचन पै सार॥

उक्त पंक्तियों से कवि की उच्चता और विनयशीलता दोनों एक साथ ही प्रकट होती है। पर इतना तो इनकी कविता से ही प्रकट है कि इनकी शिक्षा दीक्षा इस वर्ग के शायद सभी कवियों से ऊँचे दर्जे की थी।

रचना काल

कविने इस ग्रंथ का रचना काल सन् १०२२ हिजरी दिया है। और तदनुसार ईसवी सन् १६१५ की यह रचना मानी जायगी[1]।

सन् सहस्र बाइस जब अहे। तब हम बचन चारि एक कहे॥
कहत करेजा लोहु भा पानी। सोई जान पीर जिन्ह जानी॥
एक एक बचन मोति जनु पोवा। कोऊ हँसा कोउ पुनि रोवा॥
बहुतन्ह सुनि कै दुख मन लावा। के कवि कह जग दोष नसावा॥
मोरी बुद्धि जहाँ लहु अही। जहँ लहु सूझि कथा मैं कही॥
हर हर बचन कहौं अति रूखा। दूखन कहे सेराय न दूखा॥
जाकी बुद्धि होइ अधिकाई। आन कथा एक कहै बनाई॥

हम देखते हैं कि जायसी की रचना इनसे केवल ७५ वर्ष पहले की है और और यही कारण है कि इनकी शैली भाषा तथा प्रबंधकौशल आदि जायसी से बहुत कुछ मिलते जुलते हैं। अंतर यही है कि इनकी भाषा जायसी से बहुत कुछ परिमार्जित सी है; और व्याकरण तथा शैली में ग्रामीणता की छाप उतनी नहीं है।

एक मुख्य अंतर यह है कि इनकी कथा पूर्णतः काल्पनिक है और यह सब उसमान के उर्बर मस्तिष्क की उपज है। जायसी की भाँति कुछ ऐतिहासिक आधार और कुछ कल्पना, दोनों की खिचड़ी बनाना इन्होंने उचित नहीं समझा। और यह ठीक भी है। यदि ऐतिहासिक कथा लेना है तो उसका निर्वाह यथावत होना चाहिये। पर ऐतिहासिक आधार का निर्वाह करने में जायसी असफल हुए हैं। इतिहास और कल्पना का कुछ ऐसा बेतुका सम्मिश्रण जायसी ने किया

---

[1] ना० प्र सभा से प्रकाशित चित्रावली की भूमिका में इसका रचना काल ई० १६१३ दिया गया है जो शायद संपादक की गणना की भूल है।

है कि कहानी में वह तासीर नहीं पैदा होती जो होनी चाहिये। पर उसमान ने अपनी कथा का ढाँचा तैयार करने और शब्द चयन करने में असाधारण परिश्रम किया है और इसका उनको उचित गर्व भी है, जैसा कि ऊपर उद्धृत की हुई पंक्तियों से स्पष्ट है। और साथ ही ये मानों अन्य कवियों को चुनौती देते हुए से कहते हैं:—

जाकी बुद्धि होइ अधिकाई। आन कथा एक कहै बनाई॥

यहां "बनाई" शब्द ध्यान देने योग्य है। पुराण और इतिहास से बनी बनाई सामग्री लेकर तो बहुतों ने प्रेमगाथा लिखी, पर कोई इस तरह निराधार रूप से रच कर गाथा लिखै तो हम जानै। वह स्पष्ट कहते हैं :

कथा एक मैं हिए उपाई। कहत मीठ औ सुनत सोहाई॥
कहौं 'बनाय' जैस मोहि सूझा। जेहि जस सूझ सो तैसे बूझा॥

यह कथा कवि के हृदय से उपजी जिसे उन्होंने बनाकर कहा। अस्तु

कवि की जन्म और निधनतिथि निर्णय करने का हमारे पास कोई साधन नहीं है। ऊपर दिए हुए रचना काल के अनुसार हम केवल यह जान सके हैं कि यह जहाँगीर के समय में विद्यमान थे।

कथा का सारांश

नेपाल का राजा धरनीधर पँवार कुल का क्षत्रिय था। वह निस्संतान था, और इस कारण बड़ा दुखी रहता था। अंत में इस दुख से उसे इतनी ग्लानि हुई की वह राज-पाट छोड़ कर जंगल में जाकर तप करने को उद्यत हुआ, पर मंत्रियों के बहुत समझाने बुझाने से राज्य में क्षेत्र (सत्र) स्थापित कर शिव की आराधना में दत्त-चित्त हुआ। अंत में शिव-पार्वती इस के उग्र तप से प्रभावित होकर इसकी परीक्षा लेने आये, और भेंट स्वरूप इसका सिर माँगा। यह तलवार उठा कर अपना सिर काटने ही को था कि भगवान शिव ने इसका हाथ थामा और बोले, 'तुझे पुत्र-रत्न प्राप्त होगा जो कुछ दिन योगाभ्यास करेगा और एक अनिंद्य सुंदरी के प्रेमपाश में भी बिद्ध होगा।'

भगवान की दया से राजा धरनीधर के एक पुत्र हुआ जिसकी कुंडली आदि बनाकर ज्योतिषियों ने 'सुजान' नाम रखा। समय पाकर यह राजकुमार कामदेव की भाँति सुंदर, महापराक्रमी और अपूर्व विद्या-बुद्धि-संपन्न हुआ।

एक दिन की घटना है कि सुजान शिकार खेलने जा कर रास्ता भूल कर किसी देव की मढ़ी में जा सोया। उस देव ने उसकी असहाय अवस्था देख कर उस पर बड़ी दया की, और हर प्रकार से उसकी रक्षा का भार लिया। इसी बीच उस देव का कोई मित्र वहाँ आया और उसने कहा कि आज रूपनगर में राजकुमारी चित्रावली की वर्षगाँठ का जलसा है, चलो उसे देख आवें। पर उसने कहा कि हमने इस राजकुमार की रक्षा का भार ले रक्खा है, इसे कहाँ फेकें। उसने

कहा इसे भी वहाँ ले चलो, सो तो रहा ही है, कहीं रख देंगे और लौटते वक्त फिर लेते आवेंगे। यही राय तय पाई और वे दोनों देव आकाशमार्ग से सुजान को ले उड़े और वहां जाकर चित्रावली की चित्रसारी में इसे सुला दिया और खुद उत्सव देखने बाहर चले गये।

इधर रात में सुजान की नींद जब टूटी तो वह अपने को इस अपूर्व चित्रशाला में पड़ा देख बड़ा चकराया, पर सामने ही चित्रावली का मनमोहक चित्र देख कर मुग्ध हो गया और उसी के बग़ल में अपना चित्र खींच कर फिर सो गया। इधर सुबह देव लोग उसे फिर वहीं उड़ा ले गये। उठने पर सुजान को सब बातें याद आईं और उसे स्वप्न का भ्रम हुआ पर कपड़ों में रंग और तूलिका का दाग़ वगैरह लगा देख कर सच्ची घटना का निश्चय हो गया और उसे चित्रावली की याद सताने लगी।

इधर राज्य में कुमार के लापता होने के कारण सब लोग व्याकुल होकर ढूंढने चले और कुछ सेवक उस मढ़ी तक आ पहुँचे और उसे राज्य में ले आये पर वह प्रेम की पीर से बेसुध पड़ा रहा। सुजान का एक मित्र सुबुद्धि नाम का ब्राह्मण था, उसने युक्ति से सब बातें सुजान से पूँछ ली। और एक राय कर दोनों फिर उसी मढ़ी में पहुँचे। और वहां पहुँच कर उन दोनों ने अन्न-सत्र जारी किया।

इधर कुमार का चित्र देख कर चित्रावली का भी यही हाल हुआ। उसने अपने नपुंसक भृत्यों को कुमार की खोज में रवाना किया जिनमें से एक इस मढ़ी तक पहुँच भी गया। इसी बीच एक कुटीचर ने चित्रावली की माता हीरा से शिकायत कर दी जिससे उसने कुमार का चित्र धुलवा डाला। पर इस अपराध में कुमारी ने उसका सिर मुड़वा कर उसे राज्य से निकलवा दिया। इधर यह जोगी कुमार के पास पहुँचा और उसे रूपनगर में लाकर युक्ति से शिव के मंदिर में चित्रावली से साक्षात्कार करवा दिया। पर इसी बीच उस कुटीचर ने उसे अपना शत्रु मान कर उसे अंधा बना एक पहाड़ की कंदरा में डाल दिया जहाँ इसे एक अजगर निगल गया, पर इसमें विरह की आग इतनी भयंकर थी कि अजगर ने तुरंत उगल दिया। इस घटना को एक बनमानुस देखता था और उसने एक ऐसा अंजन दिया जिससे उसकी दृष्टि फिर पूर्ववत् होगई। पर इसके बाद इसे एक हाथी ने पकड़ा और उस हाथी को एक पक्षिराज ले उड़ा। तब हाथी ने उसे छोड़ दिया और वह एक समुद्र तट पर गिरा और घूमता हुआ सागर गढ़ राज्य में पहुँचा जहां की राजकुमारी अपनी फुलवाड़ी में इसे घूमता देख इस पर मोहित हो गई। कुमार उस समय योगी वेश में था। कौलावती ने योगियों की एक दावत की जिसमें इसको भी शरीक किया। पर इसके भोजन में अपना हार छिपा कर रख दिया था और इस प्रकार इसे चोरी में फँसा कर क़ैद करवा लिया। फिर कौलावती के रूप गुण से मुग्ध होकर सोहिल नाम का राजा सैन्य लेकर सागरगढ़ पर चढ़ आया; पर सुजान ने इसे अपने बाहुबल से मार गिराया। इस पर कौलावती के पिता ने प्रसन्न होकर

सुजान के साथ उसका विवाह कर दिया पर उसने कौलावती से प्रतिज्ञा कर ली थी कि वह चित्रावली के मिलन से विरोध न करेगी।

कुमार कौलावती के साथ गिरनार पहुँचा और वहां चित्रावली के भेजे हुए दूत से उसकी भेंट हुई और उसने उसका समाचार चित्रावली के पास पहुँचाया। फिर किसी प्रकार वह योगी कुमार को लेकर रूपनगर की सीमा पर पहुँचाया और यह खबर चित्रावली को मिली। अब रूपनगर के राजा को चित्रावली के विवाह की चिंता सता रही थी। उसने चार चित्रकार राजकुमारों के चित्र लाने के लिये भेजे। इधर रानी हीरा कुमारी को खिन्न देख कर उसका हाल पूँछ रही थी पर वह अपने मन का भेद बताती नहीं थी। इसी समय सुजान को एक जगह बैठा कर वह दूत कुमारी को खबर देने आ रहा था। रानी ने उसे मार्ग में ही पकड़वा कर क़ैद करा दिया। पर वह पागल हो चित्रावली नाम ले लेकर भागने लगा। राजा तक ख़बर पहुँची। उसने अपजस के डर से इसे मरवा डालने की ठानी और इस पर हाथी छोड़वा दिया, पर सुजान ने अपने बाहुबल से इसे मार गिराया। इस पर राजा स्वयं इसे मारने चला पर इसी बीच एक चितेरा सागरगढ़ से एक कुमार का चित्र लाया जिसने सोहिल को मारा था। देखने पर वह चित्र इसी का निकला। राजा ने उचित पात्र समझ कर चित्रावली का विवाह इसके साथ कर दिया।

इसके कुछ दिन बाद विरहाकुल कौलावती ने कुमार की ख़बर लाने को हंस-मित्र को दूत बना कर भेजा। कुमार ने अपने पिता और कौलावती का स्मरण कर रूपनगर से बिदा ली और वहां से सागरगढ़ आ कौलावती को बिदा करा लिया और अपने राज्य को रवाना हुआ। पर रास्ते में असंख्य विघ्न बाधाएं उपस्थित हुई। समुद्र में तूफान आया पर किसी प्रकार सब से बच कर वह जगन्नाथ पुरी में पहुँचे जहाँ पुरोहित काशी पाँडे से इनकी भेंट हुई। वहां से अपने राज्य में पहुँचे और शोक-संतप्त माता-पिता से मिले। दुख से रोते-रोते माता अंधी होगई थी पर इनके आने की ख़ुशी में इसकी आँखें ठीक होगई और सुजान अपनी रानियों सहित आनंदोपभोग करने लगा।

इस कथा के सरांश से ही यह स्पष्ट हो जाता है कि यह आद्योपान्त काल्पनिक है और इसमें अनेक अस्वाभाविक और बेतुकी बातें भरी पड़ी हैं पर यह सब होते हुए भी कथा बड़ी रोचक बन पड़ी है, और कहीं भी जी नहीं ऊबता। इनकी प्रबंध-शैली कुछ ऐसी हो पड़ी है कि बालक, युवा वृद्ध, योगी, भोगी सभी वर्ग के लोग इसका आनंद ले सकते हैं। कवि स्वयं कहता है—

बालक सुनत कान रस लावा। तरुनन्ह के मन काम बढ़ावा॥
विरिध सुनै मन होइ गियाना। यह संसार धंधा कै जाना॥
जोगी सुनै जोग पँथ पावा। भोगी कहँ सुख भोग बढ़ावा॥
इच्छा तरु एक आइ सोहावा। जेहि जस इच्छा तेस फल पावा॥

कथा का आध्यात्मिक दृष्टिकोण

न्यूनाधिक रूप से सभी सूफी कवियों की रचना में अध्यात्मवाद की कुछ न कुछ झलक आ ही जाती है। शाह निज़ामुद्दीन चिश्ती की शिष्य परंपरा में होने के कारण हम इनको जायसी का गुरु भाई भी कह सकते हैं और इनका अध्यात्मिक दृष्टिकोण भी जायसी से बहुत कुछ मिलता है। इनकी सारी कथा भी अन्योक्ति के रूप में समझी जा सकती है और कवि का अभिप्राय हर बात से ऐसा ही प्रतीत होता है कि श्रोतागण इसे इसी रूप में समझें बूझें। और यही मुख्य कारण जान पड़ता है कि इन्होंने किसी ऐतिहासिक घटना या इतिहास प्रसिद्ध नायक-नायिका का सदुपयोग या दुरुपयोग करना उचित नहीं समझा। जायसी ने बड़ी भूल की थी। इन्हें प्रतिपादन तो करना था एक विशेषवाद (सूफीवाद) जो वेदांत, रहस्य, अध्यात्म या एकेश्वरवाद आदि कई 'वादों' की पँचमेल खिचड़ी है और पात्र तथा घटनाएं इन्होंने इतिहास से लीं। आधी कथा लिखने के बाद इन्हें शायद अपनी भयानक भूल का पता चला और इन्होंने यथासंभव कल्पित नाम और घटनाओं का आश्रय लिया। जायसी की इस फजीहत से उसमान ने पूरा लाभ उठाया। ऐतिहासिक महा-काव्य और मसनवी ढंग की प्रेमा गाथा दो जुदा चीजें हैं; और इस पार्थक्य को उसमान ने भलीभाँति समझा था। दोनों को मिला कर चलाने या दोनों का सामंजस्य किसी प्रकार स्थिर रखते हुए अंत में सूफी एकीश्वरवाद के सिद्धांत का निष्कर्ष निकालना एक असंभव बात है। यही जायसी से भूल हुई पर उसमान ने इस भूल को पहचाना और पहले से तैयार होकर खूब सोच समझ कर कहानी का प्लाट और पात्रों के नामकरण आदि को अपने आध्यात्मिक निष्कर्ष को दृष्टिपथ में रखते हुए किया। और व सफल हुए।

चरितनायक 'सुजान' का नाम बहुत सोच समझ कर रक्खा गया है। वह शिव का 'अंश' अतः born जोगी या पैदाइशी साधक हैं। कौलावती और चित्रावली इन दोनों नायिकाओं को हम अविद्या और विद्या के रूप में देखते हैं। कौलावती से विवाह तो हुआ पर शर्त यह रही कि जब तक चित्रावली न मिलेगी तब तक सहवास नहीं होगा। 'सुजान' अर्थात् वास्तविक ज्ञानी बिना विद्या के प्राप्त किए अपनी साधना पूरी नहीं समझता। इसी प्रकार विचारने से सभी पात्र-पात्री तथा उनका सारा कार्य-कलाप हम आध्यात्मिक साधना, तज्जनित विघ्न-बाधाएं और अंतिम निर्वाण के रूप में पढ़ सकते हैं। सरोवर-क्रीड़ा वाले खंड में इन्होंने बड़ी सुंदर रीति से ईश्वर की प्राप्ति की ओर संकेत किया है।

इस कथा की कविता और भाषा आदि के संबंध में हमें कोई नई बात नहीं कहनी है। भाषा, व्याकरण, प्रबंध, शैली, खंड-विभाग आदि सब ढंग जायसी का ही है; केवल अंतर यही है कि इनकी भाषा विशेष परिमार्जित और प्रौढ़ है। यह

तुलसी के समसामयिक थे और संस्कृत का ज्ञान यदि इन्हें होता तो इनकी भाषा प्रौढ़ता में उनके आस-पास पहुँचती।

इनकी जानकारी बढ़ी-चढ़ी थी, समय-समय पर लोकोक्तियाँ ये 'बड़े मार्के से' बैठाते गये हैं। एक जगह इन्होंने अंग्रेजों का भी वर्णन किया है—

> बुलंदीप देखा अँगरेजा। तहाँ जाइ जेहि कठिन करेजा॥
> ऊँच नीच धन संपति हेरा। मद बराह भोजन जेहि केरा॥

सन् १६१२ में ईष्ट इण्डिया कम्पनी ने सूरत में अपनी गुदाम खोली थी, और सन् १६१३ की यह रचना है। कहाँ सूरत और कहाँ ग़ाज़ीपुर; और इस समय न रेल, न पोस्ट, न तार न अख़बार। इनका भौगोलिक ज्ञान भी असाधारण था, जैसा कि संग्रह से जान पड़ेगा। 'जोगी ढूंढ़न खंड' में इन्होंने काबुल, बदख़शाँ, ख़ुरासान, रूस, साम, मिस्र, इस्तंबोल, गुजरात, सिंहल आदि-आदि अनेक देशों का वर्णन किया है।

यों तो सभी सूफी कवि विरह वर्णन में क़लम तोड़ देते हैं, पर इस के सिवा इनके अन्य वर्णन भी मार्के के हुए हैं; यथा विदाई के समय रानी हीरा के उपदेश आदि। ये अंश हमें तुलसी की याद दिलाते हैं। इसके सिवा विरह वर्णन के अंतर्गत इनका यह ऋतु-वर्णन कुछ नवीन और बड़े सुंदर ढंग से हुआ है।

आलम कृत माधवानल-कामकंदला

इस कवि के संबंध में आरंभ से ही हिंदी संसार में एक भ्रांत धारणा फैली हुई है, और वह यह कि 'माधवानल-कामकंदला' के आलम और 'आलमकेलि' के लेखक आलम दो अभिन्न व्यक्ति हैं! आलम केलि के रचयिता तथा शेख रँगरेजिन के प्रेम में पड़ कर मुसलमान हो जाने वाले आलम (जो पहले जाति के ब्राह्मण थे) का रचना काल संवत् १७४०–६० तक माना गया है। पर माधवानल-कामकंदला के रचयिता आलम का रचना काल सं० १६४० या ई० १५८४ था। इनका शेख रँग-रेजिन से कोई सरोकार नहीं था और न इनके जाति के ब्राह्मण होने का ही कोई प्रमाण है।

हिंदी साहित्य के सभी इतिहास लेखकों ने आलम के संबंध में यह भद्दी भूल की है। स्पष्ट है कि यह भूल प्रथम इतिहास लेखक से आरंभ हुई और बाद के सभी इतिहास लेखक आँख मूंद कर इस भूल का अनुकरण करते गये।[1]

अस्तु, आलम केलि के रचयिता विशुद्ध ब्रज भाषा में शृङ्गार संबंधी फुट कर पदों की रचना करते थे, पर प्रस्तुत आलम अवधी के कवि थे और इनका रचनाकाल उनसे ठीक सौ वर्ष पहले का था।

[सन नौ सै इक्यानुवै आइ। करौं कथा अब बोलौं ताहि ॥

सन् नौ सै इक्यानवे हिजरी और तदनुसार सं १६४० में इन्होंने इस ग्रंथ की रचना की। उस समय दिल्ली के सिंहासन पर सम्राट अकबर विराजमान थे और इनके अर्थसचिव राजा टोडर मल हमारे कवि के आश्रयदाता थे। ग्रंथारंभ में कवि ने दोनों की प्रशंसा की है।

दिल्लिय पति अकबर सुरताना। सप्त दीप मैं जाकी आना ॥
सिंहन पति जगन्नाथ सुहेला। आपनु गुरू जगत सब चेला।
जब घर भूमि पयानौ करई। वासुक इंद्र आसन थर थरई ॥]

---

[1] यदि किसी भी साहित्य के इतिहास लेखक ने 'माधवानल-कामकंदला' को देखने का कष्ट उठाया होता तो इस भ्रांति का निराकरण कभी का हो गया होता। पर कटु सत्य यह है कि आज के हिंदी साहित्य के इतिहास' ग्रंथों के अध्ययन के फलस्वरूप नहीं लिखे गये हैं, बल्कि पिछले लेखकों की नक़ल के आधार पर। वास्तव में साहित्य के इतिहास लेखन से बढ़ कर कर श्रमसापेक्ष और उत्तरदायित्व पूर्ण कोई दूसरा काम नहीं है, पर हिंदी में तो जितने साहित्य के स्रष्टा नहीं हैं उनसे अधिक इतिहास लेखक हो रहे हैं और नक़ल से बढ़ कर आसान कोई काम होता भी नहीं!

धर्म राज सब देस चलावा। हिंदू तुरुक पंच सबुलावा॥
आगरेंवु महामति मडनु। नृप राजा टोडर मल डंडनु॥

रचनाकाल, तत्कालीन दिल्लीसम्राट तथा आश्रय दाता राजा टोडर मल आदि का उल्लेख कवि ने अपने ग्रन्थ में इतनी स्पष्ट रीति से किया है कि इनके समय के बारे में संदेह करने की कोई गुंजाइश नहीं है। हाँ, इतना अवश्य है कि केवल इनके रचनाकाल की तिथि ही जानी जा सकती है, जन्म-मरण-तिथि नहीं। इन्होंने अपनी वंशावली या गुरु-परंपरा के संबंध में भी कुछ नहीं कहा है।

कथा

आलम की यह रचना मौलिक नहीं है। इस नाम का एक नाटक संस्कृत में है और इसी की कथा के आधार पर इन्होंने इस काव्य की रचना की। पर इसका तद्वत अनुकरण नहीं किया है। अपनी आवश्यकतानुसार कुछ घटाया-बढ़ाया है। वह साफ़ कहते हैं कि कुछ अपनी और कुछ 'परकृति' मैंने 'चुराई' है।

कुछ अपनी कुछ परकृति चोरौं। यथा सकति करि अच्छर जोरौं।
सकल सिंगार विरह की रीति। माधौ काम कंदला प्रीति॥

हो सकता है कि आलम संस्कृत के विद्वान रहे हों, क्योंकि इनकी रचना में संस्कृत के शब्द इस शाखा के अन्य कवियों से अधिक आते हैं पर यह कोई जरूरी नहीं है, क्योंकि यह साफ़ कहते हैं कि संस्कृत की कथा 'सुन' कर मैंने भाषा चौपाई में इसका रूपांतर किया—

कथा संस्कृत सुनि कछु थोरी। भाषा बाँधि चौपही जोरी॥

कथा का सारांश

पुष्पावती नामक नगर में गोपीचंद नामक एक राजा राज्य करता था। वह बड़ा न्यायपरायण और धर्मनिष्ठ था। उसी नगर में माधव नामक एक बैरागी ब्राह्मण रहता था। वह नित्य प्रातःकाल राजा के पास जाकर पूजा कराता था। माधव बड़ा विद्वान और संगीत कला में पारदर्शी था। वेद, पुराण, ज्योतिष, व्याकरण, सामुद्रिक आदि विविध शास्त्रों में भी वह निपुण था। विद्या में वृहस्पति और रूप में कामदेव के समान था। अभूत पूर्व वीणा वादक था। उसकी बीन सुन कर नगर की स्त्रियाँ अपना काम छोड़ देती थीं और सब बेहाल हो जाती थीं। कोई मूर्छित होकर गिर पड़ती थी और उसके पीछे-पीछे घूमती थी। अंत में नौबत यहाँ तक पहुँची कि माधव का मोहक स्वरलाहरी शहर के लिये अभिशाप हो गई। लोगों के घर-गृहस्थी की शांति भंग होने लगी। किसी को वक्त पर खाना नहीं मिल रहा है, किसी के घर की बीबियाँ घर का काम धंधा छोड़ कर बेसुध पड़ी हुई हैं। सब हैरान थे। अंत में नगर निवासियों का डेपुटेशन राजा के यहाँ इस आशय का गया

कि या तो आप इस बला को (माधव को) यहाँ से हटाइए या तो हम लोग सब आपका राज्य छोड़ कर दूसरे देश को जाते हैं। राजा बड़े धर्म संकट में पड़ा, पर अंत में यह निर्णय किया कि अकेले माधव के लिये सारी प्रजा को देश निकाला दे देना ठीक न होगा पर इसके पहले उन्होंने माधव पर लगाए गए इलजाम की जाँच कर लेना मुनासिब समझा। इस दृष्टि से उन्होंने बीस नव-यौवना सेविकाओं को बुलवा कर एक कतार में कमल के पत्तों पर बिठलाया। इधर माधव को सामने बैठा कर वीणा का आलाप करने कहा। आलाप शुरू हुआ, कुछ ही देर बाद सभी स्त्रियाँ स्पष्ट रूप से कामार्द्रा हो गईं। अब राजा को निश्चय हो गया और उसने माधव से हाथ जोड़ लिया।

तब राजा गयो पौरि पगारैं। तुम को ठोर न विप्र हमारें॥
तीन पान को बीरा लयो। राइ हाथ माधौ के दयौ॥

इस प्रकार विचारा माधव पुष्पावती से विदा हुआ, और अपना वीणा संभाल कर एक ओर को चल दिया। वह चलते-चलते कामावती नामक नगरी में पहुँचा और वहाँ विश्राम करने के लिये ठहर गया।

उस नगर में कामकंदला नाम की वारांगना रहती थी जो रूप लावण्य और संगीत तथा नृत्यकला दोनों ही में अद्वितीय थी। एक दिन राजा के दरबार में जलसा था जिसमें कामकंदला का नृत्य होने को था। शहर के अनेक लोग देखने जा रहे थे। माधव स्वयं संगीत कला का अन्यतम साधक था। उसे भी उत्सुकता हुई और अपनी बीन कंधे पर रख दरबार के दरवाजे पर पहुँचा पर अपरिचित होने के कारण दरवानों ने भीतर जाने से रोक दिया। खैर वह बाहर ही बैठ कर सुनने लगा। भीतर कामकंदला का नृत्य हो रहा था और संगत में बारह मृदंग एक साथ बज रहे थे। पर इनमें से एक पखावजी के जो चौथे के बाद बैठा हुआ था, चार ही उँगलियाँ थीं जिससे उसकी थाप बेसुरी और बेताली पड़ती थी। माधव के कान इतने अभ्यस्त थे कि इन सब बातों का पता उसने बाहर से ही लगा लिया। और सिर धुन कर कहने लगा कि सभा में सब उल्लू के पट्ठे बैठे हैं, किसी को पता नहीं, द्वारपाल से कहा कि राजा से जाकर कह दो कि एक ब्राह्मण बाहर बैठा हुआ ऐसा-ऐसा कह रहा है। राजा के पास जब यह अद्भुत समाचार पहुँचा तो पहले तो बहुत चकराया पर जाँच कराने पर माधव की बातें सच्ची साबित हुईं। वह फौरन भीतर बुलाया गया और राजा ने बड़े आदर से उसे अपनी गद्दी पर दाहिनी ओर बैठाया। राजा ने उसे सोने का मुकुट पहिनाया और दो करोड़ रुपये भेंट किये। राजा टोडर ने अपनी अँगूठी उतार कर माधव को पहिना दिया। इसके बाद माधव का गायन और वीणा वादन हुआ। सब लोग मुग्ध हुए, खास कर कामकंदला बहुत प्रभावित हुई। अंत में कामकंदला का नृत्य हुआ। उसने सिर पर पानी से भरा हुआ कटोरा रख कर एक कठिन नृत्य आरंभ किया। नाचते समय जब वह भावप्रदर्शन में लीन थी

उसी समय एक शहद की मक्खी उसके वक्षस्थल पर बैठ कर काटने लगी। अब वह अगर हाथ से उसको हटाती है तो नृत्य बिगड़ता है। यह सोच कर वहीं से उसने नृत्य की गति चौगुन करके एक चक्करदार टुकड़ा लिया जिसके पवन के वेग से वह मक्खी उड़ गई। इस बात को सिवा माधव के और कोई लक्ष्य न कर सका। माधव ने खुले आम कामकंदला की प्रशंसा की और जो कुछ भेंट उसे वहाँ मिली थी सब उतार कर कामकंदला को दे दिया। इसका कारण पूँछे जाने पर उसने राजा से कहा—"तुम्हारी सारी सभा मूर्ख मंडली है, कोई गुण का समझने वाला नहीं है, कामकंदला इतना चमत्कारपूर्ण काम कर गई और किसी के पहचान में वह न आया।" राजा को इस अपमान से क्रोध चढ़ आया और उसने कहा कि "यदि तुम ब्राह्मण न होते तो तुम्हारा सिर उड़ा देता, तुम फौरन हमारे राज्य से बाहर चले जाओ।" माधव इसके पहले ही उठ चुका था और यह कहता हुआ चल पड़ा कि "ऐसे मूर्ख राजा के यहाँ रहने में ही मेरा अपमान है।"

पर उसके गुण को पहिचानने वाली कामकंदला से यह न देखा गया। वह आग्रह कर के माधव को अपने घर ले गई और उसे छिपा कर रक्खा। दोनों एक दूसरे के रूप-गुण पर मुग्ध थे। कामकंदला ने वहाँ माधव से प्रेम-कला सिखाने की प्रार्थना की। कई दिन तक दोनों आकंठ आनंदोपभोग में रत रहे। अन्त में माधव ने यह कह कर बिदा चाही कि यदि यहाँ हमारा रहना राजा को मालूम हो जायगा तो तुम विपद में पड़ोगी पर कामकंदला ने एक रात्रि और उसके यहाँ व्यतीत करने की प्रार्थना की और माधव रुक गया। मध्य रात्रि में कामकंदला ने प्रार्थना की कि कोई ऐसा उपाय करो कि इस रात का अंत न हो। माधव ने बीन सँभाली और अलाप शुरू किया। कहते हैं कि उस अपूर्व संगीत के प्रभाव से चन्द्रमा की गति रुक गई और ग्रह उपग्रह आदि अपनी-अपनी धुरी पर रुक गये।

खैर, आखिर उसका संगीत खतम हुआ, रात बीती और सवेरा हुआ और माधव चलने को तैयार हुआ। इस अवसर पर कामकंदला का दुख बड़ा हृदय-विदारक है। माधव के जाने पर वह एक प्रकार से मर ही गई। किसी प्रकार सखियों ने होश दिलाया पर 'माधव' 'माधव' कहती हुई विक्षिप्त की सी अवस्था में रहने लगी। वह सूख कर काँटा होगई और खाना-पीना सभी भूल कर जीवित ही मृत सी अवस्था में रहने लगी।

इधर माधव की अवस्था भी लगभग वैसी ही थी। सिवा रात-दिन रोने के और कोई काम न था। अन्त में उसने बहुत सोच-विचार कर राजा विक्रम की शरण लेने की ठानी। उसने सुन रक्खा था कि वह बड़ा परोपकारी राजा है। यह तै कर वह उज्जैन पहुँचा, पर राजा तक उसकी पहुँच न हो पाती थी। पर अपनी अर्जी राजा तक पहुँचाने का उसने एक उपाय निकाल ही लिया। वहाँ एक महादेव का मंदिर था जहाँ राजा नित्य आता था। उसी मंदिर में माधव ने अपनी वेदना-सूचक एक दोहा लिख दिया और राजा की निगाह में वह दोहा पड़ गया और

उसने उसे दासियों को भेज कर पता लगाया। 'ज्ञानवती' नाम की एक चेरी राजा का संदेस लेकर माधव के पास पहुँची और अपने साथ राजा के पास लिवा ले गई। माधव को देखते ही राजा को विश्वास हो गया कि यह विरह पीड़ित कोई सच्चा प्रेमी है और कहा कि मैं आपकी क्या सेवा कर सकता हूँ। माधव ने अपना और अपने गुण का परिचय देते हुए अपनी रामकहानी कह सुनाई। राजा ने आश्वासन देते हुए सहायता करने का वचन दिया। पर पहले उसको बहुत ऊँच-नीच समझाया कि गणिका से प्रीत करना ठीक नहीं। पर माधव ने कुछ इस ढंग से अपने सच्चे प्रेम का परिचय इतनी करुण रीति से किया कि सारी राजसभा रोने लगी और सब को यह निश्चय हो गया कि यह सच्चा प्रेमी है और अगर कामकंदला इसे न मिली तो यह घुल-घुल कर मर जायगा।

अंत में राजा विक्रम ने कामसेन राजा के नगर पर चढ़ाई कर दी। पर जब नगर थोड़ी दूर रह गया तो वहीं ठहर कर वह कामकंदला के प्रेम की परीक्षा करने का निश्चय कर के छद्म-वेश से उसके घर गया, और कामकंदला को बड़ी बुरी हालत में, विरह में म्रियमाण अवस्था में पाया। पर तो भी प्रेम की परीक्षा करने के इरादे से उसे यह खबर दी कि माधव तो वियोग में घुलते-घुलते मर गया। यह सुनते ही पिंगला की भाँति कामकंदला ने भी तत्काल माधव का नाम उच्चारण करते हुए प्राण त्याग दिया। राजा बड़ा चकराया और उदास होकर अपने खेमें में आया और यह दुखद समाचार उसने सभा में कहा। ग़ज़ब हो गया। इधर माधव ने भी अपनी प्रियतमा का निधन सुनकर वहीं दम तोड़ दिया। सारे कटक में हाहाकार मच गया। इधर राजा ने दो प्रेमियों का खून अपने सर लेकर जब कोई उपाय न सूझा तो आत्म-हत्या करने की ठानी और चंदन की चिता तैयार करवाई और बहुत सा दान पुण्य कर सूर्य नमस्कार कर चिता पर बैठ गया।

स्वर्गलोक तक यह बात पहुँची; देवी देवता सब अपने-अपने विमानों पर आरूढ़ होकर यह विचित्र दृश्य देखने पहुँचे। राजा के मित्र बैताल को भी यह खबर मिली। राजा अग्निदान की आज्ञा ले रहा था कि इसी समय बैताल ने पहुँच कर हाथ थाम लिया और राजा की निर्यात का सब हाल जान तुरत अमृत ले आया और माधव को जिलाया। वह कामकंदला का नाम लेता हुआ उठ बैठा। तब राजा वैद्य के वेश में अमृतकलश लेकर कंदला के यहाँ पहुँचे और उसे भी जिलाया और बहुत कुछ आश्वासन देकर खेमें में आये। वहाँ से राजा के यहाँ दूत भेज कर यह कहलवाया कि जिस किसी मूल्य पर हो आप कामकंदला को हमारे हवाले कर दीजिये। पर उसने इसमें अपमान समझ कर युद्ध की ठानी।

दोनों में घमासान युद्ध हुआ चार प्रहर तक। अंत में कामसेन राजा पराजय स्वीकार कर, हथियार फेंक हाथ जोड़ विक्रम के सामने खड़ा हुआ और माफी माँगी। फिर उसने कामकंदला को लाकर राजा के खेमें में दाखिल कर दिया।

चिर विरही माधव और कामकंदला का मिलन हुआ और आर्त दुखहारी राजा विक्रम दोनों को लेकर अपनी राजधानी उज्जैन चला गया।

× × ×

इस काव्य की भाषा परिमार्जित अवधी है। चूंकि यह ग्रंथ छोटा और अभी तक अप्रकाशित है इसलिए इस संग्रह में यह समूचा दे दिया गया है।

उसने उसे दासियों को भेज कर पता लगाया। 'ज्ञानवती' नाम की एक चेरी राजा का संदेस लेकर माधव के पास पहुँची और अपने साथ राजा के पास लिवा ले गई। माधव को देखते ही राजा को विश्वास हो गया कि यह विरह पीड़ित कोई सच्चा प्रेमी है और कहा कि मैं आपकी क्या सेवा कर सकता हूँ। माधव ने अपना और अपने गुण का परिचय देते हुए अपनी रामकहानी कह सुनाई। राजा ने आश्वासन देते हुए सहायता करने का वचन दिया। पर पहले उसको बहुत ऊँच-नीच समझाया कि गणिका से प्रीत करना ठीक नहीं। पर माधव ने कुछ इस ढंग से अपने सच्चे प्रेम का परिचय इतनी करुण रीति से किया कि सारी राजसभा रोने लगी और सब को यह निश्चय हो गया कि यह सच्चा प्रेमी है और अगर कामकंदला इसे न मिली तो यह घुल-घुल कर मर जायगा।

अंत में राजा विक्रम ने कामसेन राजा के नगर पर चढ़ाई कर दी। पर जब नगर थोड़ी दूर रह गया तो वहीं ठहर कर वह कामकंदला के प्रेम की परीक्षा करने का निश्चय कर के छद्म-वेश से उसके घर गया, और कामकंदला को बड़ी बुरी हालत में, विरह में म्रियमाण अवस्था में पाया। पर तो भी प्रेम की परीक्षा करने के इरादे से उसे यह ख़बर दी कि माधव तो वियोग में घुलते-घुलते मर गया। यह सुनते ही पिंगला की भाँति कामकंदला ने भी तत्काल माधव का नाम उच्चारण करते हुए प्राण त्याग दिया। राजा बड़ा चकराया और उदास होकर अपने खेमे में आया और यह दुखद समाचार उसने सभा में कहा। ग़ज़ब हो गया। इधर माधव ने भी अपनी प्रियतमा का निधन सुनकर वहीं दम तोड़ दिया। सारे कटक में हाहाकार मच गया। इधर राजा ने दो प्रेमियों का ख़ून अपने सर लेकर जब कोई उपाय न सूझा तो आत्म-हत्या करने की ठानी और चंदन की चिता तैयार करवाई और बहुत सा दान पुण्य कर सूर्य नमस्कार कर चिता पर बैठ गया।

स्वर्गलोक तक यह बात पहुँची; देवी देवता सब अपने-अपने विमानों पर आरूढ़ होकर यह विचित्र दृश्य देखने पहुँचे। राजा के मित्र बैताल को भी यह ख़बर मिली। राजा अग्निदान की आज्ञा ले रहा था कि इसी समय बैताल ने पहुँच कर हाथ थाम लिया और राजा की निर्यात का सब हाल जान तुरत अमृत ले आया और माधव को जिलाया। वह कामकंदला का नाम लेता हुआ उठ बैठा। तब राजा वैद्य के वेश में अमृतकलश लेकर कंदला के यहाँ पहुँचे और उसे भी जिलाया और बहुत कुछ आश्वासन देकर खेमे में आये। वहाँ से राजा के यहाँ दूत भेज कर यह कहलवाया कि जिस किसी मूल्य पर हो आप कामकंदला को हमारे हवाले कर दीजिये। पर उसने इसमें अपमान समझ कर युद्ध की ठानी।

दोनों में घमासान युद्ध हुआ चार प्रहर तक। अंत में कामसेन राजा पराजय स्वीकार कर, हथियार फेंक हाथ जोड़ विक्रम के सामने खड़ा हुआ और माफ़ी माँगी। फिर उसने कामकंदला को लाकर राजा के खेमें में दाख़िल कर दिया।

चिर विरही माधव और कामकंदला का मिलन हुआ और आर्त दुखहारी राजा विक्रम दोनों को लेकर अपनी राजधानी उज्जैन चला गया।

× × ×

इस काव्य की भाषा परिमार्जित अवधी है। चूंकि यह ग्रंथ छोटा और अभी तक अप्रकाशित है इसलिए इस संग्रह में यह समूचा दे दिया गया है।

शेख़ निसार

हिंदी के मुसलमान कवियों में हम यह विशेषता देखते हैं कि वह अपनी रचनाओं में अपना संक्षिप्त व्यक्तिगत परिचय तथा रचना काल आदि का कुछ ब्योरा दे देते हैं जिससे संपादक को बड़ी सुविधाएं हो जाती हैं। काश की यही प्रथा हिंदी के अन्य कवियों में भी होती तो आज गड़े मुर्दे उखाड़ने में जो दिक्कतें हो रही हैं; विभिन्न कवियों के काल निर्णय के संबंध में विद्वानों में जो भीषण मतभेद की सृष्टि हुई है, और समालोचकों में आये दिन व्यर्थ का झगड़ा और विद्वेष हो रहा है वह न होता, और समय तथा विद्वत्ता का इतना दुरुपयोग न होता। तमाशा यह है कि तुलसी, भूषण आदि हमारे अधिकांश प्रमुख महाकवियों के ही संबंध में अभी तक सर्व- सम्मति से सब बातें नही तय हो पाई हैं। अस्तु,

सौभाग्य से इन अख्यानक कवियों ने अपना परिचय तथा रचना काल का स्पष्ट उल्लेख कर बड़ी दूरदर्शिता से काम लिया है।

कवि निसार का रचनाकाल देहली के अंतिम मुग़लसम्राट शाह आलम के समय में हुआ था।

आलम शाह हिंद सुलताना। तेहि के राज यह कथा बखाना॥

× × ×

साथ ही यह भी लिखते हैं कि उस समय अवध में नवाब आसिफुद्दौला राज्य करते थे। और उनके हिंदू मंत्री बड़े न्याय निष्ट तथा राजनीतिकुशल थे।

चहुँ दिसि अंध धुंध सब छावा। अवध देस कौं दियो बिहावा॥
येहिया खां आसिफ़ उद्दौला। तासु सहाय अहर नित मौला॥
हिंदू सचिव वह बली नरेसा। तेहि के धरम सुखी सब देसा॥
तेहि के राजनीत जग छाए। धरम दान को सरवर पाए॥

× × ×

शेख निसार का जन्म अवध के अंतर्गत शेखपुर नामक एक क़सबे में हुआ था। डिस्ट्रिक्ट गज़ेटियर से पता चलता है कि शेख़पुरा नाम का एक क़सबा जिला रायबरेली परगना बड़रावाँ और तहसील महराजगंज में है। यहाँ शेख़ों की अच्छी बस्ती है। पिछली मर्दुमशुमारी में वहाँ शेख़ों की संख्या ८,७१९ थी।

कवि निसार ने कहा है कि शेख़पुरा उनके पूर्वज शेख़ हबीबुल्ला द्वारा बसाया गया था।

शेखपुर इत गाँव सुहावा। शेख निसार जनम तहँ पावा॥
शेख हबीबुल्लाह सुहाये। शेखपूर जिन आन बसाये॥

× × ×

फिर आगे चल कर कवि कहता है कि सम्राट अकबर के समय में वे (शेख़ हबीबुल्लाह) देहली से अवध आये और बीस वर्ष तक वहाँ रहे। इनके पुत्र शेख़ मुहम्मद हुए। इनके पुत्र का नाम गुलाम मुहम्मद था और यही शेख़ निसार के पिता थे। फिर निसार ने अपने पूर्वज शेख़ हबीबुल्लाह को प्रसिद्ध मौलाना रूम का वंशज माना है।

पातशाह अकबर सुलताना। तेहि के राज कर जगत बखाना॥
अवध देस सूब होय आए। बीस बरस तहँ रहे सुहाए॥
तेहि के शेख मुहम्मद बारा। रूपवंत भू के अवतारा॥
ता सुत गुलाम मुहम्मद नाऊँ। सो हम पिता सो ताकर गाऊँ॥
वंस मौलवी रूम के, शेख हबीबुल्लाह।
जेहि के मसनवी जगत महँ, अगम निगम अवगाह॥

× × ×

अपनी शिक्षा दीक्षा तथा ग्रंथ रचना आदि के संबंध में भी कवि स्वयं पर्याप्त सामग्री दे देता है। अरबी, फ़ारसी, तुर्की, और संस्कृत आदि कई भाषाओं में कवि की गति थी और इन्होंने सात ग्रंथ रचे थे जिनमें तीन गद्य, एक दीवान, एक अलंकार ग्रंथ तथा एक भाखा काव्य (युसुफ़-जुलेखा) मुख्य थे। कवि की पंक्तियों से यह व्यक्त होता है कि इनके ग्रंथ फ़ारसी, अरबी और संस्कृत में भी थे, पर इनका हमें अभी तक पता नहीं लग सका है।

सात गरंथ अनूप सुहाए। हिंदी औ पारसी सोहाए॥
संस्कृत तुरकी मन भाए। अरबी और फारसी सुहाए॥
हीर निकार के गेहूँ खाने। रस मनोज रस गीत बखाने॥
औ दिवान मसनवी भाखा। कर दोइ नसर पारसी राखा॥

कवि का समय

निसार कवि कहते हैं कि बुढ़ौती में उन्होंने युसुफ़ जुलेखा लिखी। सात दिन में वह ग्रंथ लिखा गया और उस समय उनकी अवस्था ५७ सत्तावन वर्ष की थी। ग्रंथरचना का समय १२०५ हिजरी दिया हुआ है। प्रतिलिपि में संवत् १८२७ पर हिसाब लगाने पर यह संवत् १८४७ होता है। स्पष्ट है कि यहाँ लिपिकार ने भूल की है। फ़ारसी लिपि में 'सैंतालीस' का 'सत्ताइस' पढ़ा जाना या लिखा जाना दोनों ही संभव है। जायसी के संबंध में भी ठीक इसी तरह की भूल हुई है जहाँ कि

९४७ हि० का ९२७ पढ़ा गया था। अस्तु इस प्रकार हम देखते हैं कि कवि का जन्म १८४७—५७=संवत् १७९० में मानना चाहिये और तदनुसार ई० सन् १७२२ इनकी जन्म तिथि हुई।

वार वैस महँ कथा बनाए। हीर निकार अनूप सोहाए॥
रस मनोज रस गीत सोहावा। सभै बात का भेस बतावा॥
सत्तावन बरस बीते आयू। तब उपज्यो यह कथा क चारू॥
सात दिवस महँ कथा समापत। दुरमति नाम रह्यो सो संमत॥
हिजरी सन बारह सै पाँचा। बरनेउँ प्रेम कथा यह साँचा॥
अट्ठारह सै सत्ताईसा। संवत् विक्रम सेन नरेसा॥

× × ×

काव्य रचना का निमित्त

'यूसुफ़ जुलेखा' काव्य की रचना का संबंध कवि के जीवन को एक दुःखद घटना से है। काव्य के अंत में कवि ने इस करुण घटना का उल्लेख किया है। इनके एक मात्र पुत्र लतीफ़ की मृत्यु २२ वर्ष की अवस्था में हो गई। कवि कहता है कि उसके निधन से मैं पागल सा हो गया था। मृत्यु शय्या पर पड़े हुए उसने मुझे रोते देख कर कहा था कि पिता तुम रोते क्यों हो, बड़े लोगों को सदा दुःख सहना पड़ता है। नबी यूसुफ़ को दुःख भोगना पड़ा था, राम को दुःख सहन करना पड़ा। दुःख में ही मनुष्य की परीक्षा होती है। आगे पीछे एक दिन सब को जाना है। जब से उसकी मृत्यु हुई मैं नित्य याक़ूब की याद करता था। उसी की भाँति पुत्र-शोक में अकालवृद्धत्व को प्राप्त हुआ। उसी के विरह में रो रो कर मैंने यह गाथा लिखी। संसार के रहस्य का कुछ पता नहीं। अब तो ईश्वर मुझे जल्दी ही मौत दे और मेरे सांसारिक दुःखों का अंत हो। मैं तो रहूँगा नहीं पर यह कहानी सदा रहेगी। जो इस कथा को पढ़ें सुनें उनसे विनती है कि मुझे आशीर्वाद दें कि मेरी सद्गति हो। कथा के अंत का यह भाग करुण रस की कविता का एक अपूर्व नमूना है। कुछ पंक्तियाँ यहां उद्धृत की जाती हैं।

जब तें जनम लीन्ह जग माहीं। छुटि दुख अबर सो देख्यों नाहीं॥
अवर दुःख मैं सब कुछ सहा। भयो एक दुख बाउर महा॥
पुत्र अनूप दई मोहिं दीन्हा। रूप अनूप बुधि आगे कीन्हा॥
बाइस बरिस रहा जग माहीं। छुट विद्या उन जान्यो नाही॥
नाम लतीफ अनूप सोहाये। सभ गुन ज्ञान दई अधिकाये॥

बाइस बरिस के बैस महँ, छाँड़ि दीन्ह उन देह।
मुरत अनूप गुलाब सो, जाय मिले पुन खेह॥

तब मैं भय जो बाढर भेसा । करौं सदा अँतकाल अँदेसा ॥
जब तें लतीफ़ कर मरम बिसेख्यों । तप संपत अमिरथा देख्यौं ॥
रोम रोम यह विरह बखानी । कोउ न रहा जग रहै कहानी ॥
देहु दया मोहे कब मोखू । हरहु मोर अन अवगुन दीखू ॥
पढ़े प्रेम के अच्छर कोई । देई असीस मोर गति होई ॥
हम न रहब आखर रहि जाई । सब हि लोग होइहि सुख दाई ॥
× × ×
सात दिवस में कथा सोहाई । कीन्ह समापत दीन्ह बनाई ॥

इत्यादि ।

कवि निसार सैयद इंशाअल्ला खाँ के सम-सामयिक थे इसका पता भी आभ्यंतरिक प्रमाणों से मिल जाता है, साथ ही यह भी पता चलता है कि हंस-जवाहिर' नामक मसनवी काव्य भी इनके समय में प्रचलित था ।

हंस जवाहिर प्रेम कहानी । कहा मसनवी अँविरत बानी ॥
हंसा कहे जहाँ लह भेदू । औ सब कथा जहां लह वेदू ॥
झूंठ ज्ञान सम तिन मन भापा । अब यह साँच कथा चित लागा ॥
× × ×

कथा का सारांश

यूसुफ़ जुलेखा की कथा का आधार है प्रसिद्ध फ़ारसी काव्य 'यूसुफ़-ज़ुलेख़ा' । कवि निसार ने इसको भारतीय जामा पहिनाने की चेष्टा की है पर इस चेष्टा में यह अधिक सफल नहीं हो सके हैं । मूल कथा यों है ।

नबी याक़ूब किनआँ नगर में रहते थे जो कि 'नूह' साहब का बसाया हुआ था । नबी 'लूत' की लड़की से इसहाक़ ने शादी की थी जिससे 'ईस' और 'याक़ूब' नाम के दो बेटे पैदा हुए थे । याक़ूब की सात बीबियां थीं और उनसे बारह बेटे हुए इनकी 'राहेल' नाम की बीबी से 'यूसुफ़' नामक पुत्र और 'दुनियां' नाम की कन्या हुई । याक़ूब यूसुफ़ को बहुत ज्यादा मानते थे और इससे अन्य सब लड़के इनसे भयानक ईर्ष्या करते थे । बात यहाँ तक पहुँची कि शेष सब भाइयों ने मिल कर यूसुफ़ का प्राणांत करने का निश्चय किया । इस विचार से जब वे जङ्गल में भेड़ चराने जाने लगे तो पिता से कह सुन कर यूसुफ़ को भी ले गये । वहां इन लोगों ने उसे कुएँ में ढकेल दिया ।[1] उसका एक कुरता छीन कर बकरी के ख़ून से रँग दिया और घर में पिता के सामने कुरता पेश करते हुए कहा कि यूसुफ़ को भेड़िये ने मार डाला ।

---

[1] इस स्थल की यूसुफ़ की कही हुई बातें और उसका व्यवहार ईसा या मुहम्मद की उच्चता की याद दिलाती हैं ; साथ ही यहाँ की कविता भी उच्च कोटि की बन पड़ी है ।

इधर यूसुफ़ कुएँ में पड़े रहे। एक दिन कुछ सौदागर उधर से गुज़रे। इनमें एक ने पानी निकालने को डाल डाली जिसे यूसुफ़ ने पकड़ ली और तब सबों ने इन्हें मिल कर बाहर निकाला। सौदागरों के सरदार ने यूसुफ़ के रूप और कांति पर मुग्ध हो इन्हें अपने साथ ले जाना चाहा, पर इतने ही में इनके हत्यारे भाई भी उधर आ पहुँचे और उन्होंने कहा कि यह मेरा ग़ुलाम है और भाग आया है तुम चाहो तो इसे ख़रीद सकते हो। सौदागर ने मुह माँगा दाम देकर यूसुफ़ को ख़रीद लिया इस प्रकार इन भाइयों ने यूसुफ़ को अपने राह के कंटक के समान दूर तो किया ही, साथ ही अच्छी ख़ासी रकम भी वासूल की।[1] ख़ैर सौदागर ने मिस्र की राह ली।

उधर मग़रिब (पश्चिम) देश में तैमूस नामक एक सुलतान राज्य करता था जिसके ज़ुलेखा नाम की एक अनिंद्य सुंदरी बेटी थी। संसार में कोई उसके समकक्ष नहीं थी। दुनियां के कोने-कोने से बड़े से बड़े बादशाहों के विवाह के प्रस्ताव आये पर सुलतान ने सब को कोरा जवाब दिया।

इधर ज़ुलेखा ने स्वप्न में यूसुफ़ को देख कर मन ही मन उसे ही पति बनाने की प्रतिज्ञा की। पर उससे मिलने का कोई उपाय न देख वह दिन-दिन घुलने लगी। वैद्य, हक़ीम सब थक गये पर उसकी अवस्था शोचनीय हो चली। उसकी धाय बड़ी चतुर थी और ज़ुलेखा ने उससे अपनी सब बातें प्रगट कर दी। उसने राय दी कि यदि फिर कभी स्वप्न में उस पुरुष के दर्शन हों तो उसका 'नाँव गाँव' सब पूँछ लेना। और हुआ भी ऐसा ही। फिर जब स्वप्न हुआ तो बहुत ज़िद करने पर यूसुफ़ ने कहा मिसिर के सचिव के यहां आवो तो मुझसे भेंट होगी। धाय ने यह भेद सुलतान पर प्रगट किया कि यदि आप अपनी लड़की की ज़िंदगी चाहते हैं तो मिस्र के वज़ीर के साथ इसकी शादी कर दीजिये।

सुलतान बड़ा दुःखी हुआ, क्योंकि वज़ीर की हैसियत उससे कहीं नीचे थी। पर आख़ीर क्या करता। पैग़ाम भेजा गया और मिस्र के वज़ीर ने बहुत झेंप कर इसे मंज़ूर किया और शादी हुई। ज़ुलेखा रुख़सत हुई। रास्ते में धाय से इसने ज़िद किया कि एक बार 'उन्हें' दिखा दो। पर जब उसने पति को देखा तो मानों आसमान से गिरी। वह तो स्वप्न में आने वाला वह सुंदर पुरुष नहीं था। अब घोर संकट इनके सामने उपस्थित हुआ। बात यह हुई थी कि स्वप्न वाले मनुष्य ने यह तो कहा नहीं था कि मैं मिस्र का वज़ीर हूँ। यह तो सिर्फ़ उसके यहां मुलाज़िम था। पर ज़ुलेखा ने समझा कि वही वज़ीर है। इसी ग़लतफ़हमी पर कथा का सारी दिलचस्पी निर्भर करती है।

---

[1] बिदा होते समय फिर यूसुफ़ ने बड़े करुण शब्दों में केवल यही कहा कि 'भाई मेरा अपराध क्षमा करना और कभी-कभी याद करना, और पिता को कहना मेरे लिये दुःखी न हों। पर भाइयों ने भेद खुलने के डर से यूसुफ़ का मुह बंद कर दिया।

ख़ैर, आख़िर ज़ुलेखा मिस्र के वज़ीर के हरम में दाख़िल हुई। पर अपने सतीत्व की रक्षा के लिये उसने धाय की सलाह से एक उपाय सोच निकाला। वह बीमारी का बहाना कर के पड़ रही। धाय ने वज़ीर को समझा दिया कि इसको यह रोग है। इस तरह से बड़े दुःख के साथ ज़ुलेखा के दिन कटने लगे।

इधर वह सौदागर यूसुफ़ को लिये हुये मिसर पहुँचा। वहाँ उसने ग़ुलामों के बाजार में बेचने के लिए यूसुफ़ को खड़ा किया। उसका अपूर्व रूपसौंदर्य देख कर सारा मिस्र हैरान था। सारा देश उसकी एक झलक देखने के लिये उमड़ा पड़ता था। बड़ी-बड़ी क़ीमतें लग रहीं थीं। ऐसी शोहरत सुन धाय को लेकर ज़ुलेखा भी उसके दर्शन को चली। देखते ही उसने पहचान लिया कि यह तो वही पुरुष है जिसने स्वप्न में अपनी सूरत दिखा उसका मन हर लिया था। ख़ैर, धाय की सलाह से यह तय पाया कि वज़ीर से कह कर इस दास को ख़रीदवाया जाय। वज़ीर ने ज़ुलेखा को ख़ुश करने के इरादे से यूसुफ़ को ख़रीद कर उसकी सेवा के लिये रख दिया।

अब ज़ुलेखा कुछ ख़ुश रहने लगी। धीरे-धीरे ज़ुलेखा अपने मनो-भाव यूसुफ़ पर प्रगट करने लगी पर वह इस पर कुछ ध्यान न देता। वह अधिकतर उदासीन ही रहता। पर क्रमशः ज़ुलेखा की चेष्टाएं बहुत स्पष्ट होती गईं और एक दिन यूसुफ़ बहुत कामातुर हो गया और ज़ुलेखा को पकड़ने को बढ़ा पर उसी समय उसके पिता की मूर्ति उसके सामने खड़ी हो गई। वह तुरत सँभल गया और उलटे पाँव भागा। पर भागते समय ज़ुलेखा ने उसका कुरता पकड़ लिया और झटके में वह फट भी गया पर यूसुफ़ निकल भागा। इससे ज़ुलेखा ने अपने को अपमानित समझ कर वज़ीर से यह शिकायत कर दी कि यूसुफ़ की निगाह ठीक नहीं है, उसने उस पर हमला किया था। प्रमाणस्वरूप उसने उसके फटे कुरते का टुकड़ा पेश किया। पर कुरते के पीछे का हिस्सा फटा देख वज़ीर ने असल बात का पता लगा लिया पर ऊपर से चुप रहा और ज़ुलेखा का मान रखने के लिये यूसुफ़ को सिर्फ़ कारावास का दंड दिया।

अब ज़ुलेखा को अपने ऊपर बड़ी ग्लानि हुई। वह बहुत संतप्त रहने लगी। कारागार में यूसुफ़ के सुख के लिये भाँति-भाँति के प्रयत्न गुप्त रीति से करने लगी पर वह इन सब हरकतों से बिलकुल उदासीन रहने लगा और कभी ज़ुलेखा की चेष्टाओं पर आकर्षित न होता था।

एक दिन एक सवार किनआँ नगर से मिस्र आया। यूसुफ़ ने कारागार की खिड़की से उसे देखा और अपने देश का आदमी पहचान कर उसे बुलाया और अपने नगर और अपने पिता का हाल चाल पूँछना चाहा, पर उसने यूसुफ़ को न पहचान कर इसकी बातों पर कुछ ध्यान न देकर आगे बढ़ना चाहा पर न जाने किस दैवशक्ति से उसके ऊँट के पाँव ही आगे न बढ़ते थे। आख़िर उसने यूसुफ़ से कहा कि मैं व्यापार करने मिस्र आया हूँ। यूसुफ़ ने पिता के लिये अपना संदेसा

कहा और कहा कि वे ईश्वर से प्रार्थना करें कि मैं जेल से छुटकारा पाऊँ। उसने लौट कर याक़ूब से यह सँदेसा कहा भी। उधर यूसुफ़ ने कई पत्र पिता के पास भिजवाये पर कोई भी उनके पास तक न पहुँचा।

इधर मिस्र में .ज़ुलेखा की बड़ी निंदा होने लगी। सब स्त्रियाँ उसे दुराचारिणी कहतीं। आख़िर जब .ज़ुलेखा से न रहा गया तो उसने शहर की बहुत सी औरतों को दावत दी और सब को एक कतार में बैठा कर सब के सामने एक-एक तरबूज़ और एक-एक चाकू रखवा दिया। जब सब तरबूज़ काटने में लगीं तब ठीक उसी समय .ज़ुलेखा ने यूसुफ़ को बुला कर उनके सामने से गुज़ारा। सब उसके रूप को देख कर इतनी तन्मय होगईं कि सबों ने चाकू से अपना हाथ काट डाला। इस प्रकार .ज़ुलेखा ने यह सिद्ध कर दिया कि यूसुफ़ का रूप ही ऐसा है कि उसे देख कर कोई अपने बस में नहीं रह सकता। आख़िर यूसुफ़ के चले जाने पर सब स्त्रियाँ बड़ी लज्जित हुईं और सबों ने .ज़ुलेखा से क्षमा माँगी।

यूसुफ़ सात साल तक जेलखाने में सड़ता रहा। .ज़ुलेखा उसे मुक्त करने के उपाय सोचा करती पर उसकी कोई तरक़ीब कारगर न होती थी। इसी बीच मिस्र के सुलतान ने एक बड़ा बेढब सपना देखा जिसका कोई अर्थ ही न बता सकता था। यूसुफ़ के पाण्डित्य और अनोखी सूझ-बूझ की बड़ी शोहरत थी। आख़िर इस स्वप्न-फल के विचार के लिये सुलतान ने इन्हें तलब किया। इन्होंने बताया कि इसका अर्थ यह है कि सात साल तक वर्षा न होगी और यदि शांति का समुचित प्रबंध किया जायगा तो प्रजा के प्राण बँच जायँगे। इस पर सुलतान ने समुचित प्रबंध करना शुरू किया और बहुत बड़े पैमाने पर अन्न वस्त्र एकत्रित करने लगा। इसी सिल-सिले में सुलतान ने यूसुफ़ के क़ैद होने का कारण पूछा और प्रसंगवश .ज़ुलेखा ने अपनी सारी आत्म-कथा साफ़-साफ़ सुलतान पर प्रगट कर दी। मंत्री ने क्रोधवश .ज़ुलेखा को त्याग दिया।

पर इस सुलतान ने युसुफ़ को ही इस मंत्री के पद पर बड़े आदर से बैठाया। इधर .ज़ुलेखा तप करने लगी। मंत्री होने पर सात साल तक अच्छी खेती हुई। युसुफ़ ने बहुत सा अन्न तथा खाद्य द्रव्य इकट्ठा कर लिया। इसके बाद घोर दुर्भिक्ष का समय आया चारों ओर त्राहि-त्राहि मची। इस अकाल के पाँचवें साल वह मिस्र का पुराना वज़ीर मर गया। यूसुफ़ का मान और भी बढ़ गया और सुलतान ने सारा राज-काज इन्हीं के हाथ सौंप दिया।

इधर यूसुफ़ की जन्म-भूमि किनआँ में भी अकाल पड़ रहा था। याक़ूब ने अपन लड़कों को अन्न लाने और यूसुफ़ का पता लगाने के लिये मिस्र की ओर रवाना किया। दसों भाई मिस्र पहुँचे और यूसुफ़ ने सब को पहचाना पर अपने को इन पर प्रगट नहीं किया। सब का हाल-चाल पूछ कर और बहुत सा अन्न आदि देकर बिदा किया और साथ ही यह भी कहला भेजा कि अपने छोटे भाई इब्नअमीं को लाओ तो और भी बहुत सा सामान देंगे।

सभों ने आकर पिता से सब हाल कहा। उन्होंने बड़े दुःख से इब्नअमीं को जाने दिया क्योंकि यूसुफ़ के बाद यही सब से प्यारा बेटा होगया था।

आख़िर ये लोग फिर यूसुफ़ के पास पहुँचे और इन्होंने सब का बड़ा स्वागत किया। सब एक साथ भोजन करने बैठे। छः थालियाँ लगीं और एक-एक में दो-दो भाई एक-साथ भोजन करने बैठे। इब्नअमीं अकेला पड़ता था, इससे ख़ुद यूसुफ़ उसके साथ बैठ गया। इस मौके पर इब्नअमीं यूसुफ़ को पहचान गया। विदा होते समय यूसुफ़ ने फिर सबको बहुत सा अन्न वग़ैरह दिया पर इब्न को रोकने की ग़रज़ से उसके कपड़े में बाँट रखवा दी जिससे वह चोर समझ कर पकड़ा गया। कहते हैं कि इस पर किनआँ और मिस्र वालों में घोर युद्ध हुआ और किनआँ वाले हार कर बंदी कर लिये गये और सुलतान ने सब को मरवा डालने का हुक्म दिया पर यूसुफ़ ने किसी तरह माफ़ करवाया। बाद को सब भाइयों ने यूसुफ़ को पहचाना और सब गले मिल कर बहुत देर तक रोये और सबों ने अपनी पिछली करनी पर बड़ा दुःख प्रगट किया। बाद को सब किनआँ गये पर यूसुफ़ ने इब्न और यहूदा दो भाइयों को रोक लिया था। किनआँ पहुँचने पर सब को यूसुफ़ का पता चला और याक़ूब के साथ सारा किनआँ यूसुफ़ के दर्शन को चला। यूसुफ़ ने सब की बड़े प्रेम से खातिर की और तीस वर्ष बाद पिता पुत्र मिले। मिस्र का सुलतान भी बड़ा सुखी हुआ। वह निस्संतान था और क़ाफ़ी बूढ़ा हो गया था अतः उसने इस मौक़े पर यूसुफ़ को अपने सिंहासन पर बैठा कर राज्याभिषेक कर दिया। यूसुफ़ अब सुलतान था।

इधर ज़ुलेख़ा को यूसुफ़ के विरह में तप करते ४० वर्ष होगये थे। वह बूढ़ी और रोते-रोते अंधी होगई थी। वह अपना सब कुछ खो चुकी थी। अब वह पथ की भिखारिन थी।

एक दिन शहर में यूसुफ़ की सवारी निकली। यद्यपि नेत्र-हीन थी, उसे यूसुफ़ के अंतिम दर्शन की बड़ी अभिलाषा हुई और बड़ी ख़ुशामद के बाद कुछ औरतों ने उसे यूसुफ़ के रास्ते में खड़ा किया। संयोग से यूसुफ़ ने इसे तुरंत पहिचाना और इसे बड़ी दया आई। यूसुफ़ ने पूँछा तुम्हारा यह हाल क्योंकर हुआ। उसने कहा सब तुम्हारे कारण। याक़ूब को भी सब हाल मालूम हुआ। उन्होंने ज़ुलेख़ा को दुआ दी जिससे वह फिर षोड़षी रूप में परिणत हुई और रूपलावण्य पहले से भी उज्ज्वलतर हुआ। अंत में दोनों का विवाह हुआ और याक़ूब ने दोनों को दुआ दी।

पर जब सब कुछ हो गया तब आख़िर को ज़ुलेख़ा को कुछ शरारत सूझी। उसने यूसुफ़ को छकाने की ठानी ताकि उसे कुछ पता तो चले कि कैसे हमने ये ४० बरस बिताये हैं। आख़िर को यूसुफ़ को नाकों चना चबवा कर तब अंत में जब उसके मरने की नौबत आई तब ज़ुलेख़ा ने आत्मसमर्पण किया।

कथा का आधार तथा उसकी विशेषता

यूसुफ़ ज़ुलेखा की कथा पदमावत आदि अन्य कथाओं से एक महत्व-पूर्ण विभिन्नता रखती है और उस पर ध्यान देना आवश्यक है। अन्य: सभी प्रेमगाथा या आख्यानक काव्य जो अभी तक प्राप्त हो सके हैं, किसी न किसी लोकप्रसिद्ध भारतीय ऐतिहासिक घटना का आश्रय लेकर रचे गये है। अंतर इतना ही है कि कुछ में यह आश्रय केवल नाम मात्र का और कुछ में ऐतिहासिक तथ्यों के सामंजस्य का आद्योपांत यथाशक्ति ध्यान रक्खा गया है। हाँ कविता की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए जितनी निरंकुशता का अधिकार इस कोटि के महाकाव्य लेखकों को हो सकता है इसका किसी ने बहुत दुरुपयोग किया है, किसी ने कम। पर यूसुफ़-ज़ुलेखा की कथा भारतीय इतिहास या संस्कृति से कोई संबंध नहीं रखती, इसका आधार या आश्रय पूर्णतया विदेशी है। इसमें जिस समाज का चित्र खींचा गया है वह भी भारतीय न होकर ईरानी या मिसरी कहा जाता है। इसकी प्रेमपरंपरा का कोई संबंध भारतीय-जीवन से नहीं है। वह सोलह आने ईरान या अरब आदि इस्लामी देशों की है।

ज़ुलेखा की प्रेमपरंपरा

स्वप्न में किसी अपरिचित पुरुष को देख कर उसके प्रेम में पागल हो जाना, भारतीय काव्य और रसपद्धति के लिये एक नई बात है। प्राचीन संस्कृत या हिंदी काव्यों में हम इस प्रकार के प्रेम पर आधारित कोई बड़ा काव्य नहीं पाते। 'ऊषा-अनिरुद्ध' की बात छोड़ दीजिये, वह एक दूसरे ही ढंग की चीज है। 'गुणश्रवण' 'चित्रदर्शन' आदि ढंग तो हमारे यहां मिलते हैं, और अधिकतर प्रेमगाथाओं में अपनाये गये हैं। पर 'स्वप्नदर्शन' पर आधारित प्रेम बहुत अंश तक अस्वाभाविक होता है और वास्तविक जीवन में असंभव सा ही है। वन, वीथी, तड़ाग आदि कहीं पर नायक-नायिका का एक बार परस्पर साक्षात्कार हो चुका हो, निगाहें चार हो चुकी हों, उसके बाद स्वप्न-दर्शन होना स्वभाविक है, और ऐसा वास्तविक जीवन और काव्य दोनों ही में हम प्राय: देखते हैं। पर जिसको कभी न देखा न सुना, न चित्र ही देखा, उसे स्वप्न में देखना और सदा के लिये उसी में अपने को लीन कर देना यह फ़ारिस की ही देन है।

फिर दूसरी विभिन्नता यह है कि पदमावत आदि मसनवी काव्यों में गुण-श्रवण या चित्र-दर्शन आदि जिस किसी कारण से भी प्रेम आरंभ होता है, दोनों ओर नायक-नयिका में समान रूप से आरंभ होता है। यहां सब कुछ ज़ुलेखा की तरफ़ से ही हैं। यूसुफ़ इससे बिलकुल बरी रक्खा गया है। इसने कभी न स्वप्न ही देखा न इसकी याद में अस्थिपिंजर मात्र ही दिखलाया गया, इधर ज़ुलेखा इसके कारण अपमानित और लांछित होकर परित्यक्ता हुई और ४० वर्ष तक तप करते-करते अंधी, बूढ़ी और मरणासन्न अवस्था को प्राप्त हुई, इधर यूसुफ़ दास से मंत्री, फिर

मिस्र का सुलतान तक हो गया। इसे मानों पता भी नहीं कि ज़ुलेखा इसकी याद में मर रही है। अगर इत्तफाक से ख़ुलेखा की कुटिया की तरफ से उसकी सवारी न निकलती तो शायद ज़ुलेखा मर ही जाती और कोई यूसुफ़ तक उसके मरने की ख़बर तक पहुँचाने वाला न था।

लौकिक और अलौकिक

इस प्रकार की अस्वाभाविकताओं का हम एक ही कारण देखते हैं। इस कथा में नायक दो रूप में चित्रित किया गया है—लौकिक और अलौकिक। राम-चरित-मानस के नायक के संबंध में भी महाकवि तुलसीदास ने जाने या अन-जाने में ऐसा ही किया है। उनके संबंध में 'कवि' तुलसी और 'भक्त' तुलसी दोनों अपनी-अपनी बात बारी-बारी से कहते हैं। पर कवि निसार के संबंध में यह बात नहीं है। उन्होंने भगवद्भक्ति से प्रेरित होकर यह कथा नहीं लिखी है। पर इस्लाम की दुनियां में यूसुफ 'नबी' या ईश्वर के प्रतिनिधि, मनुष्य रूप में माने गये हैं; और इनकी कथा फ़ारसी यूसुफ़-ज़ुलेखा में वर्णित है। इस मौलिक ग्रंथ का कहाँ तक अनुकरण निसार ने किया है यह जानने का हमारे पास कोई साधन नहीं है। पर इतना हम कह जानते हैं कि जहाँ-जहाँ चाहे जिसी जाति या भाषा के कवि नायक में एक साथ ही 'मनुष्यत्व' और 'ईश्वरत्व' का आरोप करते हुए चले हैं वहाँ इसी तरह का गपड़चौथ हुआ है। कवि कुलगुरु तुलसी की प्रतिभा असाधारण थी। उन्होंने दोनों का निर्वाह कर ही दिया है एक प्रकार से; और बातें इतनी खटकीं भी नहीं।

चरित्र-चित्रण

पर यही बात हम निसार के संबंध में नहीं कह सकते। यूसुफ़ के चरित्र-चित्रण में कवि ने किसी हद तक उनको 'हर्ष-विषाद-रहित' महामानव के रूप में चित्रित करने का प्रयास किया है पर सफलता नहीं मिल सकी है। वह 'उदात्त' गांभीर्य हम यूसुफ में नहीं पाते। कहीं-कहीं तो इनका व्यवहार काफी निम्न-कोटि का सा भी बन पड़ा है। अब जैसे युसुफ के हृदय में ज़ुलेखा की प्रबल काम-चेष्टाओं से कामातुर होकर उस को आलिंगन करने को दौड़ पड़ना, फिर यकायक पिता की तस्वीर सामने आजाने पर सँभलना और उल्टे पाँव भाग खड़ा होना और ज़ुलेखा का उसे रोकने के लिये झपटना और कुरता थाम लेना, कुरते का फट जाना आदि कुछ ऐसी बातें हैं जो नायक और नायिका दोनों के चरित्र को बहुत नीचे गिरा देती हैं। पर ज़ुलेखा का चरित्र तो यहाँ बहुत ही निम्नकोटि का कर दिया गया है। कहा गया है कि ऐन मौक़े पर यूसुफ़ के भाग निकलने से उसे इतना घृणित क्रोध होता है कि वह अपने पति से शिकायत करती है कि यूसुफ़ ने उस पर बलात्-कार की चेष्टा की थी, पर उसने किसी तरह अपनी इज्जत बचाई। अपने कथन की सत्यता में वह यूसुफ़के फटे कुर्ते का भाग पेश करती है। यह व्यवहार तो कुछ-कुछ

अलंकार आदि बाहरी सजावट निसार के काव्य में कम है, अनुप्रास का शौक़ भी इनको न था। हाँ, रस का परिपाक अच्छा हुआ है। इस काव्य में करुणा रस का प्राधान्य अद्योपांत है। यों तो विरह-वर्णन सभी सूफी कवियों का मुख्य व्यवसाय रहा है और इस संबंध में ये लोग प्रायः ऐसी उड़ान भरने के अभ्यासी होते हैं कि पढ़ कर रसबोध के स्थान पर हँसी आये बिना नहीं रहती। सारा कथानक ही उपहासास्पद हो जाता है। पर जायसी और निसार इसके अपवाद हैं। निसार ने इस काव्य की रचना एक नितांत दुःखद (पुत्र शोक) सांसारिक घटना के बाद लिखी थी। वह इस समय स्वयं ५७ वर्ष के थे और इस समय उनके एक मात्र सुयोग्य पुत्र का निधन निश्चय ही एक दुखांत घटना थी। इस मर्मांतक घटना को यथाकथंचित् भुलाने के उद्देश्य से ही उन्होंने इस कथा की रचना में हाथ डाला था।

× × ×

जायसी आदि अन्य मसनवी शाखा के कवियों का उद्देश्य लौकिक प्रेम के मिस अलौकिक का निर्देश करना होता था पर यहाँ हम वह बात भी नहीं पाते। दो एक स्थान पर हम 'अलख' आदि ऐसे शब्दों का प्रयोग पाते हैं पर उस अध्यात्मतत्व या रहस्यवाद का पता कहीं नहीं चलता जिनके लिये जायसी और उनके पद्मावत की इतनी ख्याति हुई। इस श्रेणी के प्रायः सभी काव्यों में कवि अंत में स्पष्ट रूप से कह देता है कि यह सारी कथा 'अन्योक्ति' के रूप में कही गई है और पाठकों से स्पष्ट अनुरोध रहता है कि वह कथा में वर्णित प्रेम-कहानी को इसी रूप में लें। नायक को साधक, नायिका या माशूक़ को ख़ुदा या ईश्वर, राह बताने वाले 'सुआ' को गुरु, इसी प्रकार 'शैतान,' माया, सांसारिक बंधन आदि सभी के प्रतिनिधि स्वरूप कोई-न-कोई कथा का पात्र होता है। पर इस कथा में हम इस तरह की कोई बात नहीं देखते। यहाँ 'प्रेम की पीर' पहले नायिका पर ही चोट करती है और वही नायक की तलाश में, जिसके नाँउं-ठाँउं का कोई पता नहीं, बाहर निकलती है। सूफ़ी परंपरा में ईश्वर की कल्पना माशूक़ के रूप में की गई है और एक 'गुरु' की अनिवार्यता पर बहुत ज़ोर दिया गया है। पर कितना ही खींच-तान करने पर भी यहाँ इस तरह की कोइ 'अन्योक्ति' ठीक बैठती नहीं; और न कवि कहीं इस तरह का कोई स्पष्ट निर्देश ही करता है।

इस संग्रह में कथा का प्रारंभिक भाग और अंतिम भाग लिया गया है। बीच के कुछ भाग इस ढंग से संग्रहीत हैं कि कथा का संबंध ठीक बैठ जाता है। यह ग्रंथ अभी तक अप्रकाशित है और यह संग्रह पहले पहल प्रेस में जा रहा है। इसी की फ़ारसी में लिखी हुई प्रति-लिपि पहले पूरी संपादन के निमित्त ही एकेडेमी में आई थी, और मुझे तथा श्री सत्यजीवन वर्मा को इसका भार सौंपा गया था, पर अभी तक यह पूरी प्रकाशित न हो सकी। इसकी पांडु-लिपि फ़ारसी में होने के कारण पाठ में असंख्य गड़बड़ी होना स्वाभाविक है। तुलना के लिये नागरी अक्षरों में लिखी हुई कोई दूसरी पांडु-लिपि भी अभी तक नहीं मिल सकी है।

मलिक मुहम्मद जायसी

हिंदी और संस्कृत के अधिकांश प्राचीन कवियों की भाँति जायसी की भी जन्म-मरण-तिथि, जन्मस्थान, तथा माता पिता आदि के संबंध में प्रामाणिक रूप से कुछ ज्ञात नहीं है। इतना तो इन के उपनाम 'जायसी' से ही प्रगट है कि ये अवध प्रांत के अंतर्गत 'जायस' नामक स्थान के रहने वाले थे। प्रकृत मातृभूमि, या जन्म स्थान चाहे जायस न रहा हो पर इन के क्रियाकलाप का केंद्र यही रहा होगा। पद्मावत में आई हुई इस पंक्ति से भी यही धारणा पुष्ट होती है—

जायस नगर धरम अस्थानू। तहाँ आइ कवि कीन्ह बखानू॥

इस पंक्ति से यह स्पष्ट है कि कहीं से आकर ('तहाँ आइ') यह जायस में बस गए थे; कहाँ से आकर इस का कुछ पता नहीं।

इन की उत्पत्ति के संबंध में यह किंवदंती बहुत दिन से चली आ रही है कि इन का जन्म ग़ाज़ीपूर ज़िले के एक बड़े दरिद्र परिवार में हुआ था। सात वर्ष की अवस्था में इन्हें चेचक की बीमारी हुई, जिस में इन के प्राण तो बच गए पर इन की एक आँख जाती रही। कहते हैं इस बीमारी से जायसी की रक्षा करने के लिये इन की माता ने मकनपुर के पीर मदार शाह की मनौती मानी थी और उन्हीं की दुआ से इन की जान बची। पर मनौती पूरी करने के पहले ही इन की माता का स्वर्गवास हो गया और इन के पिता तो पहले ही मर चुके थे। कवि के एकाक्ष होने का प्रमाण पद्मावत की इस पंक्ति से मिलता है —

एक नयन कवि महमद गुनी।

एक दोहे में इस बात का भी उल्लेख मिलता है कि बीमारी में इन की बाँई आँख तो फूटी थी ही, साथ ही बाँयां कान भी बहरा हो गया था। वह दोहांश नीचे दिया जाता है—

मुहम्मद बाईं दिसि तजा एक सरवन एक आँखि।

इन किंवदंतियों तथा अन्य ऐतिहासिक वृत्तांतों से यह स्पष्ट हो जाता है कि शीतला देवी ने इन के शरीर और स्वरूप के साथ मनमाना अत्याचार किया था। इन के अत्यंत कुरूप होने का प्रमाण इस कथा से मिलता है। एक बार अवध का कोई राजा जो इन्हें पहचानता नहीं था, इन के कुरूप चेहरे को देखकर हंसा।

इस पर जायसी ने इन से केवल इतना ही कहा—"मोंहि का हंसेसि कि कोंहरहि," अर्थात् तू मुझ पर हंसा कि उस कुम्हार (निर्माता, ईश्वर) पर ? कहते हैं कि इस पर वह बड़ा लज्जित हुआ और बाद में इन का परिचय जानने पर बहुत तरह से इन से क्षमा माँगी ।

इन के जीवन काल का कुछ अनुमान पद्मावत के रचनाकाल से लगता है जो कि इन्होंने उक्त ग्रंथ में दे दिया है—

सन् नव सै सैंतालिस अहा । कथा अरंभ बैन कवि कहा ॥

इस ग्रंथ का आरंभ सन् ९४७ हिजरी अथवा तदनुसार संवत् १५९७ में हुआ था । यह शेरशाह का राजत्वकाल था और ग्रंथारंभ में कवि ने इस की प्रशंसा में भी बहुत से पद्य लिखे हैं । बस इसी से जायसी के आविर्भाव और कविताकाल का स्थूल अनुमान किया जा सकता है ।

जायसी के गुरु शेख़ मोहिदी (मुहीउद्दीन) थे । इनकी गुरुपरंपरा का वर्णन जायसी की 'पद्मावत' और 'अखरावट' दोनों में मिलता है । यह परंपरा निज़ामुद्दीन औलिया से आरंभ होती है । इस की प्रतिलिपि नीचे दी जाती है—
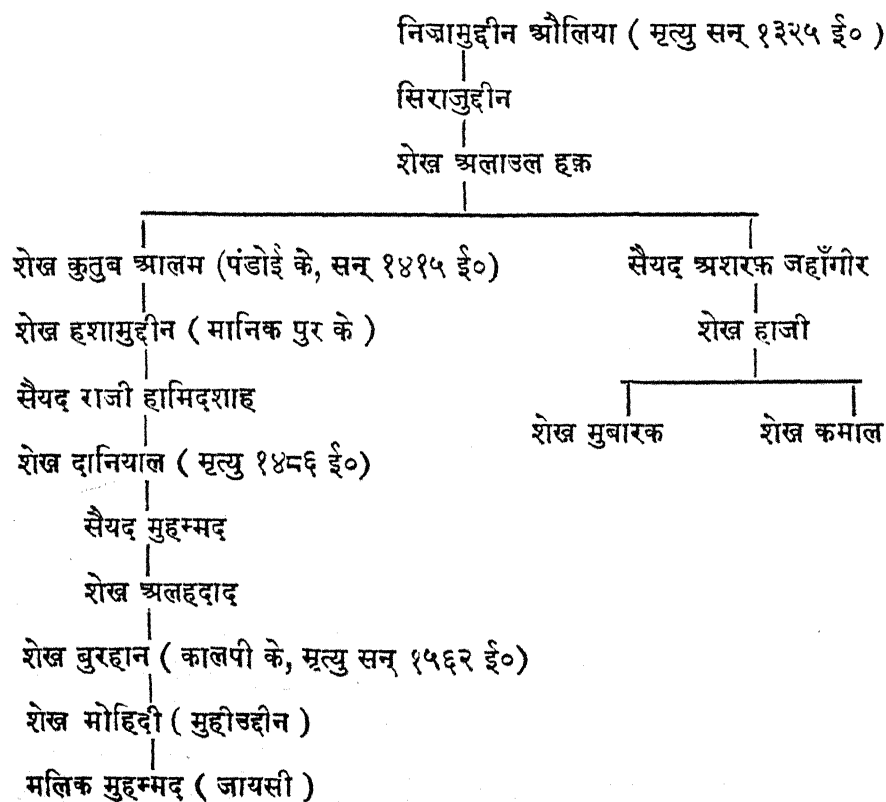
उपर्युक्त परंपरा जायसी के अनुयायी मुसलमानों में अब तक प्रचलित है। पद्मावत में दी हुई वंशावली इस से कुछ भिन्न है। अखरावट में इन्होंने अपनी गुरु-परंपरा का इस प्रकार वर्णन किया है—

पा—पाएउं गुरु मोहदी मीठा। मिला पंथ सो दरसन दीठा॥
नाँव पियार सेख बुरहानू। नगर कालपी हुत गुरु थानू॥
औ तिन्ह दरस गोसांई पावा। अलहदाद गुरु पंथ लखावा॥
अलहदाद गुरु सिद्ध नवेला। सैयद मुहमद के वै चेला॥
सैयद मुहमद दीनहि सांचा। दानियाल सिख दीन्ह सुबाचा॥
जुग जुग अमर सा हजरत ख्वाजे। हजरत नबी रसूल नेवाजे॥
दानियाल तहँ परगट कीन्हा। हजरत ख्वाज खिजिर पथ दीना॥

दोनों वंशावलियों का मिलान करने से मालूम होगा कि शेख दानियाल तक तो दोनों एक हैं, पर इस के आगे जायसी की दी हुई वंशावली में दानियाल के गुरु हामिदशाह और इन के ऊपर के गुरुओं का उल्लेख नहीं है। अस्तु, यह तो हुई जायसी की वास्तविक गुरुपरंपरा। परंतु इन के ग्रंथ को देखने से यह स्पष्ट हो जाता है कि इन्होंने अन्य संप्रदाय वालों से भी बहुत कुछ संस्कृति और ज्ञानोपार्जन किया था। इन की रचनाओं में योग, तथा वेदांत दर्शन के बहुत से सिद्धांतों का सूफ़ी संप्रदाय के सिद्धांतों के साथ एक बड़ा रुचिर संमिश्रण देखने में आता है जो शायद अन्य किसी भी कवि की रचना में दुष्प्राप्य है। परमात्मा की प्राप्ति के लिये भिन्न भिन्न आचार्यों ने जितने मार्ग दिखाए हैं उन में से किसी की भी इन्होंने कबीर की भांति तीव्र आलोचना नहीं की है। जहाँ जिस की चर्चा की है वहाँ उस के प्रति श्रद्धा ही प्रगट की है। पर इस के साथ ही एक सच्चे मुसलमान की भाँति मुहम्मद साहेब के बताए हुए मार्ग को सब से सुगम और अतएव उसे सर्वश्रेष्ठ माना है। नीचे लिखी हुई चौपाइयों से यह बात स्पष्ट हो जायगी—

बिधिना के मारग हैं ते ते। सरग नखत तन रोवाँ जेते॥
तिन्ह महं पंथ कहौं भल गाई। जेहि दूनौ जग छाज बड़ाई॥
सो बड़ पंथ मुहम्मद केरा। है निरमल कैलास बसेरा॥

जायसी की एक मुख्य विशेषता यही है कि एक सच्चे पहुँचे हुए फ़कीर या साधक की भाँति ये सदा दैन्य भाव से ही रहे। न तो इन्होंने कबीर आदि की भाँति अपना कोई नया पंथ ही चलाने का विचार किया और न इन्होंने अपनी फ़कीरी के संबंध में किसी प्रकार की गर्वोक्ति ही की। कबीर का तो यहाँ तक दावा था कि जिस चादर (चोला या शरीर) को सुर, नर, मुनि सब ने ओढ़कर धब्बा लगा दिया उसे मैंने ज्यों की त्यों धर दी। जायसी की भगवद्-भक्ति में अहंकार के लिये स्थान नहीं था। उन्हें हम सदा एक विनयावनत जिज्ञासु के रूप में ही देखते हैं।

इन के एक मात्र आश्रयदाता तत्कालीन अमेठी के महाराज माने जाते हैं। अमेठी दरबार में इन का प्रवेश इस प्रकार हुआ। एक बार इन का कोई शिष्य अमेठी में जाकर इन का रचा हुआ नागमती का बारहमासा (पद्मावत का एक प्रकरण) गा गा कर भीख माँग रहा था। लोगों ने इसे बहुत पसंद किया और इसे राजा साहब के पास ले जाकर उन्हें भी इसे सुनवाया। राजा साहब को भी यह बहुत पसंद आया और खास कर उन्हें यह दोहा बहुत ही अच्छा लगा था—

कंवल जो विगसा मानसर, बिनु जल गएउ सुखाइ।
सूखि बेलि पुनि पलुहै, नौ पिउ सींचै आइ॥

इस शिष्य से पूछने पर मालूम हुआ कि यह मलिक मुहम्मद नामक एक संत कवि की रचना है। राजा साहब ने तुरंत बड़े आदर और आग्रह से उन्हें बुलावा भेजा और वहां आने के बाद जायसी वहीं रहने लगे और वहीं पद्मावत की रचना भी पूरी हुई। कहते हैं कि अमेठी के राजा के कोई संतति नहीं थी और इन्हीं की दुआ से उन का वंश चला। तब से इन की मान प्रतिष्ठा उक्त दरबार में बहुत बढ़ गई और लोग इन्हें कोई असाधारण सिद्ध पुरुष समझकर दूर दूर से इन के दर्शनों को आने लगे। इन के देहावसान होने पर अपने कोट के सामने ही इन की कब्र बनवाई गई जो अद्यावधि वर्तमान है।

जायसी के ग्रंथ

'पद्मावत' और 'अखरावट' नाम के जायसी रचित केवल दो ही ग्रंथ प्राप्त और प्रकाशित हैं। इन में मुख्य पद्मावत है जो कि अवधी का प्रबंध-काव्य है। यह ग्रंथ दोहा चौपाइयों में है और इसी के ढंग पर सौ वर्ष बाद गोस्वामी तुलसीदास ने अपने जगत्प्रसिद्ध ग्रंथ रामचरित-मानस की रचना की थी।

प्रेमगाथा-साहित्य

प्रेमगाथा का प्रादुर्भाव

जायसी से क़रीब सौ सवा सौ वर्ष पहिले ही हिंदू और मुसलमान जनता सांप्रदायिक विद्वेष को बहुत कुछ किनारे कर एक दूसरे की संस्कृति, उपासना और विचार आदि को सहानुभूतिपूर्वक समझने और परस्पर इन के आदान प्रदान की ओर रुचि करने लगी थी। यद्यपि तत्कालीन मुसलमान शासकों का भाव हिंदू-प्रजा के प्रति उतना सहानुभूतिपूर्ण नहीं था तथापि हिंदू और मुसलमान प्रजा में एक प्रकार का भ्रातृभाव स्थापित हो चला था और वह उत्तरोत्तर दृढ़ से दृढ़तर होता चला जा रहा था। मुसलमान प्रजा यह समझने लगी थी कि यदि हमें हिंदुस्तान में रहना ही है तो हिंदुओं के विश्वास, संस्कृति तथा साहित्य आदि के प्रति छत्तीस होकर रहना असंभव है। शायद यही कारण था कि तत्कालीन कुछ मुसलमान विचारक, फ़क़ीर और कवि हिंदुओं के साहित्य और संस्कृति के अध्ययन की ओर

तो झुके ही पर कुछ ने हिंदुओं की तत्कालीन काव्यभाषा में साहित्य निर्माण का भी श्री गणेश किया। इन लोगों ने इस बात को ठीक ठीक समझ लिया था कि दोनों संप्रदायों के लोगों में एक दूसरे की संस्कृति और साहित्य के प्रचार और लोकप्रिय बनाने से बढ़कर आपस में घनिष्ठता और सौहार्द स्थापित करने का दूसरा उपाय नहीं हो सकता। इसी विचार से प्रेरित हो कर खुसरो, कबीर और जायसी आदि कुछ दूरदर्शी कवियों ने इस दिशा की ओर पैर बढ़ाया और इस में उन्हें अच्छी सफलता भी मिली।

सब से पहले खुसरो ही इस कार्य में अग्रसर हुए। खुसरो की कविता का एक बहुत बड़ा भाग लुप्त हो गया है, तो भी जो प्राप्त है उस से उन की हिंदुओं के धर्मग्रंथ, संस्कृति तथा साहित्य आदि के प्रति पूरी श्रद्धा और सहानुभूति स्पष्ट है। कबीर का मार्ग सब से निराला था। इन्हों ने दोनों की बुराइयों का प्रतिवाद करते हुए उन्हें प्रेम के साधारण सूत्र में बाँधने की चेष्टा की। इन के प्रतिवाद प्रायः इतने तीव्र परंतु सच्चे हुआ करते थे कि दोनों ही संप्रदायों के कट्टर और धर्मांध लोग इन के घोर विरोधी हो गए। पर इतना होते हुए भी दोनों ही संप्रदायों की अधिकांश जनता पर इन की शिक्षाओं का बड़ा प्रभाव पड़ा और दोनों ही जातियों की अधिकांश जनता जो धार्मिक कट्टरपन की बहँक से बरी थी, कबीर की अनुयायी हुई, इस के बाद कुतुवन और जायसी आदि का समय आता है। कबीर की उद्दंड उक्तियों से जो बात नहीं हुई वह इन की प्रेमगाथाओं से हुई।

प्रेमगाथाओं का लक्ष्य

इन लोगों ने अपनी प्रेमगाथाओं द्वारा यह सिद्ध कर दिखाया कि सभी मनुष्यों के हृदय में, चाहे वह हिंदू हो या मुसलमान या कोई हो प्रेमभावना का वही बीज समान रूप से अंकुरित होता है। इन लोगों ने आख्यानक-काव्य द्वारा यह दिखलाया कि किसी के रूप, गुण से आकर्षित हो कर उस से एक होने की इच्छा करना, इस कार्य की सिद्धि के लिए नाना प्रकार के असह्य कष्ट झेलना, अंत में उस की प्राप्ति से सुख, फिर इस के वियोग के दुख और प्रेम की पीर, आदि हृदय के विविध भाव और उस की तरंगें, क्या हिंदू क्या मुसलमान सभी के हृदय में समान रूप से उठती हैं। इन लोगों ने मुसलमान होकर हिंदू घरानों में प्रचलित प्राचीन प्रेम-कहानियों को उन्हीं की भाषा में कहा, पर अपने ढंग से ; और इस प्रकार यह सिद्ध कर दिया कि जहां प्रेम है वहां जाति, संप्रदाय या मतमतांतर का भेद कोई अर्थ नहीं रखता। इस प्रकार की प्रेमगाथा लिखने वालों में सब से पहले कवि जिन की रचना प्राप्य है, शेख़ कुतुबन हैं। ये चिश्तीवंश के शेख़ बुरहान के शिष्य थे और इन की रचित 'मृगावती' (निर्माण काल ९०९ हिजरी अर्थात् १५५८ वि०) इस प्रकार का पहला आख्यानक काव्य है। इस में अवधी बोली में दोहा चौपाइयों में चंद्रनगर के राजा गणपतिदेव के राजकुमार और कंचन नगर के राजा रूपमुरार की राजकन्या मृगावती की प्रेम-कहानी वर्णित है।

हम ऊपर कह चुके हैं कि इन लोगों ने कहीं तो इन्होंने हिंदुओं की कहानियां पर उन्हें अपने ढंग से कहीं। ढंग से यहां मेरा मतलब है इन की रचनाओं के ढांचे और वर्णन शैली से। भारतीय साहित्य में प्रबंधकाव्यों की जो सर्गबद्ध प्रथा पुराकाल से चली आ रही थी उस से इन्होंने काम नहीं लिया। इन्होंने फ़ारसी की मसनवियों को आदर्श बनाया। इन में विस्तार के अनुसार कथा सर्गों या अध्यायों में विभक्त नहीं होती। एक सिरे से इन का क्रम अखंड रूप से बराबर चला जाता है, केवल कहीं कहीं घटनाओं या प्रसंगों का उल्लेख शीर्षकों के रूप में दे दिया जाता है, जैसे—'सात समुद्र खंड' राजा गढ़ छेंका खंड' या 'राजा बादशाह युद्ध खंड', इत्यादि। मसनवियों के रचना के संबंध में कुछ विशेष साहित्यिक परंपराओं के पालन का प्रतिबंध नहीं होता। इन में केवल इतना ही आवश्यक होता है कि सारी रचना केवल एक ही छंद में हो, पर कथावस्तु के संबंध में एक परंपरा का पालन अवश्य करना पड़ता था। आरंभ में परमेश्वर, नबी और तत्कालीन बादशाह की स्तुति मसनवियों में अनिवार्य समझी जाती थी। इस परंपरा का पालन जायसी और कुतुबन आदि सभी प्रेमगाथाकारों ने नियम से किया है। छंद भी इन लोगों ने आद्योपांत दोहा चौपाई ही (सात सात या कहीं कहीं नौ नौ चौपाइयों के बाद एक एक दोहा) रक्खा है। चौपाइयों की विषम संख्या देखकर यह धारणा होती है कि ये लोग दो ही चरणों से चौपाई पूरी मानते रहे होंगे, पर जैसा कि 'चौपाई' शब्द ही से स्पष्ट है, चार चरणों में एक चौपाई पूरी होती है। तुलसी दास जी ने ऐसा ही किया है।

गाथाओं की विशेषताएं

सब से मार्के की बात इन प्रेमगाथाओं के संबंध में यह है कि ये सभी अवधी में और दोहा चौपाई छंद में ही लिखी गई हैं। अब तक प्रायः दस प्रेमगाथाओं का पता लग चुका है पर उन में के प्रकाशित संस्करण केवल तीन ही हमारे देखने में आए हैं। पर सभों की भाषा, शैली तथा विषय निर्वाह आदि के संबंध में आश्चर्य-जनक समानता पाई गई है। यहां तक कि लेखकों के भिन्न भिन्न नाम यदि न बताए जायँ तो पाठक यही समझेगा कि ये सब एक ही लेखक की लिखी हुई हैं! विषय प्रायः सभों में कुछ कुछ इसी ढंग का होता है — कोई राजकुमार किसी राजकुमारी के रूप गुण की प्रशंसा सुन या प्रत्यक्ष या स्वप्न या चित्र में देख कर आकर्षित होता है। उधर भी यही हालत होती है। अंत में वह कुछ विश्वस्त साथियों को साथ ले कर उस की खोज में चल पड़ता है। प्रायः उसे कोई मार्गप्रदर्शक भी मिल जाता है। यह अधिकतर राजकुमारी का भेजा हुआ कोई दूत था दूत का काम करने वाला कोई पक्षी या तोता हुआ करता है। राह में उसे बड़ी विघ्न-बाधाओं का सामना करना पड़ता है। कई बार उसे फलागम होते होते कोई ऐसा विघ्न या कोई ऐसी भूल उस से हो जाती है जिस से उस की

प्रेमगाथाओं का रूप और विषय

उद्देश्यसिद्धि फिर एक अनिश्चित काल तक के लिए रुक जाती है। कारागार और प्राण-संकट तक की नौबत आती है। रक्त-पात और युद्धवर्णन भी इन आख्यायिकाओं का एक आवश्यक अंग होता है। इन के संबंध में यह सदा स्मरण रखना चाहिए कि इन कहानियों का आधार सदा ऐतिहासिक होता है और बहुत सी घटनाएं भी ऐतिहासिक होती हैं, यद्यपि कवि उस में अपनी आवश्यकतानुसार हेर फेर किए रहता है। पर इन इतिहासमूलक कथानकों के अतिरिक्त कवि अपनी इच्छा या आवश्यकता के अनुसार एक या अधिक काल्पनिक कथानक भी मिला देता है। यह प्रायः चरितनायक के उत्कर्ष को बढ़ाने और कथा में अलौकिक या आध्यात्मिक पक्ष को स्पष्ट करने के उद्देश्य से होता है।

प्रेमगाथाओं में रहस्यवाद

इन प्रेमगाथाओं का सब से महत्त्वपूर्ण वह अंश होता है जिस का संबंध अध्यात्म या रहस्यवाद से होता है। लौकिक कथा के द्वारा कवि जो परोक्ष की ओर संकेत करता है वही शायद रचना का प्रधान उद्देश्य रहता था। कथा के अंत में कवि स्पष्ट रूप से कह देता है कि यह सारी कथा अन्योक्ति रूप में कही गई है और उसी रूप में कथा को समझने के लिए वह पाठक से अनुरोध करता है। उदाहरणार्थ पद्मावत में नायक रतनसेन को साधक समझना चाहिए। पद्मावती को प्राप्त करने की इच्छा से जो उस के हृदय में प्रेम की पीर उठती है उसे ईश्‍वरोन्मुख प्रेम या लगन समझना चाहिए। पद्मावती तक पहुँचने की राह बताने वाले 'सुआ' को गुरु, राघव दूत को शैतान, रानी नागमती को सांसारिक बंधन, तथा सुलतान अलाउद्दीन को माया का प्रतिनिधि या शैतान बताया गया है। निम्नलिखित चौपाइयां देखिए—

मैं एहि अरथ पंडितन्ह बूझा। कहा कि हम्ह किछु और न सूझा॥
चौदह भुवन जो तर उपराहीं। ते सब मानुष के घट माहीं॥
तन चितउर मन राजा कीन्हा। हिय सिंघल बुधि पदमिनि चीन्हा॥
गुरू सुआ जेइ पंथ देखावा। बिनु गुरु जगत को निरगुन पावा?॥
नागमती यह दुनिया-धंधा। बाँचा सोइ न एहि चित बंधा॥
राघव दूत सोइ सैतानू। माया अलाउद्दी सुलतानू॥
प्रेम-कथा एहि भाँति बिचारहु। बूझि लेहु जौ बूझै पारहु॥

इस प्रकार अंतिम चौपाई में कवि एक प्रकार से चुनौती सी दे देता है कि यदि उक्त रीति से कथा को समझ सको तो समझ लो।

पद्मावत की कथा

अब यहां पर पद्मावत की कथा भी संक्षेप से दे देना आवश्यक है। सिंहल द्वीप के राजा गंधर्वसेन की पुत्री पद्मावती रूप-गुण में अद्वितीय थी, यहां तक कि उस के योग्य वर कहीं नहीं मिलता था। उस के पास हिरामन नाम का एक तोता था जो कि बड़ा विद्वान् और वाक्पटु था। पद्मावती के वर न मिलने के संबंध में वह एक दिन

अपने विचार प्रकट कर रहा था पर संयोग से राजा ने उस के विचारों को सुन लिया जिस से उसे बड़ा क्रोध आया और उस ने तोते को अपने यहां से निकलवा दिया। इधर उधर कुछ दिनों तक भटकने के बाद हिरामन रतनसेन के यहां पहुँचा और उस ने उसे अपने यहां रख भी लिया। एक दिन जब वह कहीं शिकार खेलने गया तब उस की रानी नागमती ने हिरामन से पूछना आरंभ किया कि 'हिरामन तू तो दुनिया में बहुत घूमा फिरा है, बता तो तूने कहीं मेरे समान कोई और भी सुंदरी देखी है?' हिरामन ने सिंहलद्वीप की राजकुमारी पद्मावती की चर्चा करते हुए कहा कि 'उस में और तुम में दिन और अँधेरी रात का अंतर है।' यह सुन कर रानी ने बड़े क्रोध में आकर उसे मरवा डालने की आज्ञा दे दी। पर चेरियों ने राजा के भय से उसे मारा नहीं, केवल एक जगह छिपा कर रख दिया। शिकार से लौटने पर अपने प्यारे तोते को न पाकर रतनसेन का मिजाज बहुत बिगड़ा, यहां तक कि अंत में उस के गुस्से से डर कर बांदियों ने हिरामन को उस के सामने लाकर रख दिया। पूछने पर उस ने सब वृत्तांत कह सुनाया और प्रसंगवश पद्मावती के सौंदर्य का भी वर्णन किया। राजा के हृदय पर उस की सुनी हुई सुंदरता का ही इतना गहरा प्रभाव पड़ा कि वह मूर्छित होकर गिर ही पड़ा और होश में आने पर योगीवेश में सिंहलगढ़ की ओर चल पड़ा और सोलह हज़ार उस के साथी राजकुमार भी योगी का बाना धारण कर उस के साथ हो लिये। इस योगियों की पलटन का नेता और मार्गप्रदर्शक वही हिरामन तोता था।

अंत में अनेक विघ्न-बाधाएं झेलते हुए दुर्गम समुद्र पार कर यह विचित्र दल सिंघल द्वीप पहुंचा और रतनसेन ने एक मंदिर में, जहां कभी कभी पद्मावती पूजन करने आया करती थी, पड़ाव डाला और वहीं पद्मावती की मानसिक पूजा में लीन हो गया। कुछ समय के उपरांत श्री पंचमी के पर्व के दिन पद्मावती वहां पूजन के निमित्त आई पर रतनसेन ऐन मौक़े पर चूक गया। वह उसे देखते ही मूर्छित हो गया। तोते ने महल में जाकर उस की करुण कहानी पद्मावती को कह सुनाई। पद्मावती ने कहला भेजा कि वक़्त पर तो तुम चूक गए अब इस दुर्गम सिंहलगढ़ तक चढ़ो तभी मुझे देख सकते हो। राजा अपने साथी जोगियों सहित किले में घुसा पर गढ़ में पहुँचते पहुँचते सवेरा हो गया और वह वहीं पकड़ा गया। राजा के सामने उस का विचार हुआ और उसे सूली पर चढ़ाने की आज्ञा दी गई। पर यह हाल देख कर उस के साथी योगियों ने गढ़ घेर लिया और उन की सहायता के लिये शिव, हनुमान आदि सारे देवता भी उन के दल में मिल गए। फल यह हुआ कि गंधर्वसेन की सारी सेना हार गई। उस ने जोगियों के बीच जब साक्षात शिव को लड़ते हुए तो देखा तो वह दौड़ कर उन के पैरों पर गिर पड़ा और बोला, "महाराज पद्मावती आप की है जिसे चाहिए उसे दीजिए।" अब रतनसेन के मार्ग में कोई रुकावट न थी। उस का विवाह पद्मावती से हो गया और वह उसे लेकर चित्तौर गढ़ लौट भी आया।

रतनसेन के दरबार में राघवचेतन नामक एक पंडित रहता था। वह बड़ा तांत्रिक था और उसे यक्षिणी सिद्ध थी। उस ने अपनी माया से दरबार के अन्य पंडितों को बड़ा नीचा दिखाया। राजा को इस पर बड़ा क्रोध आया और उसने उसे देश निकाले का दंड दे दिया। राघव इस अपमान का बदला लेने की नीयत से दिल्ली के तत्कालीन बादशाह अलाउद्दीन के पास पहुँचा और उस से पद्मावती के रूप की बड़ी प्रशंसा की। अलाउद्दीन ने उसे प्राप्त करने के अनेक उपाय किए, रतनसेन से कई बार युद्ध हुआ पर प्रत्येक बार उसे नीचा देखना पड़ा। अंत में संधि हुई और धोखे से उसने रतनसेन को पकड़ लिया और कहवा दिया कि जब पद्मावती मेरे पास आएगी तभी रतनसेन छूट सकेंगे। इस पर रानी ने कहलवा दिया कि मैं सात सौ बांदियों के साथ तुम्हारे पास आ रही हूँ और एक बार राजा से अंतिम साक्षात् कर उन्हें चित्तौर रवाना कर तुम से आ मिलूँगी। इस में सुलतान ने कोई आपत्ति नहीं की। पर इन सात सौ पालकियों के अंदर, और उन के ढोने वाले कहार सब वीर राजपूत योद्धा थे। सुलतान के खीमों में पहुँच कर इधर तो रतनसेन को छुड़ा कर एक घोड़े पर बैठा कर वीर बादल के साथ चित्तौर रवाना कर दिया गया और उधर गोरा इन राजपूत वीरों के साथ यवनों को रोके रहा। चित्तौर पहुंचने पर पद्मावती ने कुंभलानेर के राजा देवपाल द्वारा अपने पास दूती भेजी जाने की बात कही। इस पर राजा ने कुंभलनेर जा घेरा और दोनों एक दूसरे से लड़ते हुये वीर गति को प्राप्त हुए। इधर जब नागमती और पद्मावती के पास यह समाचार पहुँचा तो दोनों सहर्ष अपने पति के शव के साथ सती हो गईं। बाद में जब अलाउद्दीन गढ़ में पहुँचा तो उसे जलती हुई चिताओं को छोड़ कर और कुछ नहीं दिखाई पड़ा।

कथा में कल्पना और इतिहास का सम्मिश्रण

इस कहानी का पूर्वार्द्ध तो प्रायः पूरा कल्पित है पर उत्तरार्द्ध ऐतिहासिक घटनाओं के आधार पर है। इस के नायक नायिका दोनों ही इतिहास-प्रसिद्ध पात्र हैं और जायसी यद्यपि मुख्य मुख्य स्थलों पर ऐतिहासिक आधार का अनुसरण करते हुये चले हैं तथापि अपनी अपूर्व कल्पना और अनुभूति के साहाय्य से वे पूरी कथा को एक ऐसा रूप देने में सफल हुये हैं जो जनता के हृदय में परंपरा से अवस्थित था और यही कारण है कि यह कथा इतनी लोकप्रिय हुई।

जायसी की कविता

भाषा

जायसी की भाषा ठेठ अवधी है। अवधी में इतनी बड़ी और व्यापक प्रबंध-रचना सब से पहले इन्हीं की मिलती है। गोस्वामी तुलसीदास जी ने रामचरित मानस की रचना के समय इन की पद्मावती को बहुत सी बातों में आदर्श बनाया होगा। कम से कम मानस का बाह्य रूप और विशेषतः उस की भाषा तो पद्मावती से बहुत कुछ मिलती जुलती

है, अंतर केवल इतना ही है कि मानस में हम अवधी का परिमार्जित, सुसंस्कृत और सर्वथा साहित्यिक रूप देखते हैं पर पद्मावत में यह अपने ठेठ रूप में है और प्रायः ग्रामीणता लिये हुये है। जायसी उतने काव्यकला-कुशल तो थे नहीं पर साथ ही यह भी मानना पड़ेगा कि जिस भाषा का प्रयोग उन्हों ने किया है उस पर उन्हें पूरा अधिकार था। तुलसी की भाषा जो इतनी सुसज्जित या साहित्यिक कही जाती है उस का कारण है उन का संस्कृत का गंभीर पांडित्य। मानस की चौपाइयों का माधुर्य, उन का ओज तथा उन की साहित्यिकता बहुत कुछ उन में प्रयुक्त संस्कृत की कोमल-कान्त पदावली पर निर्भर करती है। जायसी में यह कमी है, या यों कहिये कि यही उन की खूबी है। अवधी का स्वाभाविक माधुर्य जायसी की ही भाषा में प्रस्फुटित हो पाया है। यह कहना कठिन है कि तुलसी ने अपने चुने हुये संस्कृत के तत्सम शब्दों या वाक्यांशों के आभूषण भार से उस को शोभा को सचमुच और प्रदीप्त करके दिखाया है या उस की नैसर्गिक शोभा को ढाँक दिया है।

६ यों तो जायसी ने अपने काव्य में प्रायः सभी रसों का समावेश किया है पर उन की स्वाभाविक रुचि विप्रलंभ-शृंगार की ओर जान पड़ती है।

रस और अलंकार

संभोग-शृंगार, वीर, और करुणा में भी इन्हें अच्छी सफलता मिली है। यद्यपि जायसी का रस-वर्णन भारतीय कविपरंपरा-प्रणाली के अनुसार ही हुआ है, तथापि कुछ बातों में इन का ढंग सब से निराला है। उर्दू कवियों के वियोग-वर्णन में प्रायः जो एक प्रकार की वीभत्सता पाई जाती है उस की प्रचुरता पद्मावत में भी है, और शृंगार के संभोग पक्ष के संबंध में यह भी कहा जा सकता है कि वह बहुत परिष्कृत अथवा कोमल नहीं है। उस में मिठास या प्रेमनिर्भरता की मात्रा इतनी अधिक हो गई है कि कुछ लोगों को उस में ग्रामीणता या अश्लीलता की बू भी मिल सकती है। वीर-रस का वर्णन इन का सर्वत्र शृंगार की आड़ लिये हुए है और उसी के आधार पर स्थित जान पड़ता है। वीर के साथ ही उचित अवसरों पर रौद्र, भयानक और वीभत्स भी अपनी अपनी छटा दिखाते हैं। 'राजा-बादशाह युद्ध खंड' में वीर, और 'लक्ष्मी-समुद्र खंड' में भयानक रस का बड़ा सुंदर समावेश हुआ है। परंतु एक बार फिर कहना पड़ेगा कि यह सभी ग्रंथ के स्थायी रस-शृंगार के आधार पर स्थित हैं। ग्रंथ के स्थायीरस पर विचार करते समय एक बात और स्मरण रखनी पड़ेगी। यह सारा ग्रंथ एक प्रकार से अन्योक्ति के रूप में है। कवि ने अंत में स्पष्ट कर दिया है कि इस में वर्णित नायक-नायिका के प्रेम को साधारण लौकिक प्रेम न समझ कर साधक का ईश्वरोन्मुख प्रेम समझना चाहिए। इस दृष्टि से ग्रंथ का स्थायीरस शांत मानना पड़ेगा।

७ अलंकारों के संबंध में भी जायसी ने अधिकतर कवि-कुलागत पद्धति का ही अनुसरण किया है। इन के अलंकारों में सादृश्यमूलक अलंकारों का ही एक

प्रकार से साम्राज्य है। यद्यपि अलंकारों के प्रयोग में इन्होंने अधिकतर भारतीय काव्य-पद्धति को ही आदर्श माना है तथा स्थान स्थान पर फ़ारसी कवित्व की भी झलक स्पष्ट है, विशेष कर करुण रस और विरह वर्णन के अवसरों पर। अलंकारों का समावेश दो उद्देश्यों से होता है। प्रस्तुत विषय को स्पष्ट करने और भाव को प्रदीप्त करने के लिये। और भी उद्देश्य हो सकते हैं पर मुख्य यही दोनों होते हैं। इस के साथ ही भावुक कवि अलंकारों के प्रयोग के समय इस बात का बड़ा ध्यान रखता है कि कहीं उस के द्वारा प्रयुक्त अलंकार से रस के परिपाक में बाधा न पड़े। प्रायः लोग वर्णन को स्पष्ट करने के लिये ऐसी उपमा या उत्प्रेक्षा आदि रख देते हैं जिस से एक प्रकार से वर्णन तो स्पष्ट हो जाता है पर साथ ही रंग में भंग भी हो जाता है। जायसी भी स्थान स्थान पर इस दोष के भागी हुए हैं। विरह-वर्णन के समय शृंगार को वीभत्स के आधारभूत करना इन के लिये साधारण बात है। नख सिख वर्णन के समय इन की उपमा और उत्प्रेक्षाएं, विशेषतः हेतूत्प्रेक्षाएँ, भिन्न भिन्न वर्णनीय अंगों की विशेषताओं का तो बहुत स्पष्ट परिचय देती हैं पर साथ ही हँसी भी आती है। शृंगार रस के लिये अलंकार भी वैसे ही होने चाहिए जिन से सौंदर्य भावना में व्याघात न पड़े। पर जायसी की उड़ान तो कहीं कहीं उपहासास्पद सी जान पड़ने लगती है।

प्रबंध-कुशलता

पद्मावत एक बृहत् प्रबंध-काव्य है। इस में कवि को थोड़े से ऐतिहासिक आधार पर एक बहुत बड़ी इमारत खड़ी करनी पड़ी है। किसी भी इमारत का सर्वांगसुंदर बनना असंभव है और फिर जायसी के सामने ऐसे आदमी भी नहीं थे जिन से वे कोई विशेष लाभ उठा सकते। मधुमालती, मुग्धावती, मृगावती, तथा प्रेमावती, आदि कुछ प्रेमगाथाओं का उल्लेख पद्मावत में मिलता है और इस से यह स्पष्ट है कि जायसी के पहले कुछ कवि इस प्रकार की प्रेमगाथा-काव्यों की रचना कर चुके थे पर इस से यह निष्कर्ष निकालना कि इन्हीं को आदर्श मान कर जायसी ने अपने ग्रंथ की रचना की होगी, भूल है। पहले तो उक्तगाथाओं में से मुग्धावती और प्रेमावती का अभी तक पता ही नहीं लगा। मधुमालती और मृगावती की खंडित प्रतियां नागरी प्रचारिणी सभा को देखने में मिली हैं। इन का जो भाग देखने में आया है उन से यह किसी प्रकार सिद्ध नहीं होता कि जायसी ने अपनी प्रबन्धकल्पना में इन को आदर्श बनाया होगा। सारांश यह कि इतने विस्तृत और व्यापक रूप से एक प्रबंधकाव्य की रचना में जायसी का प्रयास बहुत कुछ मौलिक था। अब यहां पर देखना यह है कि इन को इस काम में कहां तक सफलता मिली है। किसी भी प्रबंधकाव्य की सफलता की विवेचना के पहले यह देखना चाहिए कि कवि का दृष्टिकोण क्या रहा है। क्या अपनी कथा के परिणाम द्वारा कवि किसी विशेष आदर्श को स्थापित करना चाहता है अथवा उस का उद्देश्य कथा के रूप में कोई

सुंदर वस्तु पाठकों के सामने उपस्थित करना है। यह तो हम तुरत कह सकते हैं कि इस रचना में किसी आदर्श विशेष को सामने रख कर उसे स्थापित करने के उद्देश्य से पात्रों के स्वाभाविक विकास अथवा घटनाओं के नैसर्गिक प्रवाह को किसी खास दिशा की ओर नहीं मोड़ा गया है, फिर जायसी और भारतीय काव्य-परम्परा के प्राचीन आदर्श — 'अंत भले का भला और बुरे का बुरा,' — के भी क़ायल नहीं थे। इस के प्रमाण में इतना ही कहना यथेष्ट होगा कि इस कथा का अंत बड़ा करुण और अत्यंत दुखांत है, सब आपत्तियों के टलने के बाद नायक नायिका आदि सभी मुख्य पात्र मृत्युमुख में पतित होते हैं और सारे फसाद की जड़ उस राघव चेतन, या अलाउद्दीन ही का, कोई परिणाम-दुखद या सुखद-दिखलाना कवि ने आवश्यक नहीं समझा। और फिर कथा के इतने करुण अंत को कविने उपसंहार में एक विचित्र रूप से शांत रस में परिणत कर दिया है। पर्यवसान के समय कवि इस चातुरी से अपना दृष्टिकोण दार्शनिक बना लेता है जिस से यह स्पष्ट भासित होने लगता है कि मनुष्य के वास्तविक जीवन का वास्तविक अंत दुःखमय नहीं बल्कि सांसारिक माया-मोह से उदासीन और पूर्ण रूप से शांत होना चाहिए। इस धारणा का कारण यही है कि जहाँ कवि ने कथा के बीच बीच में नागमती और पद्मावती को प्रिय-वियोग में अत्यंत खिन्न और विषाद पूर्ण दिखलाया है वहाँ प्रिय के निधन अवसर पर भी विषादपूर्ण करुण-क्रंदन अपेक्षित था। पर ऐसा नहीं हुआ। हम देखते हैं कि रतनसेन के मरने पर दोनों महिषियों का विलाप में रत न हो शोक से उदासीन होकर एक शांतिमय आनंद के साथ मृतपति के साथ सती हो जाती हैं। यही हाल वीरगति को प्राप्त अन्य पुरुषों की स्त्रियों का भी दिखलाया गया है। सब कुछ शेष हो जाने पर अलाउद्दीन जब बड़ी बड़ी उम्मीदें बाँधता हुआ गढ़ में घुसा तो इस के सामने एक ऐसा दृश्य आया जिस की उसे स्वप्न में भी आशा न थी। वह दृश्य इस लोक का नहीं था। उस के हृदय पर भी इस दृश्य का गहरा प्रभाव पड़े बिना नहीं रह सका। सतियों के चिताओं की एक मुट्ठी भस्म उसने उठाई और दुनियाँ का इसी (भस्म) की भाँति झूठी समझा —

"छार उठाइ लीन्ह एक मूठी। दीन्ह उठाइ पिरिथिवी झूँठी"

सिंहलद्वीप वर्णन खंड

सिंहलद्वीप-वर्णन खंड

सिंहलदीप कथा अब गावौं। औ सो पदमिनि बरनि सुनावौं ॥
निरमल दरपन भाँति बिसेखा। जो जेहि रूप सो तैसइ देखा ॥
धनि सो दीप जहँ दीपक बारी। औ पदमिनि जो दई सँवारी ॥
सात दीप बरनै सब लोगू। एकौ दीप न ओहि सरि जोगू ॥
दिया दीप नहिं तस उँजियारा। सरनदीप सरि होइ न पारा ॥
जँबू दीप कहौं तस नाहीं। लंकदीप सरि पूज न छाहीं ॥
दीप गभस्थल आरन परा। दीप महुस्थल मानुस-हरा ॥

सब संसार परथमैं, आए सातौं दीप।
एक दीप नहिं उत्तिम, सिंहलदीप समीप ॥

गंध्रबसेन सुगंध नरेसू। सो राजा, वह ताकर देसू ॥
लंका सुना जो रावन राजू। तेहु चाहि बड़ ताकर साजू ॥
छप्पन कोटि कटक दल साजा। सबै छत्रपति औ गढ़-राजा ॥
सोरह सहस घोड़ घोड़सारा। स्यामकरन अरु बाँक तुखारा ॥
सात सहस हस्ती सिंघली। जनु कैलास एरावत बली ॥
अस्वपतिक-सिरमौर कहावै। गजपतीक आँकुस-गज नावै ॥
नरपतीक कहँ और नरिंदू। भूपतीक जग दूसर इंदू ॥

ऐस चक्कवै राजा चहूँ खंड भय होइ।
सबै आइ सिर नावहिं सरबरि करै न कोइ ॥

जबहिं दीप नियरावा जाई। जनु कैलास नियर भा आई ॥
घन अमराउ लाग चहुँ पासा। उठा भूमि हुत लागि अकासा ॥
तरिवर सबै मलयगिरि लाई। भइ जग छाँह रैनि होइ आई ॥
मलय समीर सोहावन छाहाँ। जेठ जाड़ लागै तेहि माहाँ ॥
ओही छाँह रैनि होइ आवै। हरियर सबै अकास देखावै ॥
पथिक जो पहुँचै सहि कै घामू। दुख बिसरै, सुख होइ बिसरामू ॥
जेइ वह पाई छाँह अनूपा। फिरि नहिं आइ सहै यह धूपा ॥

अस अमराउ सघन घन, बरनि न पारौं अंत।
फूलै फरै छवै ऋतु, जानहु सदा बसंत ॥

फरे आँब अति सघन सोहाए। औ जस फरे अधिक सिर नाए ॥
कटहर डार पींड सन पाके। बड़हर, सो अनूप अति ताके ॥
खिरनी पाकि खाँड़ असि मीठी। जामुन पाकि भँवर असि डीठी ॥
नरियर फरे, फरी फरहरी। फुरै जानु इंद्रासन पुरी ॥

पुनि महुवा चुअ अधिक मिठासू । मधु जस मीठ, पुहुप जस बासू ॥
और खजहजा अनबन नाऊँ । देखा सब राउन अमराऊँ ॥
लाग सबै जस अमृत साखा । रहै लोभाइ सोइ जो चाखा ॥
लवँग सुपारी जायफर, सब फर फरे अपूर ।
आस पास घन इमिली, औ घन तार खजूर ।
बसहिं पंखि बोलहिं बहु भाखा । करहिं हुलास देखि कै साखा ॥
भोर होत बोलहिं चुहचूही । बोलहिं पाँडुक "एकै तूही" ॥
सारौं सुआ जो रहचह करहीं । कुरहिं परेवा औ करबरहीं ॥
"पीव पीव" कर लाग पपीहा । "तुही तुही" कर गडुरी जीहा ॥
"कुहू कुहू" करि कोइलि राखा । औ भिंगराज बोल बहु भाखा ॥
"दही दही" करि महरि पुकारा । हारिल बिनवै आपन हारा ॥
कुहकहिं मोर सोहावन लागा । होइ कुराहर बोलहिं कागा ॥
जावत पंखी जगत के, भरि बैठे अमराउँ ।
आपनि आपनि भाषा लेहिं दई कर नाउँ ॥
पैग पैग पर कुवाँ बावरी । साजी बैठक और पाँवरी ॥
और कुंड बहु ठावहिं ठाऊँ । सब तीरथ औ तिन्ह के नाऊँ ॥
मठ मंडप चहुँ पास सँवारे । तपा जपा सब आसन मारे ॥
कोइ सु ऋषीसुर, कोइ सन्यासी । कोइ रामजती बिस्वासी ॥
कोई ब्रम्हाचर पथ लागे । कोइ सो दिगंबर बिचरहिं नाँगे ॥
कोई सु महेसुर जंगम जती । कोइ एक परखै देवी सती ॥
कोइ सुरसती कोई जोगी । कोई निरास पथ बैठ बियोगी ॥
सेवरा, खेवरा, बानपर, सिध, साधक, अवधूत ।
आसन मारे बैठ सब, जारि आतमा भूत ॥
मानसरोदक बरनौं काहा । भरा समुद अस अति अवगाहा ॥
पानि मोति अस निरमल तासू । अमृत आनि कपूर सुबासू ॥
लंक दीप कै सिला अनाई । बाँधा सरवर घाट बनाई ॥
खँड खँड सीढ़ी भई गरेरी । उतरहिं चढ़हिं लोग चहुँ फेरी ॥
फूला कँवल रहा होइ राता । सहस सहस पखुरिन कर छाता ॥
उलथहिं सीप, मोति उतिराहीं । चुगहिं हंस औ केलि कराहीं ॥
खनि पतार पानी तहँ काढ़ा । छीरसमुद्र निकसा हुत बाढ़ा ॥
ऊपर पाल चहूँ दिसि, अमृत-फल सब रूख ।
देखि रूप सरवर कै, गै पियास औ भूख ॥
पानि भरै आवहिं पनिहारी । रूप सुरूप पदमिनी नारी ॥
पदुमगंध तिन्ह अंग बसाहीं । भँवर लागि तिन्ह संग फिराहीं ॥

लंक - सिंघिनी, सारँगनैनी। हंसगामिनी कोकिलबैनी ॥
आवहिं झुंड सो पाँतिहिं पाँती। गवन सोहाइ सु भाँतिहिं भाँती ॥
कनक कलस मुखचंद दिपाहीं। रहस केलि सन आवहिं जाहीं ॥
जा सहुँ वै हेरैं चख नारी। बाँक नैन जनु हनहिं कटारी ॥
केस मेघावर सिर ता पाईं। चमकहिं दसन बीजु कै नाईं ॥

माथे कनक गागरी आवहिं रूप अनूप।
जेहि के असि पनहारी सो रानी केहि रूप ॥

ताल तलाव बरनि नहिं जाहीं। सूझै वार पार किछु नाहीं ॥
फूले कुमुद सेत उजियारे। मानहुँ उए गगन महँ तारे ॥
उतरहिं मेघ चढ़हिं लेइ पानी। चमकहिं मच्छ बीजु कै बानी ॥
पौंरहिं पंख सुसंगहिं संगा। सेत पीत राते बहु रंगा ॥
चकई चकवा केलि कराहीं। निसिक बिछोह, दिनहिं मिलि जाहीं ॥
कुररहिं सारस करहिं हुलासा। जीवन मरन सो एकहिं पासा ॥
बोलहिं सोन ढेक बगलेदी। रही अबोल मीन जल-भेदी ॥

नग अमोल तेहि तालहिं, दिनहिं बरहिं जस दीप।
जो मरजिया होइ तहँ, सो पावै वह सीप ॥

आस पास बहु अमृत बारी। फरीं अपूर, होइ रखवारी ॥
नारंग नींबू सुरंग जँभीरा। औ बदाम बहु भेद अँजीरा ॥
गलगल तुरंज सदाफर फरे। नारंग अति राते रस भरे ॥
किसमिस सेव फरे नौ पाता। दारिउँ दास देखि मन राता ॥
लाग सुहाई हरफारयौरी। उनै रही केरा कै घौरी ॥
फरे तूत कमरख औ न्योजी। रायकरौंदा बेर चिरौंजी ॥
संगतरा व छुहारा दीठे। और खजहजा खाटे मीठे ॥

पानि देहिं खंड़वानी कुवहिं खांड़ बहु मेलि।
लागी घरी रहंट कै सीचहिं अमृतबेलि ॥

पुनि फुलवारि लागि चहुँ पासा। बिरिछ बेधि चन्दन भइ बासा ॥
बहुत फूल फूलीं घनबेली। केवड़ा चम्पा कुंद चमेली ॥
सुरंग गुलाल कदम औ कूजा। सुगँध बकौरी गंध्रब पूजा ॥
जाही जूही बगुचन लावा। पुहुप सुदरसन लाग सुहावा ॥
नागेसर सदबरग नेवारीं। औ सिंगारहार फुलवारीं ॥
सानजरद फूलीं सेवती। रूपमंजरी और मालती ॥
मौलसिरी बेइलि औ करना। सबै फूल फूले बहु बरना ॥

तेहिं सिर फूल चढ़हिं वै जेहि माथे मनि भाग।
आछहिं सदा सुगन्ध बहु जनु बसंत औ फाग ॥

सिंहलनगर देखु पुनि बसा। धनि राजा अस जे कै दसा ॥
ऊँची पौरी ऊंच अवासा। जनु कैलास इन्द्र कर बासा ॥
राव रंक सब घर घर सुखी। जो दीखै सो हंसता-मुखी ॥
रचि रचि साजे चन्दन चौरा। पोते अगर मेद औ गौरा ॥
सब चौपारहिं चन्दन खँभा। ओंठँधि सभापति बैठे सभा ॥
मनहुँ सभा देवतन्ह कर जुरी। परी दीठि इंद्रासन पुरी ॥
सबै गुनी औ पंडित ज्ञाता। संसकिरित सब के मुख बाता ॥

असकै मंदिर सवारैं जनु सिवलोक अनूप।
घर घर नारि पदमिनी मोहहिं दरसन रूप ॥

पुनि देखी सिंहल कै हाटा। नवो निद्धि लछिमी सब बाटा ॥
कनक हाट सब कुहकुह लीपी। बैठ महाजन सिंघलदीपी ॥
रचहिं हथौड़ा रूपन ढारी। चित्र कटाव अनेक सँवारी ॥
सोन रूप भल भयउ पसारा। धवल सिरी पोतहिं घर बारा ॥
रतन पदारथ मानिक मोती। हीरा लाल सो अनबन जोती ॥
औ कपूर बेना कस्तूरी। चंदन अगर रहा भरपूरी ॥
जिन्ह एहि हाट न लीन्ह बेसाहा। ता कहँ आन हाट कित लाहा ॥

कोई करै बेसाहनी काहू केर बिकाइ।
कोई चलै लाभ सन कोई मूर गँवाइ ॥

पुनि सिंगारहाट भल देसा। किए सिंगार बैठी तहँ बेसा ॥
मुख तमोल, तन चीर कुसुंभी। कानन कनक जड़ाऊ खुंभी ॥
हाथ बीन सुनि मिरिग भुलाहीं। नर मोहहिं सुनि, पैग न जाहीं ॥
भौंह धनुष तिन्ह नैन अहेरी। मारहिं बान सान सौं फेरी ॥
अलक कपोल डोल हँसि देहीं। लाइ कटाछ मारि जिउ लेहीं ॥
कुछ कंचुक जानौ जुग सारी। अंचल देहिं सुभावहिं ढारी ॥
केत खिलार हारि तेहि पासा। हाथ झारि उठि चलहिं निरासा ॥

चेटक लाइ हरहिं मन जब लहि होइ गथ फेंट।
साठनाठ उठि भए बटाऊ ना पहिचान न भेंट ॥

लेइ के फूल बैठि फुलहारी। पान अपूरब धरे सँवारी ॥
सोंधा सबै बैठ लै गाँधी। फूल कपूर खिरौरी बांधी ॥
कतहूँ पंडित पढ़हिं पुरानू। धरम पंथ कर करहिं बखानू ॥
कतहूँ कथा कहै किछु कोई। कतहूँ नाच-कूद भल होई ॥
कतहुँ चिरहँटा पंखी लावा। कतहुँ पखंडी काठ नचावा ॥
कतहूँ नाद सबद होइ भला। कतहूँ नाटक चेटक-कला ॥
कतहुँ काहु ठगविद्या लाई। कतहुँ लेहिं मानुष बौराई ॥

चरपट चोर गँठिछोरा मिले रहहिं ओहि नाच ॥
जो ओहि हाट सजग भा गथ ताकर पै बाँच ॥

पुनि आए सिंहलगढ पासा । का बरनौं जनु लाग अकासा ॥
तरहिं करिन्ह बासुकि कै पीठी । ऊपर इंद्रलोक पर दीठी ॥
परा खोह चहुँ दिसि अस बाँकी । काँपै जाँघ, जाइ नहिं झाँकी ॥
अगम असूझ देखि डर खाई । परै सो सपत-पतारहिं जाई ॥
नव पौरी बाँकी, नवखंडा । नवौ जो चढै जाइ बरम्हंडा ॥
कंचन कोट जरे नग सीसा । नखतहिं भरी बीजु जनु दीसा ॥
लंका चाहि ऊँच गढ़ ताका । निरखि न जाइ, दीठि मन थाका ॥

हिय न समाइ दीठि नहिं, जानहुँ ठाढ़ सुमेर ।
कहँ लगि कहौं उँचाई कहँ, लगि बरनौं फेर ॥

नितिगढ़ बाँचि चलै ससि सूरू । नाहिं त होइ बाजि रथ चूरू ॥
पौरी नवौ बज्र कै साजी । सहस सहस तहँ बैठे पाजी ॥
फिरहिं पाँच कोतवार सुभौंरी । काँपै पाँव चपत वह पौरी ॥
पौरिहि पौरि सिंघ गढ़ि काढ़े । डरपहिं लोग देखि तँह ठाढ़े ॥
बहुबिधान वै नाहर गढ़े । जनु गाजहिं चाहहिं सिर चढ़े ॥
टारहिं पूँछ, पसारहिं जीहा । कुंजर डरहिं कि गुंजरि लोहा ॥
कनक-सिला गढ़ि सीढी लाई । जगमगाहिं गढ़ ऊपर ताई ॥

नवैखंड नव पौरी औ तहँ बज्र-केवार ।
चारि बसेरे सौं चढै, सत सौं उतरै पार ॥

नव पौरी पर दसवँ दुवारा । तेहि पर बाज राज घरियारा ॥
घरी सो बैठि गनै घरियारी । पहर पहर सो आपनि बारी ॥
जबहीं घरी पूजि तेहिं मारा । घरी घरी घरियार पुकारा ॥
परा जो डाँड़ जगत सब डाँड़ा । का निचिंत माटी कर भाँड़ा ॥
तुम्ह तेहि चाक चढ़े हौ काँचे । आएहु रहै, न थिर होइ बाँचे ॥
घरी जो भरी घटी तुम्ह आऊ । का निचिंत होइ सोउ बटाऊ ॥
पहरहिं पहर गजर निति होई । हिया बजर, मन जाग न सोई ॥

मुहमद जीवन जल भरन रहँट घरी कै रीति ।
घरी जो आई ज्यो भरी, ढरी-जनम गा बीति ॥

गढ़ पर नीर खीर दुइ नदी । पनिहारी जैसे दुरपदी ॥
और कुंड एक मोतीचूरू । पानी अमृत, बीच कपूरू ॥
ओहि क पानि राजा पै पीया । बिरिध होइ नहिं जौ लहि जीया ॥
कंचन-बिरिछ एक तेहि पासा । जस कलपतरु इंद्र कैलासा ॥
मूल पतार, सरग ओहि साखा । अमरबेलि को पाव, को चाखा ॥
चाँद पात औ फूल तराई । होइ उजियार नगर जहँ ताई ॥

वह फल पावै तप करि कोई । बिरिध खाइ तौ जोबन होई ॥
राजा भए भिखारी सुनि वह अमृत भोग ।
जेइ पावा सो अमर भाई, ना किछु व्याधि न रोग ॥

गढ पर बसाहिं झारि गढ़पती । असुपति गजपति भू-नर-पती ॥
सब धौराहर सोने साजा । अपने अपने घर सब राजा ॥
रूपवंत धनवंत सभागे । परस-पखान पौरि तिन्ह लागे ॥
भोग विलास सदा सब माना । दुख चिंता कोइ जनम न जाना ॥
मँदिर मँदिर सब के चौपारी । बैठि कुँवर सब खेलहिं सारी ॥
पासा ढरहिं खेल मल होई । खड़गदान सरि पूज न कोई ॥
भाँट बरनि कहि कीरति भली । पावहिं हस्ति घोड़ सिंहली ॥
मँदिर मँदिर फुलवारी चोवा चंदन वास ।
निसि दिन रहै बसंत तहँ छवौ ऋतु बारह मास ॥

पुनि चलि देखा राज दुआरा । मानुष फिरहिं पाइ नहिं बारा ॥
हस्ति सिंघली बाँधे बारा । जनु सजीव सब ठाढ़ पहारा ॥
कौनौ सेत पीत रतनारे । कौनौ हरे धूम औ कारे ॥
बरनहिं बरन गगन जस मेघा । औ तिन्ह गगन पीठि जनु ठेघा ॥
सिंघल के बरनौं सिंघली । एक एक चाहि एक एक बली ॥
गिरि पहार वै पैगहि पेलहिं । बिरिछ उचारि डारि मुख मेलहिं ॥
माते तेइँ सब गरजहिं बाँधे । निसि दिन रहहिं महाउत काँधे ॥
धरती भार न अँगवै, पावँ धरत उठ हालि ।
कुरुम टुटै भुइँ फाटै, तिन्ह हस्तिन्ह के चाल ॥

पुनि बाँधे रजबार तुरंगा । का बरनौं जस उन्हकै रंगा ॥
लील, समंद चाल जग जाने । हाँसल, भौंर, गियाह बखाने ॥
हरे, कुरंग, महुआ बहु भाँती । गरर, कोकाह, बुलाह सु पाँती ॥
तीख तुखार चाँड़ औ बाँके । सँचरहिं पौरि ताज बिनु हाँके ॥
मन ते अगमन डोलहिं बागा । लेत उसास गगन सिर लागा ॥
पौन-समाज समुद्र पर धावहिं । बूड़ न पावँ, पार होइ आवहिं ॥
थिर न रहहिं रिस लोह चबाहीं । भाँजहिं पूँछ, सीस उपराहीं ॥
अस तुखार सब देखे जनु मन के रथवाह ।
नैन-पलक पहुँचावहिं जहँ पहुँचा कोइ चाह ॥

राज सभा पुनि देख बईठी । इंद्रसभा जनु परि गै डीठी ॥
धनि राजा असि सभा सँवारी । जानहु फूलि रही फुलवारी ॥
मुकुट बाँधि सब बैठे राजा । दर निसान नित जिन्हके बाजा ॥
रूपवंत, मनि दिपै ललाटा । माथे छात, बैठ सब पाटा ॥
मानहुँ कवल सरोवर फूले । सभा क रूप देखि मन भूले ॥

पान कपूर मेद कस्तूरी। सुगँध बास भरि रही अपूरी॥
माँझ ऊँच इंद्रासन साजा। गंध्रबसेन बैठ तहँ राजा॥
छत्र गगन लगि ताकर, सूर तवै जस आप।
सभा कंवल अस बिगसइ, माथे बड़ परताप॥
साजा राजमंदिर कैलासू। सोने कर सब धरति अकासू॥
सात खंड धौराहर साजा। उहै सँवारि सकै अस राजा॥
हीरा ईंट, कपूर गिलावा। औ नग लाइ सरग लै लावा॥
जावत सबै उरेह उरेहे। भाँति भाँति नग लाग उबेहे॥
भा कटाव सब अनबन भाँती। चित्र कोरि कै पाँतिहिं पाँती॥
लाग खंभ मनि-मानिक जरे। निसि दिन रहिं दीप जनु बरे॥
देखि धौरहर कर उँजियारा। छपि गए चाँद सूरुज औ तारा॥
सुना सात बैकुंठ जस तस साजे खँड सात।
बेहर बेहर भाव तस खंड खंड उपरात॥
बरनौं राजमँदिर रनिवासू। जनु अछरीन्ह भरा कैलासू॥
सोरह सहस पदमिनी रानी। एक एक तें रूप बखानी॥
अति सुरूप औ अति सुकुवाँरी। पान फूल के रहहि अधारी॥
तेहिं ऊपर चंपावति रानी। महा सुरूप पाट-परधानी॥
पाट बैठि रह किए सिंगारू। सब रानी ओहि करहिं जोहारू॥
निति नौरंग सुरंगम सोई। प्रथम बैस नहिं सरवरि कोई॥
सकल दीप महँ जेती रानी। तिन्ह महँ दीपक बारह-बानी॥
कुँवरि बतीसो-लच्छनी, अस सब माँह अनूप।
जावत सिंघलदीप के सबै बखानैं रूप॥

मानसरोदक खंड

मानसरोदक खंड

एक दिवस पून्यो तिथि आई। मानसरोदक चली नहाई ॥
पदमावति सब सखी बुलाई। जनु फुलवारि सबै चलि आई ॥
कोइ चंपा कोइ कुंद सहेली। कोइ सुकेत करना, रस बेली ॥
कोइ सु गुलाल सुदरसन राती। कोइ सो बकावरि-बकुचन भाँती ॥
कोइ सो मौलसिरि, पुहपावती। कोइ जाही जूही सेवती ॥
कोई सोनजरद कोइ केसर। कोइ सिंगार-हार नागेसर ॥
कोइ कूजा सदबर्ग चमेली। कोई कदम सुरस रस-बेली ॥

चलीं सबै मालति सँग फूलीं कवँल कुमोद।
बेधि रहे गन गँधरब बास-परमदामोद ॥

खेलत मानसरोवर गईं। जाइ पाल पर ठाढ़ी भईं ॥
देखि सरोवर हँसैं कुलेली। पदमावति सौं कहहिं सहेली ॥
ए रानी! मन देखु बिचारी। एहि नैहर रहना दिन चारी ॥
जौ लगि अहै पिता कर राजू। खेलि लेहु जो खेलहु आजू ॥
पुनि सासुर हम गवनब काली। कित हम, कित यह सरवर-पाली ॥
कित आवन पुनि अपने हाथा। कित मिलि कै खेलब एक साथा ॥
सासु ननद बोलिन्ह जिउ लेहीं। दारुन ससुर न निसरै देहीं ॥

पिउ पियार सिर ऊपर, पुनि सो करै दहुँ काह।
दहुँ सुख राखै की दुख, दहुँ कस जनम निबाह ॥

मिलहिं रहसि सब चढ़हिं हिंडोरी। झूलि लेहिं सुख बारी भोरी ॥
झूलि लेहु नैहर जब ताईं। फिरि नहिं झूलन देइहि साईं ॥
पुनि सासुर लेइ राखिहि तहाँ। नैहर चाह न पाउब जहाँ ॥
कित यह धूप, कहाँ यह छाहाँ। रहब सखी बिनु मंदिर माहाँ ॥
गुन पुछिहि औ लाइहि दोखू। कौन उतर पाउब तहँ मोखू ॥
सासु ननद के भौंह सिकोरे। रहब सँकोचि दुवौ कर जोरे ॥
कित यह रहसि जो आउब करना। ससुरेइ अंत जनम दुख भरना ॥

कित नैहर पुनि आउब कित ससुरे यह खेल।
आपु आपु कहँ होइहि परब पंखि जस डेल ॥

सरवर तीर पदमिनी आई। खोंपा छोरि केस मुकलाई ॥
ससि मुख, अंग मलयगिरि बासा। नागिन झाँपि लीन्ह चहुँ पासा ॥
ओनई घटा परी जग छाहाँ। ससि कै सरन लीन्ह जनु राहाँ ॥

छपि गै दिनहिं भानु कै दसा। लेइ निसि नखत चाँद परगसा ॥
भूलि चकोर दीठि मुख लावा। मेघ घटा मँह चंद देखावा ॥
दसन दामिनी, कोकिल भाखी। भौहैं धनुख गगन लेइ राखी ॥
नैन खँजन दूइ केलि करेहीं। कुच-नारँग मधुकर रस लेहीं ॥
सखर रूप बिमोहा हिए हिलोरहि लेइ।
पावँ छुवै मकु पावैं एहि मिंस लहरहि देइ ॥
धरी तीर सब कंचुकि सारी। सरवर मंह पैठीं सब बारी ॥
पाइ नीर जानौं सब बेली। हुलसहिं करहिं काम कै केली ॥
करिल केस बिसहर बिस-भरे। लहरैं लेहिं कवँल मुख धरे ॥
नवल बसंत सँवारी करी। होइ प्रगट जानहु रस-भरी ॥
उठी कोंप जस दारिंव दाखा। भई उनंत पेम कै साखा ॥
सरवर नहिं समाइ संसारा। चाँद नहाइ पैठ लेइ तारा ॥
धनि सो नीर ससि तरई ऊईं। अब कित दीठ कमल औ कूईं ॥
चकई बिछुरि पुकारै कहाँ मिलौं, हो नाँह।
एक चाँद निसि सरग मँह, दिन दूसर जल माँह ॥
लागीं केलि करै मझ नीरा। हंस लजाइ बैठ ओहि तीरा ॥
पदमावति कौतुक कहँ राखी। तुम ससि होहु तराइन साखी ॥
बाद मेलि कै खेल पसारा। हार देइ जो खेलत हारा ॥
सँवरिहि साँवरि, गोरिहिं गोरी। आपनि आपनि लीन्ह सो जोरी ॥
बुझि खेल खेलहु एक साथा। हार न होइ पराए हाथा ॥
आजुहिं खेल, बहुरि कित होई। खेल गए कित खेलै कोई ॥
धनि सो खेल खेल सह पेमा। रउताई औ कूसल खेमा ॥
मुहमद बाजी पेम कै ज्यों भावै त्यों खेल।
तिल फूलहिं के संग ज्यों होइ फुलायल तेल ॥
सखी एक तेइ खेल न जाना। भै अचेत मनि-हार गँवाना ॥
कवँल डार गहि भै बेकरारा। कासों पुकारौं आपन हारा ॥
कित खेलै आइउँ एहि साथा। हार गँवाइ चलिउँ लेइ हाथा ॥
घर पैठत पूछत यह हारू। कौन उतर पाउब पैसारू ॥
नैन सीप आँसू तस भरे। जानौ मोति गिरहिं सब ढरे ॥
सखिन कहा बौरी कोकिला। कौन पानि जेहि पौन न मिला ॥
हार गँवाइ सो ऐसै रोवा। हेरि हेराइ लेइ जौं खोवा ॥
लागीं सब मिलि हेरै बूड़ि बूड़ि एक साथ।
कोइ उठी मोती लेइ काहू घोंघा हाथ ॥
कहा मानसर चाह सो पाई। पारस-रूप इहाँ लगि आई ॥
भा निरमल तिन्ह पायँन्ह परसे। पावा रूप रूप के दरसे ॥

मलय-समीर बास तन आई। भा सीतल-गै तपनि बुझाई ॥
न जानौं कौन पौन लेइ आवा। पून्य-दसा भै, पाप गँवावा ॥
ततखन हार बेगि उतिराना। पावा सखिन्ह चंद बिहँसाना ॥
बिगसा कुमुद देखि ससि-रेखा। भै तहँ ओप जहाँ जोइ देखा ॥
पावा रूप रूप जस चहा। ससि-मुख जनु दरपन होइ रहा ॥
नयन जो देखा कँवल भा, निरमल नीर सरीर।
हँसत जो देखा हंस भा, दसन-जोति नग हीर ॥

———

नखशिख खंड

नखशिख–खंड

का सिँगार ओहि बरनौं, राजा । ओहिक सिँगार ओही पै छाजा ॥
प्रथम सीस कस्तूरी केसा । बलि बासुकि, का और नरेसा ॥
भौंर केस, वह मालति रानी । बिसहर लुरे लेहिं अरघानी ॥
बेनी छोरि झार जौं बारा । सरग पतार होइ अँधियारा ॥
कोंवर कुटिल केस नग कारे । लहरन्हि भरे भुअँग बैसारे ॥
बेधे जनौं मलयगिरि बासा । सीस चढ़े लोटहिं चहुँ पासा ॥
घुंघुरवार अलकैं विषभरी । सँकरैं पेम चहैं गिउ परी ॥

अस फँदवार केस वै परा सीस गिउ फाँद ।
अस्टौ कुरी नाग सब अरुझ केस के बाँद ॥

बरनौं माँग सीस उपराहीं । सेंदुर अबहिं चढ़ा जेहि नाहीं ॥
बिनु सेंदुर अस जानहु दीआ । उजियर पँथ रैनि महँ कीआ ॥
कँचन रेख कसौटी कसी । जनु घन महं दामिनि परगसी ॥
सुरुज-किरिन जनु गगन बिसेखी । जमुना माँह सुरसती देखी ॥
खाँड़ै धार रुहिर जनु भरा । करवत लेइ बेनी पर धरा ॥
तेहि पर पूरि धरे जो मोती । जमुना माँझ गंग कै सोती ॥
करवत तपा लेहिं होइ चूरू । मकु सो रुहिर लेइ देइ सेंदूरू ॥

कनक दुवादस बानि होइ चह सोहाग वह माँग ।
सेवा करहिं नखत सब उवै गगन जस गाँग ॥

कहौं लिलार दुइज कै जोती । दुइजहि जोति कहाँ जग ओती ॥
सहस किरिन जो सुरुज दिपाई । देखि लिलार सोउ छपि जाई ॥
का सरवरि तेहिं देउँ मयंकू । चाँद कलंकी वह निकलंकू ॥
औ चाँदहि पुनि राहु गहासा । वह बिनु राहु सदा परगासा ॥
तेहि लिलार पर तिलक बईठा । दुइज-पाट जानहु धुव दीठा ॥
कनक-पाट जनु बैठा राजा । सबै सिंगार-अत्र लेइ साजा ॥
ओहि आगे थिर रहा न कोऊ । दहुँ का कहँ अस जुरै संजोऊ ॥

खरग, धनुक, चक, बान दुइ जग मारन तिन्ह नाँव ।
सुनि कै परा मुरुछि कै (राजा) मो कहं हए कुठांव ॥

भौंहैं स्याम धनुक जनु ताना । जा सहुँ हेर मार विष-बाना ॥
हनै धुनै उन्ह भौंहनि चढ़े । केइ हतियार काल अस गढ़े ? ॥
उहै धनुक किरसुन पहँ अहा । उहै धनुक राघौ कर गहा ॥

ओहि धनुक रावन संवारा। ओहि धनुक कंसासुर मारा॥
ओहि धनुक बेधा हुत राहू। मारा ओहि सहस्राबाहू॥
उहै धनुक मैं तापहँ चीन्हा। धानुक आप बेझ जग कीन्हा॥
उन्ह भौंहनि सरि केउ न जीता। अछरी छपीं छपीं गोपीता॥
भौंह धनुक, धनि धानुक, दूसर सरि न कराइ।
गगन धनुक जो ऊगै लाजहिं सो छपि जाइ॥
नैन बाँक, सरि पूज न कोऊ। मानसरोदक उलथहिं दोऊ॥
राते कँवल करहिं अलि भवाँ। घूमहिं माति चहहिं अपसवाँ॥
उठहिं तुरंग लेहिं नहिं बागा। चाहहिं उलथि गगन कहँ लागा॥
पवन झकोरहिं देइ हिलोरा। सरग लाइ भुइँ लाइ बहोरा॥
जग डोलै डोलत नैनाहाँ। उलटि अड़ार जाहिं पल माहाँ॥
जबहिं फिराहिं गगन गहि बोरा। अस वै भौंर चक्र के जोरा॥
समुद-हिलोर फिरहिं जनु झूले। खंजन लरहिं मिरिग जनु भूले॥
सुभर सरोवर नयन वै मानिक भरे तरंग।
आवत तीर फिरावहीं काल भौंर तेहि संग॥
बरुनी का बरनौं इमि बनी। साधे बान जानु दुइ अनी॥
जुरी राम रावन कै सैना। बीच समुद्र भए दुइ नैना॥
वारहिं पार बनावरि साधा। जा सहुँ हेर लाग बिष-बाधा॥
उन्ह बानन्ह अस को जो न मारा ?। बेधि रहा सगरौ संसारा॥
गगन नखत जो जाहिं न गने। वै सब बान ओही के हने॥
धरती बान बेधि सब राखी। साखी ठाढ़ देहिं सब साखी॥
रोवँ रोवँ मानुष तन ठाढ़े। सूतहि सूत बेध अस गाढ़े॥
बरुनि-बान अस ओपहँ बेधे रन बन-ढाँख।
सौजहि तन सब रोवाँ पंखिहि तन सब पाँख॥
नासिक खरग देउँ कह जोगू। खरग खीन, वह बदन-सँजोगू॥
नासिक देखि लजानेउ सूआ। सूक आइ बेसरि होइ ऊआ॥
सुआ जो पिअर हिरामन लाजा। और भाव का बरनौं राजा॥
सुआ सो नाक कठोर पँवारी। वह कोंवर तिल पुहुप सँवारी॥
पुहुप सुगंध करहिं एहि आसा। मकु हिरकाइ लेइ हम पासा॥
अधर दसन पर नासिक सोभा। दारिउँ बिंब देखि सुक लोभा॥
खंजन दुहुँ दिसि केलि कराहीं। दहुँ वह रस कोउ पाव कि नाहीं॥
देखि अमिय रस अधरन्ह भएउ नासिका कीर।
पौन बास पहुँचावै अस रम छाँड़ न तीर॥
अधर सुरंग, अमी-रस-भरे। बिंब सुरंग लाजि बन फरे॥
फूल दुपहरी जानौं राता। फूल झरहिं ज्यों ज्यों कह बाता॥

हीरा लेइ सो विद्रुम-धारा। विहंसत जगत होइ उजियारा ॥
भए मँजीठ पानन्ह रँग लागे। कुसुम-रंग थिर रहै न आगे ॥
अस कै अधर अमी भरि राखे। अबहिं अछूत, न काहू चाखे ॥
मुख तँबोल-रँग धारहिं रसा। केहि मुख जोग सो अमृत बसा? ॥
राता जगत देखि रँगराती। रुहिर भरे आछहिं विहँसाती ॥
अमी अधर अस राजा सब जग आस करेइ।
केहि कहं कंवल बिगासा को मधुकर रस लेइ ॥
दसन चौक बैठे जनु हीरा। औ बिच बिच रँग स्याम गँभीरा ॥
जस भादौं-निसि दामिनि दीसी। चमकि उठै तस बनी बतीसी ॥
वह सुजोति हीरा उपराही। हीरा-जोति सो तेहि परछाहीं ॥
जेहि दिन दसनजोति निरमई। बहुतै जोति जोति ओहि भई ॥
रवि ससि नखत दिपहिं ओहि जोती। रतन पदारथ मानिक मोती ॥
जहँ जहँ विहसि सुभावहि हँसी। तहँ तहँ छिटकि जोति परगसी ॥
दामिनि दमकि न सरवरि पूजी। पुनि ओहि जोति और को दूजी? ॥
हँसत दसन अस चमके पाहन उठे छरकि।
दारिउँ सरि जो न कै सका, फाटेउ हिया दरकि ॥
रसना कहौं जो कह रस बाता। अमृत-बैन सुनत मन राता ॥
हरै सो सुर चातक कोकिला। बिनु बसंत यह बैन न मिला ॥
चातक कोकिल रहहिं जो नाहीं। सुनि वह बैन लाज छपि जाहीं ॥
भरे प्रेम-रस बोलै बोला। सुनै सो माति घूमि कै डोला ॥
चतुरवेद-मत सब ओहि पाहाँ। रिग, जजु, साम अथरबन माहाँ ॥
एक एक बोल अरथ चौगुना। इंद्र मोह, ब्रह्मा सिर धुना ॥
अमर, भागवत, पिंगल गीता। अरथ बूझि पंडित नहिं जीता ॥
भासवती औ व्याकरन पिंगल पढ़ै पुरान।
बेद-भेद सौं बात कह सुजनन्ह लागै बान ॥
पुनि बरनौं का सुरँग कपोला। एक नारँग दुइ किए अमोला ॥
पुहुप-पंक रस अमृत सांधे। केइ यह सुरंग खिरौरा बाँधे ॥
तेहि कपोल बाँए तिल परा। जेइ तिल देख सो तिलतिल जरा ॥
जनु घुँघची ओहि तिल कर मुहीं। बिरह-बान साधे सामुहीं ॥
अगिनि-बान जानौं तिल सूझा। एक कटाछ लाख दस जूझा ॥
सो तिल गाल मेटि नहिं गएऊ। अब वह गाल काल जग भयऊ ॥
देखत नैन परी परछाहीं। तेहि तें रात साम उपराहीं ॥
सो तिल देखि कपोल पर गगन रहा धुव गाड़ि।
खिनहिं उठै खिन बूड़ै डोलै नहिं तिल छाँड़ि ॥
स्रवन सीप दुइ दीप सँवारे। कुंडल कनक रचे उजियारे ॥

मनि-कुंडल झलकैं अति लोने । जनु कौंधा लौकहिं दुइ कोने ॥
दुहुँ दिसि चाँद सुरुज चमकाहीं । नखतन्ह भरे निरखि नहिं जाहीं ॥
तेहि पर खूँट दीप दुइ बारे । दुइ धुव दुऔ खूँट बैसारे ॥
पहिरे खुंभी सिंघलदीपी । जनौं भरी कचपचिआ सीपी ॥
खिन खिन जबहि चीर सिर गहै । काँपति बीजु दुऔ दिसि रहै ॥
डरपहिं देवलोक सिंघला । परै न बीजु टूटि एक कला ॥
करहिं नखत सब सेवा स्रवन दीन्ह अस दोउ ।
चाँद सुरुज अस गोहने और जगत का कोउ ? ॥
बरनौं गीउ कंबु कै रीसी । कंचन-तार-लागि जनु सीसी ॥
कुंदै फेरि जानु गिउ काढ़ी । हरी पुछार ठगी जनु ठाढी ॥
जनु हिय काढ़ि परेवा ठाढ़ा । तेहिं तैं अधिक भाव गिउ बाढ़ा ॥
चाक चढ़ाइ साँच जनु कीन्हा । बाग तुरंग जानु गहि लीन्हा ॥
गए मयूर तमचूर जो हारे । उहै पुकारहिं साँझ सकारे ॥
पुनि तेहिं ठाँव परी तिन रेखा । घूँट जो पीक लीक सब देखा ॥
धनि ओहि गीउ दीन्ह बिधि भाऊ । दहुँ का सौं लेइ करै मेराऊ ॥
कंठसिरी मुकुतावली सोहै अभरन गीउ ।
लागै कंठहार होइ को तप साधा जीउ ? ॥
कनक-दंड दुइ भुजा कलाई । जानौं फेरि कुँदेरै भाई ॥
कदलि-गाभ कै जानौ जोरी । औ राती ओहि कँवल-हथोरी ॥
जानौ रकत हथोरी बूड़ी । रबि-परभात तात, वै जूड़ी ॥
हिया काढ़ि जनु लीन्हेसि हाथा । रुहिर भरी अँगुरी तेहि साथा ॥
औ पहिरे नग-जरी अँगूठी । जग बिनु जीउ, जीउ ओहि मूठी ॥
बाहूँ कंगन, टाड़ सलोनी । डोलत बाँह भाव गति लोनी ॥
जानौ गति बेड़िन देखराई । बाँह डोलाइ जीउ लेइ जाई ॥
भुज उपमा पौंनार नहिं खीन भएउ तेहि चिंत ।
ठाँवहिं ठाँव बेध भा ऊबि साँस लेइ निंत ॥
हिया थार, कुच कंचन लारु । कनक कचोर उठे जनु चारु ॥
कुंदन बेल साजि जनु कूँदे । अमृत रतन मनो दुइ मूँदे ॥
बेधे भौंर कंट केतकी । चाहहिं बेध कीन्ह कंचुकी ॥
जोबन बान लेहिं नहिं बागा । चाहहिं हुलसि हिये हठि लागा ॥
अगिनि-बान दुइ जानौं साधे । जग बेधहिं जौं होहिं न बाँधे ॥
उतँग जँभीर होइ रखवारी । छुइ को सकै राजा कै बारी ॥
दारिउँ दाख फरे अनचाखे । अस नारँग दहुँ का कहँ राखे ॥
राजा बहुत मुए तपि लाइ लाइ भुइँ माथ ॥
काहू छुवै न पाए गए मरोरत हाथ ॥

पेट परत जनु चंदन लावा । कुहँकुहँ केसर बरन सुहावा ॥
खीर अहार न कर सुकुवाँरा । पान फूल के रहै आधारा ॥
साम भुअंगिनि रोमावली । नाभी निकसि कँवल कहँ चली ॥
आइ दुऔ नारँग बिच-भई । देखि मयूर ठमकि रहि गई ॥
मनहुँ चढ़ी भौंरन्ह कै पाँती । चंदन-खाँभ बास कै माती ॥
की कालिंदी बिरह-सताई । चलि पयाग अरइल बिच आई ॥
नाभि-कुंड बिच बारानसी । सौंह को होइ, मीचु तहँ बसी ?॥

सिर करवत, तन करसी बहुत सीझ तेहि आस ॥
बहुत धूम घुटि घुटि मुए उतर न देइ निरास ॥

बैरिनि पीठि लीन्ह वह पाछे । जनु फिरि चली अपछरा काछे ॥
मलयागिरि कै पीठि सँवारी । वेनी नागिनि चढ़ी जो कारी ॥
लहरै देति पीठि जनु चढ़ी । चीर-ओहार केंचुली मढ़ी ॥
दहुँ का कहँ अस बेनी कीन्हीं । चंदन बास भुअंगै लीन्ही ॥
किरसुन करा चढ़ा ओहि माथे । तब तौ छूट, अब छुटै न नाथे ॥
कारे कँवल गहे मुख देखा । ससि पाछे जनु राहु बिसेखा ॥
को देखै पावै वह नागू । सो देखै जेहि के सिर भागू ॥

पन्नग पंकज मुख गहे खंजन तहाँ बईठ ॥
छत्र, सिंघासन, राज, धन ताकहँ होइ जो डीठ ॥

लंक पुहुमि अस आहि न काहू । केहरि कहौं न ओहि सरि ताहू ॥
बसा लंक बरनै जग झीनी । तेहि तें अधिक लंक वह खीनी ॥
परिहँस पियर भए तेहि बसा । लिए डंक लोगन्ह कहँ डसा ॥
मानहुँ नाल खंड दुइ भए । दुहुँ बिच लंक-तार रहि गए ॥
हिय के मुरे चलै वह तागा । पैग देत कित सहि सक लागा ? ॥
छुद्रघंटिका मोहहिं राजा । इंद्र-अखाड़ आइ जनु बाजा ॥
मानहुँ बीन गहे कामिनी । गावहिं सबै राग रागिनी ॥

सिंघ न जीता लंक सरि हारि लीन्ह बन बासु ॥
तेहि रिस मानुस-रकत पिय, खाइ मारि कै माँसु ॥

नाभिकुंड सो मलय-समीरू । समुद-भँवर जस भंवै गँभीरु ॥
बहुतै भँवर बवंडर भए । पहुँचि न सके सरग कहँ गए ॥
चंदन माँझ कुरंगिनि खोजू । दहुँ को पाउ, को राजा भोजू ॥
को ओहि लागि हिवंचल सीझा । का कहँ लिखी, ऐस को रीझा ?॥
तीवइ कवँल-सुगंध सरीरू । समुद-लहरि सोहै तन चीरू ॥
झूलहिं रतन पाट के झोंपा । साजि मैन अस का पर कोपा ? ॥
अबहिं सो अहै कवँल कै करी । न जनौ कौन भौंर कहँ धरी ॥

बेधि रहा जग बासना परिमल मेद सुगंध ।
तेहि अरघानि भौंर सब लुबुधे तजहि न बंध ॥
बरनौं नितंब लंक कै सोभा । औ गज-गवन देखि मन लोभा ॥
जुरे जंघ सोभा अति पाए । केरा-खंभ-फेरि जनु लाए ॥
कवँल-चरन अति रात बिसेखी । रहै पाट पर, पुहुमि न देखी ॥
देवता हाथ हाथ पगु लेहीं । जहँ पगु धरै सीस तहँ देहीं ॥
माथे भाग कोउ अस पावा । चरन-कँवल लेइ सीस चढ़ावा ॥
चूरा चाँद सुरुज उजियारा । पायल बीच करहिं झनकारा ॥
अनवट बिछिया नखत तराईं । पहुँचि सकै को पायँन ताईं ॥
बरनि सिंगार न जानेउँ नखसिख जैस अभोग ॥
तस जग किछुइ न पाएउँ उपमा देउँ ओहि जोग ॥

प्रेम-खंड

सुनतहि राजा गा मुरझाई। जानौं लहरि सुरुज कै आई ॥
प्रेम-घाव-दुख जान न कोई। जेहि लागै जानै पै सोई ॥
परा सो पेम-समुद्र आपारा। लहरहिं लहर होइ बिसँभारा ॥
बिरह-भौंर होइ भाँवरि देई। खिन खिन जीउ हिलोरा लेई ॥
खिनहिं उसास बूड़ि जिउ जाई। खिनहिं उठै निसरै बौराई ॥
खिनहिं पीत, खिन होइ मुख सेता। खिनहिं चेत, खिन होइ अचेता ॥
कठिन मरन तें प्रेम-बेवस्था। ना जिउ जियै न दसवँ अवस्था ॥
जनु लेनिहार न लेहिं जिउ हरहिं तरासहिं ताहि ।
एतनै बोल आव मुख करै "तराहि तराहि" ॥
जहँ लगि कुटुंब लोग औ नेगी। राजा राय आय सब बेगी ॥
जावत गुनी गारुड़ी आए। ओझा, बैद, सयान बोलाए ॥
चखहिं चेष्टा, परिखहिं नारी। नियर नाहिं ओषद तहँ बारी ॥
राजहि आहि लखन कै करा। सकति-बान मोहा है परा ॥
नहिं सो राम, हनिवँत बड़ि दूरी। को लेइ आव सजीवन-मूरी ? ॥
बिनय करहिं जे जे गढ़पाती। का जिउ कीन्ह, कौन मति मती ?॥
कहहु सो पीर, काह पुनि खाँगा ? । समुद सुमेरु आव तुम्ह माँगा ॥
धावन तहाँ पठावहु देहिं लाख दस रोक ।
होइ सो बेलि जेहि बारी, आनहिं सबै बरोक ॥
जब भा चेत उठा बैरागा। बाउर जनौं सोइ उठि जागा ॥
आवत जग बालक जस रोआ। उठा रोइ 'हा ज्ञान सो खोआ' ॥
हौं तौ अहा अमरपुर जहाँ। इहाँ मरनपुर आएउँ कहाँ ? ॥
केइ उपकार मरन कर कीन्हा। सकति हँकारि जीउ हरि लीन्हा ॥
सोवत रहा जहाँ सुख-साखा। कस न तहाँ सोवत बिधि राखा?॥
अब जिउ उहाँ, इहाँ तन सूना। कब लगि रहै परान-बिहूना ॥
जौ जिउ घटहि काल के हाथा। घट न नीक पै जीउ निसाथा ॥
अहुठ हाट तन-सरवर हिया कवँल तेहि माहँ ॥
नैनहि जानहु नीयरे, कर पहुँचत औगाह ॥
सबन्ह कहा मन समुझहु राजा। काल सेंति कै जूझ न छाजा ॥
तासौं जूझ जात जो जीता। जानत कृस्न तजा गोपीता ॥
औ न नेह काहू सौं कीजै। नाँव मिटै, काहे जिउ दीजै ॥
पहिले सुख नेहहि जब जोरा। पुनि होइ कठिन निबाहत ओरा ॥

अहुठ हाथ तन जैस सुमेरू । पहुँचि न जाइ परा तस फेरू ॥
ज्ञान-दिस्टि सौं जाइ पहूँचा । पेम अदिस्ट गगन तें ऊँचा ॥
धुव तें ऊँच प्रेम-धुव ऊआ । सिर देइ पाँव देइ सो छूआ ॥
तुम राजा औ सुखिया करहु राज-सुख भोग ।
एहि रे पंथ सो पहुँचै सहै जो दुःख वियोग ॥
सुए कहा मन बूझहु राजा । करब पिरीति कठिन है काजा ॥
तुम राजा जेइँ घर पोई । कवँल न भेंटेउ, भेंटेउ कोईं ॥
जानहिं भौंर जो तेहि पथ लुटे । जीउ दीन्ह औ दिएहु न छूटे ॥
कठिन आहि सिंघल कर राजू । पाइय नाहिं जूझ कर साजू ॥
ओहि पथ जाइ जो होइ उदासी । जोगी, जती, तपी, सन्यासी ॥
भोग किए जौं पावत भोगू । तजि सो भोग कोइ करत न जोगू ॥
तुम राजा चाहहु सुख पावा । भोगिहि जोग करत नहिं भावा ॥
साधन्ह सिद्धि न पाइय जौ लगि सधै न तप्प ।
सो पै जानै बापुरा, करै जो सीस कलप्प ॥
का भा जोग-कथनि के कथे । निकसै घिउ न बिना दधि मथे ॥
जौ लहि आप हेराइ न कोई । तौ लहि हेरत पाव न सोई ॥
पेम-पहार कठिन बिधि गढ़ा । सो पै चढ़ै जो सिर सौं चढ़ा ॥
पंथ सूरि कर उठा अंकूरू । चोर चढ़ै की चढ़ मंसूरू ॥
तू राजा का पहिरसि कंथा । तोरे घरहि माँझ दस पंथा ॥
काम, क्रोध, तिस्ना, मद, माया । पाँचौ चोर न छाँड़हिं काया ॥
नवौ सेंध तिन्ह कै दिठियारा । घर मूसहिं निसि, की उजियारा ॥
अबहू जागु अजाना होत आव निसि भोर ।
तब किछु हाथ न लागिहिं मूसि जाहिं जब चोर ॥
सुनि सो बात राजा मन जागा । पलक न मार पेम, चित लागा ॥
नैनन्ह ढरहिं मोति औ मूँगा । जस गुर खाइ रहा होइ गूँगा ॥
हिय कै जोति दीप वह सूझा । यह जो दीप अँधियारा बूझा ॥
उलटि दीठि माया सौं रूठी । पलटि न फिरीं जानि कै झूठी ॥
जौ पै नाहीं अहथिर दसा । जग उजार का कीजिय बसा ॥
गुरू बिरह-चिनगी जो मेला । जो सुलगाइ लेइ सो चेला ॥
अब करि फनिग भृंग कै करा । भौंर होहुँ जेहि कारन जरा ॥
फूल फूल फिरि पूँछौं जौ पहुँचौं ओहि केत ।
तन नेवछावरि कै मिलौं ज्यों मधुकर जिउ देत ॥
बंधु मीत बहुतै समुझावा । मान न राजा कोउ भुलावा ॥
उपजी पेम-पीर जेहि आई । परबोधत होइ अधिक सो आई ॥

अमृत बात कहत बिष जाना। पेम क बचन मीठ कै माना ॥
जो ओहि विषै मारि कै खाई। पूँछहु तेहि सन पेम-मिठाई ॥
पूँछहु बात भरथरिहि जाई। अमृत राज तजा विष खाई ॥
औ महेस बड़ सिद्ध कहावा। उनहूँ बिषै कंठ पै लावा ॥
होत आव रवि किरिन विकासा। हनुवँत होइ को देइ सुआसा ॥
तुम सब सिद्धि मनावहु होइ गनेस सिधि लेव ।
चेला को न चलावै तुलै गुरु जेहि भेव ॥

———

जोगी खंड

तजा राज, राजा भा जोगी। औ किंगरी कर गहेउ बियोगी ॥
तन बिसँभर मन बाउर लटा। अरुझा पेम, परी सर जटा ॥
चँद्र-बदन औ चंदन-देहा। भसम चढ़ाइ कीन्ह तन खेहा ॥
मेखल, सिंघी, चक्र, धँधारी। जोगबाट, रुदराछ, अधारी ॥
कंथा पहिरि दंड कर गहा। सिद्ध होइ कहँ गोरख कहा ॥
मुद्र स्रवन, कंठ जपमाला। कर उदपान, काँध बघछाला ॥
पाँवरि पाँव, दीन्ह सिर छाता। खप्पर लीन्ह भेस करि राता ॥

चला भुगुति माँगै कहँ साधि कया तप जोग।
सिद्ध होइ पदमावति जेहि कर हिये बियोग ॥

गनक कहहिं गनि गौन न आजू। दिन लेइ चलहु, होइ सिध काजू ॥
पेम-पंथ दिन घरी न देखा। तब देखै जब होइ सरेखा ॥
जेहि तन पेम कहाँ तेहि माँसू। कया न रकत नैन नहिं आँसू ॥
पंडित भूल, न जानै चालू। जीउ लेत दिन पूछ न कालू ॥
सती कि बौरी पूछहि पाँडे। औ घर पैठि कि सैंतै भाँड़े ॥
मरै जो चलै गंग-गति लेई। तेहि दिन कहाँ घरी को देई ?॥
मैं घर बार कहाँ कर पावा। घरी क आपन, अंत परावा ॥

हौं रे पथिक पखेरू जेहि बन मोर निबाहु ॥
खेलि चला तेहि बन कहँ तुम अपने घर जाहु ॥

चहुँ दिसि आन साँटिया फेरी। भै कटकाई राजा केरी ॥
जावत अहहिं सकल अरकाना। साँभर लेहु, दूरि है जाना ॥
सिंघलदीप जाई अब चाहा। मोल न पाउब जहाँ बेसाहा ॥
सब निबहै तहँ आपनि साँठी। साँठि बिना सोर ह मुखमाटी ॥
राजा चला साजि कै जोगू। आजहु बेगि चलहु सब लोगू ॥
गरब जो चढ़े तुरय कै पीठी। अब भुइँ चलहु सरग कै डीठी ॥
मंतर लेहु होहु सँग-लागू। गुदर जाइ सब होइहि आगू ॥

का निचिंत रे मानुस ! आपन चीते आछु।
लेहि सजग होइ अगमन मन पछिताव न पाछु ॥

बिनवै रतनसेन कै माया। माथे छात, पाट निति पाया ॥
बिलसहु नौ लख लच्छि पियारी। राज छाँड़ि जिनि होहु भिखारी ॥
निति चंदन लागै जेहि देहा। सो तन देख भरत अब खेहा ॥

सब दिन रहेहु करत तुम भोगू। सो कैसे साधब तप जोगू ?॥
कैसे धूप सहब बिनु छाहाँ। कैसे नींद परिहि भुईं माँहाँ ?॥
कैसे ओढ़ब काथरि कंथा। कैसे पाँव चलब तुम्ह पंथा ?॥
कैसे सहब खिनहि खिन भूखा। कैसे खाब कुरकुटा रूखा ?॥

राजपाट, दर, परिगह तुम्ह ही सौं उजियार॥
बैठि भोग रस मानहु कै न चलहु अँधियार॥

मोहिं यह लोभ सुनाव न माया। काकर सुख, काकर यह काया॥
जो निआन तहै होइहि छारा। माटिहि पोखि मरै को मारा ?॥
का भूलौं एहिं चंदन चोवा। बैरी जहाँ अंग कर रोवाँ॥
हाथ, पाँव, सरवन औ आँखी। ए सब उहाँ भरहिं मिलि साखी॥
सूत सूत तन बोलहिं दोखू। कहु कैसे होइहि गति मोखू॥
जौं मल होत राज औ भोगू। गोपिचंद नहिं साधत जोगू॥
उन्ह हिय-दीठि जो देख परेवा। तजा राज कजरी-बन सेवा॥

देखि अंत अस होइहि गुरू दीन्ह उपदेस।
सिंघलदीप जाब हम माता देहु अदेस॥

रोवहिं नागमती रनिवासू। केइ तुम्ह कंत दीन्ह बनबासू॥
अब कों हमहिं करहि भोगिनी। हमहूँ साथ होब जोगिनी॥
की हम लावहु अपने साथा। की अब मारि चलहु सेइ हाथा॥
तुम्ह अस बिछुरै पीउ पिरीता। जहँवाँ राम तहाँ सँग सीता॥
जौ लहि जिउ सँग छाँड़ न काया। करिहौं सेव पखरिहौं पाया॥
भलेहि पदमिनी रूप अनूपा। हम तें कोइ न आगरि रूपा॥
भँवै भलेहि पुरुखन कै डीठी। जिनहिं जान तिन्ह दीन्ही पीठी॥

देहिं असीस सबै मिलि तुम्ह माथे निति छात।
राज करहु चितउरगढ़ राखहु पिय अहिबात॥

तुम्ह तिरिया मति हीन तुम्हारी। मूरुख सो जो मतै घर नारी॥
राघव जो सीता सँग लाई। रावन हरी, कौन सिधि पाई ?॥
यह संसार सपन कर लेखा। बिछुरि गए जानौं नहिं देखा॥
राजा भरथरि सुना जो ज्ञानी। जेहि के घर सोरह सै रानी॥
कुच लीन्हें तरवा सहराई। भा जोगी, कोउ संग न लाई॥
जोगिहि काह भोग सौं काजू। चहै न धन घरनी औ राजू॥
जूड़ कुरकुटा भीखहि चाहा। जोगी तात भात कर काहा ?॥

कहा न मानै राजा तजी सबाईं भीर।
चला छाँड़ि कै रोवत फिरि के देइ न धीर॥

रोवत माय न बहुरत बारा । रतन चला, घर भा अँधियारा ॥
बार मोर जो राजहि रता । सो लै चला, सुआ परबता ॥
रोवहिं रानी, तजहिं पराना । नोचहिं बार, करहिं खरिहाना ॥
चूरहिं गिउ, अभरन-उर हारा । अब का पर हम करब सिंगारा ॥
जा कहँ कहहिं रहसि कै पीऊ । सोइ चला, काकर यह जीऊ ॥
मरै चहहिं, पर मरै न पावहिं । उठै आगि सब लोग बुझावहिं ॥
घरी एक सुठि भएउ अँदोरा । पुनि पाछे बीता होइ रोरा ॥

टूटै मन नै। मोती फूटे मन दास काँच ।
लीन्ह समेटि एक अभरन होइगा दुख कर नाच ॥

निकसा राजा सिंगी पूरी । छाँड़ नगर मेलि कै धूरी ॥
राय रान सब भये बियोगी । सोरह सहस कुँवर भए जोगी ॥
माया मोह हरा सेइ हाथा । देखेन्हि बूझि निआन न साथा ॥
छाँड़ेन्हि लोग कटुँब सब कोऊ । भए निनार सुख दुख तजि दोऊ ॥
सँवरै राजा सोइ अकेला । जेहि के पंथ चले होइ चेला ॥
नगर नगर औ गाँवहिं गाँवाँ । छाँड़ि चले सब ठाँवहि ठावँ ॥
का कर मढ़, का कर घर माया । ता कर सब जाकर जिउ माया ॥

चला कटक जोगिन्ह कर कै गेरुआ सब भेसु ।
कोस बीस चारिहु दिसि जानौं फूला टेसु ॥

आगे सगुन सगुनियै ताका । दहिने माछ रूप के टाँका ॥
भरे कलस तरुनी जल आई । 'दहिउ लेहु' ग्वालिनि गोहराई ॥
मालिनि आव मौर लिए गाँथे । खंजन बैठ नाग के माथे ॥
दहिने मिरिग आइ बन धाएँ । प्रतीहार बोला खर बाएँ ॥
बिरिख सँवरिया दहिने बोला । बाएँ दिसा चाषु चरि बोला ॥
बाएँ अकासी धौरी आई । लोवा दरस आइ दिखराई ॥
बाएँ कुररी दहिने कूचा । पहुँचै भुगुति जैस मन रुचा ॥

जा कहँ सगुन होहिं अस औ गवनै जेहि आस ।
अस्ट महासिधि तेहि कहँ जस कवि कहा बियास ॥

भएउ पयान चला पुनि राजा । सिंग-नाद जोगिन कर बाजा ॥
कहेन्हि आजु किछु थोर पयाना । काल्हि पयान दूरि है जाना ॥
ओहिं मिलान जौ पहुँचै कोई । तब हम कहब पुरुष भल सोई ॥
है आगे परबत कै बाटा । बिषम पहार अगम सुठि घाटा ॥
बिच बिच नदी खोह औ नारा । ठाँवहिं ठाँव बैठि बटपारा ॥
हनुवँत केर सुनब पुनि हाँका । दहुँ को पार होइ, को थाका ॥
अस मन जानि सँभारहु आगू । अगुआ केर होहु पछलागू ॥

करहिं पयान भोर उठि पंथ कोस दस जाहिं ।
पंथी पंथी जे चलहिं ते का रहहिं ओठाहिं ॥

करहु दीठि थिर होइ बटाऊ । आगे देखि धरहु भुइँ पाऊ ॥
जो रे उवट होइ परे भुलाने । गए मारि, पथ चलै न जानै ॥
पाँयन पहिरि लेहु सब पौंरी । काँट धसैं, न गड़ै अँकरौरी ॥
परे आइ बन परबत माहाँ । दंडाकरन बीझा-बन जाहां ॥
सघन ढाँख बन चहुँ दिसि फूला । बहु दुख पाव उहाँ कर भूला ॥
झाँखर जहाँ सो छाँड़हु पंथ । हिलगि मकोइ न फारहु कंथा ॥
दहिने बिदर, चँदेरी बाएँ । दहुँ कहँ होइ बाट दुइ ठाएँ ॥

एक बाट गइ सिंघल, दुसरि लंक समीप ।
हैं आगे पथ दूओ दहुँ गौनब केहि दीप ॥

ततखन बोला सुआ सरेखा । अगुआ सोइ पंथ जेइ देखा ॥
सो का उड़ै न जेहि तन पाँखु । लेइ सो परासहि बूड़त साखू ॥
जस अंधा अंधै कर संगी । पंथ न पाव होइ सहलंगी ॥
सुनु मत, काज चहसि जौं साजा । बीजानगर बिजयगिरि राजा ॥
पहुँचौ जहाँ कुंड औ गोला । तजि बाएँ अँधियार खटोला ॥
दक्खिन दहिने रहहि तिलंगा । उत्तर बाएँ गढ़-का ंगा ॥
माँझ रतनपुर सिंघदुवारा । झारखंड देइ बाँव पहारा ॥

आगे पाव उड़ैसा बएँ दिये सो बाट ।
दहिनावरत देइ कै उतरु समुद कै घाट ॥

होत पयान जाइ दिन केरा । मिरिगारन महँ भयउ बसेरा ॥
कुस-साँथरि भइ सौंर सुपेती । करवट आई बनी भुइँ सेंती ॥
चलि दस कोस ओस तन भीजा । काया मिलि तेहिं भसम मलीजा ॥
ठाँव ठाँव सब सोअहिं चेला । राजा जागै आपु अकेला ॥
जेहि के हिए पेम-रँग जामा । का तेहि भूख नींद बिसरामा ॥
बन अँधियार, रैनि अँधियारी । भादों बिहर भएउ अति भारी ॥
किंगरी हाथ गहे बैरागी । पाँच तंतु धुनि ओही लागी ॥

नैन लाग तेहि मारग पदमावति जेहि दीप ।
जैस सेवातिहि सेवै बन चातक, जल सीप ॥

———

बोहित खंड

सो न डोल देखा गजपती । राजा सत्त दत्त दुहुँ सँती ॥
अपनेहि कया, अपनेहि कंथा । जीउ दीन्ह अगुमन तेहि पंथा ॥
निहचै चला भरम जिउ खोई । साहस जहाँ सिद्धि तहँ होई ॥
निहचै चला छाँड़ि कै राजू । बोहित दीन्ह, दीन्ह सब साजू ॥
चढ़ा बेगि, तब बोहित पेले । धनि सो पुरुष पेम जेइ खेले ॥
प्रेम-पंथ जौं पहुँचै पारा । बहुरि न मिलै आइ एहि छारा ॥
तेइ पावा उत्तिम कैलासू । जहाँ न मीचु, सदा सुख-बासू ॥

एहि जीवन कै आस का? जस सपना पल आधु ।
मुहमद जियतहि जे मुए तिन्ह पुरुषन्ह कै साधु ॥

जस बन रेंगि चलै गज-ठाटी । बोहित चले, समुद गा पाटी ॥
धावहिं बोहित मन उपराहीं । सहस कोस एक पल महँ जाहीं ॥
समुद अपार सरग जनु लागा । सरग न घाल गनै बैरागा ॥
ततखन चाल्हा एक देखावा । जनु धौला गिरि परबत आवा ॥
उठी हिलोर जो चाल्ह नराजी । लहरि अकास लागि भुइँ बाजी ॥
राजा सेंती कुँवर सब कहहीं । अस अस मच्छ समुद महँ अहहीं ॥
तेहि रे पंथ हम चाहहिं गवना । होहु सँजूत बहुरि नहीं अवना ॥

गुरु हमार तुम्ह राजा, हम चेला तुम्ह नाथ ।
जहाँ पाँव गुरु राखै चेला राखै माथ ॥

केवट हँसे सो सुनत गवेजा । समुद न जानु कुवाँ कर मेजा ॥
यह तौ चाल्ह न लागै कोहू । का कहिहौ जब देखिहौ रोहू ?॥
सो अबहीं तुम्ह देखा नाहीं । जेहि मुख ऐसे सहस समाहीं ॥
राजपंखि तेहि पर मेंड़राहीं । सहस कोस तिन्ह कै परछाहीं ॥
तेइ ओहि मच्छ ठोर भरि लेहीं । सावक-मुख चारा लेइ देहीं ॥
गरजै गगन पंखि जब बोला । डोल समुद्र डैन जब डोला ॥
तहाँ चाँद औ सूर असूझा । चढ़ै सोइ जो अगुमन बूझा ॥

दस महँ एक जाइ कोइ करम, धरम, तप, नेम ।
बोहित पार होइ जब तबहि कुसल औ खेम ॥

राजै कहा कीन्ह मैं पेमा । जहाँ पेम कहँ कूसल खेमा ॥
तुम्ह खेवहु जौ खेवै पारहु । जैसे आपु तरहु मोहि तारहु ॥
मोहि कुसल कर सोच न ओता । कुसल होत जौ जनम न होता ॥

धरती सरग जाँत-पट दोऊ। जो तेहि बिच जिउ राख न कोऊ ॥
हौं अब कुसल एक पै माँगौं। पेम-पंथ सत बाँधि न खांगौं ॥
जौ सत हिय तौ नयनहिं दीया। समुद न डरै पैठि मरजीया ॥
तहँ लगि हेरौं समुद ढंढोरी। जहँ लगि रतन पदारथ जोरी ॥
सप्त पतर खोजि कै काढौं वेद गरंथ।
सात सरग चढ़ि धावौं पदमावति जेहि पंथ ॥

सात समुद्र खंड

सायर तरै हिये सत पूरा। जौ जिउ सत, कायर पुनि सूरा॥
तेइ सत बोहित कुरी चलाए। तेइ सत पवन पंख जनु लाए॥
सत साथी सत कर संसारू। सत्त खेइ लेइ लावै पारू॥
सत्त ताक सब आगू पाछू। जहँ जहँ मगर मच्छ औ काछू॥
उठै लहरि जनु ठाढ़ पहारा। चढ़ै सरग औ परै पतारा॥
डोलहि बोहित लहरैं खाहीं। खिन तर होहिं, खिनहिं उपराहीं॥
राजै सो सत हिरदै बाँधा। जेहि सत टेकि करै गिरि काँधा॥

खार समुद सो नाँघा आए समुद जहँ खीर।
मिले समुद वै सातौ बेहर बेहर नीर॥

खीर समुद का बरनौं नीरू। सेत सरूप पियत जस खीरू॥
उलथहिं मानिक, मोती, हीरा। दरब देखि मन होइ न थीरा॥
मनुआ चाह दरब औ भोगू। पंथ भुलाइ बिनासै जोगू॥
जोगी होइ मनहिं सो सँभारै। दरब हाथ कर समुद पवारै॥
दरब लेइ सोई जो राजा। जो जोगी तेहि के केहि काजा?॥
पंथिहिं पंथ दरब रिपु होई। ठग, बटपार, चोर सँग सोई॥
पंथी सो जो दरब सौं रूसे। दरब समेटि बहुत अस मूसे॥

खीर-समुद सो नाँघा, आए समुद-दधि माँह।
जो हैं नेह क बाउर तिन्ह कहँ धूप न छाँह॥

दधि-समुद्र देखत तस दाधा। पेम क लुबुध दगध पै साधा॥
पेम जो दाधा धनि वह जीऊ। दधि जमाइ मथि काढ़ै घीऊ॥
दधि एक बूँद जाम सब खीरू। काँजी-बूँद बिनसि होइ नीरू॥
साँस डाँड़ि मन मथनी गाढ़ी। हिये चोट बिनु फूट न साढ़ी॥
जेहि जिउ पेम चँदन तेहि आगी। पेम बिहून फिरै डर भागी॥
पेम कै आगि जरै जौं कोई। दुख तेहि कर न अँबिरथा होई॥
जो जानै सत आपुहिं जारै। निसत हिये सत करै न पारै॥

दधि-समुद्र पुनि पार भे, पेमहि कहा सँभार?।
भावै पानी सिर परै, भावै परै अँगार॥

आए उदधि समुद्र अपारा। धरती सरग जरै तेहि झारा॥
आगि जो उपनी ओही समुंदा। लंका जरी ओहि एक बुंदा॥
बिरह जो उपना ओहि तें गाढ़ा। खिन न बुझाइ जगत महँ बाढ़ा॥
जहाँ सो बिरह आगि कहँ डीठी। सौंह जरै, फिरि देइ न पीठी॥

जग महँ कठिन खड़ग कै धारा । तेहि तें अधिक बिरह कै भारा ॥
अगम पंथ जो ऐस न होई । साध किए पावै सब कोई ॥
तेहि समुद्र महँ राजा परा । जरा चहै पै रोवँ न जरा ॥
तलफै तेल कराह जिमि इमि तलफै सब नीर ।
यह जो मलयगिरि प्रेम कर बेधा समुद समीर ॥

सुरा-समुद पुनि राजा आवा । महुआ मद-छाता देखरावा ॥
जो तेहि पियै सो भाँवरि लेई । सीस फिरै, पथ पैगु न देई ॥
पेम-सुरा जेहि के हिय माहाँ । कित बैठे महुआ कै छाहाँ ॥
गुरु के पास दाख-रस रसा । बैरी बबुर मारि मन कसा ॥
बिरह के दगध कीन्ह तन भाठी । हाड़ जराइ दीन्ह जस काठी ॥
नैन-नीर सौं पोता किया । तस मद चुवा बरा जस दिया ॥
बिरह सरागन्हि भूँजै माँसू । गिरि गिरि परै रकत कै आँसू ॥
मुहमद मद जो पेम कर गए दीप तेहि साध ।
सास न देइ पतंग होइ तौ लगि लहै न खाध ॥

पुनि किलकिला समुद महँ आए । गा धीरज, देखत डर खाए ॥
भा किलकिल अस उठै हिलोरा । जनु अकास टूटै चहुँ ओरा ॥
उठै लहरि परबत कै नाईं । फिरि आवै जोजन सौ ताईं ॥
धरती लेइ सरग लहि बाढ़ा । सकल समुद जानहुँ भा ठाढ़ा ॥
नीर होइ तर ऊपर सोई । माथे रंभ समुद जस होई ॥
फिरत समुद जोजन सौ ताका । जैसे भँवै कोंहार क चाका ॥
मैं परलै नियराना जबहीं । मरै जो जब परलै तेहि तबहीं ॥
गै औसान सबन्ह कर देखि समुद कै बाढ़ि ।
नियर होत जनु लीलै रहा नैन अस काढ़ि ॥

हीरामन राजा सौं बोला । एही समुद आए सत डोला ॥
सिंघलदीप जो नाहिं निबाहू । एही ठाँव साँकर सब काहू ॥
एहि किलकिला समुद्र गंभीरू । जेहि गुन होइ सो पावै तीरू ॥
इहै समुद्र-पंथ मँझधारा । खाँडे कै असि धार निनारा ॥
तीस सहस्र कोस कै पाटा । अस साँकर चलि सकै न चाँटा ॥
खाँड़ैं चाहि पैनि बहुताई । बार चाहि ताकर पतराई ॥
एही ठाँव कहँ गुरु सँग लीजिय । गुरु सँग होइ पार तौ कीजिय ॥
मरन जियन एही पथहि एही आस निरास ।
परा सो गयउ पतारहि, तरा सो गा कैलास ॥

राजै दीन्ह कटक कहँ बीरा । सुपुरुष होहु, करहु मन धीरा ॥
ठाकुर जेहिक सूर भा कोई । कटक सूर पुनि आपुहि होई ॥
जौ लहि सत। न जिउ सत बाँधा । तौ लहि देइ कहाँर न काँधा ॥

पेम-समुद महँ बाँधा बेरा। यह सब समुद बूँद जेहिं केरा ॥
ना हौं सरग न चाहौं राजू। ना मोहिं नरक सेंति किछु काजू ॥
चाहौं ओहि कर दरसन पावा। जेइ मोहिं आनि पेम-पथ लावा ॥
काठहि काह गाढ़ का ढीला? । बूड़ न समुद, मगर नहिं लीला ॥
कान समुद धँसि लीन्हेसि भा पाछे सब कोइ।
कोइ काहू न सँभारै आपनि आपनि होइ ॥

कोइ बोहित जस पौन उड़ाहीं। कोई चमकि बीजु अस जाहीं ॥
कोई जस भल धाव तुखारू। कोई जैस बैल गरियारू ॥
कोई जानहुँ हरुआ रथ हाँका। कोई गरुअ भार बहु थाका ॥
कोई रेंगहिं जानहुँ चाँटी। कोई टूटि होहिं तर माटी ॥
कोई खाहिं पौन कर झोला। कोई करहिं पात अस डोला ॥
कोई परहिं भौंर जल माहां। फिरत रहहिं, कोइ देइ न बाहाँ ॥
राजा कर भा अगमन खेवा। खेवक आगे सुआ परेवा ॥
कोइ दिन मिला सबेरे कोइ आवा पछ-राति।
जा कर जस जस साजु हुत सो उतरा तेहि भाँति ॥

सतएँ समुद मानसर आए। मन जो कीन्ह साहस, सिधि पाए ॥
देखि मानसर रूप सोहावा। हिय हुलास पुरइनि होइ छावा ॥
गा अँधियार, रैनि-मसि छूटी। भा भिनसार किरिन-रवि फूटी ॥
'अस्ति अस्ति' सब साथी बोले। अँध जो अहे नैन बिधि खोले ॥
कवँल बिगस तस बिहँसी देहीं। भौंर दसन होइ कै रस लेहीं ॥
हँसहिं हंस औ करहिं किरोरा। चुनहिं रतन मुकुताहल हीरा ॥
जो अस आव साधि तप जोगू। पूजै आस, मान रस भोगू ॥
भौंर जो मनसा मानसर लीन्ह कँवलरस आइ।
घुन जो हियाव न कै सका झूर काठ तस खाइ ॥

पद्मावती-वियोग खंड

पद्मावति तेहि जोग सँजोगा । परी पेम-बस गहे बियोगा ॥
नींद न परै रैनि जौं आवा । सेज केंवाच जानु कोइ लावा ॥
दहै चंद और चंदन चीरू । दगध करै तन बिरह गंभीरू ॥
कलप समान रैनि तेहि बाढ़ी । तिल तिल भर जुग जुग जिमि गाढ़ी ॥
गहै बीन मकु रैनि बिहाई । ससि बाहन तहँ रहै ओनाई ॥
पुनि धनि सिंघ उरेहै लागै । ऐसिहि बिथा रैनि सब जागै ॥
कह वह भौंर कँवल रस-लेवा । आइ परै होइ धिरिनि परेवा ॥

से धनि बिरह-पतंग भइ, जरा चहै तेहि दीप ।
कंत न आव भिरिंग होइ, का चंदन तन लीप ॥

परी बिरह बन जानहुँ घेरी । अगम असूझ जहाँ लगि हेरी ॥
चतुर दिसा चितवै जनु भूली । सो बन कहँ जहँ मालति फूली? ॥
कँवल भौंर ओही बन पावै । को मिलाइ तन-तपनि बुझावै? ॥
अंग अंग अस कँवल सरीरा । हिय भा पियर कहै पर-पीरा ॥
चहै दरस, रबि कीन्ह बिगासू । भौंर-दीठि मनो लागि अकासू ॥
पूँछै धाय, बारि कहु बाता । तुइँ जस कवँल फूल रँग राता ॥
केसर बरन हिया भा तोरा । मानहुँ मनहिं भएउ किछु भोरा ॥

पौन न पावै संचरै, भौंर न तहाँ बईठ ।
भूलि कुरंगिनि कस भई, जानु सिंघ तुइँ दीठ ॥

धाय सिंघ बरु खातेउ मारी । की तसि रहति अही जसि बारी ॥
जोबन सुनेउँ कि नवल बसंतू । तेहि बन परेउ हस्ति मैमंतू ॥
अब जोबन-बारी को राखा । कुंजर-बिरह बिधंसै साखा ॥
मैं जानेउँ जोबन रस भोगू । जोबन कठिन सँताप बियोगू ॥
जोबन गरुअ अपेल पहारू । सहि न जाइ जोबन कर भारू ॥
जोबन अस मैमंत न कोई । नवैं हस्ति जौं आँकुस होई ॥
जोबन भर भादौं जस गंगा । लहरैं देइ, समाइ न अंगा ॥

परिउँ अथाह, धाय! हौं, जोबन-उदधि गँभीर ।
तेहि चितवौं चारिहु दिसि जो गहि लावै तीर ॥

पद्मावति तुइँ समुद सयानी । तोहि सरि समुद न पूजै, रानी ॥
नदी समाहिं समुद महँ आई । समुद डोलि कहु कहाँ समाई? ॥
अबहीं कँवल-करी हिय तोरा । आइहि भौंर जो तो कहँ जोरा ॥
जोबन-तुरी हाथ गहि लीजिय । जहाँ जाइ तहँ जाइ न दीजिय ॥

जोबन जोर मात गज अहै । गहहु ज्ञान-आंकुस जिमि रहै ॥
अबहिं बारि तुइँ पेम न खेला । का जानसि कस होइ दुहेला ॥
गगन दीठि करु नाइ तराहीं । सुरुज देखु कर आवै नाहीं ॥
जब लगि पीउ मिलै नहिं साधु पेम कै पीर ।
जैसे सीप सेवाति कहँ तपै समुद मंझ नीर ॥
दहै, धाय जोबन एहि जीऊ । जानहुँ परा अगिनि महँ घीऊ ॥
करवत सहौं होत दुइ आधा । सहि न जाइ जोबन कै दाधा ॥
बिरह समुद्र भरा असँभारा । भौंर मेलि जिउ लहरिन्ह मारा ॥
बिरह नाग होइ सिर चढ़ि डसा । होइ अगिनि चंदन महँ बसा ॥
जोबन पंखी, बिरह बियाधू । केहरि भएउ कुरंगिनि-खाधू ॥
कनक-पानि कित जोबन कीन्हा । औटन कठिन बिरह ओहि दीन्हा ॥
जोबन-जलहि बिरह मसि छूआ । फूलहिं भौंर, फरहिं भा सूआ ॥
जोबन चाँद उआ जस बिरह भएउ सँग राहु ।
घटतहि घटत छीन भइ, कहै न पारौं काहु ॥
नैन ज्यों चक्र फिरे चहुँओरा । बरजै धाय, समाहिं न कोरा ॥
कहेसि पेम जौं अपना. बारी । बाँधु सत्त, मन डोल न भारी ॥
जेहि जिउ महँ होइ सत्त पहारू । परै पहार न बाँकै बारू ॥
सती जो जरै पेम सत लागी । जौं सत हिय तौ सीतल आगी ॥
जोबन चाँद जो चौदस-करा । बिरह के चिनगी सो पुनि जरा ॥
पौन बाँध सो जोगी जती । काम बाँध सो कामिनी सती ॥
आव बसंत फूल फुलवारी । देव बार सब जैहैं बारी ॥
तुम्ह पुनि जाहु बसंत लेइ पूजि मनावहु देव ।
जीव पाइ जग जनम है पीउ पाइ कै सेव ॥
जब लगि अवधि आइ नियराई । दिन जुग जुग बिरहिनि कहँ जाई ॥
भूख नींद निसि दिन गै दोउ । हियै मारि जस कलपै कोऊ ॥
रोवँ रोवँ जनु लागहिं चाँटे । सूत सूत बेधहिं जनु काँटे ॥
दगधि कराह जरै जस घीऊ । बेगि न आव मलयगिरि पीऊ ॥
कौन देव कहँ जाइ कै परसौं । जेहि सुमेरु हिय लाइय कर सौं ॥
गुपुत जो फूलि साँस परगटै । अब होइ सुभर दहहि हम्ह घटै ॥
भा सँजोग जो रे भा जरना । भोगहि गए भोगि का करना? ॥
जोबन चंचल ढीठ है, करै निकाजै काज ।
धनि कुलवंति जो कुल धरै कै जोबन मन लाज ॥

पद्मावती सुआ भेंट खंड

तेहि बियोग हीरामन आवा। पदमावति जानहुँ जिउ पावा ॥
कंठ लाइ सूआ सौं रोई। अधिक मोह जौं मिलै बिछोही ॥
आगि उठे दुख हिये गँभीरू। नैनहिं आइ चुवा होइ नीरु ॥
रही रोइ जब पदमिनि रानी। हँसि पूछहिं सब सखी सयानी ॥
मिले रहस भा चाहिय दूना। कित रोइय जौं मिलै बिछूना? ॥
तेहि क उतर पदमावति कहा। बिछुरन दुख जो हिए भरि रहा ॥
मिलत हिए आएउ सुख भरा। वह दुख नैन-नीर होइ ढरा ॥
बिछुरंता जब भेंटै सो जानै जेहि नेह ॥
सुक्ख सुहेल उग्गवै दुःख झरै जिमि मेह ॥

पुनि रानी हँसि कूसल पूछा। कित गवनेहु पींजर कै छूँछा ॥
रानी तुम्ह जुग जुग सुख पाटू। छाज न पंखिहि पींजर ठाटू ॥
जब भा पंख कहाँ थिर रहना। चाहै उड़ा पंखि जौं डहना ॥
पींजर महँ जो परेवा घेरा। आइ मजारि कीन्ह तहँ फेरा ॥
दिन एक आइ हाथ पै मेला। तेहि डर बनोबास कहँ खेला ॥
तहाँ बियाध आइ नर साधा। छूटि न पाव मीचु कर बाँधा ॥
वै धरि बेचा बाम्हन हाथा। जंबूदीप गएउँ तेहि साथा ॥
तहाँ चित्र चितउरगढ़ चित्रसेन कर राज।
टीका दीन्ह पुत्र कहँ आपु लीन्ह सिव साज ॥

बैठ जो राज पिता के ठाऊँ। राजा रतनसेन ओहि नाऊं ॥
बरना काह देस मनियारा। जहँ अस नग उपना उँजियारा ॥
धनि माता औ पिता बखाना। जेहि के बंस अंस अस आना ॥
लछन बतीसौ कुल निरमला। बरनि न जाइ रूप औ कला ॥
वै हौं लीन्ह, अहा अस भागू। चाहै सोने मिला सोहागू ॥
सो नग देखि हींछा भइ मोरी। है यह रतन पदारथ जोरी ॥
है ससि जोग इहै पै भानू। तहाँ तुम्हार मैं कीन्ह बखानू ॥
कहाँ रतन रतनागर, कंचन कहाँ सुमेरु।
दैव जो जोरी दुहुँ लिखी मिलै सो कौनेहु फेर ॥

सुनत बिरह-चिनगी ओहि परी। रतन पाव जौं कंचन-करी ॥
कठिन पेम बिरहा दुख भारी। राज छाँड़ि भा जोगि भिखारी ॥
मालति लागि भौंर जस होई। होइ बाउर निसरा बुधि खोई ॥
कहेसि पतंग होइ धनि लेऊँ। सिंघलदीप जाइ जिउ देऊं ॥

पुनि ओहि कोउ न छाँड़ अकेला । सोरह सहस कुँवर भए चेला ॥
और गनै को संग सहाई? । महादेव मढ़ मेला जाई ॥
सूरुज पुरुष दरस के ताईं । चितवै चंद चकोर कै नाईं ॥
तुम्ह बारी रस जोग जेहि, कँवलहि जस अरघानि ।
तस सूरुज परगास कै भौंर मिलाएउँ आनि ॥
हीरामन जो कही यह बाता । सुनिकै रतन पदारथ राता ॥
जस सूरुज देखे होइ ओपा । तस भा बिरह, कामदल कोपा ॥
सुनि कै जोगी केर बखानू । पदमावति मन भा अभिमानू ॥
कंचन करी न काँचहि लोभा । जौं नग होइ पाव तब सोभा ॥
कंचन जौं कसिए कै ताता । तब जानिय दहुँ पीत कि राता ॥
नग कर मरम सो जड़िया जाना । जड़ै जो अस नग देखि बखाना ॥
को अब हाथ सिंघ मुख घालै । को यह बात पिता सौं चालै ॥
सरग इंद्र डरि काँपै बासुकि डरै पतार ।
कहां सो अस बर प्रिथिमी मोहिं जोग संसार ॥
तू रानी ससि कंचन-करा । वह नग रतन सूर निरमरा ॥
बिरह-बजागि बीच का कोई । आगि जो छुवै जाइ जरि सोई ॥
आगि बुझाइ परे जल गाढ़े । वह न बुझाइ आपु ही बाढ़ै ॥
बिरह के आगि सूर जरि कांपा । रातिहि दिवस जरै ओहि तापा ॥
खिनहिं सरग, खिन जाइ पतारा । थिर न रहै एहि आगि अपारा ॥
धनि सो जीउ दगध इमि सहै । अकसर जरै, न दूसर कहै ॥
सुलगि सुलगि भीतर होइ सावाँ । परगट होइ न कहै दुख नावाँ ॥
काह कहौं हौं ओहि सौं जेइ दुख कीन्ह निमेट ।
तेहि दिन आगि करै वह बाहा जेहि दिन होइ सो भेंट ॥
सुनि कै धनि, 'जारी अस कया' । तन भा मयन, हिये भै मया ॥
देखौं जाइ जरै कस भानू । कंचन जरे अधिक होइ बानू ॥
अब जैां मरै वह पेम-बियोगी । हत्या, मोहिं जेहि कारन जोगी ॥
सुनि कै रतन पदारथ राता । हीरामन सौं कह यह बाता ॥
जैां वह जोग संभारै छाला । पाइहि भुगुति, देहुँ जैमाला ॥
आव बसंत कुसल जैां पावौं । पूजा मिस मंडप कहँ आवौं ॥
गुरु के बैन फूल हौं गाँथे । देखौ नैन, चढ़ावौं माथे ॥
कवँल भँवर तुम्ह बरना मैं माना पुनि सोइ ।
चाँद सूर कहँ चाहिय जैां रे सूर वह होइ ॥
हीरामन जो सुना रस बाता । पावा पान भएउ मुख राता ॥
चला सुआ, रानी तब कहा । भा जो परावा कैसे रहा! ॥
जौ नीति चलै सँवारे पांखा । आजु जो रहा, काल्हि को राखा? ॥

न जनौं आजु कहाँ दुहुँ ऊआ। आएहु मिलै, चलेहु मिलि, सूआ ॥
मिलि कै बिछुर मरन कै आना। कित आएहु जौं चलेहु निदाना? ॥
सुनु रानी हौं रहतेउँ राधा। कैसे रहौं बचन कर बाँधा ॥
ता करि दिस्टि ऐसि तुम्ह सेवा। जैसे कुँज मन रहै परेवा ॥
बसै मीन जल धरती अंबा बसै अकास।
जौं पिरीत पै दुवौ महँ अंत होहिं एक पास ॥
आवा सुआ बैठ जहँ जोगी। मारग नैन, बियोग बियोगी ॥
आइ पेम-रस कहा सँदेसा। गोरख मिला, मिला उपदेसा ॥
तुम्ह कहँ गुरू मया बहु कीन्हा। कीन्ह अदेस, आदि कहि दीन्हा ॥
सबद, एक उन्ह कहा अकेला। गुरु जस भिंग फनिग जस चेला ॥
भिंगी ओहि पाँखि पै लेई। एकहि बार छीनि जिउ देई ॥
ताकहँ गुरु करै असि माया। नव औतार देइ, नव काया ॥
होइ अमर जो मरि कै जीया। भौंर कवँल मिलि कै मधु पीया ॥
आवै ऋतु बसंत जब तब मधुकर, तब बासु।
जोगी जोग जो इमि करै सिद्धि समापत तासु ॥

———

पार्वती-महेश खंड

ततखन पहुँचे आइ महेसू । बाहन बैल-कुस्टि कर भेसू ॥
काथरि कया, हड़ावरि बांधे । मुंड-माल औ हत्या कांधे ॥
सेसनाग जाके कंठमाला । तनु भभूति, हस्ती कर छाला ॥
पहुँची रुद्र कवँल कै गटा । ससि माथे औ सुरसरि जटा ॥
चँवर, घंट औ डँवरू हाथा । गौरा पारबती धनि साथा ॥
औ हनुवंत बीर संग आवा । धरे भेस बाँदर जस छावा ॥
अवतहि कहेन्हि न लावहु आगी । तेहि कै सपथ जरहु जेहि लागी ॥

की तप करै न पारेहु, की रे नसाएहु जोग? ।
जियत जीउ कस काढहु? कहहु सो मोहिं बियोग ।'

कहेसि मोहिं बातन्ह बिलँभावा । हत्या केरि न डर तोहि आवा ॥
जरै देहु, दुख जरौ अपारा । निस्तर पाइ जाउँ एक बारा ॥
जस भरथरी लागि पिंगला । मो कहँ पदमावति सिंघला ॥
मैं पुनि तजा राज औ भागू । सुनि सो नावँ लीन्ह तप जोगू ॥
एहि मढ़ सेएउँ आइ निरासा । गइ सो पूजि, मन पूजि न आसा ॥
तैं यह जिउ डाढ़े पर दाधा । आधा निकसि रहा घट आधा ॥
जो अधजर सो बिलँब न लावा । करत बिलंब बहुत दुख पावा ॥

एतना बोल कहत मुख उठी बिरह कै आगि ।
जौं महेस न बुझावत जाति सकल जग लागि ॥

पारबती मन उपना चाऊ । देखौं कुँवर केर सत भाऊ ॥
ओहि एहि बीच, कि पेमहि पूजा । तन मन एक कि मारग दूजा ॥
भइ सुरूप जानहुँ अपछरा । बिहँसि कुँवर कर आँचर धरा ॥
सुनहु कुँवर मो सौं एक बाता । जस मोहिं रंग न औरहि राता ॥
औ बिधि रूप, दीन्ह है तोका । उठा सो सबद जाइ सिव-लोका ॥
तब हौं तोपहँ इंद्र पठाई । गइ पदमिनि, तैं अछरी पाई ॥
अब तजु जरन, मरन, तप, जोगू । मोसौं मानु जनम भरि भोगू ॥

हौं अछरी कैलास कै जेहि सरि पूज न कोइ ।
मोहिं तजि सँवरि जो ओहि मरसि, कौन लाभ तोहि होइ ?॥

भलेहिं रंग अछरी तोर राता । मोहिं दुसरे सौं भाव न बाता ॥
मोहि ओहि सँवरि मुए तस लाहा । नैन जो देखसि पूछसि काहा? ॥
अबहिं ताहि जिउ देइ न पावा । तोहि असि अछरी ठाढ़ि मनावा ॥
जौं जिउ देइहौं ओहि कै आसा । न जानौं काह होइ कैलासा ॥

हौं कैलास काह लै करऊँ। सोइ कैलास लागि जेहि मरऊँ॥
ओहि के बार जीउ नहिं बारौं। सिर उतारि नेवछावरि सारौं॥
ताकर चाह कहै जो आई। दोउ जगत तेहि देहुँ बड़ाई॥
ओहि न मोरि किछु आसा हौं ओहि आस करेउँ।
तेहि निरास पीतम कहँ जिउ न देउँ का देउँ॥
गौरइ हँसि महेस सौं कहा। निहचै एहि बिरहानल दहा॥
निहचै यह ओहि कारन तपा। परिमल पेम न ओछे छपा॥
निहचै पेम पर यह जागा। कसे कसौटी कंचन लागा॥
बदन पियर जल डभकहिं नैना। परगट दुवौ पेम के बैना॥
यह एहि जनम लागि ओहि सीझा। चहै न औरहि ओही रीझा॥
महादेव देवन्ह के पिता। तुम्हरी सरन राम रन जिता॥
एहूँ कहँ तस मया करेहू। पुरवहु आस कि हत्या लेहू॥
हत्या दुइ के चढ़ाए काँधे बहु अपराध।
तीसर यह लेउ माथे जौ लेवै कै साध॥
सुनि कै महादेव कै भाखा। सिद्ध पुरुष राजै मन लाखा॥
सिद्धहि अंग न बैठे माखी। सिद्ध पलक नहिं लावै आँखी॥
सिद्धहि संग होइ नहिं छाया। सिद्धइ होइ भूख नहिं माया॥
जेहि जग सिद्ध गोसाईं कीन्हा। परगट गुपुत रहै को चीन्हा॥
बैल चढ़ा कुस्टी कर भेसू। गिरजापति सत आहि महेसू॥
चीन्है सोइ रहै जो खोजा। जस बिक्रम औ राजा भोजा॥
जो ओहि तंत सत्त सौं हेरा। गएउ हेराइ जो ओहि भा मेरा॥
बिनु गुरु पंथ न पाइय भूलै सो जो मेट।
जोगी सिद्ध होइ तब जब गोरख सौं भेंट॥
ततखन रतनसेन गहबरा। रोउब छँड़ि पाँव लेइ परा॥
मातै पितै जनम कित पाला। जो अस फाँद पेम गिउ घाला॥
धरनी सरग मिले हुत दोऊ। केइ निनार कै दीन्ह बिछोऊ॥
पदिक पदारथ कर हुँत खोवा। टूटहि रतन रतन तस रोवा॥
गगन मेघ जस बरसै भला। पुहुमी पूरि सलिल बहि चला॥
सायर टूट सिखर गा पाटा। सूझ न बार पार कहुँ घाटा॥
पौन पानि होइ होइ सब गिरइ। प्रेम के फंद कोइ जनि परई॥
तस रोवैं तस जिउ जरै गिरै रकत औ आँसु।
रोवँ रोवँ सब रोवहि सूत सूत भरि आँसु॥
रोवत बूड़ि उठा संसारू। महादेव तब भयउ मयारू॥
कहेन्हि न रोव बहुत तैं रोवा। अब ईसर भा दारिद खोवा॥
जो दुख सहै होइ सुख ओका। दुख बिनु सुख न जाइ सिवलोका॥

अब तैं सिद्ध भएसि सिधि पाई। दरपन कया छूटि गइ काई ॥
कहौं बात अब हौं उपदेसी। लागु पंथ भूले परदेसी ॥
जौं लगि चोर सेंधि नहिं देई। राजा केरि न मूसै पेई ॥
कहौं सो तोहि सिंघलगढ़ है खँड सात चढ़ाव।
फिरा न कोई जियत जिउ सरग पंथ देइ पाव ॥
गढ़ तस बाँक जैसि तोरि काया। पुरुख देखु ओही कै छाया ॥
पाइय नाहिं जूझ हठि कीन्हे। जेइ पावा तेइ आपुहि चीन्हें ॥
नौ पौरी तेहि गढ़ मझियारा। औ तहँ फिरहिं पाँच कोटवारा ॥
दसवँ दुवार गुपुत एक ताका। अगम चढ़ाव बाट सुठि बाँका ॥
भेदै जाइ कोइ ओहि घाठी। जो लह भेद चढ़े छोइ चाँटी ॥
गढ़ तर कुँड सुरँग तेहि माहाँ। तँह वह पंथ कहौं तेहि पाहाँ ॥
चोर बैठ जस सेंध सँवारी। जुआ पैंत जस लाव जुआरी ॥
जस मरजिया समुद धँस हाथ आव तब सीप।
ढूँढ़ि लेइ जो सरग-दुआरी चढ़ै सो सिंघलदीप ॥
दसवँ दुआर ताल कै लेखा। उलटि दिस्टि जो लाव सो देखा।
जाइ सो तहाँ साँस मन बंधी। जस धंसि लीन्ह कान्ह कालिंदी ॥
तू मन नाथु मारि कै साँसा। जो पै मरहि आपु करि नासा ॥
परगट लोकचार कहु बाता। गुपुत लाउ मन जासौं राता ॥
हौं हौं कहत सबै मति खोई। जौं तू नाहिं आहि सब कोई ॥
जियतहि जुरै मरै एक बारा। पुनि का मीचु को मारै पारा ॥
आपुहि गुरु सो आपुहि चेला। आपुहि सब औ आपु अकेला ॥
आपुहि मीच जियन पुनि आपुहि तन मन सोइ।
आपुहि आपु करे जो चाहै कहाँ सो दूसर कोइ ॥

———

पद्मावती-रत्नसेन-भेंट

सात खंड ऊपर कैलासू। तहवाँ नारि-सेज सुख बासू॥
चारि खंभ चारिहु दिसि खरे। हीरा- रतन - पदारथ जरे॥
मानिक दिया जरावा मोती। होइ उजियार रहा तेहिं जोती॥
ऊपर राता चँदवा छावा। औ भुइँ सुरँग बिछाव बिछावा॥
तेहि महँ पालक सेज सो डासी। कीन्ह बिछावन फूलन्ह बासी॥
चहुँ दिसि गेंडुआ औ गल सूई। काँची पाट भरी धुनि रूई॥
बिधि सो सेज रची केहि जोगू। को तहँ पौढ़ि मान रस भोगू॥
अति सुकुवाँरि सेज सो डासी छुवै न पारै कोइ।
देखत नवै खिनहिं खिन पावँ धरत कसि होइ॥

राजै तपत सेज जो पाई। गाँठि छोरि धनि सखिन्ह छपाई॥
कहैं कुँवर हमरे अस चारू। आज कुँवरि कर करब सिंगारू॥
हरदि उतारि चढ़ाउब रंगू। तब निसि चाँद सुरुज सौ संगू॥
जस चातक मुख बूँद सेवाती। राजा चख जोहत तेहि भाँती॥
जोगि छरा जनु अछुरी साथा। जोग हाथ कर भएउ बेहाथा॥
वै चातुरि कर लै अपसईं। मंत्र अमोल छीनि लेइ गईं॥
बैठेउ खोंइ जरी औ बूटी। लाभ न पाव मूर भइ टूटी॥
खाइ रहा ठग-लाडू तंत मंत बुधि खोइ।
भा धौराहर बनखंड ना हँसि आव न रोइ॥

अस तप करत गएउ दिन भारी। चारि पहर बीते जुग चारी॥
परी साँझ पुनि सखी सो आईं। चाँद रहा अपनी जो तराईं॥
पूँछहि गुरु कहाँ रे चेला। बिनु ससि रे कस सूर अकेला॥
"धातु कमाय सिखे तैं जोगी। अब कस भा निर्धातु बियोगी? ॥
"कहाँ सो खोएहु बिरवा लोना। जेहि तें होइ रूप औ सोना॥
"का हरतार पार नहिं पावा। गंधक काहे कुरकुटा खावा॥
"कहां छपाए चांद हमारा?। जेंहि बिनु रैनि जगत अँधियारा"॥
नैन कौड़िया हिय समुद गुरु सो तेहि महँ जोति।
मन मरजिया न होइ परे हाथ न आवै मोति॥

का पूछहु तुम धातु निछोही। जो गुरु कीन्ह अँतरपट ओही॥
सिधि गुटिका अब मो सँग कहा। भएउँ राँग सत हिए न रहा॥
सो न रूप जासौं दुख खोलौं। गएउ भरोस तहाँ का बोलौं॥
जहँ लोना बिरवा कै जाती। कहि कै संदेस जान को पाती॥

कै जो पार हरतार करीजै । गंधक देखि अबहि जिउ दीजै ॥
तुम्ह जोरा कै सूर मयंकू । पुनि बिछोहि सो लीन्ह कलंकू ॥
जो एहि घरी मिलावै मोहीं । सीस देउँ बलिहारी ओही ॥
होइ अबरक ईंगुर भया फेरि अगिनि महँ दीन्ह ।
काया पीतर होइ कनक जौ तुम चाहहु कीन्ह ॥
का बसाइ जौ गुरु अस बूझा । चकाबूह अभिमनु ज्यौं जूझा ॥
बिष जो दीन्ह अमृत देखराई । तेहि रे निछोही को पतियाई ॥
मरै सोइ जो होइ निगूना । पीर न जानै बिरह बिहूना ॥
पार न पाव जो गंधक पीया । सो हत्यार* कहौ किमि जीया ॥
सिद्धि-गुटीका जा पहँ नाहीं । कौन धातु पूछहु तेहि पाहीं ॥
अब तेहि बाज राँग भा डोलैां । होइ सार तौ बर के बोलौं ॥
अबरक कै पुनि ईंगुर कीन्हा । तो मन फेरि अगिनि महँ दीन्हा ॥
मिलि जो पीतम बिछुरहि काया अगिनि जराइ ।
की तेहि मिले तन तप बुझै की अब मुए बुझाइ ॥
सुनि कै बात सखी सब हँसी । जनहुँ रैनि तरईं परगसीं ॥
अब सो चाँद गगन महँ छपा । लालच कै कित पावसि तपा ॥
हमहुँ न जानहिं दहुँ सो कहाँ । करब खोज औ बिनउब तहाँ ॥
औ अस कहब आहि परदेसी । करहि मया हत्या जनि लेसी ॥
पीर तुम्हारि सुनत भा छोहू । दैउ मनाउ होइ अस ओहू ॥
तू जोगी फिरि तपि करु जोगू । तो कहँ कौन राजसुख भोगू ॥
वर रानी जहवाँ सुख राजू । बारह अभरन करै सो साजू ॥
जोगी ढिढ़ आसन करै अहथिर धरि मन ठाँव ।
जो न सुना तौ अब सुनहि बारह अभरन नावं ॥
प्रथमै मज्जन होइ सरीरू । पुनि पहिरै तन चंदन चीरू ॥
साजि माँग सिर सेंदुर सारै । पुनि लिलाट रचि तिलक सँवारै ॥
पुनि अंजन दुहुँ नैनन्ह करै । औ कुंडल कानन्ह महँ पहिरै ॥
पुनि नासिका भल फूल अमोला । पुनि राता मुख खाइ तमोला ॥
गिउ अभरन पहिरै जहँ ताईं । औ पहिरै कर कँगन कलाई ॥
कटि छुद्रावलि अभरन पूरा । पायन्ह पहिरै पायल चूरा ॥
बारह अभरन अहै बखाने । ते पहिरै बरहौ अस्थानै ॥
पुनि सो रहो सिंगार जस चारिहु चौक कुलीन ।
दीरघ चारि चारि लघु चारि सुभर चै खीन ॥

---

*पाठांतर—हरवार ।

पदमावति जो सँवारै लीन्हा। पुनिउँ राति दैउ ससि कीन्हा ॥
करि मज्जन तन कीन्ह नहानू। पहिरे चीर गएउ छपि भानू ॥
रचि पत्रावलि माँग सेंदूरू। भरे मोति और मानिक चूरू ॥
चंदन चीर पहिर वह भाँती। मेघ घटा जानहूँ बग-पाँती ॥
गूँथि जो रतन मांग बैसारा। जानहुँ गगन टूट निसि तारा ॥
तिलक लिलाट धरा तस दीठा। जनहुँ दुइज पर सुहल बईठा ॥
कानन्ह कुँडल खूँट औ खूँटी। जानहुँ परी कचपची टूटी ॥

पहिरि जराऊ ठाढि भइ कहि न जाइ तस भाव।
मानहूँ दर्पन गगन भा तेहि ससि तार देखाव ॥

बाँक नैन औ अंजन रेखा। खंजन मनहुँ सरद ऋतु देखा ॥
जस जस हर फेर चख मोरी। लरै सरद महँ खंजन जोरी ॥
भौहैं धनुक धनुक पै हारा। नैनन साधि बान बिष मारा ॥
करनफूल कानन्ह अति सोभा। ससि मुख आइ सूर जनु लोभा ॥
सुरँग अधर औ मिला तमोरा। सोहै पान फूल कर जोरा ॥
कुसुमगंध अति सुरँग कपोला। तेहि पर अलक भुअंगिनि डोला ॥
तिल कपोल अलि कवँल बईठा। बेधा सोइ जेइ वह तिल दीठा ॥

देखि सिंगार अनूप विधि बिरह चला तब भागि।
काल कस्ट इमि ओनवा सब मोरे जिउ लागि ॥

का बरनौं अभरन औ हारा। ससि पहिरे नखतन्ह कै मारा ॥
चीर चारु औ चंदन चोवा। हीर हार नग लाग अमोला ॥
तेहि झाँपी रोमावलि कारी। नागिनि रूप डसै हत्यारी ॥
कुच कंचुकी सिरीफल उभे। हुलसहिं चहहिं कंत हिय चुभे ॥
बाहन्ह बहुँटा टाँड़ सलोनी। डोलत बाँह भाव गति लोनी ॥
तरवन्ह कवँल करी जनु बाँधी। बसा लंक जानहुँ दुइ आधी ।
छुद्र घंट कटि कंचन तागा। चलतै उठहिं छतीसौ रागा ॥

चूरा पायल अनवट पायँन्ह परहिं बियोग।
हिए लाइ टुक हम कहँ समदहु मानहु भोग ॥

अस बारह सोरह धनि साजै। छाज न और ओहि पै छाजै ॥
बिनवहिं सखी गहरु का कीजै। जेइ जिउ दीन्ह ताहि जिउ दीजै ॥
सँवरि सेज धनि मन भइ संका। ठाढ़ि तेवानि टेकि कर लंका ॥
अनचिन्ह पिउ काँपौं मन माहाँ। का मैं कहब गहब जौ बाहाँ ॥
बारि बैस गइ प्रीति न जानी। तरुनि भई मैमंत भुलानी ॥
जोबन गरब न मैं किछु चेता। नेह न जानौ सावं कि सेता ॥
अब सो कंत जो पूछिहि बाता। कस मुख होइहि पीत कि राता ॥

हौं बारी औ दुलहिनी पीउ तरुन सह तेज।
ना जानौं कस होइहि चढ़त कँस के सेज॥

सुनु धनि डर हिरदय तब ताईं। जौ लगि रहसि मिलै नहिं साईं॥
कौन कली जो भौर न राई। डार टूट पुहुप गरु आई॥
मातु पिता जौ बियाहै सोई। जनम निबाह कंत सँग होई॥
भरि जीवन राखै जहँ चहा। जाइ न मेंटा ताकर कहा॥
ताकहँ बिलंब न कीजै बारी। जो पिउ-आयसु सोइ पियारी॥
चलहु बेगि आयस भा जैसे। कंत बोलावै रहिये कैसे॥
मान न करसि पोढ करु लाडू। मान करत रिस मानै न चाँडू।

साजन लेइ पठावा आयसु जाइ न मेंट।
तन मन जीवन साजि कै देइ चली लेइ भेंट॥

पदमिनि गवन हंस गए दूरी। कुंजर लाज मेल सिर धूरी॥
बदन देखि घटि चंद छपाना। दसन देखि कै बीजु लजाना॥
खंजन छपे देखि कै नैना। कोकिल छपी सुनत मधु बैना॥
गीव देखि कै छपा मयूरू। लंक देखि कै छपा सदूरू॥
भौहन्ह धनुक छपा आकारा। बेनी बासुकि छपा पतारा॥
खड़ा छपा नासिका बिसेखी। अमृत छपा अधररस देखी॥
पहुँचहिं छपी कवँल पौनारी। जंघ छपा कदली होइ बारी॥

अछरी रूप छपानी जबहिं चली धनि साजि।
जावत गरब गहेली सबै छपीं मन लाजि॥

मिलीं गोहने सखी तराईं। लेइ चाँद सूरुज पहँ आईं॥
पारस रूप चाँद देखराई। देखत सूरुज गा मुरछाई॥
सोरह कला दिस्टि ससि कीन्ही। सहसौ कला सुरुज कै लीन्हीं॥
भा रवि अस्त तराईं हंसी। सूर न रहा चांद परगसी॥
जोगी आहि न भोगी होई। खाइ कुरकुटा गा पै सोई॥
पदमावति जसि निरमल गंगा। तू जो कंत जोगी भिखमंगा॥
आइ जगावहिं चेला जागै। आवा गुरू पायं उठि लागै॥

बोलहिं सबद सहेली कान लागि गहि माथ।
गोरख आइ ठाढ़ भा, उठु रे चेला नाथ॥

सुनि यह सबद अमिय अस लागा। निद्रा टूटि सोइ अस जागा॥
गही बाँह धनि सेजवाँ आनी। अंचल ओट रही छपि रानी॥
सकुचै डरै मनहिमन बारी। गहु न बाँह रे जोगि भिखारी॥
ओहट होसि, जोगि! तोरि चेरी। आवै बास कुरकुटा केरी॥
देखि भभूति छूति मोंहि लागै। काँपै चाँद सूर सौं भागै॥

जोगि तोरि तपसी कै काया । लागि चहैं मोरे अँग छाया ॥
बार भिखारि न माँगसि भीखा । माँगै आइ सरग पर सीखा ॥
जोगि भिखारी कोई मंदिर न पैठै पार ॥
मांगि लेहु किछु भिच्छा जाइ ठाढ़ होंइ बार ॥
मैं तुम्ह कारन पेम पियारी । राज छाँड़ि कै भएऊँ भिखारी ॥
नेह तुम्हार जो हिये समाना । चितउर सौं निसरेउँ होइ आना ॥
जस मालति कहँ भौंर बियोगी । चढ़ा बियोग, चलेउ होइ जोगी ॥
भौंर खोजि जस पावै केवा । तुम्ह कारन मैं जिउ पर छेवा ॥
भएउँ भिखारि नारि तुम्ह लागी । दीप लंग होइ अंगएउँ आगी ॥
एक बार मरि मिलै जो आई । दूसरि बार मरै कित जाई ॥
कित तेहि मीचु जो मरि के जीया । भा सों अमर अमृत मधु पीया ॥
भौंर जो पावै कँवल कहँ बहु आरति, बहु आस ।
भौंर होइ नेवछावरि कँवल देइ हँसि बास ॥
आपने मुंह न बड़ाई छाजा । जोगी कतहुँ होहि नहिं राजा ॥
हौ रानी, तू जोगि भिखारी । जोगिहिं भोगिहि कौन चिन्हारी ॥
जोगी सबै छंद अस खेला । तू भिखारि तेहि माहिं अकेला ॥
पौन बाँधि अपसवहिं अकासा । मनसहि जाहि ताहिके पासा ॥
एही भाँति सिस्टि सब छरी । एही भेख रावन सिय हरी ॥
भौंरहिं मीचु नियर जब आवा । चंपा बास लेइ कहँ धावा ॥
दीपक जोति देखि उजियारी । आइ पाँखि होइ परा भिखारी ॥
रैनि जो देखै चंदमुख ससि तन होइ अलोप ।
तुहुँ जोगी तस भूला करि राजा कर ओप ॥
अनुधनि तू निसियर निसि माहाँ । हौं दिनिअर जेहि कै तू छाहाँ ॥
चाँदहि कहाँ जोति औ करा । सुरुज के जोति चाँद निरमरा ॥
भौंर बास चंपा नहिं लेई । मालति जहाँ तहाँ जिउ देई ॥
तुम्ह हुँत भएउँ पतंग कै करा । सिंघलदीप आइ उड़ि परा ॥
सेएउँ महादेव कर बारू । तजा अन्न भा पवन अहारू ॥
अस मैं प्रीति गाँठि हिय जोरी । कटै न काटे छुटै न छोरी ॥
सीतै भीखि रावनहि दीन्ही । तूँ असि निठुर अंतरपट कीन्ही ॥
रँग तुम्हारेहि रातेउं चढ़ेउँ गगन होइ सूर ॥
जँह ससि सीतल तहँ तपौं मन हींछा धनिपूर ॥
जोगि भिखारि करसि बहु बाता । कहसि रंग देखौं नहि राता ॥
कापर रंगे रँग नहिं होई । उपजै औटि रंग भल सोई ॥
चँद के रंग सुरुज जस राता । देखै जगत साँझ परभाता ॥
दगधि बिरह निति होइ अँगारा । ओही आंच धिके संसारा ॥

जौ मजीठ औटै बहु आँचा। सो रँग जनम न डोलै राँचा॥
जरै बिरह जस दीपक-बाती। भीतर जरै उपर होइ राती॥
जरि परास होइ कोइल भेसू। तब फूलै राता होइ टेसू॥
पान सुपारी खैर जिमि मेरइ करै चकचून।
तौ लगि रंग न राँचै जौ लगि होइ न चून॥
का, धनि पान रंग का चूना। जेहिं तन नेह दाध तेहिं दूना॥
हौं तुम्ह नेह पियर भा पानू। पेजी हुँत सोनरास बखानू॥
सुनि तुम्हार संसार बड़ौना। जोग लीन्ह तन कीन्ह गड़ौना॥
करहिं जो किंगरी लैइ बैरागी। नौती होइ बिरह कै आगी॥
फेरि फेरि तन कीन्ह भुँजैाना। औटि रक्त रंग हिरदय औना॥
सूखि सोपारी भा मन मारा। सिरहिं सरौता करवत सारा॥
हाड़ चून भा बिरहहि दहा। जानै सोइ जो दाध इमि सहा॥
सोइ जान वह पीरा जहि दुःख ऐस सरीर।
रकत पियासा होइ जो का जानै पर पीर॥
जोगिन्ह बहुत छंद न ओराहीं। बूंद सेवाती जैस पराहीं॥
परहिं भूम पर होइ कचूरू। परहिं कदलि पर होइ कपूरू॥
परहिं समुद्र खार जल ओही। परहिं सीप तौ मोती होहीं॥
परहिं मेरु पर अमृत होई। परहिं नाग मुख विष होइ सोई॥
जोगी भौंर निठुर ए दोऊ। केहि आपन भए कहै जौ कोऊ॥
एक ठाँव ए थिर न रहाहीं। रस लेइ खेलि अनत कहुं जाहीं॥
होइ ग्रही पुनि होइ उदासी। अंत काल दूवौ बिसवासी॥
तेहि सौं नेह को दिढ़ करै! रहहिं न एकौ देस।
जोगी भौंर भिखारी इन्ह सौं दूरि अदेस॥
थल थल नग न होहिं जेहिं जोती। जल जल सीप न उपनहिं मोती॥
बन बन बिरिछ न चंदन होई। तन तन बिरह न उपनै सोई॥
जेहि उपना सो औटि मर गएऊ। जनम निनार न कबहूँ भयऊ॥
जल अंबुज रवि रहै अकासा। जौं इन्ह प्रीति जानु एक पासा॥
जोगी भौंर जो थिर न रहहीं। जेहिं खोजहिं तेहि पावहिं नाहीं॥
मैं तोहिं पाएँउ आपन जीऊ। छाँड़ि सेवाति न आनहिं पीऊ॥
भौंर मालती मिलै जौ आई। सो तजि आन फूल कित जाई॥
चंपा प्रीति न भौंरहिं दिन दिन आगरि वास।
भौंर जो पावै मालती मुएहु न छाँड़हिं पास॥
ऐसे राजकुँवर नहिं मानौं। खेलु सारि पांसा तव जानौं॥
काँचे बारह परा जो पाँसा। पाके पैंत परी तनु रासा॥
रहै न आठ अठारह भाखा। सोरह सतरस रहैं न राखा॥

सत जो धरै सो खेलन हारा । ढारि इग्यारह जाइ न मारा ॥
तूँ लीन्हें आछसि मन दूवा । औ जुग सारि चहसि पुनि छूवा ॥
हौं नव नेह रचौं तेहिं पाहाँ । दसवँ दाँव तोरे हिय माहाँ ॥
तौ चौपर खेलौं करि हिया । जौ तरहेल होइ सौतिया ॥
जेहि मिलि बिछुरन औ तपनि अंत होइ जौ निंत ।
तेहि मिलि गाजन को सहै बरु बिनु मिले निचिंत ॥
बोलौं रानि बचन सुनु साँचा । पुरुष न बोल सपथ औ बाचा ॥
यह मन लाएँउ तोहिं अस नारी । दिन तुइ पासा औ निसि सारी ॥
पौ परि बारहिं बार मनाएउं । सिरसौं खेलि पैंत जिउ लाएउं ॥
हौं अब चौंक पंज तें बाची । तुम्ह बिन गोट न आवहिं काँची ॥
पाकि उठाएउ आस करीता । हौं जिउ तोहिं हारा तुम्ह जीता ॥
मिलि कै जुग नहिं होहु निनारी । कहाँ बीच दूती देनहारी ॥
अब जिउ जनम जनम तोंहि पासा । चढ़ेउं जोग आएउँ कैलासा ॥
जाकर जीउ बसै जेंहि तेहि पुन ताकरि टेक ।
कनक सोहाग न बिछुरै औटि मिलै होइ एक ॥
बिहँसी धनि सुनि कै सत बाता । निहचय तू मोरे रँग राता ॥
निहचय भौंर कँवल रस रसा । जो जेहि मन सो तेहि मन बसा ॥
जब हीरा मन भएउ सँदेसी । तुम्ह हुँत मँडप गएउँ परदेसी ॥
तोर रूप तस देखिउँ लोना । जनु जोगी तू मेलेसि टोना ॥
सिधि गुटिका जो दिस्टि कमाई । पारहि मेलि रूप बैसाई ॥
भुगुति देइ कहं मै तोहि दीठा । कँवल नैन होइ भौंर बईठा ॥
नैन पुहुप तू अलि भा सोभी । रहा बेधि अस उड़ा न लोभी ॥
जाकरि आस होइ जेहि तेहि पुनि ताकरि आस ।
भौंर जो दाधा कँवल कहं कस न पाव सो बास ॥
कौन मोहनी दहुं हुति तोहीं । जो तोहि बिथा सो उपनी मोही ॥
बिनु जल मीन तलफ जस जीऊ । चातकि भइउं कहत पिउ पीऊ ॥
जरिउँ बिरह जस दीपक बाती । पंथ जोहत भई सीप सेवाती ॥
डाढ़ि डाढ़ि जिमि कोइल भई । भइउं चकोरि नीदि निसि गई ॥
तोरे पेम पेम मोहि भएऊ । राता हेम अगिनि जिमि तयऊ ॥
हीरा दिपै जौ सूर उदौती । नाहिंत कित पाहन कहँ जोती ॥
रवि परगासे कँवल बिगासा । नाहित कित मधुकर कित बासा ॥
तासौं कौन अँतरपट जो अस पीतम पीउ ।
नेवछावरि अब सारौ तन, मन, जोबन जीउ ॥
हँसि पदमावत माना बाता । निहचय तू मोरे रंग राता ॥
तू राजा दुहुँ कुल उजियारा । अस कै चरचिंउ मरम तुम्हारा ॥

पै तूं जंबू दीप बसेरा । किमि जानेसि कस सिंघल मेरा ॥
किमि जानेसि सो मानस केवा । सुनि सो भौंर भा जिउ पर छेवा ॥
ना तुइं सुनी न कबहूँ दीठी । कैस चित्र होइ चितहि पईठी ॥
जौ लहि अगिनि करै नहिं भेदू । तौ लहि औटि चुवै नहिं मेदू ॥
कहँ संकर तोहिं ऐस लखावा । मिला अलख अस पेम चखावा ॥

जेहि कैर सत्य सँघाती तेहि कर डर सोइ मेट ।
सो सत कहु कैसे भा दुवौ भाँति जो भेंट ॥

सत्य कहौं सुनु पदमावती । जहं सत पुरुष तहाँ सुरसती ॥
पाएउं सुवा कही वह बाता । भा निहचय देखत मुख राता ॥
रूप तुम्हार सुनेउं अस नीका । जेहि चढ़ा काहु कहं टीका ॥
चित्र किएउं पुनि लेइ लेइ नाऊं । नैनहि लागि हिये भा ठाऊं ॥
हौं भा साँच सुनत ओहि घड़ी । तुम होइ रूप आइ चित चढ़ी ॥
हौं भा काठ मूति मन मारे । चहै जो कर सब हाथ तुम्हारे ॥
तुम्ह जौ डोलाइहु तबहीं डोला । मौन साँस जौ दीन्ह तौ बोला ॥

को सोवै को जागै अस हौं गएउं बिमोहि ।
परगट गुपुत न दूसर जहं देखौं तहँ तोहि ॥

बिहँसी धनि सुनि कै सत भाऊ । हौं रामा तू रावन राऊ ॥
रहा जो भौंर कँवल के आसा । कस न भोग मानै रस बासा ॥
जस सत कहा कुँवर तू मोही । तस मन मोर लाग पुनि तोही ॥
जब हूँत कहि गा पंखि सँदेसी । सुनिउ कि आवा है परदेसी ॥
तब हुँत तुम्ह बिन रहै न जीऊ । चातकि भइउँ कहत पिउ पीऊ ॥
भइउँ चकोरि सो पंथ निहारी । समुद सीप जस नैन पसारी ॥
भइउ बिरह दहि कोइल कारी । डार डार जिमि कूकि पुकारी ॥

कौन सो दिन जब पिउ मिलै यह मन राता जासु ।
वह दुख देखै मोर सब हौं दुख देखौं तासु ॥

कहि सत भाव भई कंठ लागू । जनु कंचन औ मिला सोहागू ॥
चौरासी आसन पर जोगी । खट रस बंधक चतुर सो भोगी ॥
कुसुम माल असि मालति पाई । जनु चंपा गहि डार ओनाई ॥
कली बेधि जन भँवर भुलाना । हना राहु अरजुन के बाना ॥
कंचन करी जरी नग जोती । बरमा सौं बेधा जनु मोती ॥
नारँग जानि कीर नख दिये । अधर आमरस जानहुँ लिए ॥
कौतुक केलि करहिं दुख नसा । खूँदहिं कुरलहिं जनु सर हंसा ॥

रही बसाइ बासना चोवा चंदन भेद ।
जेहि अस पदमिनि रानी सो जानै यह भेद ॥

रतनसेन सो कंत सुजानू । खटरस-पंडित सोरह बानू ॥
तस होइ मिले पुरुष औ गोरी । जैसी बिछुरी सारस जोरी ॥
रची सारि दूनौ एक पासा । होइ जुग जुग आवहिं कैलासा ॥
पिय धनि गही दीन्हि गलवाहीं । धनि बिछुरी लागी उर माही ॥
ते छकि रस नव केलि करेहीं । चोका लाइ अधर रस लेहीं ॥
धनि नौ सात सात औ पाँचा । पूरुष दस तेरह किमि बाँचा ॥
लीन्ह बिधाँसि बिरह धनि साजा । औ सब रचन जीत हुत राजा ॥

जनहूँ औटि कै मिलि गए तस दूनौ भए एक ।
कंचन कसत कसौटी हाथ न कोऊ टेक ॥

चतुर नारि चित अधिक चिहूँटी । जहाँ पेम बाढ़ै किमि छूटी ॥
कुरला काम केरि मनुहारी । कुरल जेहिं नहिं सो न सुनारी ॥
कुरलहि होंइ कंत कर तोखू । कुरलहि किए पाव धनि मोखू ॥
जेहि कुरला सो सोहाग सुभागी । चंदन जैस साम कंठ लागी ॥
गेंद गोद कै जानहु लई । गेंद चाहि धनि कोमल भई ॥
दारिउं दाख बेल रस चाखा । पिय के खेल धनि जीवन राखा ॥
भएउ बसंत कली मुख खोली । बैन सोहावन कोकिल बोली ॥

पिउपिउ करत जो सूखि रहि धनि चातक की भाँति ।
परी सी बूंद सीप जन मोती होइ सुख साँति ॥

भयउ जूझ जस रावन रामा । सेज बिधाँसि बिरह संग्रामा ॥
लीन्हि लंक कंचन गढ़ टूटा । कीन्ह सिंगार अहा सब लूटा ॥
औ जोबन मैमंत बिधाँसा । बिचला बिरह जीउ जो नासा ॥
टूटे अंग अंग सब भेसा । छूटी माँग भंग भए केसा ॥
कंचुकि चूर चूर भइ तानी । टूटे हार मोति छहरानी ॥
बारी टाँड़ सलोनी टूटी । बाहूँ कँगन कलाई फूटी ॥
चंदन अंग छूट अस भेंटी । बेसरि टूटि तिलक गा मेटी ॥

पुहुप सिंगार सँवार सब जोबन नवल बसंत ।
अरगज जिमि हिय लाइ कै मरगज कीन्हेउ कंत ॥

बिनय करै पदमावति बाला । सुधि न सुराही पिएउ पियाला ॥
पिउ आयसु माथे पर लेऊं । जो माँगै नइ नइ सिर देऊं ॥
पै पिय एक बचन सुनु मोरा । चाखु पिया मधु थोरै थोरा ॥
पेम सुरा सोई पै पिया । लखै न कोई कि काहू दिया ॥
चुवा दाख मधु जो एक बारा । दूसरि बार लेत बेसँभारा ॥
एक बार जो पी कै रहा । सुख जीवन सुख भोजन लहा ॥
पान फूल रस रंग करीजै । अधर अधर सौ चाखा कीजै ॥

जो तुम चाहौ सो करौ न जानौं भल मंद ।
जो भावै सो होइ मोहिं तुम्ह पिउ चहौं आनंद ॥

सुनु धनि प्रेम सुरा के पिए । मरन जियन डर रहै न हिए ॥
जेहि मद तेहि कहाँ संसारा । की सो धूमि रह की मतवारा ॥
सो पै जान पियै जो कोई । पी न अघाई जाइ परि सोई ॥
जा कह होइ बार एक लाहा । रहै न ओहि बिनु ओही चाहा ॥
अरथ दरब सो देइ बहाई । की सब जाहु न जाइ पियाई ॥
रातिहु दिवस रहै रस भीजा । लाभ न देख न देखै छीजा ॥
भोर होत तब पुलह सरीरू । पाव खुमारी सीतल नीरू ॥

एक बार भरि देहु पियाला बार बार को माँग ?।
मुहमद किमिन पुकारै ऐस दाँव जो खाँग ॥

भा बिहान ऊठा रवि साईं । चहुँ दिसि आईं नखत तराईं ॥
सब निसि सेज मिला ससि सूरु । हार चीर बलया भए चूरू ॥
सो धनि पान चून भइ चोली । रँग रँगीलि निरँग भइ भोली ॥
जागत रैनि भएउ भिनसारा । भई अलस सोवत बेकरारा ॥
अलक सुरंगिनि हिरदय परी । नारँग छुव नागिनि विष भरी ॥
लरी मुरी हिय हार लपेटी । सुरसरि जनु कालिंदी भेंटी ॥
जनु पयाग अरइल बिच्चमिली । सोभित बेनी रोमावली ॥

नाभी लाभु पुन्नि कै कासी कुंड कहाव ।
देवता करहिं कलप सिर आपुहि दोष न लाव ॥

बिहँसि जगावहिं सखी सयानी । सूर उठा, उठु पदमिनि रानी ॥
सुनत सूर जनु कँवल विगासा । मधुकर आइ लीन्ह मधु बासा ॥
जनहुँ भाति निसयानी बसी । अति बेसँभार फूलि जनु अरसी ॥
नैन कवँल जानहुं दुइ फूले । चितवन मोहि मिरिग जनू भूले ॥
तन न सँभार केस औ चोली । चित अचेत जन बाउरि भोली ॥
भइ ससि हीन गहन अस गही । बिथुरे नखत सेज भरि रही ॥
कँवल माँह जनु केसरि दीठी । जोबन हुत सो गंवाइ बईठी ॥

बेलि जो राखी इंद्र कहँ पवन बास नहिं दीन्ह ।
लागेउ आइ भौंर तेहि कली बेधि रस लीन्ह ॥

हंसि हँसि पूछहिं सखी सरेखी । मानहुँ कुमुद चंद्र मुख देखी ॥
रानी तुम ऐसी सुकुमारा । फूल बास तन जीव तुम्हारा ॥
सहि नहिं सकहु हिये पर हारु । कैसे सहिउ कंत कर भारू ॥
मुख अंबुज बिगसै दिन राती । सो कुँभिलान कहहु केहि भाँती ॥
अधर कवँल जो सहान पानू । कैसे सहा लाग मुख भानू ॥

लक जो पैग देत मुर जाई। कैसे रही जै। रावन राई ॥
चंदन चोव पवन अस पीऊ। भइउ चित्र सम कस भा जीऊ ॥
सब अरगज मरगज भएउ, लोचन बिंब सरोज।
सत्य कहहु पदमावति सखी परीं सब खोज ॥
कहौं सखी आपन सत भाऊ। हौं जो कहति कस रावन राऊ ॥
काँपी भौंर पुहुप पर देखे। जनु ससि गहन तैस मोहिं लेखे ॥
आजु मरम मैं जाना सोई। जस पीयर पिउ और न कोई ॥
डर तौ लगि हिय मिला न पीऊ। भानु के दिस्टि छूटि गा सीऊ ॥
जत खन भानु कीन्ह परगासू। कवँल कली मन कीन्ह बिगासू ॥
हिये छोह उपना औ सीऊ। पिउ न रिसाउ लेउ बरु जीऊ ॥
हुत जो अपार बिरह दुख दूखा। जनहुँ अगस्त उदय जल सूखा ॥
हौं रंग बहुतै आनति लहरै जैस समुंद।
पै पिउ कै चतुराई खसेउ न एकौ बुंद ॥
करि सिंगार तापहँ का जाऊँ। ओही देखहुं ठाँवहिं ठाऊँ ॥
जौ जिउ महं तौ उहै पियारा। तनमन सौं नहिं होइ निनारा ॥
नैन माँह है उहै समाना। देखौं तहाँ नाहिं कोउ आना ॥
आपन रस आपुहि पै लेई। अधर सोइ लागे रस देई ॥
हिया थार कुच कंचन लाडू। अगमन भेंट दीन्ह कै चाडू ॥
हुलसी लंक लंक सौं लसी। रावन रहसि कसौटी कसी ॥
जोबन सबै मिला ओहि जाई। हौं रे बीच हुत गइउं हेराई ॥
जस किछु देइ धरै कहँ आपन लेइ सँभारि।
रसहि गारि तस लीन्हेसि कीन्हेसि मोहि ढँढारि ॥
अनु रे छबीली तोहि छबि लागी। नैन गुलाल कंत सँग जागी ॥
चंप सुदर्सन अस भा सोई। सोन जरद जस केसर होई ॥
बैठ भौंर कुच नारँग बारी। लागे नख उछरी रँग धारी ॥
अधर अधर सों भीज तमोरा। अलका उर मुरि मुरि गा तोरा ॥
रायमुनी तुम औ रतमुहीं। अलिमुख लागि भई फुलचुहीं ॥
जैस सिंगार हार सौं मिली। मालति ऐसि सदा रहु खिली ॥
पुनि सिंगार करु कला नेवारी। कदम सेवती बैठु पियारी ॥
कुंद कली सम बिगसी ऋतु बसंत औ फाग।
फुलहू फरहु सदा सुख औ सुख सुफल सोहाग ॥
कहि यह बात सखी सब धाईं। चंपावति पहं जाइ सुनाईं ॥
आजु निरँग पदमावति बारी। जीवन जानहुँ पवन अधारी ॥
तरकि तरकि गइ चँदन चोली। धरकि धरकि हिय उठै न बोली ॥
अही जो कली कवँल रस पूरी। चूर चूर होइ गई सो चूरी ॥

देखहु जाइ जैसि कुँभिलानी। सुनि सोहाग रानी बिहँसानी ॥
लेइ सँग सबही पदमिनि नारी। आई जहँ पदमावति बारी ॥
आइ रूप सो सबही देखा। सोन बरन होइ रही सो रेखा ॥
कुसुम फूल जस मरदै निरंग देख सब अंग।
चंपावति भइ वारी चूम केस औ मंग ॥
सब रनिवस बैठ चहुँ पासा। ससि मंडल जनु बैठ अकासा ॥
बोली सबै बारि कुँभिलानी। करहु सँभार देहु खँड़वानी ॥
कवँल कली कोमल रंग भीनी। अति सुकुमारि लंक कै छीनी ॥
चाँद जैस धनि हुत परगासा। सहस करा होइसूर बिगासा ॥
तेहि के झार गहन अस गही। भइ निरंग मुख जोति न रही ॥
दरब बार किछु पुन्न करेहूँ। औ तेहि लेइ सन्यासिहि देहू ॥
भरि कै थार नखन गज मोती। वारा कीन्ह चंद कै जोती ॥
कीन्ह अरगजा गरदन औ सखि दीन्ह नहानु।
पुनि भइ चौदसि चाँद सो रूप गएउ छपि भानु ॥
पुनि बहु चीर आन सब छोरी। सारी कंचुकि लहर पटोरी ॥
फुँदिया और कसनिया राती। छायल बँद लाए गुजराती ॥
चिकवा चीर मघौना लोने। मोति लाग औ छापे सोने ॥
सुरँग चीर मल सिंघल दीपी। कीन्ह जो छाया धनि वह छीपी ॥
पेमचा डोरिया औ चौधारी। साम सेत पीयर हरियारी ॥
सात रंग औ चित्र चितेरे। भरि के दीठि जाहिं नहिं हेरे ॥
चँदनौता औ खरदुक भारी। बाँसपूर झिलमिल कै सारी ॥
पुनि अभरन बहु काढ़ा अनबन भाँति जराव।
हेरि फेरि निति पहिरै जब जैसे मन भाव ॥

षट् ऋतु वर्णन

पदमावति सब सखी बुलाई । चीर पटोर हार पहिराई ॥
सीस सबन्ह के सेंदुर पूरा । औ राते सब अंग सेंदूरा ॥
चंदन अगर चित्र सब भरीं । नए चार जानहु अवतरीं ॥
जनहुँ कवँल सँग फूलीं कूईं । जनहुँ चाँद सँग तरईं ऊईं ॥
धनि पदमावति धनि तोर नाहू । जेहिं अभरन पहिरा सब काहू ॥
बारह अभरन सोरह सिंगारा । तोहि सौंह नहिं ससि उजियारा ॥
ससि सकलंक रहै नहिं पूजा । तू निकलंक न सरि कोइ दूजा ॥

काहू बीन गहा कर काहू नाद मृदंग ।
सबन्ह अनंद मनावा सहसि कूदि एक संग ॥

पदमावति कह सुनहु सहेली । हौं सो कँवल कुमुदिनि-बेली ॥
कलस मानि हौं तेहि दिन आई । पूजा चलहु चढ़ावहिं जाई ॥
मँझ पदमावति कर जो बेवानू । जनु परभात परै लखि भानू ॥
आस पास बाजत चौडोला । दुंदुभि, झांझ, तूर, डफ, ढोला ॥
एक संग सब सोंधे-भरी । देव दुवार उतरि भइ खरी ॥
अपने हाथ देव नहवावा । कलस सहस इक घिरित भरावा ॥
पोता मँडप अगर औ चंदन । देव भरा अरगज औ बंदन ॥

कै प्रनाम आगे भई विनय कीन्हि बहु भाँति ।
रानी कहा चलहु घर सखी होति हैं राति ॥

भइ निसि धनि जस ससि परगसी । राजै देखि भूमि फिर बसी ॥
भइ कटकई सरद ससि आवा । फेरि गगन रवि चाहै छावा ॥
सुनि धनि भौंह धनुक फिर फेरी । काम कटाछन्ह कोरहि हेरा ॥
जानहु नाहिं पैज पिय खाँचौ । पिता सपथ हौं आजु न बाँचौ ॥
कालिह न होइ रही महि रामा । आजु करहु रावन संग्रामा ॥
सेन सिंगार महूँ है साजा । गज गति चाल अचंल गति धजा ॥
नैन समुद औ खड़ग नासिका । सखरि जूझ को मो सहुँ टिका ॥

हौ रानी पदमावति मैं जीता रस भोग ।
तू सरवरि करु तासौं जो जोगी तोहि जोग ॥

हौं अस जोगि जान सब काऊ । बीर सिंगार जीते मैं दोऊ ॥
उहाँ सामुहें रिपु दल माहाँ । यहाँ त काम कटक तुम्ह पाहाँ ॥
उहाँ न हय चढ़ि कै दल मंडौ । इहाँ न अधर अमिय रस खंडौं ॥
उहाँ न खड़ग नरिंदहि मारौं । इहां त बिरह तुम्हार संघारौं ॥

उहाँ त गज पेलौ होइ केहरि। इहवाँ काम कामिनी हिय हरि ॥
उहाँ त लूटौं कटक खँधारू। इहाँ त जीतौं तोर सिंगारू ॥
उहाँ त कुंभस्थल गज नावौं। इहाँ त कुच कलसहिं कर लावौं ॥
परै बीच धरहरिया प्रेम राज को टेक।
मानहिं भोग छवौ ऋतु मिलि दूवौ होइ एक ॥
प्रथम बसंत नवल ऋतु आई। सुऋतु चैत बैसाख सोहाई ॥
चंदन चीर पहिरि धनि अंगा। सेंदुर दीन्ह बिहँसि भरि भंगा ॥
कुसुम हार औ परिमल बासू। मलयागिरि छिरका कैलासू ॥
सौंर सुपेती फूलन डासी। धनि औ कंत मिले सुख बासी ॥
पिउ सँजोग धनि जोबन बारी। भौंर पुहुप सँग करहिं धमारी ॥
होइ फाग भलि चाँचरि जोरी। बिरह जराइ दीन्ह जस होरी ॥
धनि ससि सरिस तपि पिय सूरू। नखत सिंगार होहिं सब चूरू ॥
जिन घर कंता ऋतु भली आव बसंत जो निम्त।
सुख भरि आवहिं देहरै दुःख न जानै किम्त ॥
ऋतु ग्रीषम है तपान न तहाँ। जेठ असाढ़ कंत घर जहाँ ॥
पहिरि सुरंग चीर धनि झीना। परिमल मेद रहा तन भीना ॥
पदमावति तन सिअर सुबासा। नैहर राज कंत घर पासा ॥
औ बड़ जूड़ तहां सोवनारा। अगर पोति सुख तनै ओहारा ॥
सेज बिछावन सौंर सुपेती। भोग बिलास करहिं सुख सेंती ॥
अगर तमोर कपुर भिमसेना। चंदन चरचि लाव तन बेना ॥
भा अनंद सिंघल सब कहूँ। भागवंत कहं सुख ऋतु छहूँ ॥
दारिउँ दाख लेहिं रस आम सदाफर डार।
हरियर तन सुअटा कर जो अस चाखन हार ॥
ऋतु पावस बरसै पिउ पावा। सावन भादौं अधिक सोहावा ॥
पदमावति चाहति ऋतु पाई। गगन सोहावन भूमि सोहाई ॥
कोकिल बैन पाँति बग छूटी। धनि निसरी जनु बीर बहूटी ॥
चमक बीजु बरसै जल सोना। दादुर मोर सबद सुठि लोना ॥
रँग राती पीतम संग जागी। गरजे गगन चौंकि गर लागी ॥
सीतल बूंद ऊंच चौपारा। हरियर सब देखाइ संसारा ॥
हरियर भूमि कुसुंभी चोला। औ धनि पिउ सँग रचा हिंडोला ॥
पवन झकोरे होइ हरष लागे सीतल बास।
धनि जानै यह पवन है पवन सो अपने पास ॥
आइ सरद ऋतू अधिक पियारी। आसिन कातिक ऋतु उजियारी ॥
पदमावति भइ पुनिउँ कला। चौदसि चाँद उई सिंघला ॥
सोरह कला सिंगार बनावा। नखत भरा सूरज ससि पावा ॥

भा निरमल सब धरति अकासू। सेज सँवारि कीन्ह फुल-बासू ॥
सेत बिछावन औ उजियारी। हँसि हँसि मिलहिं पुरुष औ नारी ॥
सोन-फूल भइ पुहुमी फूली। पिय धनि सौं, धनि पिय सौं भूली ॥
चख अंजन दइ खँजन देखावा। होइ सारस जोरी रस पावा ॥

एहि ऋतु कंता पास जेहि, सुख तेहि के हिय माँह।
धनि हँसि लागै पिउ गरै, धनि-गर पिउ कै बाहँ ॥

ऋतु हेमंत सँग पिएउ पियाला। अगहन पूस सीत सुख-काला ॥
धनि औ पिउ महँ सीउ सोहागा। दुहुँन्ह अंग एकै मिलि लागा ॥
मन सौं मन, तन सौं तन गहा। हिय सौंहिय बिच हार न रहा ॥
जानहु चंदन लागेउ अंगा। चंदन रहै न पावै संगा ॥
भोग करहिं सुख राजा रानी। उन्ह लेखे सब सिस्टि जुड़ानी ॥
जूझ दुवौ जोबन सौं लागा। बिचहुँत सीउ जीउ लेइ भागा ॥
दुइ घट मिलि एकै होइ जाहीं। ऐस मिलहिं तबहूँ न अघाहीं ॥

हंसा केलि करहिं जिमि, खूँदहि कुरलहिं दोउ।
सीउ पुकारि कै पार भा, जस चकई क बिछोउ ॥

आइ सिसर ऋतु, तहाँ न सीऊ। जहाँ माघ फागुन घर पीऊ ॥
सौंर सुपेती मंदिर राती। दगल चीर पहिरहिं बहु भाँती ॥
घर घर सिंघल होइ सुख भोजू। रहा न कतहुँ दुःख कर खोजू ॥
जहँ धनि पुरुष सीउ नहिं लागा। जानहुँ काग देखि सर भागा ॥
जाइ इंद्र सौं कीन्ह पुकारा। हौं पदमावति देस निसारा ॥
एहि ऋतु सदा संग महँ सोवा। अब दरसन तें मोर बिछोवा ॥
अब हँसि कै ससि सूरहि भेंटा। रहा जो सीउ बीच सो मेटा ॥

भएउ इंद्र कर आयसु, बड़ सताव यह सोइ।
कबहुँ काहु के पीर भइ, कबहुँ काहु के होइ ॥

गोरा-बादल-युद्ध खंड

मतैं बैठि बादल औ गोरा। सो मत कीज परैं नहिं भोरा ॥
पुरुष न करहिं नारि-मति काँची। जस नौशावा कीन्ह न बाँची ॥
परा हाथ इसकंदर बैरी। सो कित छोड़ि कै भई बंदेरी ॥
सुबुधि सौं ससी सिंघ कहँ मारा। कुबुधि सिंघ कूआँ परि हारा ॥
देवहि छरा आइ अस आँटी। सज्जन कंचन दुरजन माटी ॥
कंचन जुरै भए दस खंडा। फूटि न मिलै काँच कर भंडा ॥
जस तुरकन्ह राजा छर साजा। तस हम साजि छोड़ावहिं राजा ॥

पुरुष तहाँ पै करै छर, जहँ बर किए न आँट।
जहाँ फूल तह फूल है, जहाँ काँट तहँ काँट ॥

सोरह सौ चंडोल सँवारे। कुवर सजोइल कै बैठारे ॥
पदमावति कर सजा बिवानू। बैठ लोहार न जानै भानू ॥
रचि बिवान सो साजि सँवारा। चहुँ दिसि चँवर करहिं सब ढारा ॥
साजि सबै चंडोल चलाए। सुरँग ओहार, मोति बहु लाए ॥
भए सँग गोरा बादल बली। कहत चले पदमावति चली ॥
हीरा रतन पदारथ भूलहिं। देखि बिवान देवता भूलहिं ॥
सोरह सै संग चलीं सहेली। कँवल न रहा, और को बेली ?॥

राजहि चलीं छोड़ावै, तहँ रानी होइ ओल।
तीस सहस तुरि खिचीं, सँग सोरह सै चंडोल ॥

राजा बंदि जेहि के सौंपना। गा गोरा तेहि पहँ अगमना ॥
टका लाख दस दीन्ह अँकोरा। बिनती कीन्हि पायँ गहि गोरा ॥
बिनवा बादसाह सौं जाई। अब रानी पदमावति आई ॥
बिनती करै आइ हौं दिल्ली। चितउर कै मोहि स्यो है किल्ली ॥
बिनती करै जहाँ है पूँजी। सब भँडार कै मोहि स्यो कूँजी ॥
एक घरी जौ अज्ञा पावौं। राजहि सौंपि मदिर महँ आवौं ॥
तब रखवार गए सुलतानी। देखि अँकोर भए जस पानी ॥

लीन्ह अँकोर हाथ जेहि, जीउ दीन्ह तेहि हाथ।
जहाँ चलावै तहँ चलै, फेरे फिरै न माथ ॥

लोभ पाप कै नदी अँकोरा। सत्त न रहै हाथ जौ बोरा ॥
जहँ अँकोर तहँ नीक न राजू। ठाकुर केर बिनासै काजू ॥
भा जिउ घिउ रखवारन्ह केरा। दरब-लोभ चंडोल न हेरा ॥

जाइ साह आगे सिर नावा। ए जगसूर! चाँद चलि आवा ॥
जावत हैं सब नखत तराईं। सोरह सै चंडोल सो आईं ॥
चितउर जेति राज कै पूँजी। लेइ सो आइ पदमावति कूँजी ॥
बिनती करै जोरि कर खरी। लेइ सौंपौं राजा एक घरी ॥
इहाँ उहाँ कर स्वामी, दुऔ जगत मोहिं आस ।
पहिले दरस देखावहु, तौ पठवहु कैलास ॥
आज्ञा भई, जाय एक घरी। छूँछि जो घरी फेरि बिधि भरी ॥
चलि बिवान राजा पहँ आवा। सँग चंडोल जगत सब छावा ॥
पदमावति के भेस लोहारू। निकसि काटि बँदि कीन्ह जोहारू ॥
उठा कोपि जस छूटा राजा। चढ़ा तुरंग, सिंघ अस गाजा ॥
गोरा बादल खाँड़ै काढ़े। निकसि कुँवर चढ़ि चढ़ि भए ठाढ़े ॥
तीख तुरंग गगन सिर लागा। केहुँ जुगुति करि टेकी बागा ॥
जो जिउ ऊपर खड़ग सँभारा। मरनहार सो सहसन्ह मारा ॥
भई पुकार साह सौं. ससि औ नखत सो नाहिं ।
छर कै गहन गरासा, गहन गरासे जाहिं ॥
लेइ राजा चितउर कहँ चले। छूटेउ सिंघ, मिरिग खलभले ॥
चढ़ा साहि, चढ़ि लाग गोहारी। कटक असूझ परी जग कारी ॥
फिर गोरा बादल सौं कहा। गहन छूटि पुनि चाहै गहा ॥
चहुँ दिसि आवै लोपत भानू। अब इहै गोइ, इहै मैदानू ॥
तुइ अब राजहि लेइ चलु गोरा। हौं अब उलटि जुरौं भा जोरा ॥
वह चौगान तुरुक कस खेला। होइ खेलार रन जुरौं अकेला ॥
तौ पावौं बादल अस नाऊँ। जौ मैदान गोइ लेइ जाऊँ ॥
आजु खड़ग चौगान गहि, करा सीस-रिपु गोइ ।
खेलौं सौंह साह सौं, हाल जगत महँ होइ ॥
तब अगमन होइ गोरा मिला। तुइ राजहि लेइ चलु, बादला! ॥
पिता मरै जो सँकरे साथा। मीचु न देइ पूत के माथा ॥
मैं अब आउ भरी औ भूँजी। का पछिताव आउ जौ पूजी? ॥
बहुतन्ह मारि मरौं जौ जूझौं। तुम जिनि रोएहु तौ मन बूझी ॥
कुँवर सहस सँग गोरा लीन्हे। और बीर बादल सँग कीन्हे ॥
गोरहि समदि मेघ अस गाजा। चला लिए आगे करि राजा ॥
गोरा उलटि खेत भा ठाढ़ा। पुरुष देखि चाव मन बाढ़ा ॥
आव कटक सुलतानी, गगन छपा मसि माँझ ।
परति आव जग कारी होति आव दिन साँझ ॥
होइ मैदान परी अब गोईं। खेल हार दहुँ का करि होई ॥
जोबन-तुरी चढ़ी जा रानी। चली जीति यह खेल सयानी ॥

कटि चौगान, गोइ कुच साजो। हिय मैदान चली लेइ बाजा ॥
हाल सो करै गोइ लेइ बाढा। कूरी दुवौ पैज कै काढ़ा ॥
भइ पहार वै दूनौ कूरा। दिस्टि नियर पहुँचत सुठि दूरा ॥
ठाढ़ बान अस जानहु दोऊ। सालै हिये अन काढै काऊ ॥
सालहिं हिय, न जाहिं सहि ठाढे। सालहिं मरै चहै अनकाढ़े।

मुहमद खेल प्रेम कर, कठिन चौगान।
सीस न दीजै गोइ जिमि, हाल न होइ मैदान।

फिरि आगे गोरा तब हाँका। खेलौं करौं आजु रन-साका ॥
हौं कहिए धौलागिरि गोरा। टरौं न टारे अंग न मोरा ॥
सोहिल जैस गगन उपराहीं। मेघ-घटा मोहि देखि बिलाहीं ॥
सहसौ सीस सेस सम लेखौं। सहसौ नैन इन्द्र सम देखौं ॥
चारिउ भुजा चतुरभुज आजू। कंस न रहा और को साजू ? ॥
हौं होइ भीम आजु रन गाजा। पाछे घालि डुँगवै राजा ॥
होइ हनुवँत जमकातर ढाहौं। आजु स्वामि साँकरे निबाहौं ॥

होइ नल नील आजु हौं, देहुँ समुद महँ मेंड़।
कटक साह कर टेकौं, होइ सुमेरु रन बेंड़ ॥

ओनई घटा चहूँ दिसि आई। छूटहिं बान मेघ-झरि लाई ॥
डोलै नाहिं देव जस आदी। पहुँचे आइ तुरुक सब बादी ॥
हाथन्ह गहे खड़ग हरद्वानी। चमकहिं सेल बीजु कै बानी ॥
सोझ बान जस आवहिं गाजा। बासुकि डरै सीस जनु बाजा ॥
नेजा उठे डरै मन इंदू। आइ न बाज जानि कै हिंदू ॥
गोरै साथ लीन्ह सब साथी। जस मैमंत सूँड़ बिनु हाथी ॥
सब मिलि पहिलि उठौनी कीन्ही। आवत आइ हाँक रन दीन्ही ॥

रुंड मुंड अब टूटहिं, स्यो बखतर औ कूँड़।
तुरय होहिं बिनु काँधे, हस्ति होहिं बिनु सूँड़ ॥

ओनवत आइ सेन सुलतानी। जानहुँ परलय आव तुलानी ॥
लोहे सेन सूझ सब कारी। तिल एक कहूँ न सूझ उघारी ॥
खड़ग फोलाद तुरुक सब काढ़े। धरे बीजु अस चमकहिं ठाढ़े ॥
पीलवान गज पेले बाँके। जानहुँ काल करहिं दुइ फाँके ॥
जनु जमकात करहिं सब भवाँ। जिउ लेइ चहहिं सरग अपसवाँ ॥
सेल सरप जनु चाहहिं डसा। लेहि काढ़ि जिउ मुख बिष-बसा ॥
तिन्ह सामुहँ गोरा रन कोपा। अंगद सरिस पावँ भुँइ रोपा ॥

सुपुरुष भागि न जानै, भुइँ जौ फिरि फिरि लेइ।
सूर गहे दोऊ कर स्वामि काज जिउ देइ ॥

भइ बगमेल, सेल घनघोरा। औ गज-पेल; अकेल सो गोरा॥
सहस कुँवर सहसौ सत बाँधा। भार-पहार जूझ कर काँधा॥
लगे मरै गोरा के आगे। बाग न मोर घाव मुख लागे॥
जैस पतंग आगि धंसि लेई। एक मुवै, दूसर जिउ देई॥
टूटहिं सीस, अधर धर मारै। लोटहिं कंधहिं कंध निरारै॥
कोई परहिं रुहिर होइ राते। कोई घायल घूमहिं माते॥
कोई खुरखेह गए भरि भोगी। भसम चढ़ाइ परे होइ जोगी॥

घरी एक भारत भा, भा असवारन्ह मेल।
जूझि कुँवर सब निबरे, गोरा रहा अकेल॥

गोरै देख साथि सब जूझा। आपन काल नियर भा, बूझा॥
कोपि सिंघ सामुहँ रन मेला। लाखन्ह सौं नहिं मरै अकेला॥
लेइ हाँकि हस्तिन्ह कै ठटा। जैसे पवन बिदारै घटा॥
जेहि सिर देइ कोपि करवारू। स्यों घोड़े टूटे असवारू॥
लोटहिं सीस कबंध निनारे। माठ मजीठ जनहुँ रन ढारे॥
खेलि फाग सेंदुर छिरकावा। चाँचरि खेलि आगि जनु लावा॥
हस्ती घोड़ धाइ जो धूका। ताहि कीन्ह सो रुहिर भभूका॥

भइ अज्ञा सुलतानी, "बेगि करहु एहि हाथ।
रतन जात है आगे, लिए पदारथ साथ"॥

सबै कटक मिलि गोरहि छेका। गूँजत सिंघ जाइ नहिं टेका॥
जेहि दिसि उठै सोइ जनु खावा। पलटि सिंघ तेहि ठावँ न आवा॥
तुरुक बोलावहिं बोलै बाहाँ। गोरै मीचु धरी जिउ माहाँ॥
मुए पुनि जूझि जाज जगदेऊ। जियत न रहा जगत महँ केऊ॥
जिनि जानहु गोरा सो अकेला। सिंघ के मोंछ हाथ को मेला?॥
सिंघ जियत नहिं आपु धरावा। मुए पाछ कोई घिसियावा॥
करै सिंघ सुख-सौंहहिं दीठी। जौ लगि जियै देइ नहिं पीठी॥

रतनसेन जो बाँधा, मसि गोरा के गात।
जौ लगि रुहिर न धोवौं, तौ लगि होइ न रात॥

गरजा वीर सिंघ चढ़ि गाजा। आइ सौंह गोरा सौं बाजा॥
पहलवान सो बखाना बली। मदद मीर हमजा औ अली॥
लँधउर धरा देव जस आदी। और को बर बाँधै को बादी?॥
मदद अयूब सीस चढ़ि कोपे। महामाल जेइ नावँ अलोपे॥
औ ताया सालार सो आए। जेइ कौरव पंडव पिंड पाए॥
पहुँचा आइ सिंघ असवारू। जहाँ सिंघ गोरा बरियारू॥
मारेसि साँग पेट महँ धसी। काढ़ेसि हुमुकि आँति भुइँ खसी॥

भाँट कहा धनि गोरा, तू भा रावन राव ।
आँति समेटि बाँधि कै, तुरय देत है पाव ॥
कहेसि अंत भा अब भुइँ परना । अन्त न खसे खेह सिर भरना ॥
कहि न गरजि सिंघ अस धावा । सरजा सारदूल पहँ आवा ॥
सरजै लीन्ह साँग पर घाऊ । परा खड़ग जनु परा निहाऊ ॥
बज्र न साँग बज्र कै डाँड़ा । उठी आगि तस बाजा खाँड़ा ॥
जानहु बज्र बज्र सौं बाजा । सब ही कहा परी अब गाजा ॥
दूसर खड़ग कंध पर दीन्हा । सरजै ओहि ओड़न पर लीन्हा ॥
तीसर खड़ग कूँड़ पर लावा । काँध गुरुज हुत घाव न आवा ॥
तस मारा हठि गोरै, उठी बज्र कै आगि ।
कोई नियरे नहिं आवै, सिंघ सदूरहि लागि ॥
तब सरजा कोपा बरिबंडा । जानहु सदूर केर भुजदंडा ॥
कोपि गरजि मारेसि तस बाजा । जानहु परी टूटि सिर गाजा ॥
ठाँठर टूट फूट सिर तासू । स्यो सुमेरु जनु टूट अकासू ॥
धमकि उठा सब सरग पतारू । फिरि गइ दीठि फिरा संसारू ॥
भइ परलय अस सबही जाना । काढ़ा खड़ग सरग नियराना ॥
तस मारेसि स्यों घोड़ै काटा । धरतीं फाटि सेस-फन फाटा ॥
जौ अति सिंह बरी होइ आई । सारदूल सौं कौनि बड़ाई ? ॥
गोरा परा खेत महँ, सुर पहुँचावा पान ।
बादल लेइगा राजा, लेइ चितउर नियरान ॥

कवि नूरमहम्मद कृत
इंद्रावती

स्तुति खंड

धन्य आप जग सिरजन हारा । जिन बिन खंभ अकास सँवारा ॥
दोऊ जग को आपुहिं राजा । राज दोऊ जग को तेहि छाजा ॥
दीन्हा नैन पंथ पहिचानों । दीन्हा रसना ताहि बखानों ॥
बात सुनै कहँ सरवन दीन्हा । दीन्हा बुद्धि ज्ञान तेहि चीन्हा ॥
गगन कि सोभा कीन्हे सितारा । धरती सोभा मनुष सँवारा ॥

आप गुपुत औ परगट, आप आद औ अंत ।
आप सुनै औ देखै, कीन्ह मनुष बुधवंत ॥

अहइ अकेल सो सिरजन हारा । जानत परगट गुपुत हमारा ॥
कीन्ह गगन रवि ससि महि मेरा । कोउ नाहीं जोरी तेही केरा ॥
कीन्हा राति मिले सुख तासों । कीन्हा दिन कारज है जासों ॥
घन सो महि पर भेजत नीरा । पलुअत सूखी भूमि सरीरा ॥
सब बिलाय जाइहि एक बारा । रहे तेहिक मुख रवि उँजियारा ॥

है स्त्रोता औ दिष्टा, तेहि सम कोउ न आहि ।
जो कुछ है महि गगन महँ, सब सुमिरत है ताहि ॥

अरे दोऊ जग के करतारा । कित कै सकउँ बखान तुम्हारा ॥
रसना होइ रोम सब मोहीं । तबहूं बरन न पारउँ तोंहीं ॥
है अपार सागर भौ केरा । मोहि करनी को नाव न बेरा ॥
कै किरपा मोहि पार उतारो । दया दृष्टि मोहि ऊपर डारो ॥
है हमकहँ आलम्म तुम्हारी । तोंहि दाया सो मुकुत हमारी ॥

है मगु बहुत जगत्त महँ, तिन मगु की नहिं चाव ॥
आपन पंथ देखावहु, राखौं तापर पाँव ॥

सुमिरों चेत धरें मन ठाऊं । अरबी नबी मुहम्मद नाऊं ॥
जा कहँ करता दरस देखाएउ । कै किरपा सब भेद बताएउ ॥
जेहिक बखान अहै लौ लाका । ताहि बखानत दोउ जग थाका ॥
चार यार चारिउ जस तारे । दीन गगन ऊपर उंजियारे ॥
अबूबकर औ उमर बखानौं । उस्मां बहुरि अली कहँ जानौं ॥

अहदहुतँ अहमद भएउ, एक जोत दुइ नाउँ ।
भएउ जगत के कारने, परेउ मोहम्मद नाउ ॥

कहौं मोहम्मद साह बखानूं । है सूरज दिहली सुलतानूं ॥
धरम पन्थ जग जग बीच चलावा । निबरन सबरै सौं दुख पावा ॥

पहिरे सलातीनु जग केरे। आए मुहाँस बने हैं चेरे ॥
उहै साह नित धरम बढ़ावै। जेहि पहरौं मानुष सुख पावै ॥
सब काहू पर दाया धरई। धरम सहित सुलतानी करई ॥

धरम भलो सुलतान कहँ, धरम करै जो साह।
सुख पावै मानुष सबै, सबको होइ निबाह ॥

कवि अस्थान कीन्ह जेहि ठाऊँ। सो वह ठाऊँ सबरहद नाऊँ ॥
पूरब दिस कइलास समान। अहै नसीरुद्दीं कोन थान ॥
है भल जग महँ पंथिक रहना। लेहु इहांसों आगम लहना ॥
जग औ आपुहि कस पहिचानों। तरिवर और बटोहिय जानों ॥
चला जात जस होइ बटोही। आइ छँहाइ बिरिछ तर वोही ॥

जबा जुडाइ तरिवरतर, धरै पंथ पर पाँव।
बास हमार जगत महँ, बूझो तेही सुभाव ॥

आज रहन यह चाँद न ऊआ। आनन्द हरन जगत कर हूआ ॥
साह करबला को दुख सोगू। समुझि समुझि रोवै सब लोगू ॥
रोएउ गमन सेंदुरी नाहीं। रकत आँस है मुख उपराहीं ॥
रोवैं बादशाह जग साईं। हम ना रहे करबला ठाईं ॥
देतेउँ सीस दीनपति कारन। करतेउँ जिउ तन मन सब वारन ॥

रोवैं अच्छर सीस धुनि, सल्स सविल माखार।
आज छिपान जगत रवि, जगत भएउ अँधियार ॥

वावैला प्यासा गा मारा। आल रसूल वतूल पियारा ॥
उठा चहूं दिस तें वावैला। महि सिर परेउ सोग को सैला ॥
पहिरेउ गगन मातमी बागा। परेउ चंद के हियरें दागा ॥
औ ससि कहुँ दुख राहु गराहा। सूरज कहँ उपनेउ उर दाहा ॥
इनके बीच हसन का प्यारा। सेहरा लीन्ह रकत के धारा ॥

नूर मोहम्मद जीभ तें, कहैं न मातम होइ।
जिय सों कहूँ मातम कथा, मन आंखिन सो रोइ ॥

मन हगसों एक रात मझारा। सूझि परा मोहिं सब संसारा ॥
देखेउं एक नीक फुलवारी। देखेउँ तहाँ पुरुष अउ नारी ॥
दोउ मुख सोभा बरनि न जाई। चंद सुरुज उतरेउ भुई आई ॥
तपी एक देखेउं तेहि ठाऊँ। पूछेउँ तासों तिन कर नाऊँ ॥
कहा अहैं राजा अउ रानी। इंद्रवति औ कुंअो गेयानी ॥

आगमपुर इंद्रावती, कुँवर कलिंजर राय।
प्रेम हुते दोऊ कहँ, दीन्हा अलख मिलाय ॥

सरब कहानी दीन्ह सुनाई। कहा दया सेतीं हो भाई ॥

इंद्रावति औ कुँवर कहानी। कहु भाषा मों हो कवि ज्ञानी ॥
गाढ़ी गांठ परै जहां तोहीं। छुटि जाय सुमिरेहु तुम मोहीं ॥
आज्ञा दीन्हा तपिय सेयाना। मन जिउं सों आज्ञा मैं माना ॥
होत भोर लिखनी मैं लीन्हा। कहै लिखै ऊपर चित दीन्हा ॥
सन इग्यारह सौ रहेउ, सत्तावन उपराह ।
कहे लगेउ पोथी तबै, पाय तपी कर बांह ॥

कवि है नूर मोहम्मद नाऊँ। है पछ्लग सब को जग ठाऊँ ॥
चुनि कविजन खेतन सों बाला। करै चहत खरिहान विसाला ॥
है कवि समै नई तरुनाई। छूट न अबहीं कवि लरिकाई ॥
जाके हिए लरिक बुधि होई। बहुतै चूक कहत है सोई ॥
बिनवत कविजन कहँ कर जोरी। है थोरी बुधि पूंजिय मेरी ॥
चूका देखि सम्हारि के, जोरेहु अच्छर टूट ।
दाया कर मोहि दीन पर, दोस न लायहु कूट ॥
हौ हीना बिद्या बुधि सेतीं। गरब गुमान करौं केहि नेतीं ॥
हौं मैं लरिकाई को चेला। कहौं न पोथी खेलउं खेला ॥
गुरुजन यह सों बिनतिय मोरी। कोप न मानहिं भौंह सिकोरी ॥
दोस बहुत खेलत महँ होई। दाया करेहु न कोपेहु कोई ॥
दोस करै जो छोटा आही। मया करै गुरजन कहँ चाही ॥
मोहि विवेक कछु नाहीं, नहिं विद्या बल आहि ।
खेलत हौं यह खेल एक, दिष्टा देइ निबाहि ॥
एक रात सपना मैं देखा। सिंधु तीर वह तपिय सरेखा ॥
अहै ठाढ़ मोहि लीन्ह बुलाई। कहेसि किं सिंधु में बूड़हु भाई ॥
त्रसा छाड़ पोढ़ा के हीया। मोती काढ़हु होइ मरजीया ॥
ससि गोती को हार संवारहु। इंद्रावति की गीउ महँ डारहु ॥
लै मोती दोउ हाथन माहां। झारू रतन सीर उपराहां ॥
अस सपना मैं देखेउँ, जागि उठेउँ अकुलाइ ।
बहुत बूझ संचारेउँ, सपन न बूझा जाइ ॥
चित औ चेत बहुत मैं धरा। तब वह सपन बूझि मोहिं परा ॥
सिंधु समां मन को पहिचानेउं। मोती समां बचन कहँ जानेउं ॥
हार गुहन बूझेउँ चउपाई। रतन ग्रीव कहं रतन बड़ाई ॥
मनुष सुबचन कहे सों लहई। बचन सरस मोती सों अहई ॥
बचन एक करतार निसारा। भा तेहि बचन हुते संसारा ॥
बचन हंसावै मनुष्य कहं, बचन रोवावै ताहि ।
बचनहु तें यह जगत मों, कीरत परगट आहि ॥

है मन फुलवारी हो भाई। फूल समाँ यह बचन सोहाई ॥
बचन अरथ है वास समाना। कवि स्त्रोता है भंवर सयाना ॥
अचरज ऐस फूल पर अहई। बारी माँह कली नित रहई ॥
जब वह फूल तजत फुलवारी। बिकसत वास देत अधिकारी ॥
जुगजुग रहत न तनु कुम्हिलाई। दिन दिन बास बढ़त अधिकाई ॥
मन चाहत सों अस पुहुप, आज चुनौं भरि गोद।
हार गूंथि के पहिरेउँ, मनमों बाढै मोद ॥
हिया कहा दुइ हार संवारहु। रवि औ कमल गले महं डारहु ॥
बुद्धि कहा दुइ हार बनावहु। मालति मधुकर कहं पहिरावहु ॥
तेहि पल तपसी दरस देखाएउ। मोहि संग एहि बात सुनाएउ ॥
राजकुंअर रानी इंद्रावती। हैं रवि कमल औ भँवर मालती ॥
चुनि परसन दुइ हार संवारहु। तिनके ग्रीवं बीच लै डारहु ॥
अशा मान तपी कर, चलेउँ जहां फुलवार।
खुला न पायउ द्वार को, मालिहि दिएउ पुकार ॥
आएउ माली सुनत पुकारा। खोलेउ फुलवारी का द्वारा ॥
पैठेउं फुलवारी महँ जाई। रहसेउं देखत फूल निकाई ॥
तन पलुहा बारी की नाई। मन भा फुलवारी तेहि ठाई ॥
माली कहा जएत मन होई। लेहु फूल नहिं बरजत कोई ॥
जब आज्ञा मालिहि सों पाएउं। तब मैं फूल चुनै पर आएउं ॥
किरपा सों बारी महँ, माली दीन्हा साथ।
आड़े कोउ न आएउ, मैं फुलवारी हाथ ॥
रहत न आगर रूप छिपाना। आपुहिं परगट करै निदाना ॥
जों रस रूप सों बांधहु द्वारा। जाइ झरोखे चितवै प्यारा ॥
सिरजनहार छिपा ना रहा। आपुहिं फेर चिन्हावै चहा ॥
तब यह जग करतार संवारा। चीन्ह पड़ा वह सिरजन हारा ॥
मानुष फूल सुरस सी नाऊँ। घरि घरि भा परगट सब ठाऊँ ॥
आपुहि भोगि रूप धरि, जगमो मानत भोग।
आपुहि जोगी भेस होइ, निस दिन साधत जोग ॥
अलष प्रेम कारन जग कीन्हा। धन जो सीस प्रेम महँ दीन्हा ॥
जाना जेहिक प्रेम महँ हीया। मरै न कबहूं सो मर जीया ॥
प्रेम खेत है यह दुनियाई। प्रेमी पुरुष करत बोवाई ॥
जीवन जाग प्रेम को कहई। सोवन मीचु वो प्रेमी कहई ॥
आग तपन जल चाल समूझो। पुनि टिकान माँटी कहँ बूझो ॥
हो प्रेमी है प्रेम को, चंचलताइ बाय।
जा मन जामां प्रेम रस, भा दोउ जग को राय ॥

स्वप्न खंड कुँवर

एक रात महँ कुंर सरेखा। सपच बीच दर्पन एक देखा ॥
रहा अमल दरपन उजियारा। जिव मुख को निरखावन हारा ॥
दरपन मों एक सुंदर नारी। देखहु चंदहु ते उँजियारी ॥
रही तइस सुंदर जस चही। दरपन देह बीच जिउ रही ॥
रही न तेहि संग सखीय सहेली। रहिउ मुकुर महँ आप अकेली ॥

ससि बदनी मनु रबि रही, रहा मुकुर जिमि धूप।
तेहि रूपवन्ती रूप सों, दरपन पाएउ रूप ॥

जागा भोर कुंअर कहँ पावा। सपन चित में देवस गँवावा ॥
दुसर रात कस्तूरिय झारा। तासों सुगंध कीन्ह संसारा ॥
तेहि त्रिजमा राय सरेखा। पहिली रात कि मूरत देखा ॥
रहेउ न मूरत दरपन मांही। दरपन बहुत रहे अगुवाही ॥
कालिंजरी निर्प नर नाहा। तासो बदन देखा सप माहा ॥

जस दर्पन निर्मल रहे, तस देखा अधिकार।
दरसन एकै नारि को, सब आदरस मझार ॥

पहिली रात महीप सरेखा। मुख पर लट बिथुरी नहिं देखा ॥
दूसर रात महीपति ज्ञानी। देखा मुख पर लट छितरानी ॥
देखि बदन लट सुंदरताई। सपने बीच रहा मुरुछाई ॥
मोंहि अचरज हिरदय मों आहीं। कैसे मुकुर न देखा ताही ॥
यह सपने को को पतिआई। मुकुर सौंह बिनु देखि न जाई ॥

यह सपने की बात पर, अचरज करै न कोइ।
सपने मोंसी होत है, जो सौतुके न होई ॥

राजा देखि सपन अस जागा। लागा ग्रीव प्रेम की तागा ॥
तागा पाइ प्रेम को राजा। मा प्रेमी छाड़ा सुखु काजा ॥
का जाने सुखभोग भुलाना। प्रेम मरम जब लग अनजाना ॥
जाना जात प्रेम तब भाई। जब मन भीतर प्रेम समाई ॥
कालिंजर को राय सयाना। वह नारी के रूप भुलाना ॥

दृग सों बिछुरी मूरत, हिंदय आइ समान।
जब हिय बीच समान, हरिगै चिंता आन ॥

राजै राज काज तज दीन्हा। चिंता वह मूरत की लीन्हा ॥
काहै कहाँ वह चन्द लिलाटी। बरु तेहि आगे है ससि घाटी ॥
कहां धनुक भौंहीं वह नारी। बरुनी बान चोख जेई मारी ॥

कहवां मृग नैनी वह बाला। प्रेमद दीन्ह कीन्ह मतवाला ॥
होतेउँ दरपन ता मुख केरा। मो महँ ता मुख लेत बसेरा ॥
राजकुंअर भा बाउर, छाड़ेउ सुख रस भोग।
परे सकल संह मों, कालिंजर के लोग ॥
राज कुँअर छाड़ा सुख भोगू। असुखी भए नगर के लोगू ॥
दस संघातिय राजा केरे। रहे सो रहे आठ जस चेरे ॥
परै चिंत मों आठ सँघाती। आठों कहँ दिन भा जस राती ॥
काहु बात सुनवत जी दीन्हा। कोउ कौतुक पर दिस्ट न कीन्हा ॥
रस सुगंध कहं छाड़ा काहू। आठो परे बहुत दुख माहूँ ॥
राजा के अनमन भए, अनमन भा सब कोइ ॥
माँगहिं सब करतार सों, मोंद कुंअर कहं होइ ॥
आठों मों मंत्री एक रहा। राजा मानै ताकर कहा ॥
बुद्धसेन रह ताको नाऊँ। जन्म भूमि तेहि मनपुर ठाऊँ ॥
तेहि बिनु सात मित्र अवटाहीं। ताहि मिले सातो सुघराहीं ॥
सुख छाड़ा सब राय सयाना। बुद्ध सेन मन संसै माना ॥
कहा कुंअर सो अहो नरेसू। दिवस चार सों कस तोहि मेसू ॥
औरै तन मन देखऊं, औरै चिंता चाव।
सुख अनन्द को छाड़ेऊ, कहो कुँअर केहि भाव ॥
कहा बुद्ध सों राय सरेखा। रानी एक सपन मैं देखा ॥
पहिल रात अस देखउँ ज्ञानी। दरपन बीच रही वह रानी ॥
दूसर निस बहु दरपन देखेउँ। सब दरपन ता रूप परेखेउँ ॥
सोवत रहिउ नयन के नियरे। जागत आइ समानिउ हियरें ॥
अगल रूप वह नारी केरा। मन हरि लीन्ह कीन्ह मोहिं चेरा ॥
तामुख दुति के आगे, अहै सूर ससि छाँह।
काहु नृप की है सुता, जेहि देखेउँ निस माँह ॥
सुनि बुद्ध राजा कहँ समुझावा। तोहि सपने महँ कौतुक आवा ॥
सपन रूप पर का बिसवासू। तज मन चिन्त बढ़ाव हुलासू ॥
कुंअर कहा यह सपन न होई। मोहिं लेखे सैतुक है सोई ॥
दरपन मों दरपन भा ताको। भा जिउ लाग मुकुर सोभा को ॥
मोहि नृप वह प्रान पियारी। करै चहत है दरस भिखारी ॥
बिछुरी प्यारी नेन सों, हियरें आइ समान।
हिया हाथ मों कीन्हा, भएउ परान परान ॥
मंत्री मरम कुंअर को पाएउ। गुनी चितेरा एक बोलाएउ ॥
अस गुनवन्त चितेरा रहा। जल पर चित्र बनावे चहा ॥
बुद्ध कहा लिखि आनु चितेरा। सुघर रूप इस्तिरीन केरा ॥

निर्प सपने एक नारिय देखा। रीझा तापर निर्प सरेखा ॥
होइ अहेर फांद मो आवै। देखे कुंअर बोध मन पावै ॥
बहु नारिन की मूरतें, लिखा चितेरा जाइ।
बुद्ध बांह सो राजही, सकल देखाएउ आइ ॥
देखि सकल राजैं मुख फेरा। कहा कहां वह अरे चितेरा ॥
कहां लिखै आवै वह प्यारी। सपने बीच बान जेईं मारी ॥
ताको मूरत को लिखि पारै। दिर्ग बान बरुनी को मारै ॥
अधर तेहिक जो लिखै चितेरा। मीठ होइ लिखनी नहिं केरा ॥
सुनि अस बात चितेरा हँसा। कहा प्रेम महिपति मन बसा ॥
कहि बुध साथ चितेरा, गएउ सदन कहँ सोइ।
पहिले प्रेम न गाढ़ा, अंत गाढ़ पुनि होइ ॥
आना बुद्ध मनुष्र दस ज्ञानी। राजा नियरें कहै कहानी ॥
रूप बखान करैं बहुतेरा। होइ फिरै मन राजा केरा ॥
राजा के मन बोध न होई। सपन कहानी कहेउ न कोई ॥
जा दग लागेउ जो रँग नीका। नीको वही आन रँग फीका ॥
जा मन आइ बसै जो कोई। ता कहँ पीन पियार सोई ॥
रंचिक ताहि न भावै, कहै कहानी जेत।
परम दवात कहैं जत, दुखद होइ तेहि तेत ॥
राजा की फुलवारिय जहाँ। लीन्ह बसेरा तपी एक तहाँ ॥
मौन रहा गहि तपिय सयाना। सुकृत तिहिक सब काहुब जाना ॥
रात होत मन मों धरि आसा। गएउ कुँअर तापस के पासा ॥
राजा तपी चरन गहि परा। तापस हाथ पीठ पर धरा ॥
राजहि दाया सहित उठावा। मुख सों बहुत असीस सुनावा ॥
तपी कहा केहि कारन, आवन भएउ तोहार।
राजैं सपन सुनावा, चाहा सपन बिचार ॥
तपी कहा अस पार न मोंहीं। सपन बिचार सुनावउं तोही ॥
पै तेहि कारन राजा ज्ञानीं। सत्त लिहैं एक कंहउं कहानी ॥
होइ सुनत उपजय तेहि हियरें। सत्त सनेह होसि तेहि नियरें ॥
कुंअर पाय गहि अस्तुति गावा। दरसन पाइ बोध में पावा ॥
जो बच भाषै अधर तुम्हारा। उहई ओषध होय हमारा ॥
तब ज्ञानी राजा सों, कहा तपी मुसकात।
सुद्ध स्रव के स्रोता, सुनिए बकता बात ॥
है एक देस अगमपुर नाऊं। मानहुं सरग बसेउ महि ठाऊं ॥
देस बड़ो आगमपुर आही। राजदीप पुनि कहिये ताही ॥
है वह देस सिंधु के पारा। होत धरम नित ताहि मझारा ॥

सुभग रूप आगमपुर होई। धरती सरग कहावत सोइ॥
जैत फूल फल पत्रिय चाही। तांवत आगमपुर मों आही॥
अगम पंथ मों सात बन, और समुद्र अथाह।
होत न कैसेहु मग मों, अगुवा बिना निबाह॥
सिंधु पार है आगमपूरू। पारतें नियर वारतें दूरू॥
है आगमपुर जस फुलवारी। तामें फूल पुरुष अरू नारी॥
नार पदुमिनी कंचन बरनी। होहिं तहां सब मन की हरनी॥
हरनि होइ जग को मन हरई। बोलत काज सुधा को करई॥
है इस्सर कर मंडप तहां। पूजा होत रात दिन जहां॥
जोगी तपी सनासी, बैरागी तेहि ठावँ।
भोर सांझ निस बासर, जपहिं अलख को नावँ॥
ऐसे धरम नगर के ठांउ। अहै महीपति जगपति नाऊँ॥
धरति गगन तेहिक जस मानी। इंद्रपुरी सुर कीत बखानी॥
है धीमान महीपति ज्ञानी। दायावंत सुसील सुबानी॥
आप धरम देही है राजा। नगर न होत धर्म को काजा॥
है गज कटक अहै अनकूता। ऊंच भाग को है तेहि बूता॥
एक हाथ के बल सों, कर समूद्र सों लेत।
एक हाथ सों महीपति, दान जगत को देत॥
राजै गढ़ नौ खंड बनावा। ऊंच गगन लग ताहि उठावा॥
पहिल खंड जगमग मनियारा। निस मों दीख चंद उजियारा॥
चौथे खंड दीप है भानू। ज्ञान मंद किमि कहों बखांनू॥
मंदिर एक अहै तेहि ठाऊं। तीरथ मंदिर मंदिर नांउ॥
तासों लोग बहुत फल पावैं। सत्तर सहस नए नित आवैं॥
मठ के ऊपर ठीक हीं, घड़ियाली घड़ियाल।
निस दिन बैठे साधैं, घड़ी मुहूरत काल॥
का बरनो सुख मंदिर ठाऊं। आठ सदन आठों कर नाऊं॥
तिन भीतर बइठइ जे कोई। ता कहं भूख प्यास ना होई॥
सुंदर नारी रहंइ घनेरी। भई न कामिन काहु अकेरी॥
है आनंद नाम एक ज्ञानी। ताकर सब मंदिर दरबानी॥
बिर्छे एक अस डार पसारा। सब निकेत पर पहुँचे डारा॥
वह सुख बास महीप को, है उत्तम कइलास।
सुख जीवन तामें मिलै, पूजत मन की आस॥
बरनो आगमपूर की हाटा। भूलहिं मनुष देखि सै बाटा॥
कतहुँ तमोलिय पान भुलाने। कहुँ पटवा पाटहिं अरुझाने॥
रूप कनक कहुँ गढ़इं सोनार। कहुँ लोहे की ताव लोहार॥

कहुँ जौहरिये कतहुं चितेरा। कतहुं कुँदेरा कतहुँ ठठेरा ॥
सब भूले अपने जग धंधा। का डिढियारू का जो अंधा ॥
सब तो अहैं बटाऊ, पै पाएं सुख भोग।
आपुहिं कोइ न जानत, हैं पंथिक हमलोग ॥
पुनि बखान सुनु मन तारा को। बसुधा बीच सुधा जल ताको ॥
जो मनताए सम्बर पीऔ। सुख जीवन पावै मन जीऔ ॥
आवैं नीर भरैं पनिहारी। सुंदर आगमपुर की नारी ॥
औउर नदी नीर जस छीरू। मद अस भेद सरोवर नीरू ॥
मधु अस मीठ जीउ सर पानी। यह बखान समझै नर ज्ञानी ॥
जो मानुष अनुरागबल, अचवै चारों नीर।
निर्मल होइ सरीर तेहि, व्याध न रहै सरीर ॥
पुनि बखान सुनु मत के चेरा। आगमपुर के जोगिन केरा ॥
बैरागी सन्यासिय जोगी। साधू संजम तपिय वियोगी ॥
कोउ ठाढ़ा है ध्यान लगाएं। कोउ धरती पर सीस नवाएं ॥
कोउ महिपर माथा धरि रहा। जोग लाग सुख भोग न चहा ॥
बहुतन कहं जगसों सुधि नाहीं। रीझि रहे करता उपराहीं ॥
रसना एक न कहि सकों, आगमपुर की बात।
धरम धनी है राजा, सुखी छतीसौ जात ॥
रहा महीपति घर उँजियारा। बालक दीपक बिनु अँधियारा ॥
जाइ ग्रीस मंडप महँ पूजा। बहुत कीन्ह सँग लीन्ह न दूजा ॥
सिव सपने मों दरस देखावा। दरस दान देइ बात सुनावा ॥
बालक एकौ लिखा न राजा। देइ न बालक अपचित काजा ॥
राजैं कहा पुत्र जो ताहीं। होइ सुता तो मन अनदाहीं ॥
आतमजा जो होत एक, होत सदन उँजियार।
कन्यादान दिहें सों, होतै मुकुत हमार ॥
कहा महेस काज एक करहू। रतन एक मंडप मों धरहू ॥
निसमों राखहु भोरें आएहु। ब्रिर्ज धरे जैसो फल पाएहु ॥
जैसो इस्सर अज्ञा दीन्हा। तैसो मानि महीपति कीन्हा ॥
सिव दाता कहं बहुत मनावा। तुम करता त्रीलोक बनावा ॥
धरती गगन पवन जल आगी। सिर्जेउ सिर्जत बेर न लागी ॥
होइ रतन सों कन्या, यह मनसा है मोर।
राज सदन अँधियारो, तासों होइ अँधजोरा ॥
सिवा अलखसों बिनती कीया। जस है रतन जोत सों दीया ॥
दीप रतन सम कन्या होई। करइ निकेत अंजोरा सोई ॥
भा दयाल दाता तेहि घरी। वोहि रतन कन्या अवतरी ॥

मै महेस मंडप उँजियारी। उतरी मनहुँ इंद्रपुर नारी॥
भोर होत राजा चलि आएउ। मंडप बीच चंद्र सम पाएउ॥
परमद सो मंडप मों, पुलकेउ राजा देह।
कन्या कहं अति आदरें, आनेउ अपने गेह॥
पुन सिवरात होत सपनावा। गौरिहु आपहुँ दरस देखावा॥
कहा घरेउ अवतार सुभाऊं। रतन जोत कन्या कर नाऊं॥
मोती एक बटामों कीजे। जलधिम झार डार तेहि दीजे॥
वह मोती काढ़ै जो राजा। सोई वर कन्या कर छाजा॥
मोती काढ़ न पारै कोई। काढ़े सोई बर जो होई॥
सिव भाबित के पाछें, सिवा कहा तेहि ठाउं।
होत भलो इंद्रावति, वह कन्या को नाउं॥
राजै दोऊ नाम तेहि राखा। रतन जोत इंद्रावति भाखा॥
रूपम्मा बाई तेहि पाला। लाग चलै महि ऊपर चाला॥
भइ जो सयान भई चितगरी। पढ़ि विद्या भई विद्याधरी॥
लागीं साथ अगमपुर बारी। जोरेउ स्यामा राज दुलारी॥
जगपति मरम सुता कर पावा। कीन्हा परन जो ईस बतावा॥
बूड़े बहुत समुद्र मों. मोती चढ़ेउ न हाथ।
नहिं जानौ को देइ हैं, सेंदुर ताकी माथ॥
मंडप मों जाते ऊघ भागे। बरस देवस पर तीरथ लागे॥
जब आगमपुर कहं मैं गयऊं। पूजा नित मंडप मह भयऊं॥
तति खन भय चहुं ओर पुकारी। आवत है जगपति की बारी॥
पंथ देउ कोउ रहइ न आगें। जात मंडप कहं पूजा लागें॥
पंथ छाड़ भा सब कोउ ठाढ़ा। सबके हियें प्रेम रस बाढ़ा॥
पंथ छाड़ सब ठाढ़ भा, नैन भएउ सब देह।
इंद्रावति दरसन नित, सब मन बढ़ेउ सनेह॥
सब मानुष मन प्रीत घनेरी। उपजी इंद्रावति मुख केरी॥
मुकुर बने चाहा सब कोई। जामों आइ परैं मुख सोई॥
सखिन साथ इंद्रावति आई। बरनि न पारौं सुंदरताई॥
रहि न सखी सुंदर जहाँ ताईं। जिउ अस लिहें रतन कहं आईं॥
देह भईं सब आगम वारी। जीउ रही इंद्रावति प्यारी॥
सखी रहीं अंतर पट, देखा बिरलै कोइ।
मंडप बीच गई वह, सब को मति नग खोई॥
रंचिक तेहि देखा जो कोई। कीन्ह बखान आप मों सोई॥
कहुव कहा अहै अपछरा। नहि चितएउ ऐसें मन हरा॥
काहुव कहा दिष्ट जो देती। मन औ प्रान दोऊ हर लेती॥

रूप गगन जग काया वारी। है जिउ है जिउ है जिउ प्यारी ॥
वो वहि मुख को परगट देखा। गूँग भएउ भा बाउर भेखा ॥
तेहि अस आपुहिं होइ रहा, रहा न ताहि विवेक।
जातें जानैं एक मैं, औ इंद्रावति एक ॥
इंद्रावति घर कीन्ह बहोरा। ससि होइ लै नछत्र चहुँ ओरा ॥
आप गई मंदिर कहं प्यारी। बहुतन को कइ गई भिखारी ॥
जो रंचिक ता दरसन पावा। हाथ मलेउ मानेउ पछतावा ॥
कहा सहेलिन बैरिन भई। वोटै वोट किहें लै गईं ॥
आज आइ वह परगट भई। मिला न दरस गुपुत होइ गई ॥
सुमिरेउं सिरजनहारहीं, जब देखेउं असरूप।
ऐसो रूप संवारहू, धन्य त्रिविष्टपभूप ॥
है पदुमिनि इंद्रावति प्यारी। ताको बदन रूप फुलवारी ॥
कोमलताइ सुंदरताई। से रना सों बरनि न जाई ॥
दिगॅन हरा मान मृग केरा। मन लजाइ बन लीन्ह बसेरा ॥
ना अति लांब न छोटी आही। है तस इंद्रावति जस चाही ॥
यह बखान का बरने होई। जो देखा जानहि पाइ सोई ॥
कै बखान जोगी कहा, मोहि जाने होराय।
चंद्र बदन इंद्रावती, तोहि सपनाएउ आय ॥
पहिले इंद्रावति सुकुमारी। रहिल रतन दरपन मों प्यारी ॥
जब जगमों अवतरी नवेली। ताको दरपन भई सहेली ॥
है वह दीप सिखा उँजियारी। आपन जोत सखिन मों डारी ॥
हैं वह रतन खान आभा को। जोत सुरूप रूप है ताको ॥
है आनंद बदन वह प्यारी। छवि तापर है लट सटकारी ॥
इंद्रावति है पद्मिनी, रम्भा तुलै न ताहि।
एक जीभ सों कित मैं, ताकों सकों सराहि ॥
सुनत बखान कलिंजर ईसू। तपिय चरन पर डारेउ सीसू ॥
कहा कुंवर हो सिद्ध सरीरा। ओषद दे काटेहु मन पीरा ॥
सपन बिचारेहु मोर गोसाईं। पीरा हरेहु रही जहं ताईं ॥
जेहि रानी के करहु बखानू। निसचै हरा सोई मन ज्ञानू ॥
तजि कइ राज होब मै जोगी। इंद्रावति पर होउँ बियोगी ॥
हौं मैं चेला तुम गुरू, बिनै करत हौं तोहिं।
आगम पंथ देखावहु, लै पहुँचावहु मोहिं ॥
तपिय कहा तोहि जोग न छाजा। बैठे राज करीजे काजा ॥
अहै कठिन आगम को बाटा। गहिर समुद्र न थाह न घाटा ॥
औ है गुलिक काढ़िबो गाढ़ा। सिंधु न जानै तट जो ढाढ़ा ॥

है हम कहँ तीरथ बहु करना । कासिय पंथ उपर पग धरना ॥
जाय पयाग करउं अस्नानों । पुनि महेस को देखेउँ थानों ॥
तपी भेस मैं मानुष, नाम मोर गुरु नाथ ।
तब गुरु नाथ कहावउँ, जब आनउँ तप हाथ ॥
कुंवर कहा गुरुनाथ गुसाईं । राज रहा मीठा अवताईं ॥
अब निसचै मैं होब भिखारी । तहाँ चलि जाउँ जहाँ वह प्यारी ॥
जिउ को लोभ कछुहु मोहिं नाहीं । ता नित पैठउं पावक माहीं ॥
अगुवाई जो कीजे नाथा । तो वह मूल होइ मोहि हाथा ॥
ना तो सुमिरत दया तुम्हारी । जाउं तहाँ होइ तपसि भिखारी ॥
राज पाट सब छाड़उँ, लेउँ अगम को पंथ ।
पथिक होऊँ अगम को, पहिर जोग को कंथ ॥
जाना तपी तजहि सुख पाटा । हियें सुधान अगम की बाटा ॥
सकल आपनो परगट कीन्हा । देव दिष्टि राजा कहँ दीन्हा ॥
माया रहित कीन्ह मनुसाई । उपबन सों कीन्हा अगुवाई ॥
फुलवारी मों राय सरेखा । पंथ सहित आगमपुर देखा ॥
देखा देस अगमपुर केरा । रीझि रहा राजा भा चेरा ॥
अगम पंथ मन मों बसेउ, भूली दूसर बात ।
हिर्दै चिन्त सोउ तरिगा, राज मुकुट औ पाट ॥
तपिन कहा राजा कुछ सूझा । राजा सुनत मरम सब बूझा ॥
कहा भएउ कृपाल गोसाईं । सूझी बाट रही जहाँ ताईं ॥
सूझा इंद्रवती कर देसू । होएउं निसचै जोगिय भेसू ॥
सुनि गुरनाथ अरूपेश्वर जाना । पंथ अगम राजहिं पहिचाना ॥
गुपुत भएउ पुनि कुंवर न देखा । आएउ मंदिर राय सरेखा ॥
गुरू जानि गुरुनाथहीं, चेला आपुहिं जानि ।
आगम जोत धरा चित, मन परान सों मानि ॥
कालिंजर सों भएउ उदासा । भएउ नरक मंदिर-कबिलासा ॥
सुंदर कहा कंत कस जीऊ । कस उदास तेहि देखेउं पीऊ ॥
परेउ सीस ऊपर कछु भारा । ऊदासें है जीउ तुम्हारा ॥
दीन्हा उतर सुंदर केरा । सैतुक बीच सपन भा मेरा ॥
सुनेउं आज मैं तेहिक बखानू । सपन देखाइ हरा जेइ ज्ञानू ॥
राजपाट बन भोग सुख, सब तजि साधौं जोग ।
जाउँ वोही के देस कहँ, होइ संजोग वियोग ॥
सुनि कै कहा सुंदरी राजा । तुम्हें भोग तजि जोग न छाजा ॥
सुख संपत्त सब दीन्हा दाता । मारु न छीर भात मों लाता ॥

स्वप्न खंड कुंअर

कहा रहेउं अबलग मैं भोगी। अब मैं होउं अगम को जोगू ॥
जोगी होउ अगमपुर केरा। लेउं जाइ तेहि गलिय बसेरा ॥
भोगै बीच रहउं जउ भोला। कित मोंहिं हाथ चढ़इ वह मूला ॥
तुम कामिनी मत हीनी, भोग सुपावहु मोहि।
प्रेम खींच है मो कहं, सूझ बूझ नहिं तोहि ॥
राजैं राजपाट सुख तजा। प्रेम आइ मति सों अरबजा ॥
मनमों प्रेम बसेरा लीन्हा। बरबस राजा प्रेमिय कीन्हा ॥
प्रेम अगिन मन मों उदगरी। तासो दारु बुद्धि कर जरी ॥
भार वोही राजा सिर परा। जो नभ औ महि को बल हरा ॥
निबर मनुष को धन मनुसाई। जो अस भारिय भार उठाई ॥
प्रेम आग के बाढ़े, मेधा भयो मलीन।
सूर किरिन के आगें, है मयंक दुति हीन ॥
रे कलवार आव चलि बेगें। हौं मैं ठाढ़ सिंधु जा नेगें ॥
है निर्मल मद सदन तुम्हारा। मोहि लेखें सज ठाकुर द्वारा ॥
दे मदिरा भर प्याला पीवों। होइ मतवार कांथरा सीवों ॥
सो कांथर कांधे पर डारउं। जोगी होइ जग चाहत मारउ ॥
होइ जोगी तेहि देसहि जाऊं। है जेहि देस सुप्रीतम ठाऊं ॥
मोहिं यह देस न भावत, छन है बरष समान।
अब तेहि देस सिधारउं, जहाँ रहत वह प्रान ॥

मालिन खंड

जब राजा फुलवारिय आयेउ । तजि पर चिन्ता ध्यान लगायेउ ॥
मालिन सुंदर चेता नाऊँ । आइउ मन फुलवारिय ठाऊँ ॥
भइ सोहैं राजा के ठाढ़ी । मनु समुद्र सो मोतिय काढ़ी ॥
अहो बियोगी भेस भिखारी । इंद्रावति की यह फुलवारी ॥
इहाँ न कोऊ जोगिय आवै । जो आवै तो जीउ गँवावै ॥

कबहूँ कबहूँ आवै, इहाँ पियारिय सोई ।
चार दिष्ट होइ जाइही, जाउ जीउ सों खोइ ॥

है मनोरमा जगत कर सोई । है ससि जौं ससि बोलत होई ॥
कुसुम उसीसा लाइ बईठै । मान समेत जगत दिस दीठै ॥
धन के नैन दिष्टि जेहि डारा । सो आतिथ भा भा मतवारा ॥
मुख है फूल कपोल कली है । है छबि औ सोभा बिमली है ॥
फूल अहै पै कलिय समानू । कलिय अहै पै है बिकसानू ॥

है सुकुवार पियारी, है प्यारी सुकुवार ।
है फुलवारिय रूप को, अहै रूप फुलवार ॥

राजा कुँवर कहा सुनु प्यारी । आयेउँ भलो लाग फुलवारी ॥
जग में मरन हुतें का डरऊँ । एक दिन मरों छार होइ परऊँ ॥
जो इंद्रावति के दोउ नैना । प्रान लेत हैं करि कै सयना ॥
तो मोहिं साँच जीउ कर नाहीं । होइ सुधा तेहि अधरन माहीं ॥
बहुर प्रान देई मोहि सोई । नित जीवन पुन मरन न होई ॥

दरस देखि जो जिय तजौं, यातें भलो न और ।
एहि कारन मैं लीन्हेंउँ, मन फुलवारी ठौर ॥

अहो यह नित बरजेउँ जोगी । जिय न तजहु पै होहु बियोगू ॥
जोग तोर औ गुरू तुम्हारा । जाइहि भूल जासि ठग मारा ॥
जाकी चितवन भए बेहाथा । नाथ मुछंदर गोरख नाथा ॥
तेहि देखत सुधि भूलै तोही । भूलै जोग बौ मन बोही ॥
निंदा नौके फेर भुलाहू । सौके देस न बेगहिं जाहू ॥

अबहीं अहसि सरेखा, जहँ चाहसि तहँ जासि ।
नां तो दरसन पाइकै, सुधि गंवाइ बौरासि ॥

ससि कारन तुस लायहु फाँदू । फाँदे बीच न आवइ चाँदू ॥
जीउ चलाउ जहाँ लग हाथा । गगन चढ़ावइ चाहसि माथा ॥

पट बाहर जेइं पाव पसारा। जाड़ा कठिन अंत तेहि मारा ॥
जो पंखी बित बाहर धावा। सो निदान महि ऊपर आवा ॥
अपने जोग ठाव जेइ लीन्हा। सब कोऊ तेहि आदर कीन्हा ॥
सब काहूँ कहँ ठाउँ है, अपने अपनै मान।
रानी राजा जोग है, ससि जोगें है मान ॥
हौं मैं ता दरसन नित जोगी। भसम चढ़ाएँ भेस वियोगी ॥
ताको प्रेम गुरू है मेरो। जोग सिखाय कीन्ह मोहि चेरो ॥
जब मन बसी धरेउं तब जोगू तजि कै सकल जगत सुख भोगू ॥
वहि उत्तम दरसन के कारन। आएउं नांघि मेरु दधि आरन ॥
जा दिन मैं दरसन वह पावउं। होइ आप आपुहि हेंरवावउं ॥
दरसन देखै कारनहि, रोम रोम भये नैन।
नींद न आवत निस कहँ, वासर परत न चैन ॥
चैन कहाँ चिन्ता जेहि जीऊ। जीउ दुग्ध भा चिंता धीऊ ॥
जब चिंता तव नींद न आवै। आवै तव जब चिंता आवै ॥
प्रेमी पर चिंता कहँ मारै। मारै मन चाहुत जिय वारै ॥
हेरै प्रीतम मुख नहिं फेरै। कोरें मित्र मित्र कहँ हेरै ॥
रोवै रकत आंस नहिं सोवै। दरसन लाग रात दिन रोवै ॥
सत्तर सिर मन तीस सै, पांव एक सै जाहि।
प्रेमी को दुख देत सो, प्रेम अथ यह आहि ॥
हौं जोगी पै उत्तिम भीखा। प्रेम पाइ मागैं मैं सीखा ॥
जहि मन ऊँच ऊँच भा सोई। जेहि मन नीच नीच सो होई ॥
कहाँ चाँद कहँ रहइ चकोरा। प्रीत लाग चितवत तेहि ओरा ॥
औ अरबिंद रहै जल माहीं। रवि सेवत तेहि जोगें नाहीं ॥
दादुर कंवल सनेह न पावै। बनसों मधुकर तेहि नित धावै ॥
दूर देस की दिष्टि सों, है समीप गुन मूर।
बिना नैन औ दिष्ट के, नियरे के है दूर ॥
मालिन कहा बहुत तुम बूझा। प्रेम पंथ उजियारा सूझा ॥
कवन जात है का है नाऊं। कहाँ जनम भुम्मी का ठाऊं ॥
कहा रहेउं मैं जात चंदेला। अब सम जात धूर सिर मेला ॥
जनम भुम्मि कालिंजर ठाऊं। राजकुंवर है मेरो नाऊं ॥
प्रेम तेहिक मोहिं चेला कीन्हा। राज छोड़ाय जोग गुन दीन्हा ॥
हौं जोगी तेहि पंथ कों, नहिं चाहौं कविलास।
चाहउं दरसन भिच्छा, राखत हौं नित आस ॥
हो जागी मुख आभा तेरी। साखि देत है राजा केरी ॥
पै तोहि साथ न सेवक कोई। राजा पर विस्वास न होई ॥

औ मोती का ढब हैं गाढ़ा। बूड़े बहुत न काहुअ काढ़ा ॥
भीख मिलन गाढ़ी है जोगी। भाग जो होइ तो होहु संजोगू ॥
याहू पर बहुतै तुम कीन्हा। तजि सुख भोग जोग दुख लीन्हा ॥
जेहि दरसन के दीप पर, है पतंग संसार।
प्रेम तेहिक तुम लीन्हा, मरै न नाम तोहार ॥
है इंद्रावति बिद्याधरी। बिद्याधरी आप अवतरी ॥
है पदमिनि मृगसावक नैनी। ज्ञानवंत औ कोकिल बैनी ॥
जो काहुअ पर ढारै डीठी। सो जन देइ जगत दिस पीठी ॥
अस रूपवंती सुंदर आहै। बिनु देखें सब ताहि सराहै ॥
खोलै मुख परभात देखावै। खोलै केस साँझ होइ आवै ॥
है तेहि चंद्र बदन लखि, जगत नयन उँजियार।
गगन सहस लोचन सों, निरखैं तेहिक सिंगार ॥
धन दृग मतवारे पैरारे। चितवन बीच सिंधु जा ढारे।
अधरन सों मुसुकान सोहाई। बात कहत सो झरत मिठाई ॥
सखी अहैं दरपन तेहि माहीं। डारा सुंदर मुख परछाहीं ॥
तासों सखी भई छबि धारी। छबि दाता है प्रान पियारी ॥
सै मन अलक बीच हैं बाँधे। लेहिं सहस जिउ हत्या काँधे ॥
बहुतन तजि जग धंधा, तप साधा तेहि लाग।
अरुझि रहा मन अलकैं, जिउ मारा अनुराग ॥
है तेहि अंस ताक मो दीया। भा उंजियारो मंदिर हीया ॥
सीसा बीच दिया है धरा। मनु सीसा तारा निर्मरा ॥
है मंदिर सोभित फुलवारी। अहै सुगंध मालति वह बारी ॥
लेहि रहैं आखिन पर चोरी। अहैं सखी छाया तेहि केरी ॥
दिष्ट न आवत ताकी छाया। मानहुँ जीव धरे है काया ॥
वोहि डोलैं सब डोलैं, थिरै थिरै सब कोइ।
काया सों जो होत है, सो छाया मों होइ ॥
सात अंतर पट भीतर सोई। रिहत न देखत अंचिन्ह कोई ॥
बारह मंदिर मों वह प्यारी। रहत सदा है सेज संवारी ॥
हीरा सात सात जस तारे। हैं मंदिर भीतर उंजियारे ॥
दुइ सै औ अढ़तालिस करी। लागे रतन पदारथ भरी ॥
है मंदिर मो तेरह द्वारा। नौ द्वारा नित रहत उघारा ॥
बाय तेज जल पृथिवी, मानहुँ कैयक ठाउं।
बारह मंदिर संवारा, जगपत जाको नाउं ॥
आवै जाइ पवन दुइ द्वारें। संगी सोहु न सबद संवारें ॥
दसईं द्वार खोलत कोई। तब खोलै जब मरमी होई ॥
दस चेरी धन की गुन भरीं। सेवा बोच रहैं नित खरीं ॥

पाँच मँदिर के बाहर रहई। पाँच मँदिर भीतर गुन गहई ॥
एक सुध पाँचों सों नित लेई। सुध चारों चेरिन कहँ देई ॥
है सरूप वह रानी, रहै सात पट माँह।
सखियन सों वह प्रगटै, अहैं सखी सब छाँह ॥
सुनि इंद्रावति रूप बखानो। राजकुवँर हिदैं रहसानो ॥
कहा लेहिउं तेहि कारन जोगू। है महिमानस प्रीत बियोगू ॥
भायउ आवत इहाँ अकेला। गुरु न भयउं का राखउं चेला ॥
होउं अब्धि मों होइ मर जीया। तजि जिउ भय पोढ़ा कइ हीया ॥
भाग जो होइ जलज निसाराऊँ। तो जिउ जिउ कारन वारऊँ ॥
प्रेम फाँद मों हौं परा, नहिं छूटै की आस।
मिलबो चाहौं प्रान को, अहै न भूख पियास ॥
जो चाहत संजोग बियोगी। जो मैं कहहुँ सो साधहु जोगी ॥
खोटे काज के नियर न जाहूँ। निरमल कथा होइ जस चाहूँ ॥
पर चिंता तजि सुमिरहुं ताको। होइ सो भरता मन आभा को ॥
ना रहिये आपा गुन साथां। निरमलता आवै जिउ हाथां ॥
मन जिउतें सुमिरहु वह नाऊं। बूझहु प्रान मों ताको ठाऊं ॥
दूसर चिंता छाड़ि कै, तापर लावहु ध्यान।
मन फुलवारी मों रहै, पावहु दरस निदान ॥
आपन है नाहीं कर जोगी। पुनि है होसिहोसिहै भोगी ॥
नाहीं होइ नाहिं तैं हेरा। ना तो मिलत नियर तेहि केरा ॥
नियर मिलें तें दरसन होई। जोग भूल है तीनउं सोई ॥
जो मर जिया सो भामोर जीया। मोती लिया दिया भा दीया ॥
मरिके जिउ पुनि मीचु न आवै। प्रानपियारी बदन दिखावै ॥
छिन अंतरपट होइ रही, फुलवारी के फूल।
देखु रंग प्यारी कर, दै रंगन को मूल ॥
कहि राजा सों भेद कहानी। गइल जहाँ इंद्रावति रानी ॥
मैं ब्याकुल प्यारी तब ताईं। जोगी आइ बसा मन ठाईं ॥
बाढ़ेउ प्रीति जोगेश्वर केरी। मन पद परी प्रेम की बेरी ॥
कहै कहाँ वह रावल प्यारा। है दरसन मन हरा हमारा ॥
सोइब रहेउ जाय सों भला। जामों मिला दरस निर्मला ॥
मिला दरस जेहि सपन मों, तापर वारों जाउं।
जागब मोहिं बैरी भयेउ, कीन्ह दूर दुइ ठाँउं ॥
वोही समै मों मालिनि गई। प्यारी कहँ सुख दाता भई ॥
पूंछे लाग परान पियारी। है कस आज काल्ह फुलवारी ॥
बीता फागुन औ पतिझारा। जो निर्पात कीन्ह कुँज डारा ॥

जो पच्छिम को जीउ सतावा। पत्र को छारिके छाँह नसावा ।।
सो तो अब न रहेउ जग माहीं। फुलवारी पलुही की नाहीं ।।
बदन उघारा है पुहुप, अली भँवहिं उपराह।
की समुझत पतिझांर कों, अहैं छिपी पट माँह ।।
चेता नारी उतर निसारी। हो फुलवारी प्यारी फूली ।।
मान पाट पर बैठे फूलें। फूल बास मधुकर मन भूलें ।।
देइ के उतर कुसुम को हारा। इंद्रावति के गल मों डारा ।।
फेरि कहा दिन बहुत न गयऊ। सपन तुम्हारो सैतुक भयऊ ।।
फुलवारी मों है एक जोगी। रानी दरसन लाग वियोगी ।।
है कालिंजर महिपति, राजकुंअर है नाउं।
नाम तिहारो जपत हैं, मन फुलवारी ढाउं ।।
ए रानी का बरनउं ताही। धूर लपेटा मानिक आही ।।
बहुत सरूप अहइ वह तपा। कंथा बीच रतन है छपा ।।
होइ दग जिय जो देखनहारी। तो मुख ताको लखै पियारी ।।
जौवत राजा लच्छन चाहीं। है सब दग रतनारी आहीं ।।
अर्द्ध चंद सम भाल सोहाई। रेखा तीन दिष्ट मोहिं आई ।।
धनुक समां है भिर्कुटी, बरुना चोखी बान।
कीर समां है नासिका, सबद मोर परमान ।।
लबर करन को सीर न आहै। राजा सिद्ध होन कस चाहै ।।
कुंओ बियोगी उपबन ढाऊं। निस दिन सुमिरत रानी नाऊं ।।
अहै प्रेम मदिरा मतवारा। जपत सांस मों नाम तुम्हारा ।।
लेत न एकउ सूझै सांसा। दरसन लाग देह सुख नांसा ।।
जोगी भेस न सकउं सराही। गोपीचंद्र दूसरो आही ।।
होत जियत को भरथरी, ताको चेला होत।
आइ बसा फुलवारी, सुनहु खोलि मनस्त्रोत ।।
इन्द्रावति सुनि जोगी नाऊं। जोगिन होइ चहा तेहि ढाऊं ।।
कहा सपन को जोगी प्यारा। होई वही मनहरा हमारा ।।
सकल आंक तुम आइ सुनावा। सपन तमी लच्छन मैं पावा ।।
एक अचंभे आवत हियरें। है न कहूँ कालिंजर नियरें ।।
मों सुनरूप कहां ते पावा। जोगी होइ अगमपुर आवा ।।
भेंट न होइ न गुन सुनै, प्रेम कहां सो होइ।
कैसे मोहि कारन भयउ, आगम जोगी सोइ ।।
अहो पियारी बूझन तोकां। तोर बखान गयउ सुर लोकां ।।
तहां सदा सब निर्जर नारी। चरचा तेरो करइ पियारी ।।
धरती पर कालिंजर देसू। सुनि बखान भा जोगी भेसू ।।

तैं धन कली समां पट मांहीं। सैकी लालप तोहि उपराहीं ॥
नहिं जानो कस परत पुकारा। जो परगट मुख होत तुम्हारा ॥
तुम धन प्यारी पदुमिनि, सुधा मरे अधरान ।
बहुत अमी अधरन पर, दिहेनि सुन्धु मों प्रान ॥
हो धन जाको नाम सुनायहु। फुलवारी मों दरसन पायहु ॥
मन औ ज्ञान हरा है सोई। होत भलो जो दसन होई ॥
मैं सकुचाउं जात फुलवारी। भइउं नयन सों मैं हत्यारी ॥
चार दिष्टि काहुव सों होई। जात चेत सों मुरछेइ सोई ॥
औ परगट मोहिं चलत न भावै। अब मोहिं लज्या जिउ सकुचावै ॥
गयेउ सखी वह सामै, आंखिन रहो न लाज ।
अब यह नैन हमारो, प्रायेउ लाज समाज ॥
लाज नहीं जेहि आखिन माहीं। है वह पसु है मानुष नाहीं ॥
घुंघरू पहिरि लाज यह आही। पगु कहँ धीमे राख बचाही ॥
औ धन ऊँची सबद न बोलै। सुनत बिराने को मन डोलै ॥
औंधे नैन लाज सों कीजै। औ मुख ऊपर घूंघट लीजै ॥
हो प्यारी अब पहिरहु गहना। पुरुष बिराने सों छिप रहना ॥
हौं बारी अलबेली, बारी कैसे जाउँ ।
भेंट होइ काहुअ सों, खोर और मग ठाउँ ॥
जो जोगी तुम देखै चाहा। जोगहि मिलै जोग सों लाहा ॥
परगट तुम्है चलै को कहई। तो पट भलो पवन रथ अहई ॥
तेहि पर चढ़ि कै चलिये प्यारी। चारो दिस पट लीजै खड़ारी ॥
जोगी साथ न दूसर कोई। है अकेल बारी मों सोई ॥
है भिच्छुक तेहि दाया कीजै। उत्तम दरसन भिच्छा दीजै ॥
दर निखाइ कै दरसन, आपुहिं लेहु छिपाइ ।
अधिक बढ़ै अभिलाख तेहि, दूसर पंथ न जाइ ॥
चलहँ चलहुँ निसचै फुलवारी। देखउँ जोगी कहँ मन बारी ॥
आज देवस औ रैन बितावउँ। प्रात सबै फुलवारी आवउं ॥
जोगी पास अहै मन मोरा। भयेउ सीस पर प्रान झकोरा ॥
होइ गयें खापन मन पावउँ। मन पायें आनंद मनावउँ ॥
पहिले आपन दरस दिखायेउ। पाछे सों मोहिं जोग सिखायेउ ॥
रहिउँ अचेत भुलानी, लाग राग को बान ।
प्रेम निबाहीं जो जियउँ, तेहि के मरउँ निदान ॥
ना ले मरन का नाम पियारी। तोहि मरत मरिहैं बहु नारी ॥
जहँ लग हैं नारी रज दीपी। का बिछुरानी काह समीपी ॥
तोहि जिय सों जीयत सब कोई। कहु न मरन तो पर लो होई ॥

हैं जहँ लगरजदीपी नारी । जीउ तिन्है है प्रीत तुम्हारी ॥
भलो भयेउ जो बाढ़ा प्रेमू । मिलि है प्रीतम होइहै खेमू ॥
अति समीप है प्रीतम, अहै न एकौ बाट ।
एक पाव दे आप पर बैठु, मिलन के पाट ॥

काहे न लेउं मरन के नाऊँ । मरब एक दिन धरती ठाऊँ ॥
केतिको प्रीत जगत महँ होई । देत न साथ मरन महँ कोई ॥
जावत जिया जंतु जग रहई । करता बस सबको जिय अहई ॥
है समीप वह मित्र हमारा । पै जग धंध दूर मोहिं डारा ॥
काम क्रोध तिस्ना मन माया । है रिपु कछहु उपाय न पाया ॥
किछु उपाय नहिं आवै, जाते जाहिं नेवारि ।
हैं बैरी मोहिं गाढ़े, सकों न यह सब मारि ॥

अंहो तुम राजा कर बारी । अरुझि रहिउ सुख बीच पियारी ॥
सुखमों काम क्रोध अधिकाई । तिस्ना मया करइ अगुवाई ॥
चारि पखेरू तोहि तन माहीं । चारों चारा नित उड़ि जाहीं ॥
रेत औउँ चारों कर प्यारी । मरिकै जियहिं होहिं गुनधारी ॥
मन दरपन ऊपर चित दीजै । नाहीं है सो निर्मल कीजै ॥
मांज सजो मन दरपन, रात देवस चित लाइ ।
स्याम रंग अंतरपट, उठि आगें सों जाइ ॥

बोलब सोइब खाइब थोरा । होइ होइ तौ कारज तोरा ॥
औ चिंहार प्रीतम की लीजै । जो सिखवैं सो कारज कीजै ॥
औ निसबासर अकसर रहना । सुमिरन जाप बीच दुख सहना ॥
पै यह मन है सत्रु समाना । जात न मारा सुख लुबुधाना ॥
मन बरजे कहँ काको करई । मन न मरै बरु पारा मरई ॥
मालिन हिता उपाय दै, गई आपने ग्रेह ।
इंद्रावति कै मान से, भयउ समस्त सनेह ॥

चलु मन तहां जहां फुलवारी । तहां बसा है दरस भिखारी ॥
मित्रहिं भेंटहु देखहु फूलू । है फुलवारी परमद मूलू ॥
धन सो मानुष धन तेहि भागू । जेहि मधु मिलेउ खेलि कै फागू ॥
जेतो तेहि पतिझार सतावा । तेतो सो बसन्त सुख पावा ॥
धन जग माली सिर्जन हारा । कुल पलुहावत है पतिझारा ॥
भागवंत सो मानुष, है तेहि धन धन हाथ ।
मित्र बदन औ फूल मुख, देखै एकै साथ ॥

फुलवारी खंड

इंद्रावति दिन रात बितावा। भोरहिं सखियन कह हंकरावा ॥
भै न बिलंब सखी सब आईं। तारा समा रहीं जह ताईं ॥
आई ससि बदनी थोर दीनी। सकल राज दीपी पदुमीनी ॥
आईं समुदें कुल की सुता। बहु व्याहीं बहु अव्याहुता ॥
घोर समय वह नषत सहेली। धन मयंक घेरेन अलबेली ॥

रानी की सब सहचरीं, आइ जुरीं तेहि पास।
सब अपछरा समां रहिं, भवन भयउ कबिलास ॥

इंद्रावति सखियन सों कहा। सो दिन गयउ बिछ्छ जो दहा ॥
जग सों पतिझारी रितु गई। पलोहे बिछ्छ नवल रितु भई ॥
काल्ह जनायेउ चेता नारी। फूल रही है मन फुलवारी ॥
चलहु गवन बारी दिस कीजे। फूल देखि परमद रस लीजे ॥
नहिं जानहिं सिर परिहै कैसो। खेलहु होइ खेलना जैसो ॥

फुलवारी चाहत है, मन बैरागी मोर।
चलहु देखिये उपवनै, है बसंत रितु थोर ॥

थोरा है कुसुमाकर बेला। चलि देखिहु औ खेलहु खेला ॥
बीतो बेला छूटा बानू। हाथ न आवै झँखै परानू ॥
सकल समै को भेद छपाना। है हम लोगन ताको जाना ॥
भेंटत आ राखत करतारा। जो चाहै है सिरजनहारा ॥
समय खरग है काटन हारी। जात चलछि तेहि भेंटु पियारी ॥

मधु मीठो है मधु समां, मधु दरसन को लेहु।
हार सरीर ग्रीव को, हार कुसुम को देहु ॥

सब काहू धन आज्ञा माना। फुलवारी दिस कीन्ह पयाना ॥
इंद्रावति रथ ऊपर चढ़ी। दूनो बढ़ी रूप को बढ़ी ॥
चली मानसों ब्राम्हन बारी। बनियाइन नाइन पटिहारी ॥
चली सोनारिन कंचन बरनी। रजपूती खतिरिन मनहरनी ॥
लोनी धन हलवाइन भली। अधर मिठाई बांटत चली ॥

चली सहेली सुंदरी, इंद्रावति के संग।
गीत बसंती गावतैं, पहिरे दकुल सुरंग ॥

मन फुलवारी मों सब गईं। देखि सुमन को सुमना भईं ॥
वेता मालिन भेंटेउ आई। चंद्रबदन देखै दुति पाई ॥
सुगँध कुसुम को हार संवारा। सब सुंदरि के गीउ मों डारा ॥

देखि भँवर गन गुंजत तहां। एक सखी बोली गन महां ॥
धन यह मधुकर धन यह फूलैं। किन के ऊपर अलि मन भूलैं ॥
जगत मझार सराहिये, भंवर फूल के हेत।
भंवरहि चिंता फूल की, फूल बास रस देत ॥
सुनि सचेत इंद्रावति रानी। बोली सुनिए सखी सयानी ॥
जग मों प्रीति बखानहु सोई। जीबन मरन एक सँग होई ॥
खोटी प्रीति भंवर की आहै। भंवर आपनो कारज चाहै ॥
आइ भंवात बास रस आसा। लै रस तजत फूल को पासा ॥
लै रस बास भंवर उड़ि जाई। मरत न जब सुमनस कुम्हिलाई ॥
प्रेमी ताको जानिये, देह मित्र पर प्रान।
मित्र पंथ पर जिउ दिहैं, जुग जुग जिए निदान ॥
धन जो प्रीतम पर जिउ वारा। सिर पर चला प्रेम का आरा ॥
धन जो परा हुतासन माहीं। और सहायक चाहा नाहीं ॥
दया दिष्ट प्रीतम तब धरा। पावक फूल भयेउ नहिं जरा ॥
धन जो मित्र आपनौ चीन्हा। पुत्र जीउ आगे कै दीन्हा ॥
मुवा न कहो जियत है सोई। अलख पंथ जो जूझा होई ॥
मित्र जो हैं करतार के, मरत नाहिं हैं सोइ।
एक मंदिर तजि दूसरें, गवनत हैं वै लोइ ॥
गायउ गीत एक धन प्यारी। जग है करता की फुलवारी ॥
आपुहिं माली आपुहिं फूला। आपुहिं भंवर फूल पर भूला ॥
आपुहिं रूपवंत सो होई। प्रेमी होइ रिझत है सोई ॥
आपुहिं परगट गुपुत अकेला। गुरू होइ कहुँ कहुँ होइ चेला ॥
आपुहिं दाता करता होई। दिष्टा स्रोता बकता सोई ॥
सुनि सरवन दै चेत सों, सपन बखाना गीत।
उपजी सब के हिदैं, चतुर सखी की प्रीति ॥
एक कहा हो राजदुलारी। है आनंद ठाउं फुलवारी ॥
खेल एक खेलहु सब कोई। जासों स्वात बीच मुद होई ॥
एक कहा आनंद न चहऊ। निस दिन आगम सोचमों रहऊ ॥
बहुत अनंद न चाहौं प्यारी। ना तो परै आइ दुख भारी ॥
एक कहा चिंता भल नाहीं। तरुनी चिंता सौंक बिरधाहीं ॥
खेलि लेहु नैहर मों, सब मिलि परमद खेल।
पुनि नैहर के छाड़तैं, सासुर होब अकेल ॥
हम अज्ञात न सासुर चीन्हा। यह नैहर ऊपर चित दीन्हा ॥
है जग जीवन खेल समानू। ऊमर नहीं है मरन निदानू ॥
हम कहं पार मीचु सों नाहीं। निसरि गगन महिं तट ते जाहीं ॥

जानत मरम हमारो सोई । जाको सुमिरत है सब कोई ॥
मूरत अलख नहीं जग ठाऊं । हम तुम राखा है तेहि नाउं ॥
यह मूरत को तजि कै, चित्त अमूरत देहु ।
जाहि अमूरत ध्यान सों, स्वर्ग लोक फल लेहु ॥
राजकुंअर फुलवारी माहीं । धन को आवन बूझा नाहीं ॥
चातुर चेता की चतुराई । सब काहू सों बात जनाई ॥
है फुलवारी मों एक जोगी । है काहू को प्रेम बियोगी ॥
है यह ठौर बहुत दिन सेंती । नहिं जानउ बाउर केहि नेतीं ॥
सुनि के सखिन कहा चलु रानी । देखैं हैं कस जोगिय ध्यानी ॥
बात सुधानी सखिन कहं, चली सखिन के संग ।
एक एक सब काहू, लीन्हे फूल सुरंग ॥
बरजा एक अगम की नारी । तुम सुरूप राजा की बारी ॥
अलबेली लागहु भल देखें । तुम तिय जिय अस जिय के लेखें ॥
हसितैं बारी बिना बियाही । जोगी देखै तोहिं न चाही ॥
लागहु तपी नयन मों मीठी । यह जिनि होइ लगै तोहि डीठी ॥
नहिं जानहिं जोगी कस अहई । आपन कथा केहि नित दहई ॥
देखहु मन फुलवारी, जाहु न तपी समीप ।
होत पतंग तपी वह, देखि बदन को दीप ॥
जब यह बात सखी वह कही । सुनि मलीन रानी वह रही ॥
औरन कहा चलहु वहि वोरा । जग करता है रच्छक तोरा ॥
रच्छक आप अलख है जाको । एकहु बार न वाकै ताकहु ॥
पै अबहीं देखहु फुलवारी । फेर चलेहु जेहि ओर भिखारी ॥
सुखी भई यह बात सयानी । लीन्ह सुरंग फूल एक रानी ॥
देखत रहिगै रानी, लीन्हे फूल को हाथ ।
एक सखी हंसि बोली, इंद्रावति के साथ ॥
हंसि कै मालिन कै गुन गावा । धन चेता अस फूल लगावा ॥
उतर दीन्ह सुनि चेता रानी । मोहि न सराही अहो पियारी ॥
सुमिरहु तेहि जो है सुख दाता । जे यह फूल कीन्ह रंग राता ॥
जो हमार दोउ हाथ बनावा । जेहि करतें मैं फूल लगावा ॥
जग मों जावत है सब बना । तावत करता को दरपना ॥
दीठ होइ तो देखऊ, तन आदरस मझार ।
बदन विराजत है तेहिक, जेहिक सकल संसार ॥
है वह एक जगत उपराजा । जो दोइ होत बनत नहिं काजा ॥
धरती गगन संवारा सोई । तासों जोत अउर तम होई ॥
करता तीन अउर दुइ नाहीं । एकै है दोऊ जग माहीं ॥

जो किछु करत न पूछा जाई। पूछा जाइ जनम जेइ पाई ॥
कीन्हा निस दिन औ रवि चंदा। तेहि सुमिरन मों सबहि अनंदा ॥
रात दिवस दुइ चीन्ह है, रात मिटत दिन होत।
याही सों लेखा बरस, जानत है सब कोइ ॥
इंद्रावति धन कमल सुबासा। आइ भंवर गूंजे चहुं पासा ॥
कहा सखिन सों डर जिव पावै। भंवरन मों तन डंक लगावै ॥
कहेन सखिन तुम कमल पियारी। लेत भंवर हैं बास तुम्हारी ॥
मोहें बास पाइ कै तेरी। कहां तिन्हें सुधि बिन्धै केरी ॥
फूल भंवर होइ आइ भंवाहीं। तोहि ऊपर तो अचरज नाहीं ॥
भंवर बास के कारने, चहुं दिस आइ भंवाहिं।
पोंढा मजकरू रानियां, बिन्धै की डर नाहिं ॥
जहं लग सुंदर रहीं सयानी। फुलवारी देखें रह सानी ॥
कहा एक आगम की बारी। धन नइहर जामों फुलवारी ॥
फुलवारी औ फूल बिलोकैं। बहुत अनंद बढ़ी है मोकैं ॥
फेर न देखब अस फुलवारी। जब गवनै जाबै ससुरारी ॥
परै सीस पर भारी भारा। कैसे राखिही कन्त हमारा ॥
नइहर अहै पियारा, चक चूहट जिय होइ।
सुमिर गवन सासुर को, दूर परै सब कोइ ॥
सुनि इंद्रावति सासुर नाऊ। मन मों सोच कीन्ह तेहि ठाऊं ॥
कहा जाब निश्चय ससुरारी। नइहर तजब तजब फुलवारी ॥
छूटि परैं सब सखी सहेली। जाबै सासुर अन्त अकेली ॥
अहो सखी आगम मोहि सूझा। सासुर गवन आजु मैं बूझा ॥
अस फुलवारी पाउब कहां। सासुर नगरी होइह जहां ॥
तुम्हें समां कित पाऊं, एक बैस की नार।
नइहर खेल ना पाइब, जब जाबै ससुरार ॥
समुझा सखिन सोच मों रानी। बोलीं सरब बोध की बानी ॥
अहो पियारी सोच न करहू। जेहि प्रीतम प्यारे संग रहऊ ॥
ठाउं देह सुख मन्दिर प्यारी। लाइ देखावहि तोहि फुलवारी ॥
देइहै बहुत हमैं अस चेरी। करइ रात दिन सेवा तेरी ॥
प्रीतम जिउ सम राखै तोही। तोहि संग खेलैं खेलइ वोही ॥
अस दुख देइहै सासुरे, तोहि कामिन कहं सोइ।
वैसों सुख नइहर मों, मिलो न कबहूं होइ ॥
इंद्रावति फिर बात निसारा। तो सुख देइहै कन्त हमारा ॥
जो नइहर मों जोरब नेहा। होबै एक जीव दुइ देहा ॥
चलब मान तजि सूधी चाला। तो सासुर अंचउब सुख हाला ॥

रहबै सत्त सनेह सम्हारें। काम क्रोध त्रिसना कहं मारें॥
राखब प्रीत सिखब गुन नीका। सुमिरन करब पियारे पीका॥
तो पाइब सासुर सुख, प्रीतम होइह साथ।
सुख अनन्द नित मानब, पिया पियारे साथ॥
धन की करनी जोखइ पीऊ। एहि समुझ डर मानत जीऊ॥
जाकर भारी होइहै तूला। सुख मंदिर द्वारा तेहि खूला॥
जेहि हलुका होइहैं दुख सहई। औ दुख अगिन मँदिर मों रहई॥
करनी सिखा जान सब कोई। दाहिन सों पायें भल होई॥
देहिं लिखा बाउं सों जाकों। बहुत कलेस परै सिर ताकों॥
करनी सेतीं छोट बड़, सब किछु पूछें जाहि।
सतवंती गुनवंत पर, डर एकों कछु नाहिं॥
सखी एक आँसू कहं ढारा। पूछेन कहाँ परान तुम्हारा॥
कहा गवन को दिन मैं बूझा। संकट दुख ता दिन को सूझा॥
जब सासुर गवने मैं जाऊ। देहिं संकेत मंदिर मोहिं ठाऊं॥
दुइ जन पूछहिं को पिय तेरा। को है जासों मगु तैं हेरा॥
पूछहिं कवन पंथ तैं लीन्हा। डरे सों उत्तर जाइ न दीन्हा॥
उत्तर देउँ तो बाचऊं, ना तो मारी जाउं।
यही बूझि मैं रोईं, कैसे होइ वह ठाउं॥
रानी कहा रहइ जिउ कहाँ। पूछहि जदिन गवन घर महां॥
एक कहा यह जीउ पियारा। तापल रहइ सरीर मझारा॥
एक कहा जिउ पूछा जाइहि। पूछे बीच न काया आइहि॥
एक कहा दुइ बात न अहई। का पर कया बीच जिउ रहई॥
एक कहा कछु लइ तन कहना। कहना सों लहना चुप रहना॥
गवन मंदिर मों सुख दुख, डर सों टूटै हाड़।
अहै सरग फुलवारी, अहै नरक को गाड़॥
बोल उठी एक सुंदर नारी। रहत फूल नित झरत न प्यारी।
रंग सलोन फूल झरि जाई। चक चूहट उपजत अधिकाई॥
सुमन सुबर्न सुगन्ध सोहाहीं। अंत झरे माटिन मिलि जाहीं॥
उतर निसारा बूझन हारी। नित जो एकै रहत पियारी॥
जग माली गुन रहत छिपाना। बहुत बरन गुन जात न जाना॥
यह जग है फुलवारी, माली सिरजन हार।
एक एक सों सुंदर, लावत ताहि मझार॥
जीरन यह जगती हम पाई। नितु एक आवै नितु एक जाई॥
केतिक बरन के फूलन फूले। केतिक की लालय मन भूले॥
केतिकन रुपवंत अवतरे। केतिक विरस आग सों जरे॥

केतिकन भइंन सलोनी नारी । केतिकन तिन पर भयेन भिखारी ॥
केतिकन विद्यावंती भयऊ । केतिकन धनी बली होइ गयऊ ॥
अब हेरें नहिं पाइये, तेन सरीर को चीन्ह ।
केतिक रतन पदारथ, मीचु चोर हरि लीन्ह ॥
हम हूँ चलब अवध के पूजें । फेर न जग मों आइब दूजें ॥
फूल दखि का झँखहु पियारी । हम तुम सबको आइहि पारी ॥
एक कहा वैरागिन होहू । अहै मरन हम कहं औ तोहू ॥
होइकै वैरागिन तप करहू । जासों सरग सदन महं परहू ॥
कहकी भेस न फेरै चाही । फेरें भेस भलो नहिं आही ॥
पिय की सेवा नित करहु, रहहु सम्हारे नेह ।
याते दाता देइहै । आगम दिन सुख गेह ॥
कहेन बहुत अब आगम सूझा । परमारथ सब का हुअ बूझा ॥
अब रानी चलि देखहु जोगी । कैसे राखत भेष बियोगी ॥
चंद्र नखत सँग पांव उठायउ । जाइच कोरहिं दरस देखायउ ॥
सकल सखिन कहं जोगी भेषा । जिउ दरवन पायउ जिउ देखा ॥
इन्द्रावति औ सखिय सयानी । जोगी रूप बिलोकि लोभानी ॥
मन लोचन मों चंद दिस, रहिगा चितै चकोर
चंद बिलोकत रहि गयउ, निज चकोर की ओर ॥
जब लग नैन चार रहु चारी । राजकुंवर कह ठग अस भारी ॥
दामिन चमक चाह अधिकाई । हुअऊ चितै रहे चित लाई ॥
बहेउ पवन लट पर अनुरागें । लट छितिरान पवन कै लागें ॥
परी बदन पर लट सटकारी । तपी देवस भा निस अंधियारी ॥
मोहि परा दरसन कर चेरा । हना बान धन आखिन केरा ॥
प्रेम पंथ को पंथिक, पहरें जोग दुकूल ।
परी सांझ तेहि मगुमें, गएउ बाट सो भूल ॥
हा हा सखिन कहा पछिताई । काहें तपी परा मुरझाई ॥
नहिं मुरछा मुख देखि सयाना । लट परतहिं मुख पर मुरुछाना ॥
एक कहा जठ सें मुख सोभा । होत अधिक लखि मुरछा लोभा ॥
एक कहा लट नागिन कारी । डसा गरल सों गिरा भिखारी ॥
एक कहा लट जामिनि होई । रात जानि जोगीगा सोई ॥
एक कहा निसि जांनि के, तपी गयउ जो सोइ ।
का जोगी के जोग सों, तप पुरषारथ होइ ॥
जोगी सो जो जागै रयना । मन पर धरै ध्यान की नयना ॥
ध्यान समेत रयन जो जागै । ताको हाथ मनोरथ लागै ॥
पहरू जागत ध्यान न लावा । यातें तेहि कछु हाथ न आवा ॥

मन जागै तब जागव नीको। चित फिरि आवै धरती जीको ॥
एकै बार न जागै कोई। थोरे दिन कों बाउर होई ॥
जाके मन औ नैन मों, दरसन रहा समाइ।
ताको नींद कहां परै, चिन्ता आवै जाइ ॥
बोली एक सहचरी सयानी। जब मुख ऊपर लट छितिरानी ॥
यह मुख यह तिल यह लटकारी। ये तो कहि कै गिरा भिखारी ॥
नहिं जानहि आगे कस कहते। चेत समेत तपी जो रहते ॥
आवहु आगे अरथ लगावैं। सब कोउ अरथ पंथ पर पावैं ॥
सुनि सब सखी चेत दउड़ावा। जोगी हु तें समस्या पावा ॥
एक कहा मुख लट तिल, मुकुर फाँद है चार।
जग मनसूवा फँदै कहं, है एतो उपकार ॥
आपुहिं देखि मुकुर मों भूलैं। दूसर सुवा जानि मन फूलैं ॥
दूसर देखि देखि कै चारा। कहैं तुरत यह फांद मझारा ॥
एक कहा मुख तिल लटकारी। संबुल भंवर अहै फुलवारी ॥
एक कहा मुख ससिहि लजावा। लट जोगी को मन अरुझावा ॥
तिल इंद्रावति मुख पर सोहै। तिल नाहीं जासों जग मोहै ॥
इंद्रावति दृग लिखित कै, भा विरंच मतवार।
मसि लगाउ लेखनी गिरेउ, सोभा भै अधिकार ॥
एक कहा का कोउ सराहै। रूप गरन्थ रानि मुख आहै ॥
तिल है सुन्न गरन्थ मझारा। लट स्यामल सोहत मसिधारा ॥
सबन बखाना जो जस बूझा। इन्द्रावति कहं आगम सूझा ॥
कहा तपी अस कहते आगे। गरब न करु सुन्दर डर त्यागे ॥
यह मुख यह तिल यह लटकारी। अंत होइ एक दिन सब छारी ॥
कहेन सखी सब आपमें, धन इंद्रावति बूझ।
धन अधीनता धन वचन, धन धन धन धन सूझ ॥
दाया सखी गुलाब मंगायउ। छिरिकि कुअर कहं बहुत जगायउ ॥
सोह गये अधि को नहिं जागा। वह गुलाब सीतल तेहि लागा ॥
एक कहा यह भी मतवारा। धन के नैन बारुनी ढारा ॥
सखिन कहा हो प्रान पियारी। मारेहु चखुसर गिरा भिखारी ॥
फिर जिउ जो जोगी यह पावै। तोहि तजि औरहि ध्यान न लावै ॥
सखिन न जानहि जागी, है बाउर तेहि लाग।
तजा राज कालिंजर, लीन्ह जोग बैराग ॥
त्राह त्राह में आपन मारा। काहे बूझहु दोष हमारा ॥
कहेन दोष नाहीं धन तेरा। दोष तुम्हारी आखिन केरा ॥
जेहि चितवें तेहि मारहिं बानू। सुमिरि सुमिरि तोहि देइ परानू ॥

फेर सखी सब बात सम्हारा। दोष नैन नहिं दोष तुम्हारा॥
रूप दरब मुख तोर पियारी। अम्बुक जमल करहिं रखवारी॥
चाहा लेइ तपी दृग, होइ के चोर समान।
नैन तुम्हारे तस करैं, मारा बरुनी बान॥
कर तसकर को काटा चाही। जीउ न मार दोष धन आही॥
हैं हत्यारे नैन यह तेरे। खंजन मिर्ग अहैं दोउ चेरे॥
अहै नयन सो उत्तम कानू। तासों बात सुना यह प्रानू॥
यह नित जो दोऊ जग कीन्हा। रसना एक करन दुइ दीन्हा॥
की कहु एक बात मति सानी। सुनि दुइ बात आन सें रानी॥
बहुतन को संसार मों, जो सिर्जा दिन रैन।
छाप दिन मन ऊपर, औ सरवन पट नैन॥
मसि औ पत्र सखी एक आनी। जीउ कहानी लिखा सयानी॥
बहुरि लिखा हो जोगी भेषा। जोग तोर इन्द्रावति देखा॥
ताके दरसन पाय भिखारी। मुरछानेउ नहिं सकेउ सम्हारी॥
अबहीं तेरो जोग न पूजा। जोग छोड़ि करु काज न दूजा॥
लिखा सोधान सखिन के हियरें। चली राखि राजा के नियरें॥
जीउ कहानी लिख कै, राखि चलीं तेहि पास॥
छोड़ि तपी को आईं, जहाँ सदन सुख बास॥
जब राजा जागा सुधि पावा। जागि चहूँदिस दिष्ट लगावा॥
पत्र उठाइ बिलोकेउ ज्ञानी। पढा सँपूरन जीउ कहानी॥
जब बांचा इन्द्रावति नाऊं। झंखा बहुत अपन मन ठाऊं॥
उपजी प्रेम भाव डर दाहा। बहुतै पछताना कहि हा हा॥
सो रानी आई मोहिं आगे। पहिरेउँ यह कंथा जेहि लागे॥
मोहिं लेखें एक पल भर, उपबन भएउ बहार।
अब देखेउं फुलवारी, आइ बसेउ पतझार॥
कहां गई वह प्रान पियारी। जेहि कारन मैं भयउं भिखारी॥
कहां गई वह दीप सिखा सी। जाको मैं रम्भा सी दासी॥
दिष्ट धरी तनु पुनि का भई। देखिन परी परी सम गई॥
रे जिउ कमल सुगंधित अंगू। गयेउ न लागेउ अलि होइ संगू॥
गोरी वह गोरी सम गोरी। नैन नैन सें स्यामा जोरी॥
गहा धिर्ज मन भीतर, लिहें मिलन की आस।
भा कालिंजर राजा, बिप्र योग को दास॥

नहान खंड

इंद्रावति मन प्रेम पियारा। पहुँचा आइ तीज तेवहारा ।।
रहिल जहाँ इन्द्रावति प्यारी। आइन राजदीप की बारी ।।
होइ कष्ट मन रहा समाना। पै आनन्द सखी नित माना ।।
कहेनि सहेलिन है डर मानू। मन तारा चलि करहिं नहानू ।।
रतरु हितू जन के बस भई। सखिन साथ मन तारा गई ।।
केस सुगंधित खोलि कै, राखि चीर सब तीर।
पहिरि नहान दुकुल सकल, कीन्हा सजल सरीर ।।
अब जूरा इन्द्रावति छोरा। भयउ घटा मों चांद अंजोरा ।।
पैठिहु जब जल भीतर रानी। पानिय पायउ तारा पानी ।।
झुलना झूलेहु करत नहानू। लहकि चहेउ चुम्बे अधिरानी ।।
लखि नथ मोती की अमलाई। सुक्र छपाना आप लजाई ।।
मनु तारा भा गगन समानू। भयेउ मयंक समां वह प्रानू ।।
सुरज उआ आकासही, चंद्र उआ जल मांह।
कुमुद तामरस फूले, दोउ मित्र के पांह ।।
कहा रतन सों एक सहेली। वरनि न पारों तोहि अलबेली ।।
केस कस्तुरी हिर्दे फांदू। अहै लिलाट अंजोरा चाँदू ।।
अहै भिर्कुटी धनुक समानू। है बरनी जिसनू कै बानी ।।
नैन सलोन जगत मन हरा। करन सीप मोतों सों भरा ।।
नासिक मनहुँ कीर बैठो है। बरुक अकार कला निधि को है ।।
चिबुक कूप को पानी, चाहत कीर घरान।
फूल गुलाब कपोल है, तिल है भँवर समान ।।
सीरन लाल अधर रतनारा। दसन पाँत मोती को हारा ।।
मन मेरो लालहि चित धरा। जाइ चिबुक गाड़ा मों परा ।।
रेखा एक ग्रींउ मों सोहै। का बरनों सोभा मन मोहै ।।
निर्मल बदन आरसी छाजे। गल कंचन की डाड़ी राजै ।।
अमल कनक सों भुजा बनावा। सुन्दर हाथ कमल मन भावा ।
यह सामै हो रानी, जल औ मुख रबि तोर ।।
पाइ होऊ कर वारिज, बिकस चलें मुख बोर ।।
उरज बीर दुइ मनमथ कोहैं। छबि उपवन दुइ श्रीफल सोहैं ।।
नाहीं नाहीं चुप यह जानहु। बंटा जमल जोत के मानहु ।।
का बरनो रोमावलि हेरी। सेल्है सदन बाहनी केरी ।।

पातर लंक केस की नाई। नाहीं सों सिरजा जग साई ॥
जंघ चरन सो आचम्भो है। रम्भा खम्भ कमल पर सोहै ॥
मानहु खम्भा रूप के, जुगल जंघ है तोर।
चरन बखान न कै सकों, नित परसै चित मोर ॥
सुंदरता को लच्छन जेते। प्यारी चेरे तेरे तेते ॥
लट कुंतल अति स्यामल आहै। भौंह स्याम जैहि इंद्र सराहै ॥
स्याम अधिक लोचन सँवराई। स्यामल बरुनी जिश्नु डेराई ॥
ललित अधर औ रसना तोरे। अँगुली सीस ललित रंग बोरे ॥
ललित कपोल गुलाब लजाहीं। जग मन मधुकर समां लोभाहीं ॥
तरवा और हथोरी, आनन रसना छोट।
गल कुंतल दिर्ग लांब है, बानन मिलै न वोट ॥
दसन सेत औ नैन सेताई। अधिक सेत कछु बरनि न जाई ॥
गोल सीस औ बदन तुम्हारा। गल एड़ी बिधि गोल सँवारा ॥
ऊँच नासिका ऊँची भौंहैं। बरुनी ऊँच बात सम सोहैं ॥
करन छिद्र पायउ सकराई। सांकर नासिक छिद्र सोहाई ॥
आहै सांकरि नाम तुम्हारी। तोहि बिधि सौंपै सानि संवारी ॥
एतो सुघराई पर, रंचिक गरब न तोहिं।
सुंदर सील तेहारो, लागत नीको मोहिं ॥
निज बखान इंद्रावति पाएं। रही लजाइ सीस औंधाएं ॥
कहा बखान करहु का मेरां। है मनाक जीवन जग केरा ॥
का अभिमान देह पर करहूँ। एक दिन होइ छारे होइ परऊँ ॥
गरब सखी सब ताकहं छाजा। जो त्रैलोक बीच है राजा ॥
जे निधनी को संग न चाहा। भयेउ न तेन्है अगम सों लाहा ॥
परगट रंग देह को, देखि न गरबै कोइ।
आवै एक देवस अस, छार कलेवर होइ ॥
बोलिन राजदीप की नारी। आवहु जलमों रचैं धमारी ॥
जब लग सीस पिता को छाहां। खेलहिं कोउ करहिं जगमाहां ॥
जब चल जाहिं कँत के देसू। कैसो कैसो सहैं कलेसू ॥
नइहर देस कहां फिर आवन। कहँ यह पंथ चलै यह पावन ॥
सो गुन एकउ हाथ न आया। जासों होई प्रीतम दाया ॥
जानों नहिं पिय प्यारा, राखे कौनै मान।
एकौ गुन नहिं सीखा, हम बाउर अज्ञान ॥
रानी कहा भेद अब कहना। केहि गुन होइ कंत सों लहना ॥
एक कहा सेवा नित कीन्हेउ। चित मूरत सम पिय पर दीन्हेउ ॥
एक कहा लहना तब होई। पिय जो कहै करै धन सोई ॥

एक कहा नित करत सिंगारा । चाहै धन कहँ कंत पियारा ॥
एक कहा जो सूघर होई । पावै लाभ कंत सों होई ॥

इंद्रावति प्यारी कहेउ, ताकहँ चाहै पीउ ।
जो पिय की सेवा किहें, गरब न राखै जीउ ॥

समुझ बन्दमों प्रीतम प्यारा । इंद्रावति अंबुक जल ढारा ॥
नहिं जानो केहि भांते सोई । दिन औ रात बितावत होई ॥
अरे जीउ दाया तोहि नाहीं । तेरो जीउ परेउ बँद माहीं ॥
जलमें रानी ढाढ तवानी । सखिन सांत रसमों पहिचानी ॥
पूँछे आगमपुर की बारी । सजल नयन केहि लाग पियारी ॥

आन अनंद देवस है, अहै तीज तेवहार ।
केहि कारन चिन्ता मों, प्यारी जीउ तोहार ॥

सकल सखिन सो मरम छिपावा । आनहिं भाँति कि बात सुनावा ॥
वह दिन समुझ सखी मैं रोई । जा दिन नइहर बिछुरन होई ॥
~~वह दिन समुझ सखी मैं रोई । जा दिन नइहर बिछुरन होई~~ ॥
बिछुरहु तुम सब सखी सहेली । सब अलबेलि रूप अलबेली ॥
मिलैं कहाँ तुम समाँ पियारी । कहाँ अलिबेल कहाँ फुलवारी ॥
रहै न सासुर आदर मोरा । सासुर लोग करै नक तोरा ॥

सो दिन समुझि परै सों, जल महँ ढाढ़ तवाउं ।
नहिं जानों कस होइ है, हम कहँ सासुर ढाउं ॥

रंग न फीको करिये जी को । पी को संग पियारी नीको ॥
तब लग नइहर देस पियारा । जब लग मूरखता को पारा ॥
जब हीं खुलै से मुखी नैना । सासुर सोच बढ़े दिन रैना ॥
सासुर देस मिलै सब प्यारी । हितू तड़ाग राग फुलवारी ॥
पीउ अनन्द मूल जब पावा । सब सुख राज हाथ मों आवा ॥

तुम का आपुहि को डरहु, है हमहूँ कहँ त्रास ।
पै सासुर कविलास है, रहें जो प्रीतम पास ॥

खेलै लागिन तारा माहां । कोउ धरि कांध कोऊ धरि बाहां ॥
सुन्दरता सागर वह नारी । मन तारा मौं रचा धमारी ॥
लै जल मुख कै ऊपर मारैं । नरम कलोल देहि जब हारैं ॥
रानी साथ कहा एक नारी । गहिरें पाँव न धरहु पियारी ॥
जो गहिरे पग राखइ कोई । नीर सीस तें ऊपर होई ॥

गहिर बहुत है आगे, डूबि मरै जनि कोई ।
ना तो खेल कोउ मो, महा दन्द दुख होइ ॥

सुनि यह बात सखी एक रोई । आंसु गुलिक जल ऊपर वोई ॥
पूछैं और आंसु कस ढारे । खेल के बीच अनन्द नेवारे ॥

उतर दीन्ह सासुर मगु ढाऊँ। है सागर भौ सागर नाऊँ ॥
होइ है जा दिन गवन हमारा। नहिं जानौं किम उतरउं पारा ॥
यह नइहर तारा है जाना। जेहि आगे पगु धरत डेराना ॥
वह न जान कस होइ है, गहिर गम्हीर अथाह ।
इहै समुझि मैं रोइउँ, केहि बिधि होइ निबाह ॥
सुनि सब राज दीप की बारी। तजि आनंद समुझा ससुरारी ॥
आगम सोच कीन्ह सब कोई। सासुर पंथ बीच कम होई ॥
बोलिन फेर सोच यह काहे। प्रीतम दाया पंथ निबाहै ॥
होइ जलधि तो सेवक लेई। धन कहँ जलधि पार कै देही ॥
जा संग ब्याह होत जग माहाँ। पंथ निबाहत सो धरि बाहाँ ॥
जनम सँघाती होत सो, जाके संग बियाह ।
जैस परै तस अंगवै, धन को करै निबाह ॥
कै नहान सब बाहर आई। निर्मल अंग परी की नाई ॥
लटकी लट इंद्रावति केरी। दोऊ दिस तें मुख कहँ घेरी ॥
मुख लट सों सोहै वह रामा। एक चंद्रमा दूइ त्रिजामा ॥
लट कपोल पर सोहै कैसें। बैठा नाग बित्त पर जैसें ॥
सोन बिनावट दुकुल रँगीला। कीन्हा अंग सो परगट लीला ॥
कै नहान घर कहँ चली, वै सब कनक सरीर ।
उनकी निर्मलताइ सों, भा निर्मल मन नीर ।
मन तारा केती रहि रानी। दिउरी एक देखि बिथकानी ॥
प्रान बाटिका की वह स्यामा। पूछा कवन सती यह ठाना ॥
सखियन कहा सती यह ठाऊँ। रानी कहा सती है नाऊँ ॥
तब की बात हमैं सुनि परी। अपने कंत लाग धन जरी ॥
जस तोहार तस ता गल नीका। खात तमोल देखावै पीका ॥
अब धन जरिकै छार भै, रहे न एकौ चीन्ह ।
दिउरी साखी करत है, अगिन छार तेहि कीन्ह ॥
इंद्रावति करुना मैं रोई। एक दिन छार होइ सब कोई ॥
दिउरी के समीप होइ कहेऊ। हहुँ कैसो यह रानी रहेऊ ॥
हहुँ कस रही चाल नारी की। दयावन्ति की मानिनि जी की ॥
कहाँ गई धन मिलै न हेरैं। है ता जिउ दिउरी के नेरैं ॥
हहुँ कस रहा चरन औ हाथा। कैसो रहा ग्रीउ औ माथा ॥
मन तेवान के ढाढ़ी, रही घरी भर आप ।
हिर्द सांत रस डूबा, बुझि जगत कहँ स्वाप ॥
इंद्रावति जब ध्यान लगावा। सबद एक एक दिस ते आवा ॥
मैं का रहिउं रहीं बहुतेरी। जिनकी रहीं अपछरा चेरी ॥

सोऊ जगत छांड़ि कै गई । मिलि धरती मों माटी भई ॥
इहां न लहत सिंगारी काया । लहत न गरब लहत है दाया ॥
लहत न काया सुन्दरताई । लहत पुन्य मन की निर्मलाई ॥
सबद पाइ इंद्रावति, अधिकौ रही तवाइ ।
चिन्ता बहुतै कीन्हा, अपने मंदिर आइ ॥
हौं मैं पाप भरी जग माहीं । आस मुकुत की है किछु नाहीं ॥
है मोहि बीच दोष जहँ ताईं । डरउँ करै कैसो जग साईं ॥
साहस देत परान हमारा । अहै रसूल निबाहन हारा ॥
निस दिन सुमिरु मोहम्मद नाऊँ । जासों मिलै सरग मों ठाऊँ ॥
करता तोहि मोहमदि कीन्हा । माथ सुभाग अंस तोहि दीन्हा ॥
ना करु सोच अगम को, राखु हिदैं मों आस ।
जाके दीन बीच तैं, सो देइ है सुख बास ॥
अरे प्रीतम तैं मन हरा । अहौं बियोग बन्दमों परा ॥
आइ बंद सों मोहि छुड़ावहु । दोऊ जगत भलो फल पावहु ॥
मोहिं पाछें बैरी बहुतेरे । चेरे साथी सेवक मेरे ॥
खरग काढ़ि बैरी कहँ मारहु । बंद कूप ते मोहिं निसारहु ॥
अलख सँवारा तुम कहँ वली । चलै जगत मौं कीरत भली ॥
दूसर बंद न भावत, जहाँ प्रेम को बंद ।
जगत बंद दुखदायक, प्रेम बंद आनन्द ॥

जुद्ध खंड

बुद्ध सेन क्रीपा कहँ सेवा । जैसे मानुष सेवै देवा ॥
राज कुंवर को बंद सुनावा । सुनि क्रीपा क्रीपा पर आवा ॥
तब सहाय जगपति सों मांग । सब पावत कछु एक न खांग ॥
क्रीपा चला कटक लै भारी । गोंहन सुभट चले बलधारी ॥
पानहु दीन्ह समुद्र हलोरा । लहर मनुज तंबेरम घोरा ॥

तंबेरम दल सोहै, कज्जल गिर के रूप ।
रहेउ अचल कज्जल गिर, ताहि चलायउ भूप ॥

कहत न पारउँ तुरै बखानू । रहे चलत महँ पवन समानू ॥
औ थिराय कै सामै माहीं । माटी चाह सो अधिक थिराहीं ॥
नीचे जल सम पांव उढावैं । अगिन समा ऊपर कहँ धावैं ॥
बाजी सकल पवन के जाये । मानहु चेत भेस धर आये ॥
वै सवार है पर केहि मानन । मनहुँ पवन ऊपर पउचानन ॥

यह समीर तेन आगें, चलत थकित होइ जाइ ।
आगें वै पशु राखहीं, पाछे पवन थिराइ ॥

क्रीपा आवागढ़ नियराया । आया पति दुर्जन सुधि पावा ॥
गढ़ भारेउ औ कटक बटोरा । धरेनि अलंग बीर चहुं ओरा ॥
तिस्ना कोप सहायक आयउ । आयेउ गरब अधिक बल पायेउ ॥
गढ़ सों छूटन लागेउ गोला । डोला सात अकासहि डोला ॥
क्रीपा दिस छूटत अरि चोटा । भयेउ जगत करता की ओटा ॥

बाजहिं बाला संजुगी, चहुँ दिस परेउ पुकार ॥
चार मास तहँ बीता, होत सत्रु सें मार ॥

जो करतार पंथ पर जूझा । ताकहँ चिरंज्जीत हम बूझा ॥
करता मगु पर जें रन लायेउ । ताहि सहाय गगन सौ आयेउ ॥
आयेउ नभबासी की सैना । दीख न पारा ता कहँ नैना ॥
करता की सेवा के बेरा । होंइ जहाँ डर दुर्जन केरा ॥
सुमिरन सेवा आधे करहीं । आधे लोग सत्रु सँग लड़हीं ॥

धन जो सिरजनहार मगु, गहि कै राखेउ पाव ।
पाव न टारा जुद्ध सों, आय उरद मो घाव ॥

गढ़ सों गरब राय मुख खोला । गरब बचन दुर्जन सों बोला ॥
जैसो जगपति तस तुम राजा । गढ़ सों निसरि जुद्धि तेहि छाजा ॥
एकै एक करहिं मिलि जूझा । जाय सुभट जन को गुन बूझा ॥

तब दुर्जन गढ़ सों निसराना । हलकी रज तिमिरार छपाना ।।
चढ़ि मैदान कोप मां ढाढ़ा । छमां खरग वह दीसों काढ़ा ।।
भयेउ खेत के ऊपर, सींघे सींघ भिड़ाव ।
आइ सरीरन संचरेउ, काहे करसों घाव ।।
सुमिरि हियें करता कर नाऊँ । मारा छमा कोप सिर ढाऊँ ।।
जब वह कोप गिरा गा मारा । आयउ मदनसिंह बरियारा ।।
धरम राय यह दिखते धायेउ । मदन सिंह कहँ बांधि लिआयेउ ।।
मदन विमद होइ सेवक भायेउ । आपा सुरा उतरि तेहि गायेउ ।।
दुर्जन कटक सहित तब धावा । अंतरन रकत समुद्र बहावा ।।
एकै भये दोऊ दल, जमल जलधि मैं एक ।
कठिन परगटेउ संजुग, मन सों गयेउ बिबेक ।।
भयेउ घटा ढालन सों कारी । खरगन भये बीज चमकारी ।।
गेंदा सीस खरग चौगानू । खेलहिं बीरहिं चढ़ि मैदानू ।।
हाल आपनों आपनों चाहैं । अरि को शस्त्र चलाव सराहैं ।।
भाला खरग हनै सब कोई । बोड़न खरग ठनाठन होई ।।
गगन खरग सों ठनठन गयेउ । हिन हिन औ धुन हन हन भयेउ ।।
बोनई घटा धूर सों, दिन मनि रहा छिपाय ।
तहां महाभारथ भा, सबद परेउ हू हाय ।।
साहस राय गयंद सरीरा । औ मन सिंह धरम रन बीरा ।।
खरग हनै जाके उपराहीं । बिनु बिलगें सो बाचै नाहीं ।।
कोउ भये घायल कोउ मारे । भाला खरग सुरा मतवारे ।।
छुंछाबान सों भयेउ निखंगू । भयेउ निखंग बान को अंगू ।।
बढ़ेउ कमठ कहँ दाह कराहू । चकाचाक भा धाधक हाहू ।।
जुद्ध करत दोऊ कटक, थाके रहे अघाय ।
दुर्जन रिपु मारा परा, ता दल गयेउ पराय ।।
क्रीपा जब दुर्जन कहँ मारा । जाइ के बंद सों कुँवर निसारा ।।
कुँवर कहा क्रीपा जस लीजे । जलज सिंधु दिस गवन करीजे ।।
क्रीपा कुँवर सहित गा तहाँ । रहा समुद्र गुलिक को जहाँ ।।
कहा बहुत राजा जिउ दीन्हा । काहुअ मोती हाथ न कीन्हा ।।
बहुत महीप भये मर जीया । मोती काढ़े नित जिउ दीया ।।
दीन्ह कुँवर कहँ क्रीपा, मोती ठउर बताइ ।
औ खेवक हंकरायेउ, राहहिं दीन्ह चिन्हाइ ।।
राजा जगपति यह सुधि पावा । मरमी जन सों मरम जनावा ।।
एक मनुष राजा सों कहा । ना जानहिं जोगी कस अहा ।।
राजन ऊपर परन तुम्हारा । नाहीं सबै निसारन हारा ।।

यह मोती तेहि काढ़ब छाजा। राजा पुत्र होइ जो राजा॥
बरजि पठावहु बेर न कीजै। जात खोजि कै आज्ञा दीजै॥
भायेउ बात निर्प कहँ, भेजा तुरत बसीठ।
फेलि लियाई कुँवर कहँ, दीन्ह जलज दिस पीठ॥
बैठा विर्छ तरें अनुरागी। चिन्ता कथन हुतासन लागी॥
कहै कवन उपकार बनावउँ। जातें प्रान बल्लभा पावउं॥
जावक होउँ होइ दुख मेटउ। तो वह कमल चरन कहँ भेंटउ॥
कज्जल होउं नयन लगि रहऊं। होउं पवन लट ऊपर बहऊं॥
होइ मोती बेसर महँ परऊँ। होइ प्रतिबिम्बी छाया धरउँ॥
जेहि प्रान प्यारी के, अमी भरे अधरान।
ता पगु रज के ऊपर, वारों आपन प्रान॥

मधुकर खंड

इंद्रावति चिन्ता महँ परी। रहै न बिनु चिन्ता एक घरी ॥
आइ रैन तेहि बहुत सतावै। कल न सुपेती ऊपर पावै ॥
कलगै गलगै जलगै काया। तेहि वियोग को पीर सतावा ॥
सखिन मता आपुस मों कीन्हा। सब मिलि कै ऐसो मत लीन्हा ॥
निस कहँ जहाँ रहै वह रानी। सदा सुनावहु एक कहानी ॥
होइ बहोरै जीउ को, सुनत कहानी बात ॥
चिन्ता जाय सरीर सों, नीद परे वहि रात ॥
एक सखी निस होतहिं आई। मधुरी बचन असीस सुनाई ॥
कहा कहत हौं एक कहानी। सरवन दै कै सुनियो रानी।
बहुत बचन करतार पठावा। जेहि सुनि कै बहुतेन मनु पावा ॥
कहा बहुत जेन की मति फेरी। अहै कहानी आगेहि केरी ॥
अहै कहानी पै सुन रानी। है अमृत सानी रस बानी ॥
कहा कहानी कहिये, सुनो कान दे ताहि।
जीउ बिरह सों तन महँ, उठत कराहि कराहि ॥
मन रानी को पाय सयानी। धन सों लाग सो कहै कहानी ॥
मोहनपूर रहा एक गाऊँ। तहाँ महीपत मधुकर नाऊँ ॥
जस मधुकर रस रहै सोभाना। तैसे वह रस महँ लपटाना ॥
जग रस बीच परा जो कोई। आगम रस नहिं पावहि सोई ॥
रस पावै जो जेहि करतारा। दहय दिष्ट सों हया उघारा ॥
मधुकर के मन्दिर मों, रहै बहुत रनिवास ॥
संघत करै भँवर सम, लब अम्बुज के पास ॥
एक दिन राजा गयेउ अहेरें। देखा एक मिर्ग कहँ नेरें ॥
मिर्ग चला मधुकर है हांका। मिर्ग पवन दहुँ रहै कहां का ॥
चला मिर्ग के पाछे सोई। छुटा लोग ना पहुँचा कोई ॥
जात जात एकै बन महँ परा। देखा बिर्छ एक अति हरा ॥
भयेउ कुरंग कुरंग हेराना। तरिवर तरे आइ पछताना ॥
ऊँचा तरिवर देखि कै, और गम्हीरो छांह।
सुख पायेउ दुख भूला, भउ अनंद मन मांह ॥
सीतल छाहां सो सुख पाई। पौढ़ा भुईं पर वसन छिपाई ॥
ततिखन दुइ सुक आइ बईठे। बोले बचन आप महँ मीठे ॥
पूछा एक कुसल हो प्यारे। केहि धरती सुख वास तुम्हारे ॥

जब सें हम तुम बिछुरे दोऊ। मिला न तुम्हें समाँ हित काेऊ ॥
जेहि भेंटेउ अपकारी पायेउँ। तासो मागेंउ प्रीत न लायउँ ॥
सुभ बेला यह सुभ देवस, दरसन मिला तोहार।
समाचार आपन कहो, जीउ थिराय हमार ॥
दूसर सुआ अधर कहँ खोला। समाचार की बानिय बोला ॥
जा दिन छूटा संग तुम्हारा। जाइ परेउँ एक विपिन मझारा ॥
तरिवर पर निचिन्त बईठेउं। छल पहरा को एक न डीठेउँ ॥
सब अनजान न जानत कोई। गुपुत अंतर पट सों का होई ॥
जिनि यह कहौ करौं असि मोरे। दहुँ अस प्रगटे भोर अँजोरे ॥
मैं निचिंत अपने मन, आइ एक चिरिमार।
खांचा मारि बझायउ, डारेउ बंद मझार ॥
लै मोहिं प्रेम नगर के हाटा। बेचेसि चलिगा दूसर बाटा ॥
परेउँ रूप राजा घर माहीं। जहाँ दरब कछु खांगा नाहीं ॥
तेहि के घरे सुन्दर एक बारी। तेहि की सुता सुंदर सुकुमारी ॥
अति सुगंध मालति की काया। जनुविधि सुगंध मिलाइ बनाया ॥
मोहिं राजा मालति कहँ दीन्हा। बचननसों सेवा मैं कीन्हा ॥
कीन्ह पियार बहुत मोहिं, दायावन्ती होइ।
सेवा किहे पियारा, होइ अंत सब कोइ ॥
मालति रूप न बरनै पारउँ। केतिको अर्थ न चिंत सँचारहु ॥
अबहीं तेहि संग भँवर न लागा। मिर्ग नयन लखि आनन भागा ॥
मालति बास सालती बासा। मालति पास मालती पासा ॥
जानहुँ ससि भुइँ पर अवतारा। पुहुमी पर उचरी अपछरा ॥
है सुकुमार बहुत वह रानी। बोलत बानी अमृत सानी ॥
है मालती सुवासित, सुगंध भरे जनु अंग।
ज्ञान भरी सुंदर सखी, रहें सदा तेहि संग ॥
एक देवस धन रूप निधानू। निर्मल तारा गइल नहानू ॥
सून मँदिर मों पिंजर मोरा। रेवाँ रहा मजारिय तोरा ॥
बांचेउँ रिपु सों हियें डेराना। पिंजर सें मैं निसरि पराना ॥
बंद छुटे आनंद मैं पावा। अंत पखेरू अहइ परावा ॥
जेहि के छलें छुटा सुखवासू। तेहि बैरी कर का विसवासू ॥
अब बन बन फेरा करउँ, समुझि पिंजर को बंद।
काहू-कर सेवक नहीं, मन मों रहत अनन्द ॥
सुनि मधुकर मालति कै नाऊँ। भा मालति मधुकर तेहि ठाऊँ ॥
उठि कै कहा बिहंग पियारे। बात न बान प्रेम कर मारे ॥
तुम पंडित बुधवंत गरेवा। उतरहु आइ करउँ मैं सेवा ॥

हहु नियरें पै करमों नाहीं। रहेउ समाइ सकल तन माहीं॥
आवहु सीस देउँ तेहि ठाऊँ। तोहि लै चलहुं अपाने गाऊँ॥
जिउ अस राखऊं तुम कहं, धरउ न पिंजर मांह।
जल चारा आगे कै, रहौं जोरि दोउ बांह॥
कहा सुवा तुम मानुष होऊ। तुम धरती पर ढारहु लोहू॥
आगे अब मानुष नहिं आवा। बहुतन औगुनता पर लावा॥
है मानुष निर्दै हत्यारा। सकै अनुज कहँ जिउ सों मारा॥
सात देह मानुष कर जारैं। सात नरक द्वारे महं डारैं॥
चाम जरै तब दूसर देहीं। मानुष बार बार दुख लेहीं॥
हौं पंडित औ चातुर, कहाँ चलौं तेहि संग।
जिउ पंखी नहिं पालै, पाले अंग बिहंग॥
तुम मोहि यह सत बात सुनावा। मानुष परसै ऐगुन आवा॥
पै मानुष बुध कै बउसाऊं। सकलो सिष्ट को जाना नाऊँ॥
मानुष पर दाता की दाया। सकलो सिष्ट को नाम सिखाया॥
करता की नेंव मानुष अहई। का जो दोष पाप मों रहई॥
प्रेम नगर औ मालति बातें। फेर सुनाउ चतुर महातें॥
एक एक कै बरनहु, वह मालति की बात।
सुनउ जीउ सरवन दै, हो पंडित मुखरात॥
कहा मोहि प्रान समों जेइ पाला। मन भा तेहि की प्रीत को माला॥
मरमी भयउँ सदा कइ सेवा। तोहि बेरान से भाषउँ भेवा॥
सरवन सुनै जोग तेहि नाहीं। भूल न देखेसि देखेसि छांहीं॥
नरक बीच बहुतन कहँ भरई। मन राखहिं पै बूझि न करई॥
नैना होइ न देखइं नैना। सरवन रखहिं सुनहि नहिं बैना॥
वे सब पसु के मान हैं, बरू पसु चाह अचेत।
जेहि के मन नहिं चेत हैं, तेहि को भेद न देत॥
कहा कहा तुम मेरो मेंटा। नहिं जानों का ऐगुन भेंटा॥
बिनती एक करउँ कर जोरी। मानु दया सों बिनतिय मोरी॥
मोर संदेस कान कै लीजै। प्रेम नगर कहँ गवन करीजे॥
जायेहु जहँ वह मालति प्यारी। तासों भाखेहु बिथा हमारी॥
सपत तेहिक जेइ जनमां नोही। प्रेम हमार जनायहु वोही॥
मोहनपुर मँ मधुकर, कहहुँ निर्प एक आह।
बहुत बेयाकुल कीन्हा, प्रेम तेहारो ताह॥
कहा तेहारो बिनती मानेउं। मालति कर मधुकर तोहि जानेउं॥
एक बार तोहि कारन जाऊँ। धन सों कहऊं तेहारो नाऊँ॥
आनक सपत दिहा नहिं काही। सपत भलो करता कर आही॥

बहुत सपत जो मानुष खाहीं। तै जिन रहु तेहि अशा जोही ॥
कहौं नाम सुनि कै तेहि लोभा। बिनु देखै मूरत औ सोभा ॥
यह सब कहि उड़िगा सुवा, मधुकर मन पछतान।
पंखी सम चंचल है, काया बीच परान ॥
हेरत सकल लोग और दासू। आए सब मधुकर के पासू ॥
लोग समेत निर्प घर पर आए। मन महँ प्रेम बसेरा पाएउ ॥
परगट राज करै औ बोलै। गुपुत दिष्ट मालति पर खोलै ॥
परगट सब के जाने भोगी। गुपुत भएउ मालति कर जोगी ॥
परगट रहइ आपने गाऊं। गुपुत रहै मालति के ठाऊं ॥
परगट सब सों बोलै, गुपुत जपै वह नाम।
मन महं रहै व्याकुल, हरिगा सुख बिसराम ॥
मालति उहाँ बहुत दुख देखा। जा दिन सों गा सुआ सरेखा ॥
कहै कहाँ वह पंडित सुवा। कादहुं हुआ जियत की मुआ ॥
छूंछा पिंजर रहिगा रेवा। उड़िगा प्यारा प्रान परेवा ॥
जो पिंजर की भीतर बोला। औ जानों यह पिंजर डोला ॥
सो चलिगा केहि बन ठहराना। रहा आपना भयेउ बिराना ॥
सुवा आनि को मेरवे, पिंजर देइ जियाइ।
का औगुन दहुँ देखा, तजि के गयउ पराइ ॥
सखिन बुझावहिं सुवा पियारा। ठहरा जब लग रहा तुम्हारा ॥
उड़िकै गा रहिगा पछतावा। कहाँ थिरै जब भएउ परावा ॥
जों पछताने आवइ हांथा। हम पछताई सकल तुम साथा ॥
पिंजर देह रहा तेहि भारी। हलुक देह उड़ि लीन्हेसि प्यारी ॥
उड़ि कै पन करि भयेउ अहेरी। तेहि डर छूट मजारिन केरी ॥
पिंजर बीच रहा सुवा, चारा चिन्त मझार।
अब ऐसे तब मैं गएउ, सुख सों मिलै अहार ॥
दिन दस बीते सोच मों गयऊ। सुवा जाइ कै परगट भयऊ ॥
मालति देखि जीउ जन पावा। प्रान मिलै कहँ आगेहँ धावा ॥
कहा प्रान अस नियरे होहू। तोहि नित बहुत पिया मैं लोहू ॥
कहा सुवा बाचा मोहि दीजै। मोहिं पिंजर के बीच न कीजै ॥
मैं बन बीच रहेउं जब भागा। नरक समां अब पिंजर लागा ॥
बाचा दीन्हा मालती, सुवा नियर भा आइ।
कंठ सुवा कहँ लायेउ, प्रान पियारी धाइ ॥
कहा कुसल कुछु प्यारे सुवा। तोहि नित आंसु नैन सों चुवा ॥
कहो कवन औगुन मोहिं लागे। जेहि नित छाड़ हमैं तुम भागे ॥
केहि बन भीतर रहेउ बसेरा। कहां कहां तुम कीन्हा फेरा ॥

सुनि कै सुवा असीस सुनावा । देइ असीस सीस पुनि नावा ॥
तुम औगुन सें निर्मल प्यारी । औगुन भरी सरीर हमारी ॥
तुम तो निर्मल तारा, गइहु करै अस्नान ।
पिंजर धरा मंजारी, गा वह टूट निदान ॥
पिंजर टूटा मिला दुवारा । बाहर निकसि पंख मैं झारा ॥
रहत न भावा बैरी रांधे । रिपु नित रहै घात सर सांधे ॥
परोस जहाँ सत्रु के होई । तहाँ निचिन्त रहै का कोई ॥
जाइ परेउँ ऐसे बन माहीं । खांग जहाँ चारा कर नाहीं ॥
हम तुम छूटि गये तेहि ठाऊँ । इहाँ अहै हम तुम सब नाऊँ ॥
आयेउँ दरसन कारने, औ राखउँ एक बात ।
सूनो मंदिर होइ जब, बात कही तब जात ॥
सुन मंदिर तब मालति कीन्हा । सुवा सयान भेद तब दीन्हा ॥
उड़ि उड़ि सब कानन महँ भयऊँ । औ सब तरिवर ऊपर गयऊँ ॥
मिला एक दिन एक परेवा । मित्र रहा कीन्हा मोर सेवा ॥
दोऊ एक बिर्छ पो गयऊँ । छांहां पाय सुखी मन भयऊँ ॥
सुवा साथ मैं तुम्हें बखाना । जस तोहार सब वोनहूँ जाना ॥
बिर्छ तरें एक मानुष, सुना सकल गुन तोर ।
बिनु आज्ञा अब आगें, कहि न सकै मुख मोर ॥
कहा पियारे बात तुम्हारी । जीउ देत हैं कहु बलिहारी ॥
तुम पंडित जो पंडित होई । अब सकु बात न भाषै सोई ॥
सिद्ध रूप तुम सुवा गेयानी । बात तोहार अमीरस सानी ॥
सिद्ध बात लाभा की कहई । का जों उलटी बातैं रहई ॥
स्वानौं कोकरा जो मरि जाहीं । सिद्ध कहै भल है भल माहीं ॥
आज्ञा का मांगत हौ, भाषहु जो मन होय ।
मिलबो लूट तुम्हारो, मरम न राखौ गोइ ॥
कहत बखान नाम गुन तेरो । सुनि कै वह मानुष भा चेरो ॥
बिनती बहुत कीन्ह मोहि साथा । नग संदेस के दीन्हा हाथा ॥
कहा जाइ मालति के गाऊँ । प्यारी साथ कहेउ मन भाऊँ ॥
मोहनपूर देस है मेरो । मैं मधुकर राजा हित तेरो ॥
मोहिं राजा कहँ प्रेम तुम्हारा । व्याकुल कीन्ह सोच मों डारा ॥
एहि संदेस तेही कहे, कछु बसीठ पर नाहिं ।
जो संदेस ले आवहीं, पहुँचावै चलि जाहिं ॥
यह सुनि कै मालति सुकुमारी । चुप होइ रही न बात निसारी ॥
बिनती कीन्ह सुवा कहँ राता । दीन्हा ठांव बिर्छ कहँ राखा ॥
पिंजर भीतर सुवा न आवा । लाग रहै छूटा सुख पावा ॥

रहै सुवा फुलवारी माहां । जहँ फल फूल औ सीतल छाहाँ ॥
जस बैकुंठ बीच फल नियरें । तस नियरे अनदाना हियरें ॥
उड़ि बैठहि तेहि डार पर, जहाँ चलावै जीउ ।
मन काया के छौर महँ, सुख अनंद भै घीउ ॥
मालति मन पर मधुकर नाऊँ । लिखिगा देखि परै मन ठाऊँ ॥
कवल समां मन प्यारी केरी । होइ मधुकर भा मधुकर चेरा ॥
प्रेम फांद प्यारी मन परा । मधुकर मन मालति मनहरा ॥
मन सों का कहँ सुमिरें कोऊ । सुमिरै ता कहँ मन सों सोऊ ॥
कहा अलख सुमिरौं तुम मोहीं । सुमिरे सो सुमिरौं मैं तोही ॥
रही सुगंधित मालती, प्रेम भँवर तेहि कीन्ह ।
व्याकुल भई जीउ महँ, भेद न काहू दीन्ह ॥
दुर्बल भइ जब मालति बारी । धाई धाइ कहा बलिहारी ॥
कवन कलेस समान सरीरा । कहत सरीर सो आपन पीरा ॥
कहा कलेस न एकौ मोहीं । कवन कलेस सुनावउ तोही ॥
कहा भई दुर्बल तैं बारी । बिनु दुख दुर्बल होत न प्यारी ॥
हो री मात समां है तोरी । मोरी मरम न गोवहु गोरी ॥
जो दुख होई पिंड महँ, सो मोसें कहि देहु ।
धाइ करौं उपकार सै, दुख कर ओषद लेहु ॥
कहा सुवा वोही दिन जो आवा । मोसे मधुकर नाँव सुनावा ॥
है जो एक देस मोहनपुर । मधुकर राय तहाँ जस सुर ॥
सुवा सुनायेउ तेहिक संदेसू । हौं तेहि कारन प्रेमी भेसू ॥
हों माता सुनि मधुकर नाऊँ । भा गन मधुकर उड़ि कै जाऊँ ॥
मोहि मालति कहँ मधुकर नेहा । कीन्हा मधुकर नेही देहा ॥
तुम माता दाया भरो, दाया ऊपर आउ ॥
मोहि मालति कहँ मधुकर, कै उपकार मोराउ ॥
सुनि धाई दाया पर आई । मालति सों उपकार सुनाई ॥
सौंपहु काज आपनो ताको । सिरजनहार नाम है जाकौं ॥
पुरुब पछुम को पालन हारा । है सो पुरवै काज तुम्हारा ॥
सुमिरहु ताहि बिसारहु नाहीं । सुमिरन बड़ो अहै दिन माहीं ॥
बहुरि सुवा सों बिनतीं कीजै । बिनती कै जिउ कर महँ लीजै ॥
भेजहु तेहि कोहनपुर, मधुकर आनै आस ।
आने प्रेम बढ़ाइ कै, तेहि मालति कै पास ॥
एक दिवस मालति मति पागी । बिनती करै सुवा सों लागी ॥
कोमल बात जीभ सों खोला । फाँद भलो है कोमल बोला ॥
कोमल बात कहै कहँ दाता । कहा अहै भल कोमल बाता ॥

धरती ऊपर जाउ परावा। कोमल कहैं हाथ महँ आवा ॥
तुम हौ सुवा प्रान जस प्यारा। जैसे प्रेम बान तुम मारा ॥
तैसें महि घायल कहँ, औषद फाहा देहु ।
लैआवहु मधुकर कहँ, यह पूरा जस लेहु ॥
सुवा कहा सुन बारो भोरी। अहै सीस पर आज्ञा तोरी ॥
मैं पंखी वह मानुष आही। मनुष बसीठ मनुष दिस चाही ॥
सो जेई कीन्हा जगत अंजोरा। मानुष भेजा मानुष वोरा ॥
मानुष मानुष बचन समूझै। सुवा सुवा की बातैं बूझै ॥
औ मोहनपुर देखेउँ नाहीं। अकस जाउँ भूल बन माहीं ॥
होइ साध जो मानुष, जाउँ मोहनपुर देस ।
दोऊ मिलि समुझावैं, आवै इहां नरेस ॥
दुई समुझायें समुझई सोई। दुइ जन मिले बूत भल होई ॥
जेहि बसीठ कै जीउ डेराई। लीन्ह सहायक आपन भाई ॥
गा तेति दिस जासों डर माना। भाषा सांची बात सयाना ॥
दुइ मन एक होइ गिर तोरैं। कटक बिदारत बदन न भोरैं ॥
जेइ मन तोरा सोगा तोरा। मन तोरा कहि तोरा मोरा ॥
प्रेम नाम बन जारा, बसै तुम्हारे गाउँ ।
ताके संग पठावहु, मोहनपुर कहँ जाउँ ॥
माना बात मालती रानी। धाई साथ जनायसि ज्ञानी ॥
धाई गई प्रेम दिस धाई। बिनै सुनाई बात जानई ॥
दीन दरब औ आसा दीन्हा। प्रेम सीस पर आज्ञा लीन्हा ॥
दरब करै सब कारज पूरा। उद्दित करै दरब जिमि सूरा ॥
जो न दरब को निर्मल करई। अगिन होम होइ गल मों परई ॥
करता अपने पंथ पर, दरब कहा है देइ ।
जो नहिं देई सो एक दिन, लाछ दरब सों लेइ ॥
सग ले सुवा प्रेम बनिजारा। मोहनपूर पंथ पगु ढारा ॥
अहै बनिज को उद्दम भलो। पै जो करै बनिज निर्मलो ॥
सरिजनहार आप को बेला। आवत तजै बनिज को खेला ॥
बेचब लेब कहा है भलो। अहै बियाज नहीं निर्मलो ॥
सुन्दर रिन करता कहँ देहू। वह जग मूल लाभ संग लेहू ॥
बिनु पद दरब जों आन को, जो कोइ अगमों खात ।
आनहु अगिन सो खात है, है यह साची बात ॥
काटत पंथ सुवा बनिजारा। पहुँचे मोहनपूर मझारा ॥
मधुकर उहाँ बियनकुल हियें। ध्यान रहै मालति पर दीयें ॥
बेकल बहुत भा मधुकर राजा। गा सब छूट राज को काजा ॥

मरम की कली फूल विकसाना। बास पाय सब काहुअ जाना ॥
छपि ये प्रेम कस्तूरी दोऊ। अंत बास पावै सब कोऊ ॥
लोगन बहुत बुझावा, फिरा न मधुकर प्रान।
भयेउ प्रेम के बाढ़ें, बाउर भेस निदान ॥
सुवा प्रेम कहं मरम सिखावा। बेचहु हम कह जानि परावा ॥
हाट चढ़ाइ मोल करु भारी। लै न सकै बैठै सब हारी ॥
तब राजा मधुकर मोहिं लेई। भारी मोलि बेगि तोहि देई ॥
मित्र जो होई सो मोल बढ़ावै। बैरी जान से औगुन लावै ॥
अति सुंदर कहं बैरी लोगू। बेचा थोरै पर बिनु जोगू ॥
मधुर बचन मैं बोलऊ, मधुकर लेइ निदान।
रहि राजा के संग मंह, करों हाथ मों प्रान ॥
प्रेम जबै दूसर दिन पावा। लैकै सुवा हाट महं आवा ॥
हाट नगर मों भयेउ पुकारा। पेम नगर का है बनिजारा ॥
बेचत है एक सुवा सरेखा। वैसों पंडित कीर न देखा ॥
गाहक आये मोल उधारा। भारी मोल सुनत सब हारा ॥
मधुकर प्रेम नगर कर नाऊं। सुनि आनन्दित भा मन ठाऊ ॥
आएउ मधुकर हाट मों, लीन सुवा कहं मोल।
सुवा अधर कहं खोला, बोला कोमल बोल ॥
मनिमय पिंजर बीच परेवा। राखा मधुकर कीन्हा सेवा ॥
भयउ अहार सुवा की बातैं। मधुकर राजा कहं दिन रातैं ॥
एक दिन प्रेमहिं पास हंकारा। सून सदन कै बात निसारा ॥
है मालति रानी वह देसां। रूप बिहाय कला निधि भेसां ॥
वह रानी कर सुनत बखानू। सुरत सनेही भयेउ परानी ॥
तुम आवहु वहि नगर सों, ताकर कहौ बखान।
एक सुवा सो मैं सुना, उडिगा सुवा निदान ॥
सुनि यह बात प्रेम तब हँसा। हँसा फूल मानहुं महि खसा ॥
जो एक मोल निर्प तुम लीन्हा। मोल गुलिक नग मानिक दीन्हा ॥
येही सुवा मालति गुन कहा। अब अनचीन्ह तुम सों होइ रहा ॥
उहइ सुवा है तुम नहिं चीन्हा। पंडित जान मोल तुम लीन्हा ॥
सुवा का पिंजर नियरें राखौ। तब रसाल बच को रस चाखौ ॥
सुनि रहसाना मधुकर, पिंजर लीन्ह उतार।
पूछा कुल कहा कुसल है, है जब कुसल तुम्हार ॥
प्रेम सुवा दोऊ गुन गावा। एकै मुख होइ बात सुनावा ॥
हम मालति के भेजे आये। दरसन देखि बहुत सुख पाये ॥
मालति तुम्हें दिन रात संवारा। भा अब मन तोहि उपर भँवारा ॥

तुम कहं आनै हमैं पठावा । प्रेमहि निर्ष को ताहि जनावा ॥
बनिज हमार तुम्हीं हो राजा । अब वह देश गवन तोहि छाजा ॥
रटत चातकी होइ रही, चलि दरसन जल लेहु ।
ना तो प्रान लेइ धन, यह अपराध न लेहु ॥
सुनि मधुकर जानहु जिउ पावा । कहा तुम्हैं मोहि लाग पठावा ॥
छाजत सीस अकास लगावउं । सीस चरन कै तेहि दिस धावउं ॥
अबलग रहेउं भरम मदमाहीं । रही पंथ की सुधि मों नाहीं ॥
तुम हुइ अगुवा चतुर सयाने । मिलेहु करेउं तेहि ओर पयाने ॥
है धन दिष्ट भाग को सोहीं । सुमिरन मोर चढ़े चित वोहीं ॥
रोवत दिन मोहिं बीता, अब हंसि करेउं अनन्द ।
सोइ रोवाइ हंसावै, जेइ कीन्हा रवि चंद ॥
तजा राज कहं मधुकर राजा । सकल समाज चलै को साजा ॥
पिंजर सों बाहेर भा सूआ । प्रेम आप मिलि अगुवा हूआ ॥
बहुत लोग राजा संग लागे । मानहुं सोवत कै सब जागे ॥
सोअत है जग मंह सब कोई । जब मरि जाहिं जाग तब होई ॥
यह जीवन कहं छोटा जानहु । जीवन बड़ो अगम पहिचानहु ॥
जस जियहू तैसें मरहू, उठहु मरहु जेहि भांत ।
जग चाहुत के ऊपर, काह दिहे हौं दांत ॥
बहुत देवस को करत पयाना । एक समुद्र आइल नियराना ॥
चढ़े पीत ऊपर सब कोई । गाढ़ी प्रेम नगर मगु होई ॥
बोड़य बूड़ भये सब कोऊ । सुवा उड़ा जनि बिछुड़न होऊ ॥
जाको राखत सिर्जनहारा । जल सुखाई मगु लाइ उतारा ॥
यह जनि जानहु नीर डुबावै । चाहै धरती बीच धंसावै ॥
एक बार जल थल भवा, राखा चाहा जाहि ।
आगें कहि कै भेजेउ, नाव बनावै ताहि ॥
बड़े गरब कोप औ माया । भरमित और काम की माया ॥
एक दिस बहै बुद्ध औ बूझा । मधुकर प्रेम बहे नहिं सूझा ॥
मन पछिताइ सुवा गा तहां । चितवत पंथ मालती जहां ॥
मिली कहा कहु कुसल पियारे । पंथ निहारा नैन हमारे ॥
कहा कुसल का बूड़ी पोता । होत कुसल जो जन मन होता ॥
मधुकर आवत तेहि दिस, बहा सिन्धु के धार ।
बूड़े सकल संघाती, कोउ न लाग गोहार ॥
सुनि यह बात मालती रानी । मन पछितानी सोच सयानी ॥
धन लेखैं जनु परलै आई । यह परलै केहि दिसतें धाई ॥
काहें यह परलै परगटे । आयो द्राय ब्रम्हा के छूटे ॥

की बिरंच को एक दिन बीता। सोयेउ मैं परलै की रीता ॥
नहिं सिसरे वै हुइ बरियारा। जाकर अवध लिखा करतारा ॥
बीचहिं देखउं परलै, धरती भयउ असिष्ट।
की मन मोर फिरा है, उलटि बिलोकन दिष्ट ॥
सुवा बुझावै बूझहु रानी। जीवन हार न बूड़ै पानी ॥
करै जो किछु करता कोई। अन्त काज वह सुंदर होई ॥
भेद छिपा तोहि कारन माहीं। सो जानहि हम जानहिं नाहीं ॥
ज्ञानी एक एक बालक मारा। औ एक नाव जलधि मों फारा ॥
साथी ताकर भेद न जाना। भेद रहा तेहि बीच छिपाना ॥
धर धीरज मन भीतरें। होइ जियत वह होइ।
जो मति सों छूंछा अहै, छाडै धीरज सोइ ॥
मालति कहा देहु तुम बोधू, मोहि पहरा पर आवत क्रोधू ॥
कहा करत पहरा कछु नाहीं। वह करता नाहीं जग माहीं ॥
जेई पहरा को करता जाना। सो मूरख जग बीच भुलाना ॥
सो करता जो सब पर बली। दीन्ह मनुष्य को काया भली ॥
वह पूरब सो सूर निसारै। को पच्छुम सों आनै पारै ॥
कोप न करु पहरा पर, धरु धीरज मन माहं।
देखु जगत मों करता, कस बिस्तारा छांह ॥
धीरज बात कहत है सुवा। मोहिं वियोग सों आंसू चुवा ॥
अब अस करहु बहोरह ताही। मन औ ध्यान बीच को आही ॥
कहा बहोरन हारा सोई। जेहि अज्ञा जीवै सब कोई ॥
पै तोहि लाग फेर उड़ि जाऊं। हेरों बन परबत सब ठाऊं ॥
जियत होई तो हेरि निसारउं। नां तो बैठ रहउं चुप मारउं ॥
जियत मिलत है एक दिन, सुवा मिलत है नाहिं।
मानुष्य सुवा मिलै तब, जब निर्मल होइ जाहिं ॥
इड़ा नाउं लै उड़ा परेवा। हेरा इड़ा अड़ाह सेवा ॥
मधुकर वहि तट ऊपर भयऊ। चलि सैरंगपूर मों गयऊ ॥
हेरत ताको सुवा सरेखा। तेहि सैरंगपूर मह देखा ॥
रोये ऐसे दोउ दुख भरे। तेन रोवत कुज के दिल झरे ॥
जो दिल झरै अलख तेहि जानै। दूसर पत्र बिर्छ महं जानै ॥
रोये मधुकर औ सुवा, बहुत मानि मन हान।
साथी कारन भा बेकल, मधुकर निर्प सयान ॥
सुवा भयेउ अगुवा औ चला। पाछें चला बिरह कर जला ॥
मगु मों मिला प्रेम बनिजारा। और लोग जो रहा पियारा ॥
प्रेम नगर मों मधुकर गयऊ। जनु तप साधि सरग मों भयऊ ॥

है तेहि नित बैकुंठ सँवारा। जो भल काज कीन्ह मद जारा॥
पहिरैं कनक कड़ा औ बागा। बोटगैं पाट उपर मनि लागा॥
मालनि फुलवारी रही, रहेउ सनेही नाउं।
सुवा कहा मधुकर सों, लेहुँ इहां तुक ठाउं॥
मधुकर लीन्ह बास फुलवारी। सूआ आप गया जहं प्यारी॥
पूछा धन कहु कुसल पियारे। देखि जुड़ाने नैन हमारे॥
कहा कुसल जब कुसल तुम्हारी। नीको भाग तेहारो बारी॥
मधुकर राजा को मैं जाना। फुलवारी मों दीन्हेउ थाना॥
है दरसन का भूखा राजा। अब तेहि दरस देखाउब छाजा॥
तुम मालती वह मधुकर, दोऊ एक संजोग।
रहसे देखी निर्प को, प्रेम नगर के लोग॥
दरस देखावै कहं तुम कहा। मोहि वहि दरसन पर चित रहा॥
दरसन जोग कियेहु वहि काजू। राजा रहा तजा सब राजू॥
जो दरसन दाता को चाहै। काज करै भल सत्त निबाहै॥
औ करता की सेवा माहीं। दूसर साझैं मेरवे नाहीं॥
वह सुमिरेउ है एकहि मोहीं। छाजत दरस दोवाहु वोही॥
पै अबहीं नहीं उचित, परगट देउ देखाय।
देखै मेरो छाया, ऐसो करहु उपाय॥
कहा बात भाषा तुम भली। अबहीं लाज लिहें रहु लली॥
है फुलवारी बीच अटारी। जाइ अटारी चढ़िये प्यारी॥
मधुकर हाथ देउं मैं दरपन। छाया डारि देखावहु दरसन॥
तैं परगट तेहि लखु उरबसी। वह देखै तोहि ससि की ससी॥
परगट दरसन को दिन औरै। है प्यारी केतो दिर्ग दबरै॥
इहइ उपाय भलो है, यह दिन देहु बिताय।
मोर होइ जब दूसर, दरसन दीजै आइ॥
दुसरे देवस मालती प्यारी। सखियन संग आई फुलवारी॥
चँढिल अटारी सखियन साथा। दुइज चंद सोहा वह माथा॥
आप दच्छ वह सुवा सयाना। अटा तरें मधुकर कहं आना॥
दरपन दीन्ह हाथ मंह लीन्हा। मालति बदन झरोखहिं कीना॥
झांका दरपन मों परछाहीं। परी बदन की बिछुरी नाहीं॥
देखि बदन की छाया, मधुकर भये अचेत।
मालति कली भंवर, लखि बिकसि रही संकेत॥
जब सचेत भा मधुकर ज्ञानी। मन्दिर गइ तब मालति रानी॥
दरसन दैकै गई पियारी। तेहि दोहाग भई अधिकारी॥
मीलन लाग दोऊ दुख माहीं। परी हाय सुख एकौ नाहीं॥

सुवा संदेश दोऊ कर आनै। दोऊ संग सनेह बखानै ॥
कबहुंव पाती कबहुंव बातें। आनै सुवा चतुर दिन रातें ॥
प्रेम बिरह बैराग मों, बहुत मास गा बीत।
कबहूं दुख कबहुं सुख, कठिन प्रेम की रीति ॥
रूप जनि मालति बरजोगू। नेवता राज बंस के लोगू ॥
रचा सयम्बर ठौर बनाये। राजकुमार देश के आये ॥
एक एक सुन्दर राजकुमारा। कोऊ रवि कोऊ ससि तारा ॥
मधुकर बिनु नेवते गा तहां। रहे राज बंसी सब जहां ॥
मधुकर देखि रूप सब लोभा। सोभा तहां सभा को सोभा ॥
मड़िमाला मालति लिहें, आई सभा मंझार।
बहुत सहेली गोहने, भयेउ सभा उंजियार ॥
लगी आस सब के मन साथा। यह चंचला चढै केहि हाथा ॥
वह चंचला चँचला के समां। चहुँ दिसि फिरी लिहें मन छमां ॥
ताकर ग्रीउ डली वह माला। टारेउ जो मातेउ तेहि हाला ॥
गये सकल निर्प अपने घर को। मालति व्याह भई मधुकर को ॥
दुख सहि के सुख पायन दोऊ। वस सुख तुम्हें पियारी होऊ ॥
सखी कहानी कँहि गई, इन्द्रावति के लाग।
कल ना परै प्यारी को, बाढै अधिक दोहाग ॥

विरह अवस्था खंड

धन सो धन जेहि बिरह बियोगू । प्रीतम लाग तजै सुख भोगू ॥
नेह बीज मन धरतिय बोवै । रैन न सोवै दिन कहँ रोवै ॥
धन जेहि जीउ होइ अनुरागी । वारै प्रान सो प्रीतम लागी ॥
तजै भोग सुख सुमिरन नाहीं । जागै निसि कहँ सोवइ नाहीं ॥

धन सों जन धन मन तेहिक, जागे मन दोहाग ।
परै दोह की आग सों, मानस भोंसै दाग ॥

रोइ दीप सुत डारै धोई । अभिलाषिन अनुरागिन होई ॥
इंद्रावति सुकुवार कुमारी । भार बियोग परा तेहि भारी ॥
प्रेम सरीर बेयाध बढ़ाया । दूबर पीत भयेउ धन काया ॥
पान न खाय न पीवै पानी । भूख पियास भुलायेउ रानी ॥
ब्याकुल भई रात दिन रोवै । बदन करेज रकत सो धोवै ॥
प्रेम आग तन काढ़िय जारा । मारै चाहा मन के पारा ॥

भइउ दूबरी रानी, भै बिबरन . तन रंग ।
बैरिन होइकै लागेउ, ब्याध अंग के संग ॥

दुर्बल भइउ ब्याध सों नारी । बल घटि गा भा जीवन भारी ॥
चित ध्यान प्रीतम पर राखा । चाखा प्रेम बढ़ेउ अभिलाखा ॥
बैरागिन कीन्हा बैरागू । अनुरागिन कीन्हा अनुरागू ॥
सुमिरै सोवत बैठी ठाढ़ी । मन असमर्थ अवस्था बाढ़ी ॥
प्रेम झकोर भयऊ तेहि सीसू । बैरी बूझै निस रजनीसू ॥

सुक्ख भयउ दुख दायक, सुध मति रहेउ न साथ ।
परी जगत प्रानेसरी, जड़ता केरी हाथ ॥

सुंदर बाक मनाक न भावै । गगन चाक उदबेग सतावै ॥
बिरह आग सों भै उर दाहू । धन ससि कहँ भा मंदिर राहू ॥
भावर लाय न सिच्छा मानी । छिन छिन कहै आन की बानी ॥
उन्नमाद सों रोवइ हँसई । आंसू धरती मोती खसई ॥
जियत रहइ धेयान के बाहां । ना तो होत मरन पल माहां ॥

धन कहँ अंतरपट भयेउ, गगन ऊँच महि नीच ।
छाड़ि सकल धंधा कहँ, परि गुन कत्थन बीच ॥

वह रावल जग मित्र नवेला। मन परान कहँ कीन्हा चेला ॥
वह विदग्ध सुकुमार पियारा। रूप गगन सविता उँजियारा ॥
चिंता कथन बीच घन परी। चिंता करै घरी औ घरी ॥
केहि उपकार दरस वहि पावउं। केहि उपकारे के ढिग धावहुँ ॥
होत भलो होतिउं जरि छारा। देह चढ़ावत रावलु प्यारा ॥

बड़ो भाग सारंगी, रहती प्रीतम पास।
मोहि कलेस बिछुड़न को, है प्रछन्न परकास ॥

ब्याह खंड

धन्य ब्याह जासों धन प्यारी। होइ कंत सँग खेलन हारी ॥
होइ सुहागिन प्रीतम पायें। पिय ढिग जाइ सीस निहुरायें ॥
माजें बइठि सरीर बनावै। पिउ रस लेइ पीउ रस पावै ॥
निर्मल होइ होइ सुकुवारू। पानो फूल का करइ अहारू ॥
माजें मह पर चिन्त नेवारै। नित प्रीतम को जाप सँवारै ॥

सत्त सहित धन जो धरै, प्रीतम को अनुराग।
प्रीतम अपने हाथ सों, धन कहं देइ सोहाग ॥

निर्प सयम्बर लगन धरावा। सब काहू कहं नेवत पठावा ॥
भयेउ अनंद अगमपुर नगरी। भइ मुद चरचा नगरी सगरी ॥
बाजै लाग बियाहुत बाजा। जन परजन मन परमद बाजा ॥
रचा चित्र सों मंदिर द्वारा। लगेउ होन सो मंगल चारा ॥
सुभ माँडव छायन उपराहां। जासों होइ सुबर सिर छाहां ॥

ससि बदनी सब कामिनी, गावैं मंगल चार।
लीन्ह अनंद बसेरा, जगपत सदन मझार ॥

इंद्रावति मांजे मँह भई। चेता मालिन नियरें गई ॥
पूछा हियैं लजानिय नाहीं। कैसें रहिये मांजेय माहीं ॥
कहा रहो मन निर्मल कीहैं। चित प्रीतक प्यारे पर दीहैं ॥
मन सों दूसर चिन्त नेवारी। पिउ पर ध्यान लगावहु प्यारी ॥
निस दिन मन को खेत बनावहु। पिय की प्रीत को बीरौ लावहु ॥

अलप अहारिहु जीयै, सुमिरहु पिय को नाउं।
रहौं अकेली रात दिन, प्यारी मांजे ठाउ ॥

मांजे मों इंद्रावति रानी। आइ असीसहिं सखिय सयानी ॥
देहिं असीस सखी हित प्यासी। रमा निरंत्र रहै तोहि दासी ॥
हो प्यारी बिलसहु पिय प्यारा। पिय मेरवत है सिर्जन हारा ॥
जो संजोग चहा तुम रानी। भेंट तेहिक अब आइ तुलानी ॥
ब्याहु नसेनी मिलन-सदन को। मिलै सिघर अब मिलन सजन को ॥

सुख अनंद सों रानी, बेलसहु पिया संजोग।
भयें कंत संजोगिनि, आवै कर सुख भोग ॥

सखिन असीस बचन सुनि रानी। कहा पिता घर रहिउ भुलानी ॥
खेलौं कोड़ में देवस बितायेउं। कुछहूँ प्रीतम मरम न पायेउं ॥
खेलहिं बीति गई लरिकाई। बाढ़ेउ दरप होत तरुनाई ॥

भूलिउ खेल सखी के साथा। चढ़ेउ गगुन कर मानिकहाथा ॥
गुन नहिं एक त्रास मोहिं हियरें। कैसे होब कन्त के नियरें ॥
हौं अजान औ निर्गुनी, ज्ञान रूप वह पीउ।
हाथ छूछ गुन ज्ञान सों, सखी सोच महं जीउ ॥

मोहि गुन बुद्ध सखी है नाहीं। यह नित सोचत हौं मन माहीं ॥
जेहि गुन बुद्धि हाथ महं होई। तापर प्यार करै सब कोई ॥
रहत न बुद्धि पियें मद हाथा। या नित दोष लाग मन साथा ॥
सत्रु चतुर जो जिउ कर होई। है भल मूढ़ मित्र सों सोई ॥
गुन सों मानुष होत पियारा। गुन कर गाहक है संसारा ॥
विष कहं अमिय करत है, है ज्ञानी जो कोइ।
मूरख जन के हाथ सों, अमृत विष सम होइ ॥

मानमती वह सखिय पियारी। बोली सुनिये राज दुलारी ॥
यह जग बीच अहो रुपवन्ती। पिय जेहि रीझा सो गुनवन्ती ॥
तुम पर अस रीझा पिय सोई। चाहा एक बार एक होई ॥
पै यह लट औ आंख तुम्हारी। धरा बियोग बीच तेहि प्यारी ॥
गुनि मति काँत सहज औ रूपा। सब तोहि रीझ कंत गुन भूपा ॥
प्रीतम भै का भै हियें, तोहि नित बाउर पीउ।
तो लट औ अधरन सों, प्रीतम मन औ जीउ ॥

रतन जोत पुनि बात निसारा। भयउ रतन सों मम अवतारा ॥
एक सोच मोहि आवत सजनी। तासों सोचत हौं दिन रजनी ॥
पिय औगुन लावै मोहि रामा। मानुष जन मन तेरो बामा ॥
मानव मानुज उदर सों होई। मनुज उदर बिनु मनुज न कोई ॥
पितु को वरमद अमु जब आजै। मात उदर तब नर भौ पावै ॥
जनम मोर अस नाहीं, सखी सोच मैं लेउं।
पिय ऐगुन जो लावे, कौन उतर मैं देउं ॥

कहा सखी कछु सोच न कीजै। ध्यान अमूरत ऊपर दीजै ॥
तोहि करतार रतन सों कीन्हा। कर महं रतन ज्ञान कर दीन्हा ॥
जो करता कहं करबेइ होई। हौ तेहि कहै होइ तब सोई ॥
बिर्ध पुरुष औ बन्ध्या नारी। तासों सुत पायन सत धारी ॥
बाज पिता सों बालक कीन्हा। अमृत बचन जीभ मों दीन्हा ॥
कीन्ह बिमल माटी सों, बहुर बुंद तेहि कीन्ह।
तासों रकत मांस करि, हाड फेर जिउ दीन्ह ॥

अलख अमूरत सिर्जन हारा। मूरख जगत अलेख संवारा ॥
तेहि छाजत सिर्जैं जस चाहै। दोऊ जग आपुहिं करता है ॥
जनक जननि बिन सिर्जैं पारै। जातें चाहै जनम सँवारै ॥

आद पिता के पिता न माता। ऐसे सिर्जा वह जिउ दाता॥
प्रीतम तोहि गुन ऐसो लोभा। लखै न ऐगुन देखै सोभा॥
मित्र मित्र को ऐगुन, पहिचानत गुनमान।
तेरो सकल अवस्था, गुन बूझै पिय प्रान॥
दायावंत है कंत तुम्हारा। है अपराध छिपावन हारा॥
जो गुनवंत अहै जग माहीं। सो ऐगुन हेरत है नाहीं॥
जेहि गुन सो गाहक गुन केरा। जेहि ऐगुन सो ऐगुन हेरा॥
आपुहिं बीच जो ऐगुन पावा। सो न कहा अपराध परावा॥
जो अपराध छिपावइ कहा। जोग बसन ताके तन रहा॥
जो मुख पर ऐगुन कहै, महा मित्र है सोइ।
ताको मित्र न जानिये, ऐगुन राखै गोइ॥
राजकुंवर जब मोतिय पावा। सात सखा कहँ नेवत पठावा॥
मिर्तक रहे जीउ उन पाये। धाये सकल अगमपुर आए॥
सात मित्र राजा कहं भेंटा। दरसन बिछुरन संकट मेटा॥
राजा के कालिंजर ठाऊं। मित्र पराक्मा प्रेम तेहि नाऊं॥
रहा बहुत दिन सों परदेसा। आये नगर धनी होइ भेसा॥
देखि सून कालिंजरै, मरम कुंवर को पाइ।
रहि न सका राजा बिनु, लीन्ह जोग चित लाइ॥
सुनि के राजकुंवर के जोगू। भा जोगी त्यागा सुख भोगू॥
प्रेम के साथ लगै सैसंगी। रावल भेस लिहें सारंगी॥
आगम संचर राखेन पाऊ। आंगमपुर के भयेउ बटाऊ॥
सीस जटा धरि खप्पर हाथा। आये मिले राज के साथा॥
भेंटेन प्रेम राय कहं राजा। भा मन मुदित मोद उपराजा॥
भयेउ जोग कों राजा, राजा वह गन मांह।
जगपत दाया दुर्म को, सब सिर आयेउ छांह॥
सीतल छांहा पावइ सोई। जो तप किहें जगत महं होई॥
जेहि मन करता की डर भारी। तेहि नित लागै दुइ फुलवारी॥
दोऊ बीच दुइ झरना बहई। सब फल फले दोऊ महं रहई॥
औ सूबर नारी तेहि ठाई। बनी रतन मोती की नाई॥
दूसर फल भल को है नाहीं। भल कोमल फल दोउ जग माहीं॥
जो आवै करता दिसि, एक भलाई साथ।
वोही भलाई के सम, दस आवै तेहि हाथ॥
कुंवर पास क्रीपा चलि आयेउ। जगपति दुकल समेत पठायेउ॥
आइ कुंवर संग क्रीपा बोला। क्रीपा रस मैं भाषित बोला॥
अहो लला जत साधेउ जोगू। तत अब मानहु परमद भोगू॥

धरु सारंगी गहु कीपानू। उदित भयेउ मनोरथ भानू॥
कंथा काढ़हु पहिरहु बागा। जोग मुकुट धरि बांधहु पागा॥
काढ़हु माला जोग को, पहिरहु मानिक हार।
दैव दिष्ट सनमुख भयेउ, होहु तुरंग सवार॥
काढ़त माला कंथा राजा। चकचूहत मन मों उपराजा॥
माला गनि सुमिरेउं वह नाऊं। काढ़त छोह भयेउ तेहि ठाऊं॥
जोग चिन्ह वह कंथा पाया। कढ़त उपेजेउ करुना माया॥
कीपा बूझि कहा हो राजा। नन कंथा मन माला छाजा॥
जोग न पूजै तजै न जोगू। पूजा जोग लेहु अब भोगू॥
जल में दूहद आप गा, मारै मोद तरंग।
दुख को सागर बीतेऊ, अब सुख दिन को रंग॥
दुकुल अहै मानुष की सोभा। चीर बाज सोभाधर को भा॥
बिनु गुन काया अंबर घालें। काठ कि खरग अहै परयालें॥
तत औ जोग के आहसि चेरा। करु पवित्र अंबर तन केरा॥
बस्तर लेहु भोग के जोगू। जोग जोग अब है भल भोगू॥
सुमिरन पूजा है तब ताईं। जब लग नहिं निश्चै मन ठाईं॥
है सब वस्तर मनिमय, मन मों करहु अनंद।
पहिरहु लखि के सोभा, लाजै रवि औ चंद॥
पहिरेउ अंसुक कुंवर सयाना। सुना सीर लखि रूप लोभाना॥
औ सो सुंदर अंसुक सोहा। दूलह देख तजत मन मोहा॥
जड़िता सेहरा से छबि लहई। चौका चमकि चौंधि चखु रहई॥
ऐसे रूप बिराजा राजा। देखि मयंक अरज मा लाजा॥
चेल पहिर सब चेला सोहैं। अस्व सवार भये मन मोहैं॥
सब साथी राजा सँग, भयेउ तुरंग सवार।
तारन मों तारापती, भयेउ कुंवर सुकुमार॥
बाजन बाजै साजन साजैं। लाजन लाजैं काजन गाजैं॥
संग न सोहैं अंग न मोहैं। अंग न गोहैं भंग न होहैं॥
सबै रीझ देखै बर प्यारा। दृष्टि बिछावन मगु पर डारा॥
बर के अधर बान रँग राता। लखि मानिक औ लाल लजाता॥
रहसि कहैं आगमपुर लोगू। धन धन बर इंद्रावति जोगू॥
जो देखा सोइ रीझा, धन धन सब मुख होइ।
बिनु मोहें बिनु रीझे, एको रहा न कोइ॥
सखी एक चितवन तेहि नाऊं। कहा कुंवरि सों मैं बलि जाउं॥
देखेउं हरबर बर मैं तेरा। तो बर देइं देव जिउ मेरा॥
सुनि इंद्रावति मन भा चाऊ। धवराहर दिस ढारा पाऊं॥

सखी सहित वह प्रान पियारी। चढ़ि घबराहट दृष्टि पसारी॥
कन्यापति सब लोगन माहीं। दृष्टि ताहि दिस आवहिं जाहीं॥
राजकुंवर मुख ऊपर, रहेउ सकल छवि छाइ।
आगमपुर की दारा, देखि रहीं मुरझाइ॥
चितवन कहेउ कि देखहु रामा। वह तेरो दूलह अभिरामा॥
पूरन रूप संपदा जाको। करन रहे चित चितवन ताको॥
आज निबेसन तें सुख पाया। सोभा अधिक चढ़ी तेहि काया॥
देखत प्रीतम मुख वह रानी। प्रेमा गोद गिरी मुरछानी॥
मान सखी को रहेउ न प्रानू। कन्यापति चखु मारेउ बानू॥
छोड़ेउ धीरज धीरजा, चेत न चेता देह।
आप आप कहं वोहीं, मारेउ प्रेम अनेह॥
देखि अचेत भईं सब बाला। अँचयन चोखा दरसन हाला॥
सबन कहा यह मानुष नाहीं। अहै महादेवत जग माहीं॥
रहा न चेत पांव औ माथा। नींबू काटत काटेन हाथा॥
मानुष रूप देखि अस होई। रहेउ न चेत बीच जब कोई॥
करता जा दिन दरस देखावै। कैसो होइ नहीं कहि आवै॥
कीन्ह रूप मानुष को, अपने रूप समान।
यातें ज्ञान हरत है, मानुष रूप निदान॥
प्रेमा जाप चेत जब पायेउ। इंद्रावति कहं तुरत जगायेउ॥
पूछा मुरछानी केहि लेखें। कित कुम्हिलाइ कमल रवि देखें॥
आज अनन्द रूप प्रगटाना। छाजै तुम्हैं कहा मुरछाना॥
प्रेम उतरि कुंवरी तब दीन्हा। रवि सनेह अंबुज मय लीन्हा॥
मित्र बदन सोभा बर सोहै। नहीं अचर इंद्री बर मोहै॥
प्रीतम हित यह जग मों, जा धन के मन प्रान।
दरस समै आनन्द सों, मुरछै प्रिया निदान॥
पाय दरस मुदुता भै रानी। तन न समाय चीर हुलसानी॥
हुलसे नैन देखि पिय सोभा। हुलसे स्वांत पाय छबि लोभा॥
पिय को बदन जीउ अस पाया। हुलसे रतन जोत सब काया॥
दिनमनि रूप गगन उपराहाँ। देखि कमल निकसे जल माहाँ॥
पीउ बदन सोभा सों भावा। जिय दरसन इंद्रावति पावा॥
इंद्रावति मन उपवन, आस कली बिकसान।
मन मों रहेउ न बिसमों, आइ अनन्द समान॥
सखि एक होइ सचेत पुकारा। धरती उवा सुरुज उंजियारा॥
एक कहा मानुष नहिं होई। यह सुर भेस धरे है कोई॥
एक कहा रजनीपति आही। मेडर अवहिं न छेंका ताही॥

एक कहा यह सोभा धारी। जगत कलेवर जिउ है प्यारी ॥
जेहि जस रहेउ दृष्टि औ ज्ञानू। तैसा देखा कीन्ह बखानू ॥
कुंवर सनेह सकल मन, उपजेउ रूप बिलोकि।
लोचन चितवन मगु सों, एक न पारै रोकि ॥
सखिन बचन सुनि कै वह रानी। समुझा आगम सोच बिचारी ॥
कहा सखिन सों प्रीतम प्यारा। है मोहिं संग लगावन हारा ॥
भयें बियाह गवन पुनि होई। नइहर के बिछुड़ैं सब कोई ॥
परदेसी की लालप अहई। कहां एक थल पर थिर रहई ॥
परदेसी है कन्त हमारा। देस चलै को राखै पारा ॥
रहनो अन्त न होइ है, नइहर देस मँझार।
परदेसी है सहचरी, लोना पीउ हमार ॥
कहेन सोच रानी केहि लागें। यहि दिन है हम सब के आगें ॥
हम रोये जनमत सनसारा। जनम देस कित रहन हमारा ॥
नइहर नगर अन्त नहिं रहना। सीखु सोइ जेहि सासुर लहना ॥
जनम निबाह भलो पिय पासा। बिनु पीतम न लहै कबिलासा ॥
मिलै नरक जो दरसन पीकों। नरक भलो बैकुंठ न नीको ॥
मिलै तहां हो प्यारी, नइहर देस पियार।
जेहि अस्थान बसेरा, चाहै पीउ तोहार ॥
जब बनबास राम कहँ भयउ। सीता सती गोहेन महं गयऊ ॥
सदन नरक भा पिय बछुरातें। बन बैकुंठ भयेउ तेहि जातें ॥
पिय बिनु फीका सुखरंग जीका। पिय गोहन नीका सुख तीका ॥
जो प्रीतम सँग प्रीत लगावा। सो दोउ जगत बीच सुख पावा ॥
अज्ञा माथे ऊपर लीन्हा। पिय कर अज्ञा भेंट न कीन्हा ॥
पीउ जहां है सुख तहां, जहां न प्रीतम होइ।
तहां सुखद को दरसना, कहां बिलोकै कोइ ॥
बनि बरात द्वारे जब आयेउ। अमल ढाउं बहठै कहं पायेउ ॥
बइठेउ कुंवर पाट उपराहां। ऊपर सीतल साखो छाहां ॥
सुर नर देखि आसिषा देहीं। निरखैं रूप रहसि फल लेहीं ॥
जे तो मुख तजि साधा जोगू। वे तो अलख दिहा सुख भोगू ॥
थोरे दिन का कुंवर सलोना। लोना अम्बुक कीन्हेउ टोना ॥
रूपवन्त राजा कुंवर, सकल बरातिन मांह।
सुन्दरता पति होइ रहा, मान पाट उपरांह ॥
जेवन बने सहस परकारा। जेवैं नित भा निर्प हंकारा ॥
बइठे लोग आइ सब तहां। दीन्ह ढउर जेंवै नित तहां ॥
भोजन केतो सुन्दर होई। उदर भरे पर खाय न कोई ॥

त्रिषा छुधा पर अंचवै खाई। तब जल जेवन करै भलाई ॥
छुधावन्त कहं देहु अहारा। देइ नाक फल सिरजन हारा ॥
कहत न पारै रसना, सब पकवान बखान।
सै सेवाद एक कवर मों, मिलै खात पकवान ॥
बराबरी सों करइ न पारा। बराबरी सूरज ससि तारा ॥
जत जग बीच भले पकवानू। रहे सकल कित करउं बखानू ॥
बरनत रसना लोनी होई। जानै सो अच्छै जो कोई ॥
बिनै किहेन राजा कै लोगू। है पकवान न तुम सब जोगू ॥
जो पवित्र भोजन करतारा। दीन्ह तुम्हैं सो करहु अहारा ॥
जेंवै लागे जेवनहिं, ले दाता को नाउं।
एक कवर में पावें, सै सेवाद तेहि ठाउं ॥
भा अज्ञा जब बाजन बाजा। राजित चला बियाहै राजा ॥
तूर दमामा बाजै लागे। अम्बर गये सबद सुर जागे ॥
माड़ौ के तर कुंवर पहूंचा। रहा गगन लग माड़ौ ऊंचा ॥
हरषि गीत नारी सब गावें। घर घर सों सब देखै आवें ॥
पर त्रिय दिष्ट परत भल नाहीं। तैसेइ पर पूरुष उपराहीं ॥
रहा उदित होइ रूप सों। दूलह भान समान।
वोहि समय मांड़ौ तर, आयेउ चंद्र छिपान ॥
उश्नरसम कहं देखत नियरे। रहसा नीरज अपने हियरें ॥
लाज मयंक देखि सकुचाना। परगट होइ नाहिं बिकसाना ॥
तन तन सों तो रहा वियोगू। मन मन सों तो रहा संजोगू ॥
दुइ मन प्रीत रीत सो जानै। अपने नेह जो मन में आनै ॥
रवि दूलह मुख परगट कीन्हा। ससि दुलहिन मुख पर पट लीन्हा ॥
पढ़ेन वेद बामन सब, बर कन्या के नाउँ।
रहेउ पर्न नैरित जो, भयेउ सकल तेहि ठाउँ ॥
भा बियाह कन्या बर साथा। आयेउ सुख को मानिक हाथा ॥
भयेउ कुंवर जगपत को प्यारा। सब काहू मिलि आइ जोहारा ॥
दाया सों आगमपुर ईसू। डारा छांह कुंवर के सीमू ॥
जैसे राज त्याग तप कीन्हा। वैसो अलख भोग सुख दीन्हा ॥
पायेउ बहुत दास औ दासी। सेवक भये अगमपुर वासी ॥
भयेउ नगर वासी कहं, कुँवर प्रान को प्रान।
सबतें जोरेउ मित्रता, कुँवर सनेह निधान ॥
रहिन सखी सुन्दर जहं ताई। इंद्रावति के नियरे आई ॥
सकल सखी मिलि दीन्ह असीसा। प्रीतम छांह रहै तोहि सीसा ॥
इहइ लाभ व्याह सों होई। तोहि लाभ हरषित सब कोई ॥

जुग जुग रहै सोहाग तुम्हारा। चाहै तुम कहं कन्त पियारा॥
तोहि गुन ऊपर रीझा रहई। कोमल बात प्रीत की कहई॥
सदा रहै तोहि बस महं, करता के परताप।
तोहिं पिय को सुमिरन रहै, पियहिं तुम्हारो जाप॥
अधरन मों मुसकानी रानी। होइ अभिमानी बोली रानी॥
है मोहिं रूप बिमल उंजियारा। बस मंह रहै सो प्रीतम प्यारा॥
ऐगुन भये न रूठै देऊं। तनु मुसुकाय हाथ कै लेऊं॥
अंमन होइ करउं असमानू। प्रीतम देइ हाथ महं प्रानू॥
पाहन समा कठोर जो होई। करउं सिंगार होइ जल सोई॥
अब किछु चिन्ता है नहीं, प्रीतम भा मोहिं हाथ।
अंमन कबहुं न होइ है, नित रहि है मोहिं साथ॥
सखियन अंगुरी दांतन दाबा। प्यारी गरब न हम कहं भावा॥
मैं न भली मैं भल जो भाषा। तेहि करतार दूर कै राखा॥
अगिन सीस जो ऊपर करई। देखहु उनत नीच होइ परई॥
माटिय सीस नीच कै परई। तबहिं अनेक लाभ सों भरई॥
नयन आप कहं देखत नाहीं। सूझि परा तेहि सब जग माहीं॥
सो डूबा जो भाषा, मैं जग सिर्जनहार।
पार भयेउ जेइ जाना, है एकै करतार॥
प्रीतम आपन नाहिय प्यारी। अहै समुद्र लहर सों भारी॥
सेवा नाव चढै जो कोई। पार समुद्र सों उतरै सोई॥
नाव चढ़त सुमिरै एक नाऊं। कहै उतारहु मोहि सुभ ठाऊं॥
करता आयसु बोहित पायेउ। तबहिं समुद्र के ऊपर धायेउ॥
पिय सों गरब न कब हूं न कीजे। आये सुमाथें ऊपर लीजै॥
गरब बात तुमत बोलिउ, करता करै न कोप।
फिरु प्यारी अभिमान सों, ऐगुन होइ न लोप॥
कै घट काज फिरा जो कोई। मनु घट काज न कीन्हा सोई॥
खुला दुवारा है तब ताईं। रवि न उअै पच्छिम जब ताईं॥
आवहीं फिरु मानै करतारा। जब लग खोल फिरै को द्वारा॥
हम मद पियब तियागा प्यारी। पै तुम्हरी अँखियां मतवारी॥
हम कहँ खींच सुरा दिस आनै। त्राहि कहैं हम नैन न मानै॥
इंद्रावति समुझा बचन, धरती लायेउ भाल।
तुम करतार जगत के, दाता दीनदयाल॥
ए प्यारी सुमिरत हौं तोही। दरसन वेग देखावहु मोहीं॥
धन आनन्द राज सुख आही। एकै दाया दरसन चाही॥
बहुत वियोग सुरा मैं पीया। संजोगी मद चाहत हीया॥

संजोगी प्याला अब दीजै। अधर सुधा सतवाला कीजै॥
आज ठौर आखन मों देऊं। होइ निसंक अंग भरि लेऊं॥
मोहिं संजोग सलील को, है प्रीतिमा पियास।
अनुकम्पा कै दीजै, पूजै मन की आस॥
भइउ सपूरन आधी कथा। मानहुं ज्ञान सिंधु मैं मथा॥
तीन सहस चौपाइय भई। देखु आइ फुलवारिय नई॥
पुनि आगें जो सुख सों रहऊं। तीन सहस चौपाइय कहऊं॥
हौं अबहीं थोरे दिन केरा। बात बहुत दिन कर मैं हेरा॥
विद्या ज्ञान बहुत जेहि होई। अर्थ छिपाने बूझै सोई॥
नूर महम्मद यह कथा, अहै प्रेम की बात।
जेहि मन होई प्रेम रस, पढ़ै सोइ दिन रात॥

उसमानकृत
चित्रावली

चित्रदर्शन खंड

वै भूले तेहि कौतुक जाई। इहाँ कुँअर जागा अँगिराइ ॥
नैन उघारि देखि चितसारी। रहा अचक उठि बैठ सँभारी ॥
देखा मँदिर एक बहु भाँती। चित्र सँवारे पाँतिन्ह पाँती ॥
कनक खंभ औ कनक केवारा। लागे रतन करहिं उँजियारा ॥
ऊपर छात अनूप सँवारे। करि कटाव सब कंचन-ढारे ॥
कीन्ह उरेह सूर ससि जोती। औरु नषत सब मानिक मोती ॥
हेठ अपूरब सब डासन डासा। जहँ तहँ आउ सुगँध की बासा ॥
भयो कुँअर चित अचक एक, मनहीं माँहि गुनाउ।
काकर लोन मँदिर यह, औ मोहि को लै आउ ॥
बहुरि कुँअर जो पाछे देखा। अपुरुब रूप चित्र एक पेखा ॥
जानि सजीउ जीउ भरमाना। भयो ठाढ़ उठि कुँअर सुजाना ॥
देखि रूप मुख परचै खरा। बिधि एह चुरइल कै अपछरा ॥
किए सिंगार संग नहिं कोई। धरें भेष भावन है सोई ॥
जग न होइँ मानुष अस रूपा। को पावै अस रूप सरूपा ॥
निहचै अहौं सरग पर आवा। सुरकन्या भौ दिष्टि मेरावा ॥
निहचै एह सुरपति अपछरा। देखत मोर चित्त जिन हरा ॥
हौं तो मंडप देव के, सोवत अहा सुभाउँ।
होइ परसन कोउ देवता, लै आवा एहि ठाँउ ॥
भयो भाग्य मम दाहिन आजू। जेहि बिधि दीन्ह आनि यह साजू ॥
कै वहि जन्म पुन्य कछु कीन्हा। तेहिं परसाद दरस इन्ह दीन्हा ॥
कै बेनी सिर करवट सारा। कै कासी तन तप महँ जारा।
कै मथुरा बसि हरि जस गावा। ताहिं पुन्य यह दरसन पावा ॥
कै काहू की इंछा पूरी। बल बौसाउ कीन्ह दुख दूरी ॥
कै सुदिष्ट अपने बिधि देखा। आनि देख वह रूप सुरेखा ॥
सुनत अहा कबिलास होहावा। सो बिधि मोहिं आन देखरावा ॥
मन रहसहि चिंतो चितहि, रहा मौन होइ भूप।
रसना मरम न बोलई, लाएन भूले रूप ॥
छिन एक गुनि मन महँ बहुभावा। पुनि ढ़ाढ़स कै आगे आवा ॥
नियरे होइ जो बदन निहारा। रहे निहारि मीन जिम तारा ॥
तब जानेसि यह चित्र अनूपा। हस्यो चित्र लखि बदन सरूपा ॥
नैन लगाय रहेउ मुख बोरा। चित्र चाँद भा कुँअर चकोरा ॥

सुधि बिसरी बुधि रही न हिये। गा बौराइ प्रेम मद पीए ॥
कबहूँ सीस पाइ तर धरही। कबहुँ ठाढ़ होइ विनती करई ॥
कबहुँ परै अचेत भुइँ, कबहूँ होइ सचेत।
रूप अपार हिएँ समुझि, मुख जोवै करि हेत ॥
निरखत जोति नैन जौ पाई। परी डीठ आला पर जाई ॥
देखा आहि लिखै कर साजू। जाते होइ चित्रकर काजू ॥
साँवर अरुन पीत औ हरा। जो रँग चाहिये सो सब धरा ॥
कहेसि बिचारि बूझि मन माहीं। कालहि आजु अस होइ कि नाहीं ॥
आपन चित्र लिखौं एहि ठाऊँ। मुकुरहिं जोति जोति कछु पाऊँ ॥
अपनि जोति सूर उँजियारा। सूर कि जोति चंद मनियारा ॥
हिएँ बिचारि चित्र तब लिखा। वहि न चरन तर आपन सिखा ॥
साजि सो मूरति आपनी, ले सब रँग वहि केर।
कै सुजान सो जानई, कै सुजान यह फेर ॥
चित्र लिखा पूजी पुनि धरी। निंद्रा आइ कुँअर चखु भरी ॥
कुँअरक चाहत पलक न लावा। बरबस बैरिन नींद सो आवा ॥
रहै नींद जासौं धन खोवा। इहै नींद जो करै बिछोवा ॥
इहै नींद मगु चलै न देई। इहै नींद सरबस हरि लेई ॥
इहै नींद जेहिं नैन समानी। पलकन्ह भीतर दृष्टि समानी ॥
जो जग माँह नींद बस होई। रहै बीच मग सरबस खोई ॥
जे यहि नींद आपु बस कीन्हें। रहै नींद तोहिं नौ निधि दीन्हें ॥
मान गवाए सोइ सब, जो संपति हुति साथ।
अजहूँ जागु न घर-बसे, भकुरे है कछु हाथ ॥
देबन्ह कौतुक अति जिय भाया। चित्रिनि दरस अमर भइ काया ॥
होत भोर आदित परगासा। उठी सभा औ नाँच उडासा ॥
चित्रावलि कहँ निद्रा आई। ले पलंग पर सखिन सोआई ॥
औ जहँ तहँ सब सोवन लागीं। सगरी रैनि अही सुख जागीं ॥
देवन्ह कहा होत है बारा। चित्रसारि जनु कोऊ उघारा ॥
चलहु कुँअर लै चलहि सवेरा। मगु कोई आइ मढ़ी महँ हेरा ॥
एहि न पाउ औ तुरै जो पावा। जानइ कुंअर जन्तु कोउ खावा ॥
जन पुरजन माता पिता, जहँ लहु हित सुनि पाउ।
मरिहहिं छाती फाटि सब, तब कछु हाथ न आउ ॥
पुनि दोउ एक संग चितसारी। आइ उधोरन्हि पौरि के बारी ॥
सोवत कुंअर आन तहँ पावा। लीन्ह उठाइ बार नहिं लावा ॥
निमिष माँह लै मढी उतारा। गए छाड़ि सोवत दुख मारा ॥

सुरुज किरन जब कुँअरहि लागी। करवट लेत उठा तब जागी ॥
देखै कहाँ चहूँ दिसि हेरी। भई आनि रचना बिधि केरी ॥
ना वह मंदिर नहिं कविलासू। ना वह चित्र न वह सुख वासू ॥
सपन जान चित उठा मरोहू। औटि करेज पानि भा लोहू ॥
पुनि जो निहारे आपु तन, चिन्ह आह सो संग।
बस्तर औ कर पर वही, लिखत लाग जो रंग ॥
षन एक कुँअर अचक मन रहा। कौतुक सपना जाइ न कहा ॥
पुनि जो बिरह लहरि तन आई। थाँभि न सकेउ गिरेउ मुरझाई ॥
दोउ नैनन जनु समुँद्र अपारा। उमड़ि चले राखै को पारा ॥
फारै झँगा औ लोटै परा। बंधुन कोऊ हाथ को धरा ॥
भरि गै खेह सीस औ देहा। सेवक नाहिं जो झारै खेहा ॥
संग न कोऊ हितू पियारा। को उठाइ बैठाइ सँभारा ॥
षिन चेतै षिन होइ बेसँभारा। घरी घरी सिर भुइँ दइ मारा ॥
बिरह दहनि कोउ किमि कहै, रसना कहि जरि जाइ ॥
सोइ हिय माँहिं सँभारै, जेहि तन लागै आइ ॥
कटक जो आइ नगर नियराना। देखिन्ह संग न कुँअर सुजाना ॥
वह ओ कहँ वह ओ कहँ पूँछा। कटक जानु विनु जिउ तन छूँछा ॥
सब मिलि कहा कुँअर जो नाहीं। राजा पास काह लै जाहीं ॥
पूछत उतर देब हम काहा। छूँछ लजाइ रहब मुँह चाहा ॥
जोहिं बिनु तब जाइहि मुँह गोवा। कसन अबहिं जो खोजिअ खोवा ॥
सोवत जानु सबै सुनि जागे। आपु आपु कहँ ढूँढ़न लागे ॥
जल जल थल थल मेरु पहारा। एक एक तरु तर सौ सौ बारा ॥
स्याम रैन बिनु पंथ पुनि, अगुवा संग न कोइ।
दूरि दूरि सब धावाहिं, नियर जाहिं नहिं कोइ ॥
खोजत खोजि कटक सब हारा। बीती रैनि भयो भिनुसारा ॥
सूरज उदै पंथ तब सूझा। भयो दिवस पर आपन बूझा ॥
बाजी चरन खोज पुनि पाए। खोजत खोज मढी महँ आए ॥
देखहिं कुँअर परा बिकरारा। हाथ पाँव सिर कछु न सँभारा ॥
ऊभ उसास लेइ औ रोवा। देखत सैन प्रान जुन खोवा ॥
खेह झारि ले बैसे कोहा। रोवै कटक देखि मुख ओरा ॥
पूछे बातन उतर न देई। षिन षिन ऊभ साँस पै लेई ॥
अरुन बदन पिराइगा, रुहिर सूखि गा गात।
रहा झाँपि लोयन दोऊ, कहै न पूछे बात ॥
कोऊ कहै मृगी एहि आई। होइ अचेत परा मुरझाई ॥
कोउ कह डसा सांप एहि मढ़ी। सूरज उदय लहरि है चढ़ी ॥

कोउ कहे अहा राति का भूखा। ताँवरि आइ रुहिर तन सूखा ॥
कोउ कह रैनि रहा एकसरा। कै दानौ कै चुरइलि छरा ॥
इहवाँ घरी बिलँब भल नाहीं। बेगहि होहु नगर लै जाहीं ॥
ततूखन राज सुखासन आना। लै पौढ़ाए कुँअर सुजाना ॥
नाउँ सुखासन लै दुखवाहा। बिरह क जरा दून कै डाहा ॥
जाइ सुखासन आसुभा, बाजु गीत औ नाद।
चला पाछु सब आवै, कटक भरा बिसमाद ॥

केउ कहा जाइ जहँ राजा। कुँअर आव कछु औरै साजा ॥
संगन सुनिय गीत औ दाना। सिगरी कटक देखि बिसमाना ॥
सुनि औगुन राजा उठि धावा। व्याकुल होइ भुँइ पाव न लावा ॥
रानी सुनि सिर परी बिजागी। सुनतहि जरी कोष की आगी ॥
आई धाइ कुँअर जहाँ आवा। रोइ सुखासन लेइ कँठ लावा ॥
देख षीन तन मुख पियराना। राजा रानी तजहिं पराना ॥
कंठ लगावहिं पूंछहिं बाता। उतर न देइ बिरह मद माता ॥
पुनि ते पूंछा बोलि कै, जे सँग हुते सयान।
जहँवा कुँअर बिछुरि मिला, तिन्ह सब कीन्ह बखान ॥

राजमंदिर महँ कुँअर उतारा। जानहु आनि अगिन महं डारा ॥
कल न परै पल अति बिकरारा। हाथ पाँव सिर दै दै मारा ॥
राजैं तनखन जन दौराए। वैद सयान गुनी लै आए ॥
गहहिँ नाड़िका बूझहिँ पीरा। नारि माँह निरदोष सरीरा ॥
ससि सूरज दोऊ निरदोषी। अपुने अपुने घर संतोषी ॥
अब नाड़िका माँह नहिं पीरा। प्रगट पियर मुख षीन सरीरा ॥
कहि न आव हम हिए बिचारा। ई जस बिरह घाउ कर मारा ॥
पीर सोई जो नहीं कछु, औषद मूरि उपाय।
एहि कर हितू जो होइ कोइ, सो पूछै फुसिलाय ॥

उठि अकुलाइ मात दुखभरी। कुँअर पास आई एकसरी ॥
सीस लाइ के बैठी कोरा। पूछै बात देखि मुख ओरा ॥
नैन उघारु पूत कहु पीरा। केहि कारन भा षीन सरीरा ॥
काहे पीत भयों मुख राता। कहहु बात बलिहारी माता ॥
तहीं एक दिनमनि कुलकेरा। नैन मूँदि कस करहिं अँधेरा ॥
हम सब घट तुम जीव सनेही। कस कुँभिलाइ देसि दुख देही ॥
पूत परि कहु कस जिउ तोरा। नैन खोलु करु जगत अँजोरा ॥
तोरे पीर कि औषद, जौ एहि जग महँ होइ।
अर्थ द्रव्य जिउ दइ कै, बेगि मँगावों सोइ ॥

कहुँ जो उपजी विथा सरीरा। करौं सोई जेहि नेवरइ पीरा ॥
जो है मढी देव कर भाऊ। लै पूजा सो दैव मानऊ ॥
जो काहू के दरसन भूला। मांगौ होइ दुनों कर फूला ॥
और जो मन कछु हींछा होई। कहु सो बेगि लै पुरवों सोई ॥
दुहु जग मांह तुहीं एक आसा। आस तोरि का करसि निरासा ॥
को काटै इह दुख दिन राती। अबहीं मरब फाटि मैं छाती ॥
सुन कै कुंअर मातु कै बोला। ऊभि साँस लीन मुख खोला ॥

माता पीर सो ऊपजा, ताहि न मूरि उपाइ।
लोयन अटके तहाँ पै, मन न सकै जह जाइ ॥

कहि कै कुंअर मौन भै रहा। लोंयन दुहू गिरे जल बहा ॥
बहुत पूँछि रानी जब हारी। कहि न बात नहिं पलक उघारी ॥
एहि मँह बिरह लहरि पुनि आई। थाँभि न सका परा मुरछाइ ॥
धाह मेलि तब रानी रोई। सुनत लोग धावा सब कोई ॥
राजा रोवै डारि सिर पागा। जन परिजन सब रोवइ लागा ॥
राज मँदिर कर सुनत अँदोरा। घर घर परा नगर मह रोरा ॥
जो जैसहि तैसहि उठि धावा। हाथ हाथ लै कुंअर उठावा ॥

कोई मेलै पानी मुख, कोऊ मूँदै नाक।
मेटे कैसेहु नहिं मिटै, माथ लिखा जो आँक ॥

विद्याधर गुरु पंडित महा। तेहि कुल सुमति पूत एक अहा ॥
नाउ सुबुधि सकल गुन जाना। पढ़ा पाठ सँग कुंअर सुजाना ॥
विद्या जानु जहाँ लगि गुनी। नाटक चेटक आखर घनी ॥
मानत हेत कुंअर तेहि सेती। कहत सुनत जिय बातैं जेती ॥
सुनि कै विथा कुँअर पहँ आवा। कुंअर अचेत आइ तहँ पावा ॥
नारी देखि विचारेसि पीरा। दोष न पाइस कुँअर सरीरा ॥
बदन पियर लोचन न उघारा। निहचै कहेसि बिरह कर मारा ॥

प्रेय मंत्र बोला सुबुधि, श्रवनन लागि पुकारि।
सोवत जागा कुंअर पुनि, देखिसि पलक उघारि ॥

तब एकसर भै पूछेसि बाता। कहहु कहाँ कासों मन राता ॥
कौन रूप देखा तुम जाई। देखत जाहि परे मुरझाई ॥
मैं तोर हितू जान सब कोई। कौन बात तुम मोसों गोई ॥
औ मैं गुन आकरषन पढ़ा। स्वंग बसै सोऊ कर चढ़ा ॥
नाउं ठाउं जाकर जौ होई। करि उपाउ पुनि आनउं सोई ॥
जो तुम्ह काज आज नहिं आवौं। बुधि विद्या सब कुलहि लजावौं ॥
प्रम पहार स्वर्ग ते ऊंचा। बिनु रेघे कोउ तहँ न पहूँचा ॥

कहु सो बात अब जीव की, बेगहि करौं उपाइ।
ना तो बौरे कुँअर निज, सब मरिहैं बौराइ॥
सुनि सुनि मन सब बात बिचारी। रोइ रोइ कहन कथा अनुसारी॥
जैसे खेलै गए अहेरा। आँधि आइ औ भयो अँधेरा॥
औ जैसें सब चले पराई। पर्‍यो आपु जस एकसर जाई॥
औ जैसें बीती सो आँधी। सोवा मढ़ी तुरै तरु बाँधी॥
औ जैसें वह सपना देखा। अपुरब रूप चित्र जस पेखा॥
औ जैसें मन गा बउराई। दिष्टि परत चित लीन्ह चोराई॥
आपन चित्र लिखा रँग लागा। सोवत मढ़ी माँह जस जागा॥
जैसें देखा सपन सब, सौंमुह पाए चीन्ह।
कुँअर कहा सब सुबुधि सों, जस कौतुक बिध कीन्ह॥
कहा कहौं कछु कही न जाई। हिय सौंरत बुधि जाइ हेराई॥
कहत न बनै जो कछु मैं देखा। गूँग क सपन भयो मोर लेखा॥
नाउँ न जानौं पूछौं काही। पटतर नाहिं देखावौं जाही॥
देस न जानौं केहि दिसि आही। पंथ न जानौं पूछौं काही॥
मन चहुँ दिसि धावै बैरागा। फिरि आवै बोहित ज्यों कागा॥
करहु उपाय करै जो पारहु। नाहि तो कहा मुए कहँ मारहु॥
गहिरे सिंधु जाइ जिउ खोवा। अब मैं हाथ आपु सो धोवा॥
मोहिं जियत नहिं सूझइ, पुनि वह रूप मिलाउ।
मुएँ कबहुँ सुरभौन महँ, हाथ आउ तौ आउ॥
जबहिं कुँवर यह बात सुनाई। सुबुधि-बुद्धि सब गई हेराई॥
परेउ जाइ मन तेहि अवगाहा। तीर ने देखि पाव नहिं थाहा॥
कछू विचार हिए नहिं आवै। कुँअर पीर जेहि औषद जावै॥
कहेसि कुँअर यह पंथ दुहेला। निराधार खेलैं तिन्ह खेला॥
कहेसि उपाइ एक मति मोरी। मूँदिय और बाट चहुँ ओरी॥
जहवाँ सोइ सपन अस दीसा। ओही ठाँव हनहुँ पुनि सीसा॥
मकु बिधि सोवत कर्म लगावै। बहुरि सोई सपना सो पावै॥
लेहु कुँअर उपदेस यह, चेतहु चेत सँभारि।
आन पंथ नहिं दूसरा, दीख न हिएँ विचार॥

परेवा खंड

कै सिंव साज निपुंसक चारी। जिन्ह सों आहिं सों चित्र चिन्हारी ॥
बेगि चलाए चारिहुं ओरा। ढूँढ़न चले सूर ससि जोरा ॥
औ समुझाइ कीन्ह पुनिं बाता। जानत अहौं जाहिं मन राता ॥
ताकर चाह कहै जो आई। जो माँगहिं सो देउँ बँधाई ॥
चारौ चले चारि दिस भए। आपु आपु कहँ ढूँढ़न गए ॥
जल थल सागर मेरु सुमेरा। रन बन पुर पाटन सब हेरा ॥
जहँ तहँ भवहिं गेह बैरागा। दहुइन मह कोइ होइ सुभागा ॥
बन घन गिरि सायर पटन, जहाँ सुनहिं नर नाम।
फिरि फिरि हेरहिं रैनि दिंन, छिंन न लेहिं बिसराम ॥
तिन्ह मँह अहा जो नाम परेवा। हिंए सँवरिं चित्रावलि सेवा ॥
उत्तर दिसा दीप अति भला। धौलागिरि पर्वत कह चला ॥
प्रथमहिं नगर कोट कर फेरी। काशमीर पुनि तिब्बत हेरी ॥
हरद्वार गै गंग अन्हावा। माँगी हींछा सिंभु मनावा ॥
सिरीनगर गढ़ देखि कुमाऊँ। खसिया लोग बसहिं तेहिं गाऊं ॥
पुनि बदरी केदार सिधारा। ढूँढ़ा फिरि फिरि सकल पहारा ॥
दुरगम देखि मगन कर देसा। चला ताकि नैपाल नरेसा ॥
बांक कोट बसगित बहुत। औ चारिहुँ दिसि ताल ॥
अमर पुरी जानहुँ बसी। नाउ धरा नैपाल ॥
अतिंहि अपूरब ताल सुहावा। इसिकंदर जुलकरन खनावा ॥
घाट बँधाये गच चिनकाई। चहुँ दिसि फेर आरसी लाई ॥
तिरहिँ होइ पानी कर धोखा। देखि पिआस पाव संतोखा ॥
पुनि दुइ नदी सुहावनि बहीं। उत्तम वेदव्यास जस कही ॥
नागमती अहिं मुख ते आई। बागमती नाहरमुख पाई ॥
तीरथ जानिं जगत चलि आवा। अंग धोई सब पाप नसावा ॥
बारह मास पटन पुनि घिरी। बरहौ मास जातरा भिरी ॥
नर नारी सुंदर सबै, ससि मुख अधर रसाल।
नैन परेवा चकित रह, देखि नगर नैपाल ॥
घर घर नगर लीन्ह तहँ फेरी। राउ रंक देखे तहँ हेरी ॥
रूप सरूप लोग सब आहा। सो न मिलै जा कहँ चित चाहा ॥
जह न होइ सो प्रान पियारा। बसत देस सब जानु उजारा ॥
चला नगर तजि पर्वत ओटा। परी द्रिष्ट एक कंचन कोटा ॥

हीरा रतन पदारथ मोती । जगमगाइ सब मानिक जोती ॥
कहैसि जाइ देखौं एहि ठाऊँ । लागत अतिहि सुहावन गाऊँ ॥
हिएं चाउ भइ पाव न लावा । जोगी जाइ न नगर नियरावा ॥
आइ सींव दिन नयर भो, लीन्ह अतीथ बोलाइ ।
धरमसाल जहं हुत रचा, तहं ले गए लिवाइ ॥
गै जोगी तहं देखै काहा । अतिथि सहस एक बैठे आहा ॥
ढाढे सबै राउ औ राना । सेवा करहिं जैस मन माना ॥
भाँति भाँति पकवान जेंवावहिं । औ अपनै कर पान खिवावहिं ॥
जो इच्छा मन माँगै कोई । बेगिंहि आन पुरावैं सोई ॥
देखि अतीथ सबै रहसाए । सेवा कहँ चलि आगे आए ॥
आदर सहित आनि बैसारा । पहिलें लै जल पाँव पखारा ॥
ता पाछें लाए पकवाना । जेंउ गोसाईं जो मन माना ॥
जोगी कछू न जेंवई, पूछें कहै न बैन ।
चरचै आनन चहूँ दिस, कीन्हें चंचल नैन ॥
जोगि न जेंवा रहे जेंवाई । काहू कहा कुंअर पहँ जाई ॥
धरमसाल एक जोगी आवा । चित चंचल बैराग जनावा ॥
नहिं जानहिं दुहुँ का चित जानी । अन्न न खाइ पियै नहिं पानी ॥
पूंछे कहे न एकौ बाता । पियर बदन जस काहुक राता ॥
चंचल नैन चहूँ दिस हेरा । चरचै पुर आनन सब केरा ॥
पलक न लाउ जानु नहिं सोवा । ढूंढ़त फिरै जानु कछु खोवा ॥
धरमसाल की नीत न होई । भूँखा जाइ इहां हुत कोई ॥
भइ आयसु ऐसी कहा, बेगिहि आनहु सोइ ।
मैं चूक्यों सेवा कछू, तातें रिसि जिय होइ ॥
कुंअर पास तब जोगी आना । जोगी कुँअर देखि पहिचाना ॥
चित रहसा जानहुँ निंधि पाई । कंथा महँ जोगी न समाई ॥
पीत बरन जु अहा भा राता । अति हुलास कंपेउ सब गाता ॥
देखि कुँअर आदर बहु कीन्हा । निकट पाट बैठन कहँ दीन्हा ॥
बिंनती कीन्ह सुनौ हो देवा । कस न धरम कै मानहु सेवा ॥
हम सेवक तुम्ह देव गोसाईं । सेवक हुते चूक बहु टाईं ॥
रिस तजि जेंवहु जेंवन देवा । होउँ सनाथ आज तुम्ह सेवा ॥
कहेसि कुंअर सुनु धरम तरु, अस लगेउ तुअ भाग ।
जरि पताल पालो सरग, हींछा फल तेहि लाग ॥
जा दिन तें हम गुरु बिछोवा । अन्न न जेंवा नींद न सोवा ॥
भूख नाहिँ औ नाहिँ पियासा । नाउँ अधार रहइ घट साँसा ॥
दक्खिन देस जान जिन्ह देखा । रूपनगर कबिलास विसेखा ॥

बसे गुरू तेहि नगर सोहावा। चेला देस बिदेस फिरावा ॥
जोग अगिनि जब हिए प्रचारी। पल महँ कीन्ह भसम रिसि जारी ॥
काया जोग अहै रिसि रोगू। जो रिसि करै सो नासै जोगू ॥
कुँअर कहा कस देस तुम्हारा। औ को देस बसावन हारा ॥
मो सौं देस बखान करु, कैस नगर कस भूप।
कौन लोग तहवाँ बसैं, पुनि गुन कौन अनूप ॥
जोगी कथा कहन अनुसारी। सुनहु कुँअर यह बात रसारी ॥
रूपनगर सो उत्तिम देसा। चित्रसेन जहँ राउ नरेसा ॥
ऊँच नीच घर ऊँच उँचाए। चित्र कटाउ अनेक बनाए ॥
धन सो नग्र धन उत्तिम देसा। चित्रसेन जहँ राउ नरेसा ॥
राउ रंक घर जानि न जाई। एक ते एक चाह अछवाई ॥
बेल चँबेली कुंद नेवारी। घर घर आँगन फुलि फुलवारी ॥
लीपे चंदन मेद अवासा। भीत बैठि लेहिँ अलि बासा ॥
मृगमद चोवा कुमकुमा, खोरि खोरि महकाइ।
सुर नर मुनि गंधरव सब, रहे सुबास लुभाइ ॥
चित्रसेन अति राउ भुवारा। जस रवि तपै तेज मनियारा ॥
जेहि घर विषम दिष्टि परि राई। बैरी तम जिमि जाइ बिलाई ॥
बड़ परताप अखंडित राजू। अगनित हस्ति घोर दल साजू ॥
गुन बिद्या सरि भोज न पावा। पँडितन्ह हिएँ हेत बहु लावा ॥
दुखी न कोई सब सुख राता। जहँ तहँ चलै धरम की बाता ॥
सब सुखिया कोउ दुःख न जाना। ढूँढत फिरहिं लेइ को दाना ॥
देस देस के राजा आवहिं। ढाढ़ तँवाहि बार नहिं पावहिं ॥
महथ गरब अति मान तहँ, रहै न एकौ अंक।
रूप नगर की खोरि महँ, राउ होहिं सब रंक ॥
तेहि घर पुनि चित्रावलि बारी। मात पिता की प्रान पियारी ॥
रूप सरूप बरनि नहि जाई। तीनिहुँ लोक न उपमा पाई ॥
दिनकर दिन पावै नहि जोरा। इंद्र लजाइ देखि मुह ओरा ॥
अमर कोष गीता पुनि जाना। चौदह विद्या करे निधाना ॥
संतति आन न तेहि घर आवा। वाही एक ते सब चित लावा ॥
भौंह चढ़ाइ जो कबहुँ रिसाई। मात पिता कर जिउ निसराई ॥
औ जो चाह करै पुनि सोई। लेत देत कछु बरज न कोई ॥
दखिन दिसा पुनि नगर के, सखर एक खनाइ।
सखिन साथ चित्रावली, तहँ नित जाइ नहाइ ॥
कहा सराहौं सखर तीरा। पानि मोती तहँ काँकर हीरा ॥
अति औगाह थाह नहिं पाई। विमल नीर जहँ पुहुमि देखाई ॥

अति अमोघ औ अति बिस्तारा। सूझ न जाइ वारहु त पारा ॥
घाट बँधाऐ कंचन ईंटा। सरग जाइ जनु लाग्यो मीटा ॥
ऊपर ताल पानि जहँ ताईं। ठाँव ठाँव चौखंडि बनाईं ॥
औ जहँ तहँ चौरा कै लीन्हें। निसि दिन रहहिँ बिछावन कीन्हें ॥
जहाँ एक छिन करै नवासा। सोई ठाँव होइ कबिलासा ॥

सुख समूह सरवर सोई, जग दूसर कोउ नाहि।
मानुष कर का पूछिये, देवता देखि लोभाहिँ ॥

भीतर सरवर पुरइन पूरी। देखत जाहिँ होइ दुख दूरी।
फूले कँवल सेत औ राते। अलिमकरंद पियहिं रस माते ॥
बासर पदुम कुमुद रह फूला। सब निसि नषत चाँद रह भूला ॥
तोरि कँवल केसर झहराहीं। केसरि बास आव जल माहीं ॥
हंस झुंड कुरिलहि चहुँ ओरा। चकइ चकवा पौरहिँ जोरा ॥
संवरत ताहि सिरायो हीया। चातक आइ पाने सो पीया ॥
औ जित पंछी जल के आए। केलि करत अति लाग सोहाए ॥

रहसहिं क्रीड़ा बृन्द बस, भौंर कँवल फहराहिँ ॥
निसि दिन होंहिँ अनंद तहं, देखत नैन सिराहिँ ॥

सँरवर तीर पछिम दिसि जहाँ। चित्रावलि की बारी तहाँ ॥
सीतल सघन सुहावन छाहीं। सूर किरिन तहँ सँचरै नाहीं ॥
मंजुल डार पात अति हरें। औ तहँ रहहिँ सदा कर फरे ॥
तुरँज जँभीरी अति बहुताई। नेबू डारन गलगल जाई ॥
अमिरित फर औ दाड़िम दाखा। संतति जियै निमिष जो चाखा ॥
नरियर और सोपारी लाई। कटहर बडहर कोऊ न खाई ॥
आँव जमुनि लै एक दिसि लाए। बर पीपर तहँ गवन न आए ॥

मूर सजीवन कलपतरु, फल अमिरित मधु पान ॥
देउ दइत तेहि लगि भजहिं, देखत पाइय प्रान ॥

कोकिल निकर अमिरित बोलहिँ। कुँज कुँज गुँजत बन डोलहिँ ॥
सारी सुआ पढै बहु भाषा। कुरलहिँ बैठि बैठि तरु साखा ॥
पवई आपन आपन जोरी। छकी फिरहि कुरलहि चहुँ ओरी ॥
खंजन जहँ तहँ फरकि देखावैँ। दहिअल मधुर बचन अति भावैं ॥
मोर मोहनी निरतहिँ बहुताई। ठौर ठौर छवि बहुत सोहाई ॥
चलहिँ तरहिँ तहँ ठमुकि परेवा। पंडुक बोलहि मृदु सुख-देवा ॥
बहु करनास रहहिँ तेहि पासा। देखि सो संग भाग जेहि बासा ॥

भंगराज औ भृंगी, हारिल चात्रिक जूह।
निसि बासर तेहि बारि महँ, कुरलहिं पंछि समूह ॥

औ पुनि रहै माँझ जहँ बारी। चित्रावलि लाई फुलवारी ॥
सोन जरद नागेसर फूले। देखि सुदर्सन दिष्ट जो भूले ॥
जाही जूही अति बहुताई। अनबन भाँति सेवती लाई ॥
बनबेला सतबर्ग चमेली। रायबेल फूली सुखबेली ॥
करना केतलि बास नेवारी। चंपकली जनु कुंदि उतारी ॥
कदम गुलाब लाग बहु भाँती। औ बसाइ बकुचन की पाँती ॥
मौलसिरी फूली औ मूँदी। जनु सिंगार हरावलि गूँदी ॥

पौन बसेरा लेहि निसि, तेहि फुलवारी पास।
भोर भए जग प्रगटइ, तिन्ह फूलन्ह की बास ॥

ललित लवंग लता जहँ फूली। भौंरा भौंरि कुसुम तेहि भूली ॥
नगर नगर तहँ डगरै जूही। गंधराज फूलहिँ संबूही ॥
कस्तूरी सुगंध बिगसाहीं। ठौर ठौर सो अधिक बसाहीँ ॥
भुइँ चंपा फूली बहु रंगा। मानहु दरसा रूप अनंगा ॥
सूरज भाँति भाँति अति राते। देखत बनै बरनि नहिँ जाते ॥
उड़हिँ पराग भौंर लपटाहीं। जनु बिभूति जोगिनि लपटाहीं ॥
मरकंडी भौंरन सँग खेली। जोगिन संग लागि जनु चेली ॥

केलि कदम नवमल्लिका, फुल चंपा सुरतान ॥
छ ऋतु बारह मास तहँ, ऋतु वसंत अस्थान ॥

औ पुनि जहाँ माँझ फुलवारी। तहँ चित्रावलि की चित सारी ॥
चंदन मेद कपूर मिलावा। इन्ह तिहुँ मिलि कै कीन्ह गिलावा ॥
हीरा ईंट लगाइ उँचाई। देखत बनै बरनि नहिँ जाई ॥
चूनी चूरि कै कीन्हो खोहा। मोती चूरि गच्च जगमोहा ॥
अति निरमल जस दरपन कीन्हा। तहाँ जाइ पुनि आपु न चीन्हा ॥
मँदिर एक तँह चारि दुआरी। नगिन जरी पुनि लागु केवारी ॥
कनक खंभ तँह चारि बनाए। हीरा रतन पदारथ लाए ॥

ठौर ठौर सब नग जरित, अस होइ रहेउ अँजोर।
जँह न रैनि दिन जानिए, औ न साँझ नहि भोर ॥

तेहि मँह चित्रावलि गुन ग्यानी। आपु न चित्र लिखै अस जानी ॥
जौ लौं सखी दरस नहिं पावहिँ। भोरहिँ आइ सीस तेहि नावहिँ ॥
और जो चित्र अहहिँ तेहि माहीं। सो चित्रावलि की परछाँहीं ॥
अस विचित्र केहि लावों जोरी। अस्तुति जोग जीभ नहिँ मोरी ॥
वही रंग अपने रँग माहीं। ओहि के रंग और कोउ नाहीं ॥
सौंह न जाइ चित्र मुख हेरा। धन सो चित्र औ धन सो चितेरा ॥
मानुष कहा सो देखै पावै। देवता जाहिँ जो हारे आव ॥

कोटि चित्र चितसारि महँ, देखत एकौ नाहिँ।
जौं दिनकर उद्दोत ही, नषत सबै छिपि जाहिँ॥

लखो लिलाट दूजि कर चंदा। दूजि छाड़ि जग वो कहँ बंदा॥
भौंह धनुष बरुनी बिषबाना। देखि मदन धनु गहत लजाना॥
बरुनी बान गड़े जेहि हीये। बहुरि न निकसै जब लहुँ जीये॥
लोचन विमल जानु सम जोवा। निमिख जो देख जनम भर रोवा॥
अधर सुरँग जनु खाए तँबोला। अबहीं जनु चाहै हँसि बोला॥
लंक छीन जेहि भृंग लजाहीं। कोउ कह आहि कोऊ कह नाहीं॥
फीली चरन सराहौं काहा। अबहीं रहसि चलै जनु चाहा॥

गुपुत रहै चित सारि महँ, जग जानै सब कोइ।
सपने जो कोइ देखई, सौंतुक जोगी होइ॥

सुनी कुँअर जो चित्र की बाता। हिए हुलास कँपेउ सब गाता॥
सचक भयौ चित औ मन गुना। सपन जो देखा सौंतुक सुना॥
सोवत भाग अहे सो जागे। श्रवन भए सुनि जाहि सभागे॥
मोहिँ परतीति करम की नाहीं। कहत आहि कोउ सपने माहीं॥
जै निहचय हौं सोअत अहौं। जनि जगाउ विधि हा हा कहौं॥
कौन घरी यह आह सुभागी। देखेउँ सोइ सुनेउँ सो जागी॥
कौन बार यह आह सरेखा। सखन सुना नैनन जो देखा॥

यहि अंतर जनु बिरह अहि, बंधन देई छुड़ाइ।
विथुरि गयों विष सकल तन, लहरि चढ़ी जनु आइ॥

गुपत पीर परगट पुनि भई। सुलगत आगि फूँकि जनु दई॥
उठी आगि सिर पालहु जरा। धाइ कुँअर जोगी पग परा॥
रहि न सकेउ हिय गह भरि रोआ। नैन नीर जोगी पग धोआ॥
बिरह अनल जल भै चखु ढरा। लोचन नीर जोगि तब जरा॥
दुहूँ हाथ गहि सीस उठावा। पूँछत बात बकुर नहिं आवा॥
साँप डसा जनु बिष छहराना। घूमत रहै सुनै नहिँ काना॥
दिष्टी भुअँग बंद जनु कीन्हीं। ते पढ़ि मंत्र खोलि जनु दीन्हीं॥

तब जोगी कर नीर लै, मुख छिरकेसि करि हेत॥
पहर एक बीते भयौ, बहुरि कुँअर चित चेत॥

बहुरि जो कुँअरउ सोइ कै जागा। बैन सँभारि गहेसि सिर पागा॥
तौ पुनि कहिस ऊभ लै साँसा। ए देनिहार निरासहि आसा॥
वोह सो चित्र जो मोहि दुख दीन्हा। बरबस जीउ मोर हरि लीन्हा॥
जीउ लेइ तन दूरइ डारा। हौं तो वही चित्र कर मारा॥
वही चित्र मैं सपने दीठा। चित्त माँहिँ वहि चित्र बईठा॥

वही चित्र तिनु जीउ बिहीना। जिउ हरि लीन्ह कीन्ह तन सूना ॥
वही चित्र जो नैन समाना। सौं तुक सपन जाइ नहिँ जाना ॥
वही चित्र हम हिए महँ, जो तैं कीन्ह बखान।
हौं अब रहा सरीर होइ, वह भौ जीउ समान ॥
जेहि दिन ते नैनन भा लाहा। बहुरि न पायौं कतहूँ चाहा ॥
पंथन पावउँ केहि दिसि जाऊँ। पूछौं काहि न जानउँ नाऊँ ॥
मैं निरास औ बिनु जिउ आहा। आस दई तैं जिउ घट बाहा ॥
आजु आस तैं पुरएसि मोरी। तन मन धन नेवछावरि तोरी ॥
अब कहु पंथ गवन जेहि पावौं। चलउँ बेगि खिन बिलँब न लावौं ॥
तुम्ह जहँ चहहु सिधारहु तहाँ। मोहि अब कहहु पंथ सो कहाँ ॥
कै अब जाइ चित्र सो पावौं। कै अपान वहि पंथ लगावौं ॥
जिउ चितसारी महँ रहा, देह रही हम साथ।
देहु सोई उपदेस मोहिँ, जेहिँ जिउँ आवै हाथ ॥
जोगी कहा कुँअर सुनु बाता। अबहीं देखि चित्र तूँ राता ॥
वह सो चित्र तैं देखा नाही। जा कर ऐस चित्र परछाहीं ॥
चित्र देखि तैं चित्रै जाना। ता महँ अहा सो नहिं पहिचाना ॥
चित्रहि महँ सो आहि चितेरा। निर्मल दिस्टि पाउ सो हेरा ॥
जैसेँ बूँद माँह दधि होई। गुरु लखाव तौ जानै कोई ॥
जा कहँ गुरू न पंथ देखावा। सो अंधा चारिहुँ दिसि धावा ॥
मूरख सो जो चित्र मन लावै। सेमर सुआ जैस पछतावै ॥
यह मूरति औ चित्र जग, जो बिधि सरा सुजान।
परगट देखहि नैन यह, गुपुत जो पूजहि आन ॥
अति सरूप चित्रावलि बारी। जनु बिधिनै कर चित्र सँवारी ॥
चित्रहिँ कहाँ जोति छबि ओती। वह सजीव यह बिनु जिउ जोती ॥
चित्र अबोल होइ जनु गूँगा। बोहिक बोल जस मानिक मूँगा ॥
चित्र कटाच्छ भाव बिनु नैना। बोहि क नैन सब मोहन सैना ॥
चित्र अडोल न डोल डोलावा। बोहि गौनत जनु हंस सोहावा ॥
सायक बरुनि भौंह धनु ताना। सौंरत जाहि लागु उर बाना ॥
चंद बदन तन चंपक सारी। अलि सँग फिरहिँ जानि फुलवारी ॥
काहि लगावों उपम तेहि, अच्छर पूज न छाँहिं।
सुर नर मुनि गन पचि मरहिँ, दरसन पावहिँ नाहिँ ॥
बदन जोति केहि उपमा लावौं। ससिहर पटतर देत लजावौं ॥
ससि कलंक पुनि खंडित होई। है निकलंक सँपूरन सोई ॥
ससि बंदी जब दूजिक दीसा। ओहि बंदी नित देहिँ असीसा ॥
जो मुख खोलि करै उजियारा। नषत छपाहिँ होइ ससि तारा ॥

नैन कुरंग कहैं नहि पारौं। खंजन मीन ताहि पर वारौं ॥
तीन रंग जा महँ नित लहिए। तेहि कुरंग कहुँ कैसे कहिये ॥
जाकहँ नैन एकौ छुन हेरा। सो बिष बान क भयौ अहेरा ॥
ऐसन चित्र अहेरिया, मारि न खोज करेइ।
जेहि उर लागे बान सो, रहसि रहसि जिउ देइ ॥
औ तेहि संग अनेग सहेली। सबै सरूप अनूप नवेली ॥
उन्हक रूप बिधि अपुरुब कीन्हा। करि करि चित्र जानु जिउ दीन्हा ॥
कोउ कुमुदिनि कोउ पंकज कली। एकतें एक चाहें अति भली ॥
अबहीं सबै कली मुँह मूँदी। भौंर चरन ते बेलिन खूँदी ॥
सब चित्रिन औ पदुमिनि जाती। सेवा करत रहत दिन राती ॥
अग्या होहि करहिँ वै सोई। मेटि न सकैं रजायसु कोई ॥
औ जिहि ठाँव करहिँ बिसरामा। जंपत रहहिँ चित्रावलि नामा ॥
निसि बासर ठाढ़ी रहहिँ, लीन्हें आपन साज।
जौ पठवहिं सिष एक कहँ, धाइ करहिँ दस काज ॥
पुनि सो चित्र लिखें भल जाना। उनसों जगत न कोऊ सयाना ॥
आपन चित्र आपु पै लीखा। और को लिखै जान नहिँ सीखा ॥
जगत चितेर रहे पचि हारी। ओकर चित्र न सकैं सँवारी ॥
जो कोई आपन चित आनै। अँतरजामी तबहीं जानै ॥
आपन चित्र छीन कै लेई। औ तेहिँ देस निकारा देई ॥
आपन चित्र जाहि लिख दीन्हा। ते सो घालि हिये मो लीन्हा ॥
एहि डर कोऊ न बीसरै, अह निसि आठौ जाम।
लिये रजायसु नित रहहिं, जपत फिरहिं सो नाम ॥
औ तेहिँ संग निपुंसक जाती। पठवै जहाँ जाहिँ लै पाती ॥
गुन बिद्या सब जानैं बूझा। निरमल दिष्टि पंथ भल सूझा ॥
अन्न न खाहिँ पानि नहिं पीयहिं। नाउँ अधार रैनि दिन जीयहिँ ॥
काम क्रोध तिसना मन माया। पंच भूत सौं तिन्ह की काया ॥
अग्या काज बिलँब न लावा। करहिं सोइ जेहिँ दोष न पावा ॥
सब की बात जनावहिँ जाई। अग्या होई कहहिँ सो आई ॥
अग्या बिना पैग जो धरहीं। अनल तेज सिखा लहि जरहीं ॥
दूरि रहहिँ तेहिँ गमत नहिँ, निकट रहहिँ ते चारि
रचना सिरजनहार की, नावैं पुरुष न नारि ॥
हौं तेहि माँह परेवा नाऊं। सेव करौं चित्रावलि ठाऊँ ॥
वह सो गुरू हौं ओकर चेला। वहिकं नाउं हम मुँदरा मेला ॥
वही पंथ मोहिं दीन्ह दिखाई। वेहि के वचन सिद्धि मैं पाई ॥
औ सुमिरन दीन्ही वोहि केरी। वेहि क नाउँ सुमिरौं हरि फेरी ॥

भूख नाहिँ औ नींद पियासा। चित्रिनि सुरति ध्यान घट आसा ॥
भा अग्यां करि साज महेसू। दिन दस फिरहुँ देस परदेसू ॥
जौ लगु फिरत होइ नहिँ रोगी। तौ लगि सिद्ध होइ नहिँ जोगी ॥
भसम अंग पग पाँवरी, सीस कलपि करि केस।
कंथ पहिरि लै दंड कर, देखन निसर्यौं देस ॥
सुनत कुँअर जोगी के बैना। उघरे दोऊ हिये के नैना ॥
मन महँ कहेसि साँचु यह साजा। वह सो कौन जा कर उपराजा ॥
जेहिक चित्र अस जिउ लेनिहारा। दुहुँ कस होइहि सिरजनहारा ॥
साजा होई मेटि पुनि जाई। सिंभू सरीर न कोऊ मिटाई ॥
जौ न आपु आपहि पहिचाना। आन क पेम कहाँ हुत जाना ॥
जैसे कुबुध जानि कै देवा। बहुत करहिँ पाहन की सेवा ॥
पाहन पूजि सिद्धि किन पाई। से मर सेइ सुआ पछिताई ॥
कस न बूझि खोजों सोई, जेहिक चित्र सब कीन्ह।
जीउ देई जो चाहई, लेइ जो चाहै लीन्ह ॥
कुँअर कहा अब सुनहु परेवा। मैं तोर सीख मोर तैं देवा ॥
मैं तजि पंथ जात बौराना। तैं गहि बाँह पंथ पर आना ॥
बूड़त मोर नाउ मँझ नीरा। तू खेवक होइ लाइसि तीरा ॥
सोअत हौं जो अहा सो जागा। मन तजि चित्र चितेरहिँ लागा ॥
चित्र देखि न चितेरा जाना। बिनु चितेर अब दिष्टि न आना ॥
अब फिरि कहु चित्रावलि बाता। जेहि के रूप आजु मन राता ॥
सुनतहि नाम दूरि भइ दाहा। दहु मुख देखत होइहै काहा ॥
मरत जियाए जोइ कहि, फिरि फिरि कहु सो बात।
सुनिबे कहँ अमिरित कथा, श्रवन भए सब गात ॥
जोगी सँवरि कहै पुनि बाता। वह चित्रावलि जेहि रँगराता ॥
बदन मयंक मलयगिरि अंगा। चंदन बास फिरहिं अलि संगा ॥
जो अलि अंग बास वह पाई। सो तजि आन फूल नहिं जाई ॥
बहुतन्ह सिर करवट गहि सारा। हिछा करि लेधुकर औतारा ॥
बहुत नाउँ सुनि जोगी भए। मुंडु मुँडाइ देसंतर गए ॥
ससि सूरज औ नषतन पाँती। बरने हौहिँ दिवस औ राती ॥
भूषन सोभ पाव तेहि अंगा। ताते निसि दिन छोड़ न संगा ॥
चाँद न सरवर पावई, रूप न पूजै भानु।
अब सुनु तन मन कान दे, नख सिख करौं बखानु ॥
प्रथमहिँ कहौं केस की सोभा। पन्नग जनौं मलयगिर लोभा ॥
दीरघ बिमल पीठि पर परे। लहर लेहिँ विषधर विष भरे ॥
कच अहि डसा जनम नहिं जागा। मंत्र न मानै मूरि न लागा ॥

बिथुरी अलक भुअंगिनि कारी। कै जनु अलि लुबुधे फुलवारी ॥
कै जनु बदन तरनि जौ तपा। सिमिटि सुमेरु पाछु तन छुपा ॥
किमि कच बरनौं राजकुमारा। मति न समाइ देखि अँधियारा ॥
मृग मदवास आव तेहि केसा। पौन जाइ लइ देस बिदेसा ॥

सिरजी तब बिधि स्यामता, जब जग सिरजै लीन्ह।
ते कच सिरजे सार लै, सेष बाँटि के दीन्ह ॥

सीस सिंगार माँग बिधि कीन्ही। तातें ठाउँ माँग पर दीन्ही ॥
सूर किरन करि बालहि धारा। स्याम रैनि कीन्ही दुइ फारा ॥
पंथ अकास विकट जग जाना। को न जाइ वोहि पंथ भुलाना ॥
तहाँ देखि अलकावरि फाँसा। पंथिन्ह परा जीउ कर साँसा ॥
जिउ परतेजि चलहिं तेहि माही। और बाट नहिं केहि दिसि जाहीं ॥
बेनी सीस मलयगिरि सीसा। माँग मोति मनि माथे दीसा ॥
सूर समान कीन्ह बिधि दीया। देखि तिमिर कर फाट्यो हीया ॥

स्याम रैनि मँह दीप सम, जेहि अँजोर जग होइ।
अछुज भुअंगम माँहि बसि, दिया मलीन न होइ ॥

पुनि लिलाट जस दूजि न चंदा। दूजि छाड़ि जग वह कह बंदा ॥
पटतर दूजि होति जौ होती। दूजि माँह पुन्यों कै जोती ॥
भाग भरा अस दिपै लिलारा। तीनहुँ भुवन होइ उजियारा ॥
होइ मयंक खीन जेहि रीसा। सो लिलाट कामिनि पहँ दीसा ॥
कुंदन तिलक सोभ कस पावा। मनहुँ दुइज माँ जीउ मिलावा ॥
मुकुता पाँति चहूँ दिसि पाई। मानहु मिली किरितिका आई ॥
जाहि लिलाट भाग मनि होई। अस सँजोग सुभ देखै सोई ॥

सुभ सँजोग वहि एक छिन, जा कहँ सनमुख होइ।
जौ जग लागै गरह जिमि, बार न बाँकै कोइ ॥

कुटिल भौंह जानों धनु ताना। इंद्रधनुष तेहि देखि लजाना ॥
जानहु काल जगत कहँ कढ़ा। निसि दिन रहै पयच जनु चढ़ा ॥
भौंह फिराइ जाहि तन हेरा। देखत काल होइ तेहि केरा ॥
एही धनुष जुध मनमथ लीता। कै परनाम काम तन जीता ॥
भौंह धनुष लखि इंद्र सँकाना। सब जग जीति सरग कहँ ताना ॥
कौन सो बली जो न गै मारा। तिनहुँ लोक एक हुंकारा ॥
ऐस धनुष जग और न दूजा। देवतन्ह आइ बाहुबल पूजा ॥

अहिपुर नरपुर जीति कै, सुरपुर जीतो जाइ।
अब दहु कछू न जानिये, का कहँ धरे चढाइ ॥

बाँके नैन तीष अति दोऊ। जगत जाहि सर पूजि न कोऊ
राते कौंल मधुप तेहि माँहीं। कहत लजाउँ तेउ सर नाहीं ॥

कौंल देखि ससिहर कुम्हिलाने । ए ससि संग सदा बिगसाने ॥
स्याम सेत अति दोऊ सोहाए । खंजन जानु सरद रितु आए ॥
कै दुइ मिरिग लरत सिर नीचे । काजर रेख डोर गहि धींचे ॥
दोउ समुंद्र जनु उठहिं हलोरा । वह महँ चहत जगत सब बोरा ॥
तीछे हेर जाहिँ चषु आछें । चली मीन जनु आगें पाछें ॥

बर कामिनि चषु मीन सम, निमिष हेर तन जाहि ।
बहुरि जनम भरि मीन जिमि, पलक न लागै ताहि ॥

बरुनी बान तीख अरु घने । सोई जानु जाहि उर हने ॥
मद सिराय ते भाल सँवारे । जाके हने सबै मतवारे ॥
तापर बिष काजर सों बाँधा । सोई मरै जाहि तन साँधा ॥
लाग न बरुने बान जेहि हीया । सो जग माँह अमिरथा जीया ॥
जेते अहैं जीव जग माहीं । साधन जाइ बान सो खाहीं ॥
जगत आइ होइ रहा निसाना । मकु हौं सौंह मारि तेहि बाना ॥
गलि गलि हाड़ रहे जो आई । बैठ जो लागि जाइ तो जाई ॥

एक मूँढ के छाड़ते, लागे बान अलेख ।
जग महँ ऐसन पारधी, दूसर काहु न देख ॥

सुभग सरूप सुरंग अमोला । जनु नारँग बरनारि कपोला ॥
ईंगुर केसर जानु पीसाए । दोऊ मिलाइ कपोल बनाए ॥
और सो देखि कपोल लुनाई । मती हीन कछु बरनि न जाई ॥
तेहि पर तिल सो देइ अस सोभा । मधुकर जानु पुहुप पर लोभा ॥
कै बिधि चित्र करत कर धरे । करत उरेह बूँद खसि परे ॥
बदन सिंगार सोभ जो पावा । रहेउ न दिन पुनि सो न उचावा ॥
वह तिल जाहि दिष्टि तल परा । भयो स्याम तस तिल तिल जरा ॥

नहिं चीन्हत कोउ काहु कहँ, जो जग माहिं न होति ।
परछाहीं तिल एक की, सब नैनन्ह महँ जोति ॥

किमि बरनौ नासिका सोहाई । नासिक सुनि मति नियर न जाई ॥
खरग धार कहि आवै हाँसी । कौन खरग जेहि उपमा नासी ॥
तिलक फूल कबितन्ह चित धरा । उहौ लजाइ पुहुमि खस परा ॥
इह रुआर पुनि कीर कठोरा । उपम देत मन मान न मोरा ॥
उह सुर मौन जगत उपराई । ससि सूरज जहँ उदै कराई ।
तेहि पर हेरि रही मति मोरी । उपमा नहिं केहि लावों जोरी ॥
बेसरि जो पहिरै रहसाई । नग कुंदन छवि पाउ सोहाई ॥

मुकुता डोलत निरखि मन, सुर नर इहै गुनाहिं ।
कहत सुहागिनि नासिका, तिहुं पुर पटतर नाहिं ॥

अधर सुधा निधि बरनि न जाई । बरनत मति रसना पनियाई ॥

छुए न काहु अछूते राखे। प्रेम दिष्टि मुख अजहुँ न चाखे ।।
विद्रुम अति कठोर औ फीके। सुरँग मृदुल दुख दायक जीके ।।
बिंब अरुन सो सरि न तुलाना। अति लजान बन जाइ दुराना ।।
बदन मयंक जगत उँजियारा। अमिरित अधर प्रान देनिहारा ।।
का बरनौं का मति भइ मोरी। उत्तम अधम लगाएउँ जोरी ।।
ससि अमिरित देवतन्ह कै जूठा। जगत जान यह अधर अनूठा ।।

लोयन जाहि कटाच्छ सर, मारि प्रान हरि लीन्ह।
अधर बचन तत खिन दोऊ, अमिय सींचि जिउ दीन्ह ।।

दसन जानु हीरा निरमरे। बदन आनि मुख संपुट भरे ।।
इक इक नग दुहुँ जग कर मोला। जो जिय देइ कहै सो खोला ।।
पान खात कछु भए उवारे। दिष्टि परे मंजुल रतनारे ।।
जनु दुइ लर मुकुता रँग भरे। मंजन लागि आइ मुँह धरे ।।
कै देवतन्ह ससि कीन्ह कियारी। अमिरित सानि बारि अनुसारी ।।
दाडिम बीज तहां लै बोए। रखवारे राखे अहि पोए ।।
निसि बासर तें निकट रहाहीं। सकु सुक पिक खंजन छुनि जाहीं ।।

इक दिन विहँसी रहसि कै, जोति गई जग छाइ।
अबहूँ सौंरत वह चमक, चौंधि चौंधि जिय जाइ ।।

तेहि भीतर रसना रस भरी। कौंल पाँखुरी अमिरित भरी ।।
दसन पाँति मँह रही छिपानी। बोलत सो जनु अमिरित बानी ।।
बोलत बैन अमी जनु चूआ। सुनत जिये बरषन कर मूआ ।।
जे मन अहि कुंतल के खाए। बोलि बोलि धन सबै जियाए ।।
जाके स्त्रवन बचन उन डारा। ताकर बचन जीउ देनिहारा ।।
उकतिन बोलत रतन अमोली। आँब चढी जनु कोइल बोली ।।
व्याकरनौ जानै संगीता। पिंगल अमर पढ़हि पुनि गीता ।।

रहहिं रैनि दिन बाद महँ, चित्रिनि चखु औ बैन।
त्यों त्यों रस न जियावई, ज्यों ज्यों मारहिं नैन ।।

आँब सूल सम ढाढ़ी भई। वह आमिल यह अमिरित भई ।।
तेहि तर गाड़ अपूरब जोवा। पाक आँब जनु अँगुरी टोवा ।।
पाका आँब गात पियराना। वह कुमकुम जनु ई गुर साना ।।
चिबुक कूप अति नीर गँभीरा। बिंब अधर सँजीव जेहि नीरा ।।
अमिरित कुंड अगम औगाहा। जो तहँ परा निकास न चाहा ।।
ताहि कूप ढिग रहस न जाहीं। बूडन कहँ मुनि लाल कराहीं ।।
परहिं जाइ मन रहइ न देई। कुंतल काँट काढि कै लेई ।।

नैन पियासे रूप जल, पांवत जेहि न अघाहिं।
कूप चिबुक जो मन परै, बूड़ि बूड़ि रहसाहिं ।।

सिंधुसुता सम सवन अमोला । जलसुत बचन लागि विधि खोला ॥
जे अमोल नग जगत बखाने । नारि सवन मह सबै समाने ॥
ग्यान बात बिनु आन न सुना । सुनत मोति तबहीँ सिर धुना ॥
निसि दिन मुकता इहै गुनाहीँ । खंजन झाँकि झाँकि जिमि जाहीँ ॥
कंचन खुटिला जा न बखाना । गुरु सिख देइ लागि ससिकाना ॥
राहु जुद्ध कहँ सपरि निसंका । दुहुँ कर लीन्हें सेलि मयंका ॥
औ पुनि सोमै खुमी सोहाई । अबही तरिवन चढा न जाई ॥

कलभ दसन खँभिया दोऊ, सोऊ पट तर नाहिँ
एक छिन देखें जनम भरि, खुभी रहै जिउ माहिँ ॥

अब सुनु बरनौ गींव सुहाई । बिधि कर चाक भँवाइ चढाई ॥
अँगुरिन बीच रही जो रेखा । सोइ चीन्ह रेखा तहाँ जो देखा ॥
केलि समै कौतर की रीसा । तत ख्रिन चलो लाइ भुइँ सीसा ॥
नाचत, मोर गींव सर जोवा । तबहीँ सीस पाइ घरि रोवा ॥
संख न सम भा साँझ सँकारा । तातें जहँ तहँ करे पुकारा ॥
तब ही छरन जान अपछरा । भूषन लाग न बाँधै छरा ॥
वोहीँ कंठ जानु जिन्ह दीठी । अमिरित चाहि न पूरै मीठी ॥

सोहत हाँस जराउ गर, बदन हेठ निकलंक ।
सर न मयंक सूर जनु, दुरत राहु के संक ॥

दीरघ बाहु कलाई लोनी । अति सुन्दर जग भई न होनी ॥
दुहुं पौनाल सोऊ सर नाहीं । तातें रंध कलेजे माहीं ॥
सुभ्र भुजन पर टाँड सोहाई । टाँड तहाँ छबि पाव सवाई ॥
देखि धुनहि गन गंध्रब माथा । एक सो इंद्र वज्र पुनि हाथा ॥
देखि सो मंजुलि सुभ्र कलाई । को न गयो बनफलै सिवाई ॥
वहि संग देखु जो जुरा हथोरी । कौंल पांखुरी ईंगुर बोरी ॥
विद्रुम वेलि सो अँगुरी दीसी । वह कठोर यह मुंगफली सी ॥

अँगुरिन मुँदरी जरित की, सोह छला प्रति पोर ।
अमीकरन नग आँखि जनु, गाँठि कनक कै जोर ॥

होत उतंग सिहन निरमरे । एक डारि दोइ नारँगि फरे ॥
कनक कटोरा दुइ गुन भरीं । संकर पूजि उलटि जनु धरीं ॥
झीने पट महँ झलकत दीसी । जनु भीतर द्वै कँवल कली सी ॥
मुकुताहल बिच सोभा कैसी । चकवा छवा विछुरि जनु बैसी ॥
होत उतंग दोऊ अति लोने । जनु द्वै बीर छत्रपति होने ॥
अबहीं छत्र सीस नहिं छाजू । छत्रिन जहां तहां कर साजू ॥
दान दुंद जोरी गुन भरी । दुई जनु डंका उलटि कै धरी ॥

गढ़पति हयपति दुरदपति, सुनि कुच कथा अकाथ।
होइ भिखारी सब चहहिं, जाइ पसारन हाथ॥

रोमावलि अबहीं उर छीनी। बरनि न सकै दिष्टि मति हीनी॥
संधि सुमेरु लही अहि पोवा। सीतल ठांव पाइ जनु सोवा॥
अमिरित अधर बास सुनि माती। उर जनु चढ़ी पपील क पाँती॥
द्वै नृप सोंव लागि रिस बाढ़ी। रतिपति आनि लीक जनु काढ़ी॥
सौंरत रोमावली सोहाई। हेवर जाइ दरलि सों खाई॥
पाहन हिए जोरि वहि दीसी। होइ लीक वह पाहन कीसी॥
नींद न परी जनम भरि जागा। जिन्ह नैनन्ह होइ रही सरागा॥

खैंची लीक हदीस की, विधिना हिएं विचार।
तिहुँपुर रोमावलि सरी, आन न दूजी नार॥

नाभि कुंड पुनि अति गहिराई। जब चित चढ़ै बूड़ि जिउ जाई॥
सिंधु भौंर जहं पानि फिरावा। तहं परि जनम निकास न पावा॥
बिगसत पंकज कली सोहाई। अजहूँ भौंर बास नहिं पाई॥
छीर सिंधु मथनी जब काढ़ी। नाभि भौंर आहो जहं ढाढी॥
नैंनूं ते कोमल सो ढाऊं। जीभ कठोर लेउं का नाऊं॥
रोमावलि सोभा तेहि पासा। नैनूं ते जनु बारि बिकासा॥
जासौं ग्यान हाथ मा हीना। जनमत धाइ नार किमि छीना॥

नारि पेट जेहि अंत नहि, बारिधि गहिर गँभीर।
नाभिकुंड मन जो परै, बहुरि न निकसे तीर॥

पातर पेट कहै का कोई। ज़नु बांधी ईंगुर की लोई॥
मनहु महाउर दूध सौ पागा। संतत रहै पीठि सौ लागा॥
छीर न पियै अतिहि सुकुवारा। कै तंबोल कै फूल अधारा॥
बिनु रस पान आन नहि खाई। सोऊ बिकल करै अधिकाई॥
तेहि तर त्रिबली अति सुख देई। गढ़ी बिघातै काम पसेई॥
सोभित तीनौ रेख सोहाई। तीन भुवन नहिं उपमा पाई॥
सिसुता जानि तरुनता मिली। तीनौं रेख खांचि कै चली॥

सिरजत भार नितंब के, मिलत न कीन्ह सँबंधि।
मनु कटि राखे बांधि के, त्रिवली बंधन वंधि॥

अति सुकुवारि लंक पुनि छीनी। दिष्टि न परै बारहु तब खीनी॥
देखत सकुचै देखनहारा। टूटि न परै दिष्टि कै भारा॥
काम कला दुइ सांचै भरी। सकत सोहाग जोरि जनु धरी॥
बिधिन तोरि जोरि पुनि लीन्हे। तातें नाउं निगम कटि कीन्हे॥
अपने थल भूखे केहरी। कोऊ कहै कटि तिन्ह की हरी॥

देखि लंक भृंगी कटि टूटी। भँवति फिरै जनु संपति लूटी ॥
तहँ सोहै किंकिनि कटि कसी। काछे जनु आहै उरबसी ॥
सोभित किंकिन निकट कटि, मान उपम जी आइ।
हंस पांति तजि मान सर, परवत बैठे जाइ ॥
सुभ्र नितंब नितंबनि केरे। गए हेराइ सोई जनु हेरे ॥
जनु संगम दुइ परबत अहहीं। एक बार के बांधे रहहीं ॥
तेहि पर कटि सोभित निरभरी। जनु सिंहिनि गिरि ऊपर धरी ॥
दुइ गिरि सम दोउ मगु जहं नाहीं। चित के चरन चढत बिछलाहीं ॥
मति नितंब बरनत झिझकाई। मति की दिष्टि न आगे जाई ॥
परगट सो कवि कीन्ह बखाना। गुपत सो अंतरजामी जाना ॥
जहां जात मन पिंडुरी कांपी। तहं की बात रहो सब झाँपी ॥
गुपत जो रचना बिधि रची, परगट नहिं होनिहार।
ग्यान तहां नहिं संचरै, जानै सिरजनिहार ॥
पुनि जंघा अति सुंदर साजी। जुगल जंघ तिहुं लोक बिराजी ॥
केरा खंभ कलभ कर हेरी। जंघ निकट वे दोऊ करेरी ॥
अति सुंदर सम तूल सुहाए। जनु बिधि अपने कर चिकनाए ॥
सुरति करत सुख संपति हरी। मन की दिष्टि थलकि तहँ परी ॥
गौन समै जनु चमकत चूरा। हंस गयंद गरब धरि चूरा ॥
सीस धुनै गज लज्जित भए। हंस मानसर बूड़न गए ॥
छवाछीन भूषन छबि हरी। पायल आइ पाय लै परी ॥
चकइ जराऊ जेहरी, जेहरि जिउ लै जाइ।
सुर नर हैं झाँझर भए, देखि सो झाँझरि पाइ ॥
चरन कँवल पर मन बलि गये। जेहि मगु चलै तहां रज भए ॥
मकु तेहि पंथ गौन पुन करई। भूलि पांव इन्ह नैनन धरई ॥
तरवा ऊधरेख सुभ वांची। सुरनर हिये लीक जनु खांची ॥
जेहि जेहि पंथ चरन तें चले। लेते हिये पांय तर मले ॥
रकत लाग रह पायन संगा। जानहिं लोग महाउर रंगा ॥
चलत चरन भुईं परै न देहीं। सुर नर मुनि नैनन पर लेहीं ॥
अनवट बिछिया अंगुरिन भरे। मैन सोनार रतन नग जरे ॥
जेहिं चित्र चित्रावलि चरन, चित्र किये बिधि आनि।
ते चषु मगु बाहर कियो, हियें सरोवर पानि ॥
वह चित्रावलि आहै सोई। तीन लोक बंदै सब कोई ॥
सुर पुर सबै ध्यान ओहि धरहीं। अहिपुर सबै सेब तेहि करहीं ॥
मृतुमंडल जो देखा हेरी। घर घर चलै बात तेहि केरी ॥
पंछी वहि लगि फिरहिं उदासा। जल के सुत ओहि नाउं पियासा ॥

परवत जपहिं मौन होइ नाऊं । आसन मारि बैठि एक ठाऊं ।
पुहुमी दहु जो सरग लहु बढी । सेवा करतहिं एक पग ठाढ़ी ॥
जानि बूझिल जो ताहि बिसारा । सो मनु जियतहि मरा अडार ॥
अति सुरूप चित्रावली , रवि ससि सर न करेइ ।
धन सो पुरुष औ धन हिया , ओहि कै पंथ जिउ देई ॥
भए सुनत चित्रावलि बरना । कुंअर नैन परबत के झरना ॥
गयो चेत चित रह्यो न ग्याना । जनु एहि सागर लच्छ हेराना ॥
माथें चढी लहर जनु आई । बिसम्हरि परा पुहुमि मुरझाई ॥
गहि जोगी पुनि कुंअर उठावा । खेह झारि सन्मुख बैठावा ॥
कहेसि कुंअर कस भए अचेता । बैठु सम्हारि हिये करु चेता ॥
एकौ बात कहै नहि पूछी । जनु गा जीउ देह भर छूछी ॥
मूंदे नैन सांस पुनि लेई । सुनै न कछू उतर नहिं देई ॥
प्रेम मंत्र जोगी कहै , कुंअर स्रवन महं तव्व ।
सुनत नाउ चित्रावली , निजन गयौ विष सब्ब ॥
जबहि कुंअर जागा पुनि सोई । गहिसि पाउ जोगी कर रोई ॥
सो तुम रूप बखाना देवा । भइ मनसा होइ उड़उं परेवा ॥
पुनि मन मंह अस होइ गियाना । जाउं कहां जो पंथ न जाना ॥
कहु सो केहि दिसि नगर अनूपा । जहां बसै वह नारि सुरूपा ॥
चलौं न करौं बिलँब एक घरी । निहफल जाइ घरी जो टरी ॥
और न मोरे हियें विचारा । सीस मोर औ चरन तुम्हारा ॥
किंचित रैनि जाइ तहं ताई । चरन लाइ लै चलहु गोसाई ॥
लोचन रहै चकोर होइ , हिया सकल उनमाद ।
मकु ससि मुख चित्रावली , देखौं तुव परसाद ॥
कहेसि कुँअर यह पंथ दुहेला । अस जनि जानु हंसी औ खेला ॥
अगम पहार विषम गढ घाटी । पंखि न जाइ चढै नहिं चाँटी ॥
खोह घराट जाइ नहिं लांघी । देखि पतार काँपि नर जांघी ॥
जाइ सोई जो जिउ पर तेजा । सार पांसुली लोह करेजा ॥
तैं अबहीं घट आप न बूझा । बार देखि पिछवार न सूझा ॥
बैठे देइ न संघ पिछवारे । मूंसहिं तसकर घर अंधियारे ॥
तैं दै बार रहा गहि कुंजी । रही न एकौ घर महं पूंजी ॥
निसिबासर सोवहि परा , जागेसि नहिं पल आध ।
घर न संभारसि आपना , का लेबे एहि साध ॥
एहि पगु केर करै जो साधा । चलत निचिंत न होइ पल आधा ॥
चाहै चरन चुभै जो कांटा । चलै बराइ मारग नहिं छांटा ॥
जो पल एक कोऊ विलंमावै । साथ जाइ पुनि पंथ न पावै ॥

एहि मगु मांह चारि पुनि देसा। जस जस देस करै तस भेसा ॥
चारिहुँ देस नगर है चारी। पंथ जाइ तेहि नगर मँझारी ॥
चारिहु नगर चारि पुनि कोटा। रहहिं छिपे एक एक के ओटा ॥
जो कोऊ जान न चार बिचारा। बीचहिं मार लेहिं बटमारा ॥
चारि देस बिच पंथ सों, अब सुनु राजकुमार।
बेगर बेगर बरन गुन, जस कछु तहं व्यवहार ॥
प्रथम भोगपुर नग्र सोहाया। भोग बिलास पाउ जहं काया ॥
दुइ दुआर कर कोट संवारा। आवागमन यही दुइ बारा ॥
पुनि दूनहुं दिसि अपुरुब हाटा। अनबन भांति पटन सब पाटा ॥
जो बछु चाहिय सबै बिकाई। मिरतक देखि जीभ ललचाई ॥
कहूं पंच अमिरित जेवनारा। कहूं सुगंधि करै महकारा ॥
कहूं नाच कहुं कथा अनूपा। कहुं मिरदुल अति ससिहर रूपा ॥
इंद्रपुरी जनु चहुं दिसि छाई। जो आवां सो रहा लुभाई ॥
घर घर मोहन जानहीं, पंथहिं बस कै लेहिं ॥
माया रूप देखाइ कै, आगे चलै न देहिं ॥
बसै सोई ओहि नगर मँझारी। लेखा जानि होइ बेपारी ॥
सूघें मारग आवैं जाई। मांटी लेखैं विषै पराई ॥
सौं देखै जेहि दोष न पावा। सुनै सोई जो पँडित सुनावा ॥
मिलि कै पांच देहिं जेउनारी। भुगतै ताहि सोइ बैपारी ॥
आपन अंस मांगि कै लेई। राज अंस बिनु मांगे देई ॥
पांच जूनि कै राज जो हारू। करत रहै जस जग व्यवहारू ॥
धरै छोह चित नेह सौं, रिंस की ठौर रिसाइ।
ऐसी चलन चलावहि, तेहि भल पांच कहाइ ॥
पंथी जेंहि आगे है जाना। सो व्यवहार कहौं करु आना ॥
अंध होइ तस मूंदै नैना। बहिर होइ तस सुनै न बैना ॥
रसना मौन होइ नहिं भाषा। षट रस अमी न पावै चाषा ॥
मूंदै नास सांस नहिं आवै। काम क्रोध कै छार जरावै ॥
दुष्ट के हनत न पाछे टरई। पगु जो उठाइ आगु मन धरई ॥
बिलँब न लावै मन जग मंदा। निसरै तोरि मौन जिमि फंदा ॥
पंथी जो ओहि बार लहु जाई। आपु केवार उघारि कै जाई ॥
चित रहसत पट ऊघरत, मिटै नैन अंधियार।
जैसे बीतै स्याम निसि, होइ बिमल मिनुसार ॥
आगे गोरखपुर भल देसू। निबहै सोई जो गोरख भेसू ॥
जंह तंह मढी गुफा बहु अहहीं। जोगी जती सनासी रहहीं ॥
चारिहु ओर जाप नित होई। चरचा आन करै नहिं कोई ॥

कोउ दुहुँ दिसि डोलै बिकरारा। कोऊ बैठि रह आसन मारा ॥
काहू पंचअगिन तप सारा। कोऊ लटकइ रूखन डारा ॥
कोऊ बैठि धूम तन डाढे। कोऊ बिपरीत रहै होइ ठाढे ॥
फल उठि खाहिं पियहिं चलि पानी। जांचहि एक बिधाता दानी ॥
परम सबद गुरु देइ तंह, जेहि चेला सिर भाग।
नित जेहिं ड्योढ़ीं लावई, रहै सो ड्योढ़ी लाग ॥
ताहि देस बिच आहि सो पंथा। चलै सोई जो पहिरै कंथा ॥
तेल नाहिं सिर जटा बरावै। रजक नासि जे बसन रंगावै ॥
भसम देह पग पांवरि होई। एहि मग बिकट चलै पै सोई ॥
मेखलि सिंगी चक्र अधारी। जो गौटा रुद्राष घँधारी ॥
भल मँद बसैं तहां इक भेसा। होइ बिचार न राँक नरेसा ॥
एही भेष सिद्ध बहु अहहीं। एही भेष बहुत ठग रहहीं ॥
एही भेष सों बहु ठग आए। एही भेष सों बहुत ठगाए ॥
जो भूले एहिं भेष जग, खुले न तेहि हिय आछ।
आगे चलैं न तंह रहैं, बरु फिरि आवैं पाछ ॥
जो कोउ आगे चाहै चला। परगट देह भेष सो भला ॥
पै अंतर सब जानै धंधा। भेष पत्याइ सोई जग अंधा ॥
घटही मांहि भेष सो लेखै। हिय के लोचन मारग देखै ॥
काया कंथा ध्यान अधारी। सींगी सबद जगत धंधारी ॥
लोचन चक्र सुमिरनी सांसा। माया जारि भस्म कै नासा ॥
हिय जो गोट मनसा पांवरी। प्रेम बार लै फिरि भावरी ॥
परगट भेष तहां दइ डारै। आगे चलै सो पंवरि उघारै ॥
रहहि नैन जो जोति बिनु, खीपक पहिल मिलानु।
पुनि ससिहर सम दूसरे, होहिं तीसरे भानु ॥
आगे नेह नगर भल देसू। रांक होइ जंह जाइ नरेसू ॥
भूलै देखि देस की सोभा। जंह वंह देखतही चित लोभा ॥
जाइ तहंहि जंह कोइ लै जाई। ऊंच खाल सम एक देखाई ॥
खाइ सोई जो कोई खियावै। विष अमिरित एक स्वाद जनावै ॥
भल औ मंद दोऊ एक लेखा। दुइ न जान सब एक कै देखा ॥
मारि मारि जिय राख न कोऊ। रहस न होउ किए कछु छोऊ ॥
उतर न देइ जो कोउ कछु कहा। ऐसें रहै तहां सो रहा ॥
पंथ नाहिं पुनि पंथ सो, ताहि देस निज पंथ ॥
बिनु गुरु कोऊ न जानई, औ पुनि पढ़ै गरंथ ॥
आगे पंथ चलै पै सोई। जाके संग कछु भार न होई ॥
डारै कंथा चक्र धँधारी। करै मया जिय काया सारी ॥

ऐसन जिय जेहि लोभ न होई। रूपनगर मगु देखै सोई॥
हेरत तहां पंथ नहिं पावा। हेरन चहै जो आपु हेरावा॥
पथिक तहां जो जाइ भुलाना। बिमल पंथ तेहीं पहिचाना॥
आवहिं रूपनगर के लोगा। परखत फिरहिं कौन तेहि जोगा॥
जो तेहि जोग लखंहि जिय मांही। आगें होइ नगर लै जाहीं॥
रूप भेष उतहिँक सजहिं, औ सिखवहिं सब भाव।
ऐस न जानहिं तेहि कोऊ, आन कहूँ ते आव॥
रूप नगर अति आह सोहावा; जेहि सिर भाग सो देखै पावा॥
अतिहिं डेरावन अतिहि सो ऊँचा। कोटि मांह कोउ एक पहूँचा॥
बहुतक कीन्ह जोगि कर भेसा। चले छांडि घर मन ओहि देसा॥
तैं सुखिया सुख कौतुक राता। का जानसि दुख पंथ कि बाता॥
भोजन बिनु मुख जाइ सुखाई। पानी बाजु कँवल कुम्हिलाई॥
छीन बसन जेहि अँग न सोहाई। कंथा कैसे सकै उढाई॥
सौरि मांह जिन बनउर टोवा। कुस साथरी सो कैसें सोवा॥
बसन अपूरब पहिरि तन, लावहु मोद सुबास।
अहहिं नारि अछरी सरस, मानहु भोग बिलास॥

——

अजगर खंड

कुंअर अँधेरें हा जहं परा। बिधिना कहं बिनवै भाखरा ॥
ए गुसाइं जगरच्छ बिधाता। तोहि बिनु और न दुख संघाता
अह निसि जगत कीन्ह सब तोरा। तैं सिरजा अंधियार अँजोरा ॥
तहीं सरग ससि सूर बनावा। तहीं कीन्ह दधि अंत न पावा ॥
तहीं सकल गिरि मेरु सँवारा। तैं सब कीन्ह नदी औ नारा ॥
तुहीं पताल कीन्ह बलि बासू। तैं पति और सबै तोर दासू ॥
तुहीं सोई जो सब जग पूजा। सुमिरौं काहि और नहिं दूजा ॥

तैं सुख दायक दुहूं जग, दुख भंजन जेहि नाउं।
तहीं बिछोवसि दुइ मिलै, तहीं करसि एक ठाउं ॥

मैं जबहीं जिय सौंरा तोहीं। तहीं मया करि काढ़े मोंही ॥
कूप मांहि जे सुमिरन साजा। काढ़ि किये तै देस के राजा ॥
प्रेम बिछोह अंध जेहि कीन्हे। बहुरि मिलाइ जोति तेहि दीन्हे ॥
अगिन जरत जे तहीं सँभारा। किये ताहि फुलवारि अँगारा ॥
मैं अब परा आइ तेहि ठाऊं। अपनी सकति निकास न पाऊं ॥
मकु तैं होइ दयाल बिधाता। तोरे निकट कहां यह बाता ॥
मैं जस हा तस कीन्ह गोसाईं। अब तू कर जस चाहसि साईं ॥

हेरु गोसाईं आप कहं, मोरे कां जनि हेरु।
आपन नाउं दयाल गुनि, हो दयाल एहि बेरु ॥

जहां कुंअर चित सुमिरन ठाना। अजगर आइ एक नियराना ॥
ओदर खोह जाहि नहि अंतू। लीलै हस्ति और को जंतू ॥
सिखर डांग तस आवै चला। बन बीहर सब कां दलमला ॥
औ तहं पाइस मानुष बासा। खोह लाइ मुख ऊंचिस सांसा ॥
पाहन रूख डार भरमना। सांस संग पुनि कुंअर समाना ॥
गयो कुंअरे पुनि साँसहि लाग। उठी खात ओहि ओदर आगी ॥
परयो उलटि भा उदर दुहेला। डारिसि उगिलि जेत हुत लीला ॥

भागा अजगर जीउ लै, परा कुंअर बिसँभार।
जे तापे बिरहा अगिन, तेहिं को निजवै पार ॥

कुंअर संभारि बैठु पुनि तहां। नैन न जोति जाइ उठि कहां ॥
टोइ टोइ तहं ठांव संवारा। टारे पाहन औ द्रुम डारा ॥
बनमानुष एक तेहि बन अहा। कुंअर चरित सब देखत रहा ॥
कहेसि जाहि विधि चहै न मारा। अस अहि ओदरहु ते निसारा ॥

जौ जम सों बिधि जीउ उबारा। रहे न नैन जोति बिष झारा ॥
कौन जिअन जो नैन न जोती। सोत न लहै पानि बिनु मोती ॥
हाथ पाँव बर बुधि सब आही। एक बिनु नैन करै का काही ॥
मान न बातैं इमि करै, जौं लहु घट महँ पौन ॥
विधिना एतना राखु थिर, नैन बैन औ सैन ॥
बिधि तेहि हिये दया उपजाई। नियरे होइ पुनि देखेसि आई ॥
देखि रूप मन किहिसि बिचारी। यह सुरपुर हुत दिये अँडारी ॥
जग न होइ अस कोई मानवा। निहचै यह गन गंध्रव छवा ॥
अब पूछौं एहि की सब बाता। कौन जाति कस लीन्ह बिधाता ॥
केहि अभाग के दीन्ह सरापा। अस कारन दहु भौ केहि पापा ॥
कहेसि रे अंध विधाताद्रोही। कहु सो सत सत पूछौं तोही ॥
जो सतसंग साथ लष गोती। हियैं सत्त लोचन सिर जोती ॥
सती मरै जो सत चढ़ै, सत्त सहस दस आउ।
तन मन धन बरु जीउ किन, जाउ सत्त जनि जाउ ॥
सत्य सपत दै पूछौं तोका। का तोर जाति जन्म केहि लोका ॥
का तोर सरग देव औतारा। इंद्र सराप लहे महि डारा ॥
कै रे जनम बल बासुकि देसा। कै तपि मही आइ परवेसा ॥
केहि गुन एकति इहां तैं आवा। मानुष इहां न आवै पावा ॥
जो मानुष तौ गुन कहु मोहीं। जेहि तें साँप न निजवै तोहीं ॥
कै तैं जनम अंध चखु पाए। कै अबहीं भौ अहि के खाए ॥
देखौं सब मानुष कै भावा। कहु सत इहां कौन लै आवा ॥
देखत लोना रूप तोर, छोह उठै जिय मोहिं।
कहेसि सत्त सत पूछौं, सपथ सिंभु दै तोहिं ॥

हस्ती खंड

बीते चलत पाख दुइ चारी। परा दिष्टि एक कुंजर भारी।।
ऊँच सीस जनु मेरु देखावा। सूँड़ जानु अजगर लरकावा।।
तरुवर जनु चबाइ दुइ दाँता। डारत आउ खेह मदमाता।।
धावत जाइ पुहुमि जनु धँसी। आवै पीठ सरग सों खसी।।
भागहिं और हस्ति मद बासा। कुँअर देखि जिय भयो तरासा।।
कहेसि मीचु अब पहुँची आई। एहि आगे कहँ जाब पराई।।
अस्त्र नाहिं जो सम्मुख धाऊँ। मारौं एहि जैपत्र जौ पाऊँ।।
जनम अकारथ जगत भा, गई अमिरथा आउ।
चित्रावलि के दरस कर, रहा हिएँ पछताउ।।
अस्त्र न जो सनमुख होइ लरौं। जो निजु मरन भागि का मरौं।।
कुंजर धाइ कुँअर पर परा। रहा ठाढ़ ही नेक न डरा।।
धाइ लपेटि सूँड़ सों लीन्हा। चाहेसि मूड़ डाढ़ तर दीन्हा।
कुँअर हिए बिधि सँवरा तहां। जो बिधि केर मीचु तेहि कहां।।
ततखन राजपंछि एक आवा। परबत डोल जो डैन डोलावा।।
ओहि हस्ती पर टूटा आई। गहि ले उड़ा सरग कहँ जाई।।
सूँड़ समेटि जो कुंजर रहा। कुँअर न छूट डरन्ह सुधि गहा।।
उड़ा जाय अंतरिख महँ, दीखै जैस पहार।।
घरी चार मँह लै गयो, सात सुमुंदर पार।।
बारिध तीर जहां हुत रेतू। परा तहां छुटि कुँअर अचेतू।।
भरि गये सीस देह सब खेहा। जेहि तन नेहां गति देहि एहा।।
जेहि के हिए बस प्रान पियारा। संतत देह चढ़ावै छारा।।
जिमि जिमि छार देह पर चढ़ा। तिमि तिमि रूप मुकुर जिमि बढ़ा।।
छार चढ़ावैं बहु गुनि जोगी। छार मरम का जानै भोगी।।
मानुस देह छार हुत कीन्हा। छार बुद्धि जिन छार न चीन्हा।।
कवन जनम केहि तप करतारा। मूँठी छार अमित बिस्तारा।।
देखि बड़ाई छार की, बसेउ आइ करतार।
छारहि ते कीन्हेसि सबै, अन्त कीन्ह पुनि छार।।
पहर एक गहि उठा जो चेती। देखा परा समुँद की रेती।।
ना सो हस्ति जेहि के बस अहा। ना सो पंछि जो कुँजर गहा।।
सौंरिस हिए विधाता सोई। जेहि के करत खेल सब होई।।
ऐ गुसाइं तै दुहुँ जुग राजा। ए सब चरित तोहि पै छाजा।।

जियतेहि मारि मिलावसि छारा। चहसि तो देखि फेरि औतारा ॥
गिरि परवत कै पानि बहावसि। पानिहि साजि सुमेरु देखावसि ॥
छत्रिन अछत राँक सम करई। चहइ तु छत्र राँक सिर धरई ॥
भंजन गढन समस्त तू, और न दूजा कोई।
तही अहा अरु है तही, औ पुनि आगे होइ ॥
कुँअर सँवरि चित्रावलि नेहा। उठि के चला झारि तन खेहा ॥
गिरि परवत औ कानन घना। प्रेम प्रसाद न लेखे घना ॥
निडर जाहि तेहि बनखँड मांहीं। जम सौं बाच मीच अब नाहीं ॥
बीता चलत मास एक सारा। बन ओरान औ भा उजियारा ॥
रहसा सिये देस जब पावा। दिष्टि परा एक नगर सोहावा ॥
कहेसि जाउं अब नगर मँझारी। मकु मिलि जाय कोऊ बैपारी ॥
पूंछि लेहुँ तेहि नगर की बाटा। चित बिकान है जेहि की हाटा ॥
देखेसि पुनि फुलवारि एक, फूले फूल अमोल।
अलि गुंजारहि जहाँ तहँ, करहिँ मजोर कलोल ॥
देखि अपूरब ठाउँ सोहाई। कुँअर तहां छिनु बैठेउ जाई ॥
संपति कुसुम देखि चित लावा। लोचन जरे निहारि सिरावा ॥
जूही फूल दिष्टि भरि हेरा। लखै भाव चित्रावलि केरा ॥
देखि गुलाल अधर चित चढ़ा। दारिम दसन रहसि हिय बढ़ा ॥
चंपक माँहि सरीर की शोभा। नारँगि लखि उरोज मन लोभा ॥
अली माल फूलन पर हेरी। होइ सुरति अलकावलि केरी ॥
गीव मजोरि देखि मन आवा। लोचन खंजन आइ देखावा ॥
जाहि होइ चित की लगनि, मूरख सों सो दूरि।
जान सुजान चहूं दिसि, वोहि रहा भरि पूरि ॥

चित्रावली बिरह खंड

चित्रावलि चित भएउ उदासा। पिउ न गए दै अवधि की आसा ॥
बिरह समुँद अति अगम अपारा। बाज अधार बूड़ मँझ धारा ॥
चहुँ दिसि हेरहुँ हित कोउ नाहीं। बूड़त काह उँचावै बाहीं ॥
निसि दिन बरै अगिन की ज्वाला। दुरगा मँदिल भयो है बाला ॥
बुझै न लूम सगर लहु बाढ़ा। पंथी गयो लाइ हिय डाढ़ा ॥
जोगी सुरति रहै चखु माहीं। ज्यों जल महँ दीपक परछाहीं ॥
झलझल जोति होइ उजियारा। पानी पौन बुझाव न पारा ॥

बिरह अगिन उर महँ बरै, एहि तन जानै सोइ।
सुलगै काठ विलूत ज्यों, धुआँ न परगट होइ ॥

एक दिन कहिसि कि ऐ रँगमाती। करिया भयो रूप रँगराती ॥
रूप रंग सब लै गा जोगी। लोग कुटुँब जानै यह रोगी ॥
जोगी गयो छाड़ि तजि माया। भोर कि धुई भई मम काया ॥
जोगी करत कहा दहुँ फेरी। आसन परी छार की ढेरी ॥
बिरह पवन जो करै झँकोरा। बिथुरे छार न कोऊ बटोरा ॥
जोबन गज अपसर मद कीन्हें। अब न रहै अँधियारी दीन्हें ॥
निसि बासर तन कानन गाहा। जाकी साल हिये तेहि चाहा ॥

जोबन सखी मतंग गज, तौ लहुँ लाग गुहार।
जौलहुँ अपसर होइ कै, सीस न डारेसि छार ॥

सुनि रँगमती कहा सुनु बारी। जोबन मैगल मद दिन चारी ॥
अपसर होइ देइ नहिं कोई। जौ तिय आपु महाउत होई ॥
अंकुस सकुच गहै कर नारी। दै आँखिन्ह घूँघुट अँधियारी ॥
औ कुलकानि महादिढ़ अंदू। निसि दिन राखै मेलि के फंदू ॥
जौ हठि कै अरि पाँव निकारा। हटक बुद्धि चरचा गड़दारा ॥
एह संसार रीति अस अहई। जो जेहि लाग दुःख जिय सहई ॥
जो तजि ठाउँ सकै नहिं जाई। आपुहिं तहाँ मिले सो जाई ॥

आजु बदन तोर कौंल सम, औरै रंग सुभाउ।
सब तन लागै मधुप पुनि, मकु कोउ चाह सुनाउ ॥

एहि महँ सखी एक हितकारी। आई हँसति भई रतनारी ॥
कहिसि कुँअरि सुनु बचन सुहाये। गये बिदेस नपुंसक आये ॥
बदन अरुन हिय हुलसत अहहीं। जानहुँ बचन कछुक सुभ कहहीं ॥
सुनतहिं चलि धाई बरनारी। गिरी रही पै सखिन्ह सँभारी ॥

जोगी आइ मनावत नाथा । दरस पाइ भुइं लायउ माथा ॥
कहिन कि हम पुहमी सब धाए । चित्र सरूप चीन्हि अब आए ॥
सुनि रहसी चित्रावलि हीया । चित्रहिं जानु फेरि रंग दीया ॥

हिय हुलास बिहंसे अधर, औ कपोल रँग होइ ।
पुनि उपजै उर धक धकी, होइ न औरै कोइ ॥

पूछिसि कौन रूप सो देखा । केहि दिन कौन भाँति केहि लेखा ॥
जोगिनि रहसि रहसि जस जानी । आदि अन्त लहुँ कथा बखानी ॥
सुनि चित्रावलि हिय संतोखा । निहचै जानि गयो जिय धोखा ॥
कहिसि कि हौं तुम्ह ऊपर वारी । मोरै दुख बहु भए दुखारी ॥
अब सुख करहु बैठि एहि ठाऊँ । करिहौं सेव जगत जब ताईं ॥
मैं सब इच्छ तुम्हार पुराई । तुम जग इच्छा पुरवहु जाई ॥
सेवक सेव तजौ जिन कोई । सेवा ठाकुर आपन होई ॥

मान सेव सोइ कीजिये, जासों पति पहिचानु ।
ठाकुर आपन जो भयो, सब जग आपन जानु ॥

कौंलावती गवन खंड

देखि कटक जिमि बादल छाहां । परी हूल सागर गढ़ माहां ।।
यह अब को जस सोहिल राऊ । कटक साजि भुइँ चापे आऊ ।।
वह हुत कौंलावति अनुरागी । एह अब दहुँ आवै केहि लागी ।।
औ कहँ हुत सुजान संघारा । अब कहँ पाउब तस बरिआरा ।।
सागर मन पुनि चिंता भई । साहस बाँधि मीचु पुनि भई ।।
जहँ तहँ सजग बीर हित बासे । सूर बदन जनु कोल बिगासे ।।
एहि महँ हंस पहूँचा आई । कहिसि करहु अब अनँद बधाई ।।

जो जोगी सोहिल हना, औ राखा तुम प्रान ।
आयो बहुरि नरेस होइ, चलहु करहु सनमान ।।

हंस बचन जब सागर सुना । भा जिअ सोच हिआ महँ गुना ।।
अब लहु कौंल आस जल अहा । अब जो राखिय कारन कहा ।।
लोग कुटुम मिलि कै मत ठाना । कौंल न काज आउ बिनु भाना ।।
जस बर कै ओहि दीन्ह बिआही । अब बर कै पुनि सौंपहु ताही ।।
दुहिता केर कठिन है भारा । तबहीं पति जो जाइ ससुरारा ।।
जनम पिता माता घर लेई । दुख सुख माथे बिधि लिखि देई ।।
यह बिचारि कै डाँडी फाँदी । गौन जान कौंलावति साँदी ।।

समदी गंगा गोद गहि, औ कुमुदिनि कँठ लाइ ।
पुनि समदेउ परिवार सब, लोगन आँगन आइ ।।

कौंलावति चढ़ि चली बिमाना । जेहि अँबराउ सुरेस सुजाना ।।
सागर साजि कटक पुनि चला । कौंल गौन दुख जग कलमला ।।
औ जहँ लहु हुत दायज दीन्हा । सो सब लाइ पुरोहित लीन्हा ।।
सागर आइ सुजानहिं भेंटा । मुख देखत सब दुख गा मेंटा ।।
कंठ लाय हिय सीतल कीन्हा । भुजा जोरि अँकवारी दीन्हा ।।
औ जहँ लहु पर आपन अहै । छुइ छुइ पाँउ दूरि तकि रहै ।।
सागर तब बिनती औधारी । कस घर तजि के उतरेउ बारी ।।

जो राखहु नीरज चरन, सोभ पाउ हम माथ ।
चलउ आर घर जानि कै, कीजै हमहिँ सनाथ ।।

तब सुजान बोला सुनु राऊ । एहि मारग हम लोग बटाऊ ।।
पथिक पंथ जौ छाड़ै कोई । भूलै अंत महा दुख होई ।।
सूध पंथ तजि उत्तर केरा । कौल बचा आएउं एहि फेरा ।।
कौंलावति कर बिदा करीजै । अगुआ एक संग पुनि दीजै ।।

तुम परसाद जाउं अब देसा। मकु भेटउं के जियत नरेसा ।।
राय कहा कछु आहि न खाँगा। को राखै जो आपन माँगा ।।
सूख पंथ बहु दुख जग जाना। पानी पानी बहुत मिलाना ।।
अज्ञा देहु तो जाइ घर, साजों बोहित साज।
लीजै सभै लदाय जो, आउ तुम्हारे काज ।।
कुँअर गहे सागर के चरना। कहिसि वेगि कीजै जो करना ।।
सागर राउ पलटि घर आवा। चित्रावलि पहँ कुँअर सिधावा ।।
कहिसि कि सुंदरि प्रान पियारी। तोहि बिनु प्रान होइ घट भारी ।।
एही नगर जहवां हौं कहा। पाँच मास पग साँकर रहा ।।
एही नगर हम कहँ दुख बीता। इहां हौं कि सोहिल रन जीता ।।
मों कहँ तुम्ह बिनु आन न भावा। वै मोंहिं बिरह बहुत दुख पावा ।।
ओहि के दूसर आन नहिं, मोहिं बिनु एहि संसार।
तजि आपन घर बार सब, आई कै अभिसार ।।
अब लहुँ रही इहां ओडेरी। आजु अवधि पूजी ओहि केरी ।।
जो जेहि कारन तन मन जरई। सो पुनि ताकर चिंता करई ।।
सौति जानि जनि होहु दुखारी। वह तुम्हारि जस आज्ञाकारी ।।
सुनि चित्रावलि हिए सँताई। नैन दुराइ कहिसि बिलखाई ।।
तुम साईं अपने सुख राजा। तिरियहि नाउं सौति सिर गाजा ।।
जो बिधि ससी करावत देई। सहै न तौ अब काह करेई ।।
निसि आयो तहँ कुँअर सुजाना। कौंला जहां कीन्ह अस्थाना ।।
कंत बचा परतीति पर, सोरह साजि सिँगार।
बासक-सेजा होइ रही, लाइ नैन दुइ बार ।।
पदुम कोस अलि लीन्ह बसेरा। हिये सोच भइ मालति केरा।
नीरज लोयन रूप अतिसाए। दिन कर देखि नीर भरि आए ।।
बिहँसि कंत कामिनि कँठ लाई। बिरह दगधि उर लाइ बुझाई ।।
मनमथ दाब जाँघ पुनि काँपी। रावन बार लंक गहि चाँपी ।।
दीन्हीं चार नखच्छत छाती। फूट सिँधोर सेज भइ राती ।।
होइगा अंग भंग नव साता। अति परसेद सिथल भइ गाता ।।
भयो प्रभात गयो उठि साईं। कौंल पास कुईं चलि आई ।।
हँसि हँसि पूछहिं रैनिसुख, रहसि करहिं परिहास।
लाजन गोवै कौंल मुख, सखियन अधर बिगास ।।
चित्रावलि कहँ बिनु ससि साईं। गई रैनि सब गनत तराई ।।
सौति संग सालै जनु काँटा। अंग अंग लागै जनु चाँटा ।।
सुलगी उरध आगि सन सेजा। औटि होइ जल रकत करेजा ।।
करम करम कै सो निसि गई। पिअ देखत तिअ खंडित भई ।।

रही सोइ मिसि बदन छिपाई। नायक सकुचत आनि जगाई ॥
परी चौंकि लागै कर सीरा। दच्छिन नाहिँ नायका धीरा ॥
कहिसि अहिउँ सुद सपने माहीं। कहा जगाइ लीन्ह गहि बाहीं ॥
अहिउँ महा सुखसपन महँ, तुम कर लागे अंग।
गए नैन पट उघरि कै, भयो सकल सुख भंग ॥
जानहुँ तुम एक सुंदरि संगा। मानत अहै केलि रति रंगा ॥
मोहि देखि नौ सात बनाए। तजि सो नारि आनि कंठ लाए ॥
हिये लागि हिय मोर सिराना। पाएउं अधर अमिय कै पाना ॥
और सकल सुख कहे न जाहीं। उठै आगि संवरत मन माहीं ॥
भई दोहागिन बिकल सरीरा। जनु गिरि गयो हाथ ते हीरा ॥
वह रौवै परि सेज अकेली। हौं हँसि हंसि मानों रस केली ॥
मोरे छरै कुसुम जनु गाथा। वह लगि रहै हाथ सों माथा ॥
सेज अकेली रैन सब, सहेउ सकल उतपात।
चतुर नारि चित्रावली, रस काढै रस बात ॥

सिद्धसमागम खंड

भयो सोर सब नगर मँझारी। करहिं बखान सकल नर नारी ॥
सागर गाँव सिद्ध एक आवा। मुख देखत मन इच्छ पुरावा ॥
कुष्टी कया बाँझ सुत पावै। अँधहिं चखु दै जग देखरावै ॥
कहै चाह परदेसी केरी। बिछुरेहिं आनि मिलावै फेरी ॥
सुनि के धाए सब नर नारी। बार बूढ तरुनी औ बारी ॥
जेहि निहचै ते निधि लै आए। निहचै बिना बादि सब धाए ॥
निहचै नग जनि डारो कोई। निहचै सिद्धि परापति होई ॥

निहचै इच्छा सरग हुत, आनि मिटावै दुंद।
जैसे नैन चकोर कहं, अमी पियावै चंद ॥

सुना कुँअर पुनि सिद्ध बखाना। अकसमात चित रहस समाना ॥
कहिसि कि भाग जोर समुहाईं। तब अस सिद्ध मिलै कोउ आई ॥
करूं जाइ मन बच कै सेवा। मकु तो नहिं होइ जाइ परेवा ॥
चित्रावलि करि कुसल सुनावै। रूप नगर कर पंथ दिखावै ॥
चला कुँअर निहचै यक हाथा। सेवक पाँचन न छोड़हिं साथा ॥
महत गरब दोऊ तहँ त्यागे। मन बच कर्म तिनो सँग लागे ॥
सनमुख आइ दरस जब कीन्हा। वै ओकहं वै ओकहँ चीन्हाँ ॥

देखत दुहूं आनन्द भा, रहसत आगें आय ॥
परेउ परेवा कुँअर पग, कुँअर परेवा पाय ॥

कहै कुँअर सुनु हनिवँत बीरा। लागु कंठु ज्यों सीत समीरा ॥
कहु कुसलात बेगि सिय केरी। निसरत प्रान राखु घट फेरी ॥
हौं जिमि राम भयो बैरागी। नख सिख परी बिरह की आगी ॥
राम संग हुत लछिमन भाई। हौं अकेल दुख पुनि अधिकाई ॥
हनिवँत कहा सीय कुसलाता। राघव बदन सुनत भा राता ॥
औ पुनि बिथा कहिसि ओहि केरी। जेहि दिन ते तुम ओहि औडेरी ॥
तहँहीं दिवस देखि अकसरी। रावन बिरह नारि से हरी ॥

सीता रावन बस परी, करौ न कोटि उपाइ।
तौ लहुं नाहिं उधार निजु, जो लहुं राम न जाइ ॥

पुनि दीन्हेसि चित्रावलि पाती। खोलि कुँअर लाई लै छाती ॥
सुलगत काठ लागु जनु लूका। दुहूं आगि मिलि उठा भभूका ॥
हिया जरत जो लिहिसि उसासा। धूम बरन होइ गयो अकासा ॥
अमिरित बचन भरी हुत छाती। ता सों अगिन मुख बाँची पाती ॥

पाती पावस सलिता भई। दूनहुँ कँवल दुःख जल मई॥
आखर मगर गोह घरिआरा। अरथ भँवर परि कठिन निसारा॥
भँवर अनेक पैठि मन तरा। एक तें निकसि ऐक मँह परा॥
पाती जनु पावस नदी, मन तकि पार तराइ।
चित्रावलि दुख अगम जल, बूड़ि बूड़ि तहं जाइ॥
पाती पढ़ी समापति भई। बिरह झकोर कुँअर सुधि गई॥
हीवर जिमि ग्रीषम रवि जरा। जिउ जनु पात बवंडर परा॥
बर कै उठा चला लै चाहा। पाइ फिरा जैसे उतसाहा॥
पुनि जो चेत होइ देखा हेरी। पायन परी बचा की बेरी॥
कहिसि कहौं का दुःख बखानी। जनम सिराइ न कहत कहानी॥
हौ पंछी भूला हुत आवा। जाल मेलि एहि गाँव फँदावा॥
चार लोभ वैसेउं एहि आडा। अचक आइ खोंचा उर गड़ा॥
पाँखन लासा प्रेम का, बाचा बंधन पाइ।
दै दै मारौं मूंड़ बहु, निकस न केहु उपाइ॥
अब तोहि मिलें भयो संतोखा। आसा मिली गयो जिउ धोखा॥
करहु उपाइ गवन जेहि होई। मैं आपन बुधि मति सब खोई॥
चोरी चलै धरम की हानी। परगट चहुं दिसि रोकहिं रानी॥
सुनि कै बिथा परेवैं कहा। अब दुख सब बीता जित अहा॥
परगट जाइ सँवारहु कंथा। अंजन लाइ गुपत चलु पंथा॥
रहसि कुंअर मंदिर महँ आए। कौंलावति कहँ निअर बुलाए॥
कहेसि सुनहु अब राजदुलारी। हौं परदेसी आदि भिखारी॥
आउ न हमरे काज यह, राज पाट सुख भोग।
चित्रावलि हियरे बसी, जाकर बिरह बियोग॥
अब लहुं मिला न अगुआ कोई। जेहिं परचय ओहि दिस कै होई॥
अगुआ मिला चल्यों उठि संगा। तुम जनि करहु कौल मन भंगा॥
जौ बिधि आस पुरावै मोरी। तौ मैं चेत करब पुनि तोरी॥
सुनतहिं गवन धसकि उर गयऊ। कंचन अंग राग पुनि भयऊ॥
कहिसि कि ऐ जग जीवन सांई। मोर जिअन तुअ दरसन ताईं॥
जौ तुम होब विदेसी राजा। इहवां मोर कौन अब काजा॥
पाछें महा दुःख पुनि कीता। जहवाँ राम तहाँ पुनि सीता॥
जैसे पनहीं पांव की, तैसे तिया सुभाउ।
पुरुष पंथ चलु आपने, पनहीं तजै न पाउं॥
कहै सुजान सुनहु बर नारी। तुम सयानि औ बूझनिहारी॥
मेहरिहिं कहैं लोग सब देहरी। धरै अरसन अस्थिर सोइ मेहरी॥
औ पुनि घरनि कहै सब कोई। घरहिं सँभारै घरनी सोई॥

राघव जौ लाई सँग सीता। बिछुरें जनम दुःख सब बीता ॥
तुम कछु चित चिंता जनि करहू। जो हम कहा सोई चित धरहू ॥
इतना कहि कंथा गिवँ डारा। औ पुनि अंग चढ़ाएउ छारा ॥
लुकअंजन लै आँखिन दीन्हा। गा छिपाइ चटेक जनु कीन्हा ॥
कौंला देखि अचक रही, जनु ठग लाव देखाए।
पुनि लागें बिरहा धका, गिरी पुहुमि मुरछाए ॥
देखि सखी सब कीन्ह अंदोरा। गहि उठाइ बैठीं लै कोरा ॥
सुनि कौंलावति मंदिर कूका। परी अचल गंगा जिय हूका ॥
राजा पुनि बिसँभर होइ धावा। नंगे पाँव तहाँ चलि आवा ॥
देखि अवस्था धिय कर रोवा। दूनहुँ बदन नैन जल धोवा ॥
पूछहिं बिथा सुनावहिं ईठा। गुर गूँगा कर तीत न मीठा ॥
रानी पूंछि हारि जब रही। कौंल बिथा तब फूलन कही ॥
प्रति उत्तर जस दूनहुं बीता। औ सुजान चेटक पुनि कीता ॥
आदि अंत बहु सखिन सब, एक एक कीन्ह बखान।
सुनत आगि दुहुँ उर परी, औ ओहि पारा प्रान ॥
राजकुँअर कर सुनत बिछोहा। धाह मेलि पुनि राजा रोआ ॥
कौंलावति दुख दीरघ जानी। उमड़ि चली गंगा चखु पानी ॥
सखी सहेली पुनि सब रोईं। ससि अथई जानहुं सर कोईं ॥
पर आपन जन परिजन लोगा। सगरे नगर परा सुनि सोगा ॥
नर नारी जुबती औ जरा। सब के सीस गाज जनु परा ॥
मलि मलि हाथ कहैं सब कोई। अस परजापति आन न होई ॥
पहर एक बीता होइ रोरा। कोऊ साँच कोउ झूँठ नीहोरा ॥
छमा कराए सब जना, पंडितन्ह ज्ञान बुझाइ।
मारे बिरह बयारि के, कौंल रही कुम्हिलाइ ॥
जोगी खेल जो चेटक खेला। छाड़ि मँदिल होइ चला अकेला ॥
आवा बार जहाँ जग रोका। भार लागि पै काहु न टोका ॥
देखि भीर जिय कौतुक होई। सब संगी पै चीन्ह न कोई ॥
आदि पंथ सो आगे कीता। यह कौतुक जनु सपना बीता ॥
बेगिहिं आइ परेवहिं मिला। संगिहि देखि कौंल जनु मिला ॥
पंथ चले तजि सागर गाऊं। जपत चले चित्रावलि नाऊं ॥
सूध पंथ अगुवा लै आवा। बेगहिं रूपनगर निअरावा ॥
कहिसि कि एही ठाँव तुम, बैठि रहहु लौ लाइ।
हौ चित्रावलि निअर होइ, चाह सुनावौं जाइ ॥

परेवा बंधन खंड

चेरी एक अहित जो आही। ते छिपाइ हीरा सों कही ॥
एक दिन देखत अहेउं छिपानी। चित्रावलि निकसी कुम्हिलानी ॥
रोइ परेवा सों कछु कहा। पाती दीन्ह पाँव पुनि गहा ॥
गयो परेवा लै कहुँ चीठी। तेहि दिन सौं पुनि परा न डीठी ॥
पेम बाउ जो बाउर करही। सेवक पाय तबहि पति धरही ॥
देखा अहा कहा मैं सोई। अब तुम करौ वो करबै होई ॥
सुनि के हीरा हिएं सँकानी। धसकि गयो हिय अजुगुति जानी ॥

केहि अधरम केहि पाप विधि, हंस कोखि भा काग।
अपने जान न बिसतुरेउं, चित्र परेउ कहँ दाग ॥

पुनि मन कछु गियान उपराजा। जाँघ उघारें मरिये लाजा ॥
अधिक उदगरी काठी भूरी। राखौं आगि मेलि सिर धूरी ॥
बाट बाट सब लाई भूता। रोकहिं राह परेवा दूता ॥
आवइ कहुं पूछे बिनु नाहीं। आनि बाँधि राखहु बँद माँहीं ॥
जो जह तहाँ रोकि मगु रहा। आवत पंथ परेवा गहा ॥
बाँधि आनिके बंद मँह राखा। अचक रहा कछु आव न भाखा ॥
मन मँह कहिसि रहा पछतावा। कुंअर न आवन कहन न पावा ॥

वह पुनि रहिहं रैनि दिन, मारग लाएं आंखि।
वह परदेसी बापुरा, मरिहि अकेला झाँखि ॥

रहा सुजान नैन मगु लाई। का दहुं कहै परेवा आई ॥
सो पुनि अज्ञा काह करेई। कौन भाँति दरसन पुनि देई ॥
सगर दिवस एहि सोंच गँवावा। साँझ परी न परेवा आवा ॥
ज्यों ज्यों छिन छिन रैनि बिहाई। त्यों त्यों बिरह आगि अधिकाई ॥
लोयन दोऊ रहैं मगु लागे। आहट कह सरवन पुनि जागे ॥
सकल रैनि पुनि ऐसेहिं बीती। जानु कँवल जिय मानु कि पीती ॥
दिनकर उठत उठै हिय आगी। बिरह बयारि सरग गै लागी ॥

कहिसि कि प्रीतम हिया सिर, सूखि गयो जल नेह।
फाट न हिया तडाक जेउ, हंस चलेउ तजि देह ॥

जौ वै मो सौं निज मुख फेरा। तौ काया परान केहि केरा ॥
जीउ लेइ जो जम वरिआरा। छुटै प्रान यह दुःख अपारा ॥
जो अब मारौं होइ अपघाती। जगत नसाइ जनम औ जाती ॥
मैं बिरही मोहिं नाँच नचावा। अंत सो यह कौतुक देखरावा ॥

अब नाचौं किन परगट होई। ओहि कै पंथ लै मारौ कोई ॥
निसरा कुँअर डारि सिर छारा। चित्रावलि चितरवलि पुकारा ॥
कोऊ आहि अस पर उपकारी। आनि देखावै राजकुँआरी ॥
खनक देखाउ सरूप मुष, लिहिसि चोर जिय मोर।
यह राजा हत्यार बड़, घर मह राखै चोर ॥
सुनि कै लोग अचंभौ रहा। जोई सुना सोई मुख गहा ॥
बिरह उसास अगिन कर ज्वाला। लागत परै हाथ महँ छाला ॥
दूरहिं हटकि रहै सब कोई। कोउ मुख मूदै नियरे होई ॥
होइ गा सगरै नगर चबावा। रूपनगर एक बाउर आवा ॥
कहै सोई जो कहा न जाई। मरै लागि एह बुद्धि उपाई ॥
राजसभा सब काहू सुना। सुनतहि चित्रसेन सिर धुना ॥
बदन सुखान अंग दुति छाड़ी। लाजन सीस पुहुमि गा गाड़ी ॥
कहिसि कि जा कहं जिय डरत, संवरि सुहात न राज।
सोई आनि हम सिर परी, अचक कहूँ हुत गाज ॥

दलगंजन खंड

पुनि सँभारि कै बैसेउ राजा । कहिसि कि भल नाहीं यह काजा ॥
किन भिखारि पर कीन्ह अगासा । जिन अस बचन असुभ परगासा ॥
काढि जिभि जिय मारहु सोई । जो अस सुनै कहै नहिं कोई ॥
राजनीति एक मंत्री अहा । तिन उठि सीस नाइ के कहा ॥
यहि संसार वेद अनुमाना । बाउर बचन न कोऊ माना ॥
जाकर बचन नाहिं परतीता । ताके मारे होइ अनीता ॥
लाज लाग जो मारै कोई । अस मारे भल कहै न कोई ॥

गहि जो भिखारी मारई, दुइ घट यहि जग होइ ।
एक हत्या कांधे चढै, पुनि भल कहै न कोइ ॥

यह चरचा पुनि मंदिर भई । रानी सुनत सूखि जिय गई ॥
कहिसि कि मुई न ऐसन बारी । जे अपने कुल लाइसि गारी ॥
आपनि जानि बिसारेउ नाहीं । पौन न पाउ छुवै परछाहीं ॥
एहि क रूप कहँ काहु न तेखा । मिटी न सीस करम की रेखा ॥
कुमुद यह भेद परेवा जाना । पूछहुँ बोलि कहै अनुमाना ॥
बहुरि कहिसि यह पावक जरई । ज्यों ज्यों खुदी त्यों उदगरई ॥
बाहर नगर परा जन कूका । कहुँ घर लागि जाइ जनु लूका ॥

तब कुछ हाथ न आवई, होइ आन की आन ।
तातें बरजे सकल जन, परै न चित्रिनि कान

राजें मते महाउत लावा । पान दीन औ कहि समुझावा ॥
जहां कहूँ वह बाउर होई । अस जस दूसर जान न कोई ॥
अपसर गज दलगंजन नाऊ । छलि मकुलाइ देहि तेहि ठाऊं ॥
मकु गज धाइ हनै सो जीगी । बिनु औषधि जिय होइ निरोगी ॥
लै सो पान महाउत लावा । मूरी दइ गज अतिहि मतावा ॥
खोलि गयंद ओहि दिसु लावा । कोऊ न जानत गुप्त की कला ॥
जहं बाउर सिर डारत छारा । उतरि महाउत भयो निसीरा ॥

छूटि चला मैमंत गज, चहुँ दिसि परी पुकार ।
जग लै भाजो जीउ सब. कूटा जम बरिआर ॥

भा अँदोर मैगल मकुलाना । सुनि चारिहुँ दिसि पारा बसाना ॥
देखि देखि लोग हीय सब कूटा । भा अजुगुत दलगंजन छूटा ॥
एहि सों जिअत बँचा जो आजू । ताकर नवा जनम कर साजू ॥
आपु आपु कहं परजा रा । जहँइ सुना सोजू जिउ लै भाजा ॥

पूँतहिं बाप सँभारे नाहीं । कुटुम्ब लोग केहि लेखें माहीं ॥
जेहि संग अहा बटम हय हाथी । अकसर जाइ न कोई साथी ॥
जाकर अंग न छुअत समीरा । गहै आनि अनचीन्ह शरीरा ॥
जेहि तन लाग रैनि दिन, चोआ चन्दन सार ।
तिन्ह तन बन महं संग बिनु, निभरम लागै छार ॥
चले छांड़ि बनियां बैपारी । रही जहां तहां हाट पसारी ॥
छाड़ि चले जित मंदिर लोना । जहवां लाग रूप औ सोना ॥
छाड़ि तिया जासों रँग कीन्हा । चले जाँहि जानहुँ अनचीन्हा ॥
छाड़हिं अन घन घोर घोरसारा । छाड़हिं दरब झूठ संसारा ॥
छाड़हिं अगर कुमकुमा चोवा । छाड़हिं रतन जो माल परोवा ॥
छाड़हिं कस्तूरी घन सारा । अंत आइ तन लागी छारा ॥
सगरे जनम सैंति दुःख पावा । छिन एक मंह सब भयेउ परवा ॥
यहि विचार कै मान कवि, महापुरुष जग माहिं ।
तासों जोउ न लवहीं, अंत जो साथी नाहिं ॥
कुँवर देखि हस्ती मतवारा । मरन जानि जित कीन्ह बिचारा ॥
जा कह अंत मरन जित य माहीं । मीचु देखि सो भागै नाहीं ॥
मोंहि एहि मारग निजु जो मरना । भागि रहौं लै का की सरना ॥
बिनु साहस जो तजउं सरीरा । कोउ कहै यह छत्री बीरा ॥
बाजौं आजु भीम की नाई । मारों जो जय देइ गोसाईं ॥
मारौं तौ लोग कहै यहि देसा । छत्री कहा जोगि के भेसा ॥
पुनि चित्रावलि सुनि यह बाता । जूझि मुवा जोगी रँगराता ॥
बाँधि काछ दृढ होइ रहा, मन महँ मरन बिचारि ।
जेहि जिय डांड प्रेम कर, सब जग जीतनि हार ॥
आवत हस्ति चुवत मदगंधा । तोरत तरुवर धावत कंधा ॥
गज बाजी कहँ फरलो कोपा । अंगद पांव पुहुमि जस रोपा ॥
कुँअरहि देखि धाइ अस परा । बीर पँवार न पाछे टरा ॥
कंधा डारि गयंद झुकावा । आपु सजग होइ पाछू आवा ॥
गहि कै पूँछि गयंद घुमाइसि । येही भाँति घरी एक लाइसि ॥
जनु चकई गहि डोर फिराइसि । पुहुमि परा गज ताँवरि खाई ॥
मस्तक आइ मूँक तब मारा । सीस फोरि गजमोति निकारा ॥
पुहुमी परा गयंद ढहि, जानहुं परा पहार ।
देखि अचंभित जग भवो, चहुँदिस परी पुकार ॥
कहैं लोग यह को बरिआरा । जिन गयंद दलगंजन मारा ॥
वह राजा कर हस्ती सोई । जेहि ते बली आनि नहिं होई ॥
यह जोगी भल कीन्ह न काजा । परलै करहि आजु सुनि राजा ॥

राज दुआरे भई पुकारा। जोगि बली दलगंजन मारा॥
एहि जोगी कहं सिव परसना। नाहिं तो अस परबल को हना॥
मानुष अस बल करै न पारा। निज यह पुहुमि भौम औतारा॥
औरौ हस्ति सभारहु नाहीं। मति कहँ भटकी सिर कहँ जाहीं॥
सुनिकै राजा थकि रहा, रुधिर सूखि गा गात।
हियें थरथरी पै टडर, मुख नहिं आवै बात॥

सुजान बंधन खंड

पुनि सँभारि के बोला राजा। साजहु बेगि जूझि कर साजा ॥
हनुमत जस लंका हुत आवा। तस छलि कै यहि काहु पठावा ॥
काहु केर पठावन होई। जिअत न जाइ करहु अब सोई ॥
बाजन बार जूझि कर बाजा। जानहु सरग मेघ दल गाजा ॥
साजे हस्ती सिंघलदीपी। चीता माथ छीट जनु छीपी ॥
साजे तुरै समुंद जलगाहा। पखरै राउत पहिरि सिनाहा ॥
राजा सपरि भयो असवारा। चलै बीर चढ़ि तुरी तुखारा ॥
बाजे बाजन जूझि के, धुका दमामा भेरि।
छेंका जोगी कटक लै, मंडल चहुँ दिस फेर ॥
जुझि साज जौ कुअँरहि सूझा। कै बिचार अपने मन बूझा ॥
जाकर दोष करै जो कोई। का बसाइ जो मारै सोई ॥
मोहिं नहिं इहां जूझि सों काजा। मारौं लै पुहमीपति राजा ॥
एह गुन बैस्यो आसन मारी। जैसे निरगुन जोगि भिखारी ॥
सीस नाइ पुहमी तिन हेरा। कटक आउ सब करत करेरा ॥
मंत्री राज-बाग तब गही। सीस नाइ के बिनती कही ॥
जूझि केर जग अस बेवहारा। मारिय सोइ जो गहै हथियारा ॥
जोगी बाँधिय जिअत गहि, मारि न करी अनीत।
पूँछि भेद पुनि लीजिये, को बैरी को मीत ॥
घेरत घेरत आए राँधा। पाँच जने मिलि जोगी बाँधा ॥
अस कै ढील दीन्ह दुइ बाँहीं। जानहुँ एक रती बल नाहीं ॥
राजा सनमुख जोगी आना। देखि रूप सब कटक भुलाना ॥
पूछै को हसि कहं तें आवा। केहि कारन केहि केर पठावा ॥
कुँअर न बोल मौन मुख गहा। सीस नवाइ आँधि चखु रहा ॥
एहि अंतर एक चतुर चितेरा। सागर नगर कीन्ह जे फेरा ॥
कुँअर चित्रलिखि अति मतिमाना। सोहिल जूझि भेद पुनि जाना ॥
आइ पहूँचा राज ढिग, देखि नवाइसि माथ।
लान्हे चित्र अनेक जे, देस देस के नाथ ॥
वै कुँअरहिं देखा पहिचाना। कहिसि कि यह जस कुँअर सुजाना ॥
वह उहवां पुहुमी पति भारी। राज छाडि कत होत भिखारी ॥
पुनि वह अस कुकरम कत करई। जेहि कोइ बाँधि चोर कै धरई ॥
चित्र काढ़ि जो पटतर देखा। सोई कुँअर सुजान सरेखा ॥

कहिसि कि यह पुहुमीपति राजा। पुहुमी रहो सदा ओहि साजा ॥
यह पँवार छत्री बरिआरा। यही हाँकि रन सोहिल मारा ॥
यह पुहुमी पति देस क राजा। अचरज मोहिं देखि यह साजा ॥
कुँअर चित्र लैकर दिहिसि, कहिसि कि अचरज होय।
बाँधा सिंह सियार ज्यों, का कौतुक बिधि कीय ॥
इहाँ नरेस जूझि कहँ आवा। रानी उहाँ अँदोर बढ़ावा ॥
जे मारा दलगंजन सोई। तेहि के जूझि आजु कस होई ॥
हिये सोच करि हीरा रानी। पूँछौं बोलि परे वा ज्ञानी ॥
वह पंडित औ चतुर परेवा। आमग न चलै जानि पति सेवा ॥
जिन मारा दलगंजन हाथी। मकु वह होइ परेवा साथी ॥
खोलि मँगावा सीध परेवा। आइ देखाइसि कन्तहिं सेवा ॥
होइ अकसर लै मंत बईठी। कहिसि कहाँ लै गवनेहु चीठी ॥
बिनु पूँछे किछु ना कहै, तैं पंडित सहदेव।
को जन यह हस्ती हना, कछु जानसि यह भेव ॥
कहिसि कि सदा सोहागिनि रानी। तुम सयान पंडित औ ज्ञानी ॥
मैं यह सुफल सुआ सो खोजा। चीन्हहु होइ सो राजा भोजा ॥
जो कहँ भोर सदा सिर नाई। चहै मारि तो कहा बसाई ॥
कथा कहत लागिहि बड़ि बारा। उहाँ न होइ जाइ संघारा ॥
थोर कहौं जौ बिलँब न होई। सोहिल जिन मारा वह सोई ॥
धरनीधर नैपाल भुआरा। एह सुबंस औ बीर पँवारा ॥
चित्र माँह चित्रावलि जानी। भा जोगी सुनि रूप कहानी ॥
एहि सो रतन जेहि कीजिये, कुन्दन घालि जराउ।
जनि गहि डारहु समुँद महँ, नतु रहिहै पछताउ ॥
रानी कहा बेगि चलि जाहू। लगै न पाउ मयंकहि राऊ ॥
जाइ जनाउ नरेस रिसाना। जौ लहुँ छुटै पाव नहिं बाना ॥
दसरथ धोखे सरवन मारा। पाइ सराप भयो हत्यारा ॥
अज्ञा मिली परेवा धावा। निमखि माँह राजा पँह आवा ॥
देखिसि राजहिं रिसि मन नाहीं। हाथ चित्र चित चिंता माहीं ॥
औ पुनि कुँअर बाँधि कै आना। कीन्ही जल चखु जानि सुजाना ॥
आइ नवाइस पति कहँ माथा। कहिसि हे पुहुमीपति नाथा ॥
एह सोई जिन बैरी हना, सोहिल अस बारि आर।
जंबूदीप नरेस सोई, निरमल जाति पँवार ॥
एह जस विक्रम राजा भोजा। मैं चित्रावलि कहँ बर खोजा ॥
चित्रावलि कर रूप सुनाई। कै जोगी आनेउँ बौराई ॥
मैं राजा सों कहै न पावा। बीचहिं बैरी मोहिं बँधावा ॥

तौ एह कौतुक सब बिधि कीन्हा । रतन खेह महँ काहु न चीन्हा ॥
राजा हिय सुनि कुँअर बखाना । तजि चिंता चित रहस समाना ॥
जो जहँ चित्र मूँदि वै राखी । तब भा आनि परेवा साखी ॥
एह पंडित औ बिधि सो डरई । पंडित काज बूझि कै करई ॥

छोरे बंधन दुःख के, महाबीर पहिचानि ।
राजा उतरि तुखार सों, अंक मिलायो आनि ॥

ततखन तहां कुँअर अन्हवावा । राज साज सब आनि पन्हावा ॥
औ पुनि लीन्ह चढ़ाइ अँबारी । दूलह जानि बरात सँवारी ॥
रहसत चला तुरै चढ़ि राजा । बाजत अनँद बधावा बाजा ॥
एकै बाजन जेहि जग जाना । आवत आन जात भा आना ॥
गह गह बाजन बाजत आवा । नगर लोग सब देखै धावा ॥
जिन देखा तिन धनि धनि कहा । रूप निहारि चित्र होइ रहा ॥
धनि सो चित्र धनि सोई चतेरा । कहहिं जोर चित्रावलि केरा ॥

निकसा हाट मंझार होइ, चहुं दिसि रहस अनंद ।
देखै आई उतरि जनु, सूर तराई चंद ॥

चढ़ि अँटारि देखहिं रनवाँसा । जनु ससि नखत सरग परगासा ॥
देखि कुँअर मुख हर्षाहिं रानी । हिए अनंद अधर बिहसानी ॥
कहिसि कि जानु आहि एह सोई । जेहिक चित्र चितसारी धोई ॥
पुनि तिन्ह साथिन्ह आनि देखावा । जे अपने कर चित्र नसावा ॥
जिन देखा तिन मुख अनुसारा । यह सोई गँधरब औतारा ॥
जब तें हम वह चित्र नसाई । नैन हिएं जानहुँ लिखि लाई ॥
धनि यह दिन धनि घरी सरेखा । हिया इंछ इन्ह नैनन्ह देखा ॥

मान न मन्त निसारहिँ, सिंह पुरुख मुख बैन ।
जो मूरति हिअरै बसो, सो निजु देखी नैन ॥

रानिहिँ यह सुनि भयो अनंदा । सीस पुहुमि धरि बिधना बंदा ॥
जिन्ह काहू यह भेद न जाना । सो बिधि कौतुक देखि भुलाना ॥
कहै कि यह कस बैरी होई । आदर चाह करै सब कोई ॥
सखी एक चित्रावलि केरी । चढ़ि मंदिर पुनि देखिसि हेरी ॥
कोतुक लखि चित कीन्ह हुलासा । गई धाइ चित्रावलि पासा ॥
कहिसि कि ऐ कुल मनि मनिआरी । तोरी जोति पुहुमि उजिआरी ॥
फिरेउ बीति संग्राम भुआरा । गहि आना बैरी बरिआरा ॥

देखौं सोइ हस्ती चढ़ा, नहिं जानौं केहि काज ।
पुहुमी आवै इंद्र जनु, तजि इन्द्रासन राज ॥

मेहरिन्ह महं पुनि चरचा होई । चित्र जो मेटा जनु यह सोई ॥
सुनतहि चित्र चाउ चित बाढ़ी । होइ व्याकुल धौराहर ठाढ़ी ॥

देखत मुख सुधि बुधि सब हरी। होय अचेत पुहुमी खसि परी ॥
सखी सो हाथन हाथ उतारी। सेज सुवाइ ओढ़ाइन्ह सारी ॥
डरहिं कहहिं बिधि का भा आई। भीर माँह काहू डिठि लाई ॥
सुनै पाउ जनि राजा रानी। हम जिय करहिं घरी महँ हानी ॥
ततखन मँदिर परेवा आवा। सखियन्ह कहँ सब भेद सुनावा ॥
कहिसि कि ऐ पति कलप जुग, हम माथे तुम छाँह ॥
अब किमि जरिए धूप दुख, छत्र आउ घर माँह ।
सुनत बैन चित्रावलि जागी। देखि परेवा के पौं लागी ॥
कहिसि कि ऐ हीरामन सूआ। रतन लागि कस कौतुक हूआ ॥
कैसे जाइ भोराएहु साईं। कैसे आनेहु इहवां ताईं ॥
का कहि चित्रसेन समुझावा। काहि लागि मँदिर लैआवा ॥
वैसि परेवा प्रेम कहानी। आदि अंत लौं कहिसि बखानी ॥
चित्रावलि चित भयो सँतोषा। गा सो सोच अहा जो धोखा ॥
बर बिआह सुनि मनहिं लजानी। घूँघट ओट दिये मुसुकानी ॥
कहिसि परेवा सुमति तैं, पूरन सेवा कीय ।
जो चित भावै सोइ करु, मैं तुअ अज्ञा दीय ॥

बोहित खंड

उहवां सागर बोहित साजा इहवां दुंद गौन कर बाजा ॥
पखरे घोर पलाने हाथी। सँभरि चले पुनि अंत के साथी ॥
चली दोऊ धनि करत कलोला। अपने अपने चढि चंडोला ॥
एक बाएं एक दहिने जाई। एकहिं एक न पास सुहाई ॥
कुँअर साजि पुनि कटक सुहावा। रहसत जाइ समुँद लहु आवा ॥
बोहित साज देखि मन भावा। चित्रिनि कर चंडोल चढावा ॥
पुनि कौंलावति समदि भुआरा। चढ़ी जाइ तजि सब परिवारा ॥

अगिनित दायज दरब जेहि, देखि हिया हरखंत
एक एक सबै चढाइ के, कुँअर चढ़ा पुनि अंत ॥

बोहिते चढेउ कुँअर लै भारा। समदि चले पहुंचावनहारा ॥
समदे लोग कुटुंब हय हाथी। सोई साथ अंत जो साथी ॥
लोकाचार तीर लहुँ आए। नाव चढे सब भए पराए ॥
पीठ देत ही मिंत बिसारा। सब काहू घर बार सँभारा ॥
कुँअर पेलि बोहित लै चला। भार देखि केवट कलमला ॥
कहिसि कीन्ह तुम दूर पयाना। बोहित नाहिं भार अनुमाना ॥
बोहित चढ़े बहुत उतपाथा। ऊँचे भौंर ऊठहिं पुनि साथा ॥

भौंर फेर जलजंतु डर, तेहि पर आँधी आउ।
जिउ आवै तब पेट मँह, तीर लाग जब नाउ ॥

सोन रूप तुम कहा बटोरा। भार बहुत देखत पुनि थोरा ॥
गाढ परे पुनि होइहि भारी। अबहीं कस नहिं देहु अडारी ॥
कुँअर कहा सुनु बोहित पती। दरब न डारि जाय एक रती ॥
बोहित साजा दरब हि लागी। का ले जाब संग यहि त्यागी ॥
जो मानै जिय अस डर भारी। चढ़ै न कोऊ नाव नवारी ॥
तुम खेवहु जनि मानहु संका। मेटि न जाइ सीस कर अंका ॥
हँसि कै बोहित केवट पेला। चला जाइ जल माँह अकेला ॥

देखत बारिध अगम जल, प्रान न धीर धराइ।
सोई चलै निचिंत होइ, जो कोउ आवै जाइ ॥

रैनि एक बादर जुरि आये। दुहुं दिसि होइ रिखि सात छपाये ॥
मारग भूला केवट डरा। बोहित जाइ भौंर बिच परा ॥
भँवै लाग तहँ बोहित भारी। कुँअर कहा कछु देहु अडारी ॥
जाके अहा संग कछु भारा। पलिहिं तें सब रूप अडारा ॥

इरुआ होइ बोहित अगुसरा। दूजे भौंर जाइ कै परा ॥
जहं लहु अहा सोन कर नाऊं। सो सब डारि दीन्ह तेहि ठाऊं ॥
तीजे भौर जहां नग हीरा। चौथे अन जा कर नर कीरा ॥
पचए भौंर भयो सेस नर, अंत जानि पुनि मीच।
कुंअर जिअन जिअ सौंरिकै, परे कूदि जल बीच ॥
छुठएं भौंर मरन निज हेरी। साहस बाँधि गिरीं सब चेरी ॥
सतएं भौंर जो आइ तुलाना। कौंलावति कर जिउ अकुलाना ॥
कहिसि कि हौं बलि देउं सरीरा। मकु ए दोउ लगि लागैं तीरा ॥
पुनि मन कहिसि रहा पछितावा। चित्रिन रूप न देखै पावा ॥
मरन बेरि मुख देखौं जाई। मकु अजहूं तजि कोह छोहाई ॥
चित्रिनि पहं आई गुन भरी। बदन बिलोकि पाउं लै परी ॥
कहिसि कि हौं अपराधिनि तोरी। करहु छोह सुनि बिनती मोरी ॥
रहै सदा तुअ सीस पर, सेंदूर भाग सुहाग।
हौं समदति हौं चरन गहि, इहै मोर अनुराग ॥
चित्रावलि सुनि हिए छोहाई। कौंलावति कह कंठ लगाई ॥
कहिसि कि तजहु सौति कर नाता। मोरि तोरि एकै जनु माता ॥
हौं जिउ देउं रहउ तुम्ह दोऊ। मोरे मुए होउ सो होऊ ॥
मरन लागि दुहुँ बाद पसारा। सुनि सुजान धायो बिकरारा ॥
कहिसि कि मेहरिन्ह बुद्धि न रती। हौं अब मरौं होहु तुम्ह सती ॥
तीनिहु गही मरन की टेका। मरन न पाउ एक तें एका ॥
देवता सरग जो देखत अहे। इन्ह कर प्रेम देखि थकि रहे ॥
ससि सूरज कुज दोउ गुरु, राहु बुद्ध सनि केतु।
कहहिं कि अब लहु भूमि महं, अस न कीन्ह कोउ हेतु ॥

आलमकृत

माधवानल-कामकंदला

आलमकृत

माधवानल-कामकंदला

प्रथमहि पारब्रह्म के सरनै। पुनि कछु रीति जगतरस बरनै॥
पारब्रह्म परमेस्वर स्वांमी। घट घट रहै सो अंतरजामी॥
घट घट रहै लखै नहिं कोई। जल थल रह्यौ सर्ब मय सोई॥
जाको आदि अंत नहीं जानौं। पंडित कथैं ग्यान सोई मानौं॥
ग्यानी होइ सो गुर-मुख पावै। खोजी होइ सो खोज लगावै॥
मन वच क्रम सोवत चलत, जागत चितवन चित्त।
संग लागि डोलत फिरौं, सो करता धरु चित्त॥१

जग पति राज कोटि जुग कीजै। सहज लाल छाजे थिति कीजै॥
दिल्लिय पति अकबर सुरताना। सप्त दीप मैं जाकी आना॥
सिहंन पति जगन्नाथ सुहेला। आपनु गुरू जगत सब चेला॥
जब घर भूमि पयानौ करई। वासुकि इन्द्र आसन थरथरई॥
गहि त्रिन दंत सरन सो आवै। थापहि फेरि भूमि सो पावै॥
दंड मरै सेवा करै, वासुक इन्द्र कुवेर।
गनु गंध्रव किन्नर सबै, जच्छ रहै होई चेर॥२

देस देस के भूपति आवैं। द्वारे भीर वार नहि पावैं॥
कंपै बहुत त्रास जी लैहीं। लै अकोर पर द्वार न दैहीं॥
इक छत राजु बिधाता कीनौं। कहुं दुर्जन कोउ रह्यो न चीन्हौं॥
धर्म राजु सब देस चलावा। हिंदू तुरक पंथ सबु लावा॥
आगैरंबु महामति मंडनु। नृप राजा तोडरमल डंडनु॥
जो मति विक्रम कीन, मंत्रु करत मनु चैन।
सुनत वेद सुमिरत सदां, पुन्य करत दिन रैन॥३

सन नौ सै इक्यावन्नुवै आइ। करौं कथा अब वोलौं गाहि॥
कहौ वात सुनौ अब लोग। कथा कथा सिंगार वियोग॥
कछु अपनी कछु परकृति चोरौं। जथा सकति करि अच्छर जोरौं॥
सकल सिंगार विरह की रीती। माधौ कामकंदला प्रीती॥
कथा संसकृत सुनि कछु थोरी। भाषा बाँधि चौपही जोरी॥
माधौनल सब गुन चतुर, कामकंदला जोगु।
करौं कथा आलम सुकवि, उतपति बिरह वियोगु॥४

पहुपावति नग्र इक सुनौ। गोपीचंद राज वह गुनौ॥

धर्मपंथु दिन प्रति पगु धरई। पहुमी पवित्र पापु नहिं करई॥
तिहिपुर बसै सदा सुख त्यागी। माधौ विप्र नाम वैरागी॥
राजा पास प्रात उठि जावै। लै तुलसी दल देव पुजावै॥
देव पुजाइ विप्र फिरि आवै। प्रात भयें पुनि दरस दिखावै॥
बांचै बेद पुरान, नौ व्याकरन बखानई।
जोतिक आगम जानि, सामुद्रिक सँगीत सब॥५
विद्या सोइ बृहस्पति जानौ। रूपु सोइ मकरध्वज मानौ॥
ताकौ रूप नारि जो देखै। पलक ओट जुग जुग भरि लेखै॥
जे सब नारि बसैं पुर माहीं। तिहि के निरखि गर्भ गिरि जाहीं॥
गावै सरस बजावैं बीना। नर नारी मोहे भ्रम बैना॥
मनु लागै जिहि धाइ, सो पुनि मन ही मौ बसै।
जागत सोवत नित्त, देखहु आँखिन मैं लसैं॥६
बिन देखें अकुलाइ, प्रान नहीं धीरज रहहिं।
निसु दिन भीजहिं चीर, नैना ही के नीर ही॥७
दिन एक प्रात भयो उजियारा। माधौनल अस्नान सिधारा॥
करि मंजन पुनि तिलक सँवारै। नाद मधुर धुनि मुख उच्चारैं॥
सुनत नाद मोहीं पनिहारी। सीसहु ते गागर भुमि डारी॥
सुनत नाद तिहि दीनैं काना। रीझि रहैं सब चतुर सुजाना॥
करैं राग मोहन के वेसा। ज्यौं ठग मूर करै वर वेसा॥
थके कुरगन जूथ, सुनत नाद मुग्धीन के।
तब धाईं करिहूय, काम कमान चढ़ाइ के॥८
इक त्रिय मोहि मुर्छित धर परही। इक त्रिय धरत सुद्धि नहि रहहीं॥
इक नैनन सों नैन मिलावै। तजि सर एक निकट चलि आवै॥
एकन परत न चीर सँभारा। व्याकुल भईं छूटि गये बारा॥
एकनि भूषन दए उतारी। एकनि तजी कंचुकी सारी॥
एकै नारि चली उठि संगा। जैसें धुनि सुनि चले कुरंगा॥
काम धनुष सरपंच लै, मारौ त्रिया सुनाइ।
वे मृगगति मोहीं सकल, द्विज पारधी की नाइं॥९
एक नारि हँसि हँसि मुख जोवै। नैन नीर इक भरि भरि रोवै॥
डोलै एक पवन ज्यों दिया। छुटे केस उघरि गये हिया॥
करै राग माधौनल रागी। ज्यौं तन माँहि ठगौरी लागी॥
माधौनल देख्यौ पनिहारी। व्याकुल भई नगर की नारी॥
तब उठि चल्यो नग्र कहँ सोइ। कहत चरित्र सप्र दिन सोइ॥
गयौ मदन सर मारि, नारि डारियत हार सब।
बिरह अनल तन जारि, तन मन द्वंद उदेग दैं॥१०

नगर खोरि माधौनल आवै । त्रिया पुरिख गृह अन्न जिंवावै ।
सुनत नाद कर छीन सँभारी । भूमि अहार दीन सब डारी ॥
पूंछै पुरिष नारि सुनु मोही । ऐसे नैन दिये विधि तोही ।
कत तैं भोजन दियौ सो डारी । बेगि कहौ नहिं डारौं मारी ॥
बोली बचन कंत सुनि लीजै । स्वामी दोसु मोहि नहि दीजै ।
माधौनल कियौ रागु, सुनि धुनि हौं बिस्मै भई ।
तहां जाइ मनु लागु, ताते गिरयौ अहार भूइं ॥११

तब सुनि कैं उठि चल्यौ रिसाई । नगर लोग सक्कवै बुलाई ।
चलहु राइ के सनमुख होही । कहौ विप्र त्रिया सब मोहीं ॥
नग्र लोग बूढ़े अरु वारे । राजा आगैं जाइ पुकारे ।
सुनौ राइ इक वचन हमारा । माधौनल मोहीं सब दारा ॥
पूछै राइ कौन गुन करही । कैसें विप्र त्रिया मनुहरही ।
करै नाद सब त्रिया लुभाहीं । मृग गति मोहि थकित ह्वै जाहीं ॥
कहै प्रजा राजा सुनौ, हम न रहैं इहि गाँउ ।
कै यह बेगि निकारिए, जिहि माधौनल नांउ ॥१२

सुनि राजा जिय चिंता करही । कहा करौं जो परजा जाहीं ।
पहिले पूंछि लउं वेउहारा । तब माधौ को देउं निकारा ॥
तब राजा पठवा इक बारी । माधौनल को ल्याउ हकारी ।
गयौ पौरिया माधौ जहँ रहही । सीस नाइ विनती इक करही ॥
चलौ बेगि तुम राज बुलाए । परजा पवन कहन कछु आए ॥
माधौनल चिंता करी, मन मैं भयौ उदास ।
माधौ धारि बीना चल्यौ, आयौ राजा पास ॥१३

अधिक मधुर धुनि बीनु बजावै । सरस राग रागिनि उपजावै ।
चेरी बीस कराइ हकारी । सब पहिराइ कुसुंभी सारी ॥
तब राजा परतिज्ञा लेही । कमल पत्र पर बैठक देही ।
माधौनल बीना कर गह्यौ । खस्यौ काम धीरज नहिं रह्यौ ॥
माधौ विप्र नाद अस कहा । भीजे चीरु मदन तब बहा ।
तब राजा आइसु दयौ, चेरी दई उठाइ ।
सब ही के पीछे रहे, कमल पत्र लपटाइ ॥१४

अचरज देखि राजा तब रहा । मिली प्रत्यंग्या जो गुन कहा ।
उठि राजा गयौ पौरि पगारैं । तुम को ठौर न विप्र हमारैं ॥
तीनि पान कौ बीरा लयौ । राइ हाथ माधौ के दयौ ।
तब उठि वरन अठारह पती । चल्यौ छाँड़ि कै पुहुपावती ॥
बीना गहै बजावै रागा । छिन छिन उपजावै बैरागा ।
दिन दस मारग रह्यौ सुजाना । कामावति नगरी नियराना ॥

कामवती नगरी भली, कामसैनि नृप नाम।
मन मैं माधौनल कहै, इहाँ करौं बिश्राम ॥
नगर लोग सब बसै सुकर्मी। ब्राह्मन छत्री बैस सुधर्मी॥
तिहिं पुर मद गयंद सो रहै। मदिरा नाम औरन सों कहै॥
मार सोइ सतरँज मैं होही। पुष्प पत्र लै बांधै कोही॥
दंड सोही जो जोगी लेही। और दंड काहू नहिं देही॥
चंचल चोर कटाछ त्रिया के। जो नित चोरैं चित्त पिया के।
दीपक वधिक बसै जहां, जो निसि बसै पतंग।
ऐसो नगर रच्यों बली, काम सैनि चतुरंग ॥
तिहि पुर बसै चंद्र की कला। पातुर सुनी कामकंदला।
ताको रूप वरनि को पारा। बरनत सहसजीभ पुनि हारा॥
कुंतल चिहुर चुवहिं ज्यों धाला। अंबुधार कैधों अलिमाला॥
मध्य मांग चंदनु घसि भरै। दूध धार विषधर मुख परै॥
कहुं कहू पुष्प कहूँ कहुं मोती। जनु घन मैं तारागन जोती।
माँग अग्र मानिक दिएं, औ मुक्ता गन संग।
छिन छिन जोति धरैं मनौं, मनि उछली जु भुजंग ॥
करनन करन फूल छबि भारी। मन्द मयंक की कोटिन नारी॥
मनि मुक्ता लागै बैडूरज। मानौ घन मह दिएं दाइ सूरज॥
कर कुकुँम लै तिलक सँवारे। चैन मैन जनु बान सुधारै॥
भृकुटी चांप चंचल जब मोरै। चितवन चारु चतुर चित चोरै॥
मीन मधुर पंजर मृग हारै। निरखत लोचन जुगम डरारै॥
पलक ओट अकुलाइ, चंलच नैकु न थिरु रहै।
श्रवन कोर लौं जाइ, निरखौं त्रिया कटाछ जब॥
नासा अग्र बेसर कौ मोती। घंट वीव रोहिन की जोती॥
तिल प्रंसहि वीव तुषारा। छिनु छिनु दारिज नु माछिनि हारा॥
नासा अग्र मोती इमि रहहीं। दीपक पुष्प करन कौं चहहीं॥
मृगमद तिलक रहै अति मानौ। निर्खत अलिविंदु नीयर जानौ॥
रस बिनोद लागैं अहिछौना। लालच लुबुध लोभ जनु गौना॥
आलम अलकैं छुटि रहीं, बेसरि सौं अरुझाइ।
मानहु चारा चोंच तें, अहि सुत लेत छुड़ाइ॥
पल्लव विंब वँधूक लजाहीं। आस्वास रस भौंर लुभाहीं॥
दामिन दंत दिए जनु हीरा। सेत असेत अरुन के धीरा॥
सखि स्यौं हास करहिं जब कामिनी। कमल पत्र कैधौं जनु दामिनी॥
सरस्यौं बचन जु बोलि सुनावै। सहज मनहुं बाँसुरी बजावै॥
लोग कहैं कोकिल कल नीकी। ताकी धुनि सुनि लागति फीकी॥

अबला बचन अमोल, प्रान धरन चिंता हरन ॥
श्रवन सुनत वे बोल, मुनि मनसा नहिं थिर रहैं ॥२०

हरे पीत मनि लाल विसाला। रतन जटित सोहति कँठमाला ॥
मुकताहल दोउ कुच बिच रहहीं। दुहुँ सुर मध्य जु सुरसरि वहहीं ॥
कुच कंचन भरि सां सवाँरे। सुर सरि धरि जुग ससी दुधारे ॥
चक्रवाक सरिता की धारा। मानहुं मुनि मन वारहि पारा ॥
कनक वेलि श्रीफल जुग लागे। किधौं पुष्प गुथि अति अनुरागे ॥

अति कठोर कुच तन उठे, सवलैं समेत सुभाइ।
मनुहु मैन को भस्म करि, बैठै ईस चढ़ाइ ॥२१

कनक बरन दुइ बाँह सुहाहीं। देखे नीत सँगीत सुहाईं ॥
कनक टाड कर कंकन चलिया। फुद जू चामहि मुद्रिक पलिया ॥
भुज सतूल अरु सीन कटाही। लगी फूली सुवरी जु सुहाही ॥
सहज हंस तज्यौ कमल दिखावे। नखन अग्र किन्नरी बजावै ॥
पलव पल्ल सोभी नख भारे। बिद्रुम विंब कटक मनौ दारे ॥

भुज चंदे की मजुरी, मिलति एक के रूप।
मानहु कंचन खंभ तें, द्वादस लता अनूप ॥२२

उदर छीन रोमावलि देखा। कनक खंभ मृगमद की रेखा ॥
नाभि निकट स्यौं नागिनि चली। जनु कुच कमल नलिन इक भली ॥
नाभि पात सौं उठी सुहाही। कँवलहु तैं अति अवली आई ॥
ह्रद कर संख ब्रह्म दै काढी। खंभ बेलि कंचन मनौ बाढ़ी ॥
कै उलटी कालिंद्री बहही। गिरि गंगा परसन कौं चहही ॥

इत तें गंगा सुर चल्यौ, उत तैं जमुना अंभु।
कुंकुम चंग तुरंग भरि, मिलि परसै इक संभु ॥

मृग अरु ससा सिंघ बन भागे। देखि मध्य उदि उपमा लागे ॥
मध्य झीन बोलैं ज्यौं आधे। कसनी कसी कुच नीके बाँधे ॥
जंघ जुगल कदली के खंभा। तिहि छवि को पूजै नहि रंभा ॥
नूपुर चूरा जे हरि वाजैं। छुद्रावलि घंटिका विराजैं ॥
घसि चंदन इक चोली कीनी। कंचुकि पहिरि पटोरी लीनी ॥

कुसुँभी सारी पहिरि कैं, बेनी गुही सँवारि।
राजा के मंदिर चली, कामकंदला नारि ॥२४

औसर चली कामकंदला। नगर लोग सब देखन चला ॥
माधौ विप्र बात या सुनी। कहियतु कामकंदला गुनी ॥
तब उठि माधौनल सँग लागा। काँधै बीन धरे वैरागा ॥
मंदिर मध्य गयौ सब लोगा। माधौ विप्र पवरियन रोका ॥
माधौ कहै जानदे मोही। हौं नहि जाने दैं द्विज तोही ॥

राजमँदिर कैलास सम, जान देउं नहिं तोहिं।
तुहि वाम्हन देखत कछू, कहैं राज बुलावे मोहि ॥
पूंछि राय उत्तर कह ऐसी। जव तुहि पहिचानै परदेसी ॥
उहिंठां माधौ पँवरि दुवारा। राजा मंदिर होइ अरवारा ॥
तंत गिरा गाइन बहु गाँवहि। द्वादस तहां मृदँग बजावहि ॥
द्वादस मांझ इक तुरिया दीना। दहिनै हाथ अँगुरिया हीना ॥
टूटै तार भंग सुर होई। मूरख सभा न जानै कोई ॥
ऐसो को सुर ज्ञानि, राज सभा मूरिख सकल।
ताल भंग को जानि, द्वादस तहां मृदंग धुनि ॥
ताल भंग माधवनल सुनही। द्वारे बैठि सीस बहु धुनही ॥
ताल कुताल सम सुर जानै। सब पुरान संगीत बखानै ॥
माधव कहै पौरिया आवहु। राजा आगैं जाइ सुनावहु ॥
द्वारे बैठि विप्र इक आही। सकल सभा सौं मूरखि कहही ॥
द्वादस माहिं तूरिया अनारी। दहिनैं हाथ अगुरिया चारी ॥
सात चारि के मद्धि है, उठिकै देखौं ताहि।
चूकै तार जो पाव मिसि, पातुर दोस न आहि ॥
सुनत पँवरिया उठि किन धावँही। राजा आगैं जाइ सुनावहिं ॥
बिप्र एक है पँवरि दुवारा। निर्त ताल सब कहै बिचारा ॥
कर मीजै सिर धुनि धुनि रहई। सकल सभा सौं मूरिष कहई ॥
कहै जु तुरिया द्वादस माहीं। दच्छिन हाथ अँगुरिया नाहीं ॥
सात चारि के अंतर रहै। ऐसी बात विप्र इकु कहै ॥
ताही ठौर को तुरिया, राजा लियौ हकारि।
हतौ अंगूठा मैन को, तरस अंगूरिया चारि ॥
मिली बात माधौ जो कही। सभा सकल चक्रत ह्वै रही ॥
कहै राज सुनि रे दरबारी। बेगि जाइ कैं ल्याउ हँकारी ॥
अयौ पौरिया माधव ठांई। पाउ धारिये विप्र गुसाईं ॥
राजा मंदिर माधौ चला। सुदंर विप्र मदन की कला ॥
कँठ सोहै मौतिन की माला। कानन कुंडिल मैंन विसाला ॥
झीने पट की धोवती, उपर उपरनी झीन।
सीस पाग वैना धरे, राज-मँदिर पगु दीन ॥
सभा मध्य माधौनल गयौ। बेगि लोगु सब ठाढ़ो भयौ ॥
आवत माधौनलहि निहारा। सिंहासन तजि भयै नियारा ॥
माधौ बिप्र चिरंजी कीन्हों। आसिर्वाद नृपति कहँ दीन्हों ॥
राजा दियौ सिंघासन टारी। ता पर बैठे रूप मुरारी ॥
बैठ्यौ विप्र सिंहासन जाई। देखि लोग सब रहे भुलाई ॥

कै रे इंद्र कै चंद्र है, कैं कान्हर कैं काम।
कै कुबेर के जच्छ हैं, कै किन्नर कै राम॥

कनिक मुकट मुद्रिक मनि माला। माधौनल कौ दीन भुवाला॥
मुद्रिक टोडर दये उतारी। पहिराये भूषन सब भारी॥
टका कोटि द्वै दछिना दीनी। स्वस्ति बोलि माधौनल लीनी॥
चँदन खौरि तिलक सरसाखैं। पोथी काँख उपरना कांधैं॥
बैठि सिंघासन बहुत सुखु पायो। दुख सँताप लै गंग बहायौ॥

गुन देखें गुनिजन सुखी, निर्गुन होइ जनु कोइ।
राय रंक सब बीच लै, जौ रँपेट गुन होइ॥

ऊंच नीच पूछहि नहि कोई। बैठहि सभा जौर गुनु होइ॥
गुनी पुरिष जौं परभुमि जाई। त्यों त्यों मँहग मोल बिकाई॥
जैसे पुत्रहि पालै माई। त्यों गुनु रहै सदा सुख दाई॥
गुन बिन पुरिष पंख बिन पंखी। गुन बिन पुरिष अंध ज्यों अंखी॥
गुन बिन पुरिष पत्र ज्यों ... ... ॥

संगति गति उठत, तंत कुती तिहिं काल।
बहुरि अलापै राग षट, पंच पंच सँग बाल॥

एक राग सँग पांच रागिनी। संग अलापै आठौ नंदनि॥
प्रथम राग भैरव उच्चरही। पांचौ कामिनि संग सुहाहीं॥
प्रथम भैरवी पुनि बिलावली। पुनि जाकी गावै बंगाली॥
पुनि असावरी औ बैरारी। ये भैरो की पांचौ नारी॥
पंचम हर्ष दे साथ सुनावै। पींगाली मधु माधौ गावै॥

ललित बिलाबलि गावहीं, अपनी अपनी भाँति।
अस्ट पुत्र भैरों कहैं, गाइनि गावै पाँति॥

द्वतीं मालकौस आलापै, पंच कामिनी संगति थापै॥
गौंडी काटी औ देवगंधारी। गंधारी सी हुतीं उचारी॥
धनासिरी ये पाँचौ कामिनि। मालकौस के संग सुभामिनि॥
मारू मस्तक अंग मेवारा। प्रबल चंद्र कौसिक औ भारा॥
घूंघट्ट और भौंरन हग गाए। मालकौस आठौं सुत भाए॥

पुनि आयो हिंडोल, पंच कामिनी अस्ट सुत।
उठै सो तान कलोल, गाइन ताल मिलावही॥

तिलंगी पुनि देव गिराइ। वासंती सिंधुरी सुहाई॥
सा अहेरि लै आया राजा। संग अलापहि पंच भारजा॥
सुर मां नंद भस्म करि आई। चंद्र बिंब मंगली सुहाई॥
सरसवान औ आहि विनोदा। गावैं सरस बसंतक मोदा॥
अस्ट पुत्र मैं कहे सवारी। पुनि आई दीपक की बारी॥

काछाली पट मंजरी, टोडी कही अलापि।
कामोदी औ गूजरी, सँग दीपकैं थापि॥
काल काल औ कुंतल रामा। कमल कुसम चंपक के नामा॥
गौड़ी कान्हरिय कल्याना। अस्ट पुत्र दीपक के जाना॥
सब मिलि वहि श्री रागहि गावैं। पंचौ संग वरंग अलापै॥
बैराटी करनाटी धरी। गौरी गावैं आसावरी॥
पुनि पाछैं सिंधवी अलापी। सिरी राग सग पाचौ थापी॥
सावा सारँग सागरा, औ गंधारी भीर।
अस्ट पुत्र श्री राग के, गोल बुंड गंभीर॥
अष्ट मेघ राज वै गावैं। पांचौ संग वरंगनि ल्यावैं॥
सौर गौड़मल्लारी धुनी। पुनि गावै आसा गुन गुनी॥
ऊंचे सुर सों सूहौ कीनी। मेघ राग सँग पंचौ चीन्ही॥
बीरा धर गज अरु केदारा। चंडोली धर नित उजियारा॥
पुनि गावै बासकर औ स्यामा। मेघराग पुनि तिन के नामा॥
अस्ट राग ये सकल सँग, रागिनीय गनि तीस।
सब सुत राग न के कहे, अठारह दस बीस॥
गायो राग रागनि संगीता। अब बरनौं सभा संगीता॥
रंगभूमि बहु भाँति सँवारी। ताल मिलाइ करैं पतिहारी॥
दीपक दीवती चले चहुँ भाँती। बहुत मसाल मैन की बाती॥
अंतर वोट पिछौरी दीन्हीं। पहुप अंजुली दुहुँ कर लीन्हीं॥
सब मिलि श्री राग वै गावैं। संकर गौरि गनेस मनावैं॥
षरज रिषभ गंधार, मध्यम पंचम धैवता।
औ निषाद उच्चार, ये कवि गाये सप्त सुर॥
पनु मिलि संग एक सुर कीन्हां। रंग भूमि पातुर पग दीन्हां॥
सुर सुर मध मध धिधि धिधि बोलहिं। तार धार सँग लागे डोलहिं॥
तथेइ ताथेइ ताता थेइ करहीं। तनु थकत न थक मुख उच्चरहीं॥
जभकत भभकत लाल तरंगहि। .. ..
भंक भभकत उठत तरँग रँग, अरी उच्चारहिं दंद दंद मिरदंग॥
प्रथम ताल औहै झप ताला। सकल ताल डोलैं इक ताला॥
राग दाव नरपतिहि प्रधाना। प्रगटे सप्त भेद सुर ज्ञाना॥
दुदुंर छंद धुरपद संचारहिं। ठही रीत जनु इंद्र अखारहिं॥
धुनि देसी कंदला दिखावै। अच्छर अर्थ हस्त पल्यावै॥
थिरकी लीन तार जब तोरहि। नैन कोर माधो सो जोरहि॥
सुर सुंदर दोहा षटपदा, और बिस्मै पद गाइ॥
बूझै चतुर बिलच्छन, माधौनल सब भाइ॥

पुनि गुन काम कंदला करई। जल भरि सीस कटोरा धरई ॥
भृकुटी चांप चंलल मुख मोवहि। कर अँगुरी सौं चक्र फिरावहि ॥
दीप जोति इक भँवर उडाई। कुच के अग्र सो बैठो जाई ॥
जब लागै तब दैं दुख डारहिं। मनहु भवंग समै सरसावहिं ॥
चंदन बास लीन ह्वै रहा। बैठो भाँवर प्रेम रस भरा ॥

छिन छिन काटहि मधुकरा, अस्तन वेदन होइ।
माधौ नल सब बूझही और न बूझै कोइ ॥

भेंटैं पवन सुख बासुन आवइ। अस्तन श्रोत समीर चलावहि ॥
ज्यों कर छुहा चक्र गिरि परई। कामकंदला चौगुन धरहीं ॥
पवन तेज मधुकर उड़ि चला। माधौनल बूझी यह करा ॥
तब राजा के नैन निहारै। मूरखराज न कला बिचारै ॥
रीझ्यौ माधव कला बिचारी। मुद्रिक तोडर दए उतारी ॥

कनक मुकुत मनि माल सब, टोडर दए उतारि।
टका कोटि दै दच्छिना, माधौ दिए सुकारि ॥

चतुर चतुर सो नैन मिलावहि। दुहुतन मदन उमगि बहु आवहि ॥
दुरि दुरि देखैं मुरि
जब पारखी नाद मुख गावैं। सुनतहि मृग हिय मोहित ह्वै आवैं ॥
हरिनी कहै हरिन का कीजै। रीझि पारखी कौं का दीजै ॥
हमरैं कहा दैन कौ दाना। कहैं कुरंग सो दीजै प्राना ॥
तब पारखो धनुष संधाना। मृग हियरा आगे कै दीन्हां ॥

धनि कुरंग जिनि राग सुनि, रीझि न राखे प्रान।
वैन करन वलि विक्रमा, दियौ न ऐसो दान ॥

धारा भोज लच्छ जिनि दीनौ। करन वैन वलि विक्रम कीने ॥
ये सब मुए मीचु के मारे। रीझि प्रान नहिं दिए पियारे।
लच्छ लच्छ जे त्यागहिं दाना। तौ नहिं पूजहि हिरन समाना ॥
कह राजा सुनु विप्र उदासी। कौन रीझ तैं त्यागी रासी ॥
कहै विप्र हौं कला विचारी। औ मुग्धा सब सभा तुम्हारी ॥

नाचत त्रिय कुच अग्र पर, मधुकर बैठ्यो आइ।
अस्तन स्रोत समीर सों, दीनौ भँवर उड़ाइ ॥

तू राजा अविवेकी आई। गुन औंगुन बूझौ नहिं ताही ॥
मै विद्या परवीन सुजानां। रीझि कला नहिं राखौं प्राना ॥
क्रोधवंत राजा उठि कहै। ढीठ विप्र चुप क्यों नहि रहै ॥
मारौं खड्ग टूक द्वै करौं। विप्रघात अपजस सों डरौं ॥
जा राजा तू मारै मोही। कला रूप ह्वै व्यापौं तोही ॥

पतित करौं तुहि लोक महँ, स्वर्न लोक हरिद्वार।
जग मैं अपजसु पावही, सकल कहै हत्यार ॥

राजा ब्रह्म हत्या जो करै। कलि मैं कुस्टी ह्वै अवतरै॥
तीरथ कोटि जग्य जो करै। तबहुँ न ब्रह्म दोष तैं तरै॥
सुनि राजा कछु कहन न पारै। क्रोधवंत मनही मैं विचारै॥
कह राजा जहँ लग मोर राजू। छाँड़ि जाहु तहँ लगि तुम आजू॥
जो तोहि इहां बहुरि सुनि पाऊं। खाल खैंचिकर भूस भराऊं॥

बोलहि क्रोध न बाल, बेगि निकारहु नग्र तें।
भूस भराऊं खाल, जो कोउ राखै देस मैं॥

तब सो वचन माधवनल कहै। तोरे नग्र राइ को रहै॥
मैं गुनिवंत भूमि पर बेसा। चरन धोई करि पियें नरेसा॥
यह सुनि नृप मंदिर मैं जाई। नीच सीस करि सांसैं लेही॥
राजा मन मैं चिंता करही। फिरि फिरि दोस कर्म को देई॥
मैं दिन राति सभा संचारौं। त्यागहुं लज्ज लोभ नहिं करौं॥

जो दछिन ध्रुव अस्तवै, तप्त अग्नि सिवराइ।
पश्चिम भान उदै करैं, तऊ न कर्म गति जाइ॥

सम दुग भीर होइ जौ थाहां। गंगा पश्चिम करैं प्रवाहां॥
पंख लागि कै सिला उडाँही। पाहन फोरि कमल विहसांही॥
जौ इतनी विपरीत चलावै। तऊन कर्म सौं छूटन पावैं॥
कर्म हेत हरिचँद जलु भरा। कर्म हेत वलि सर्वसु हारा॥
कर्म हेत पांडव फल खाये। कर्म रेख रघुपति बन आये॥

सोई कर्म मनुष्य मैं, कोटि करावहि भेख।
सो कवि आलम ना मिटै, कठिन कर्म की रेख॥

चित चिंता माधव गहि रहा। तब उठि कामकंदला कहा॥
कवन सोच सोचहु सग्याना। विद्याधर तुम चतुर सुजाना॥
तुम सुजान जाना गुन मेरा। मैं कुछ गुन पहिचानहुं तोरा॥
मधुकर अहि कमलन गुन जानैं। दादुर कहां पीउ पहिचानैं॥
नाच कूद कछु अँध न देखैं। रूप कुरूप एक सम लेखैं॥

बहिरौ आगे जो कोऊ, संख बजावै आइ।
वह अपने मन जानहीं, कछु अमृत फल खाइ॥

चलहु बिप्र घर बैठहु मेरे। चरन धाई सेवहुं कर जोरै॥
प्रेम कथा कछु मोहि सुनावहु। काम अग्नि की तपनि बुझावहु॥
मैं रोगी तुम वैद गुनानी। सोहि संजीवनि देहु सो आनी॥
काहे गोरिख फिरहि अकेला। अब सँग लाइ करहु मोहि चेला॥
मैं भई धूधल तू सूरज मेरा। तू चंदा हौं भई चकोरा॥

तू मधुकर हौं कमलिनी, वैस वास रसलेहि।
भरै बूंदते स्वाति जल, ऐस बूदं भरि देहि।
सुनहु वारि माधौनल कहई। इहि जग नेहुं नहीं थिर रहई ॥
जो थिर रहै तो कीजै नेहू। बिछुरि सँताप देह को देही ॥
नेह लगाइ जो बिछुरै कोई। निस दिन रोम रोम दुख होई ॥
×ऐसो खड़्ग की धारा× × ×
×सेज पर बैठहु जाई × × ×
उठि माधौनल बैठे सेजा। देखत काम तजै तन तेजा ॥
कुसुम मुकट सिर केसर सोहै। निरखत मकरध्वज मन मोहै ॥
उठि फूलन की माल, रतनजतित कुंडल दियै।
मृगमद तिलक सो भाल, कंर बीना माधौ गहै ॥
कामकंदला कर्‌यो सिंगारा। अरून फूल के पहिरे हारा ॥
तापर पहिरि कंचुकी झीनी। सोधै छिरकि वेल सौ भीनी ॥
पुष्प गूंथि वैनी बनवाई। चंचल गात प्रवीन सुहाई ॥
दियो लिलाट चंदन को टीका। मध्य विदुं विदुंन कौ नीका ॥
दये न लेइ द्दग ओर करि अंजन। पलै ओट जनु फरकहि खंजन ॥
कुसुँमी सारी पहिरि सुजान, अंग अंग भूषन किये।
मुख भरि खाये पान, दाड़िम दसन विराज ही ॥
कहै कंदला सुनौ सहेली। मोहि सिखावहु प्रेम पहेली ॥
अब लौं सुग्धाहति अलबेली। सिखवहु रसकी रीत सहेली ॥
पुरुष संग रचि सेज न जानहुं। प्रथम समागम जिय पहिचानहुं ॥
वह सुजान माधवनल आही। सब अँग कोक बखानहुं ताही ॥
चौदह विद्या कोक बखानै। अंग बास मनमथ की जानै ॥
कोक कला हौं ही कहौं, सब बिधि अरच बखानि।
और सिखायहु मोंहि कछु, पूंछहु गुन जन मान ॥
कहै सखी सुन हो कंदला। तो तै रस जानै को भला ॥
जहां वासु मनमथ को जानौ। तिहि ढाँहरि सु निकट जनि आनौ ॥
जहां अंग मनमथ रह तहां। छिपन कियौ रहियों पै तहां ॥
कोक रीति कंदला सिखाई। माधौनल पै सखी पठाई ॥
माधौ निरखि रीझि कै रहा। तिहि छिन आइ मदन तन दहा ॥
मदन धनुष सरपंच लै, माधौ सनमुख आइ।
कामकंदला निरखि कै, सरन सरन गुहिराइ ॥
मिलि प्रजंक पर जुगल किलोलहिं। बचन चातुरी दोऊ बोलहिं ॥
सखी सिखाइ कंदला गई। आवर मंदिर ढाढ़ी भई ॥
बैठि कंदला माधव पासा। सूर संग जनु चन्द प्रकासा ॥

जोई कछु कोकिल की रीती। तैसिय रीत रची विपरीती ॥
दोउ कामवंत भरि जोबन। सुदंर सुघर सुजान विलच्छन ॥
परसन लालन वै पतन, त्रिया पुरुष सुख लीन।
फुटक बदन उमगे रहैं। भये पंचसर हीन ॥ ५३
किलकत बोलत लोक कहानी। भयौ भोर प्रगट्यो जु बिहानी ॥
कामकंदला परिहरि सेजा। भइ बिहाल तन रह्यौ न तेजा ॥
झलकैं पलक उनीदे नैनां। अति जम्हुआई आवहिं नहि वैना
कंवल प्रवेस भंवर जो किया। कोस झकोर सकल रस लिया ॥
सिथिल गात कंचुकि पहिरि, बिछुरि माँग लट छूटि।
अधर निरखि औ नख निरखि, गये कंचुकि बँध फूटि ॥
पून्यो जोति ज्यों कामकंदला। ह्वै प्रगटी परिवा की कला ॥
डोलति चलति मनहुँ मतवारी। पीत वसन मुख भयौ सवारी ॥
सखी आनि छिरकहिं मुख पानी। सुरति रीति औ सब पहिचानी ॥
उरझे बार हारनि न निवारहिं। सब अँग भूषन सखी सुधारहिं ॥
मुख पखारि पुनि पान खवावहिं। नखछत महं कुमकुमा लगावहिं ॥
भवँर बास रस लेइ कै, भौंर रहे लपटाइ।
सूर तेज तैं कुमुदनी, रही अतिहि कुम्हिलाई ॥ ५५
बोलहिं सखी चलहु मगु रंजन। सरवर जाइ करहिं हम मज्जन ॥
माघव विप्र धाम करि धीरा। गई सकल सरवर के तीरा ॥
गई कंदला सरवर पासा। चकही जान्यौ चंद्र प्रकासा ॥
चकही बिछुरि गई भुमि भूली। बांधे कमल कुमुदनी फूली ॥
चक्रवाक उड़ि चले अकासा। अथवा चंद सूर परगासा ॥
सखी तरायन संग, कामकंदला विधुवदन।
चकई मन भयो भंग। कमल देखि संपुत गह्यौ ॥ ५६
तेल सुगन्ध अरगजा कीन्हां। अंग उबटना मज्जन कीन्हां ॥
करि मजन सब बाहिर आई। चंपक बदन सुदेस सुहाई ॥
कहुं कहुं बूँद एक छबि बनी। चंपक लता ओस की कनी ॥
सजल ओस अलकै घुँघराली। ऊपर दलति कँदला डारी ॥
अंगन बूंद चुवहिं धर जोती। जनहु भुवराम उगिलहिं मोती ॥
कुटिल स्याम चिहुरा घुँघरारे। डोलै मधुप जनहु मतवारे ॥
नीर चुवहिं चिहुरा सजल, बदन निरखि छबि माल ॥
मनहुं पान मकरंद पर, पवन करत अलि जाल ॥
डोलहिं कामकंदला बाला। चिहुर चुवहिं मोतिन की माला ॥
निरखत अलक उलटि घुँघरारी। अमृत लगी नागिन ज्यों कारी ॥
कै सावक अलिरस अब डोलहिं। सखी सबहिं उपमा कौं बोलहिं ॥

कुटिल कुटिल दोउ छबि लीन्हैं । कहूं रसिक मन प्यासे दीन्हैं ॥
सो जेहि फँद्यो सो निकस नहि पारै । जो जिय सकल जन्म पचि हारै ॥

मूलन चिहुर चुवाहि, सखी कहैं कंदल सुनहु ।
बंधन सुरत डराहि, उचे लुट्यौ चिहुरा सजल ॥

सुनि कंदला धाम कहं चली । नखसिख बरन चंपे की कली ॥
कहैं सखी सो चलै अवासा । माधौनल जनि होइ उदासा ॥
गवनम राज मंद की नाईं छिन एक माँझ मँदिर मैं आई ॥
सखी गईं सब अपने धामा । माधौनल मैं आई बामा ॥
कहै कंदला माधौ ठाऊँ । अब सरवर मज्जन नहि जाउँ ॥

कँवल देखि संपट्ट गह्यौ, चकही संग बिछोह ।
मो मुख पुरन चंद सम, निरखत दुख अति होइ ॥

वह कलंक की कला दिखावहि । पून्यो चन्दस सवानहिं आवहिं ॥
तू गंभीर सहस रस काला । समतां लै ऊपर कै पाला ॥
तव मुख रूप रैन दिन नीको । सूरज होइ देखि कै फीको ॥
रोस बचन जब माधव कहई । भुज भरि कामकंदला गहई ॥
बैठि सेज पुनि करहु बिलासा । महकत जेहि ठां सकल सुवासा ॥

मधु कुरल विध्यौ मदनरस, को ये पवन मदनेमु ।
नैन प्रान तन मन फल्यौं, छिन न प्रेम कैं प्रेम ॥

ऐसे बचन जौ राजा कहई । माधव सूर चेत जिय धरई ॥
पुंछहु कामकंदला तोही । अब मैं चलहुँ विदा दै मोही ॥
राजा बात सुनै मग पावहि । मोहि तोहि लै भार झुकावहि ॥
कहै कंदला बूझै नहिं तोही । ऐसे बचन सुनावहु मोही ॥
तोहि चलत मोरे प्रान चलाहीं । पलक ओट आँखिनि अकुलाहीं ॥

चलन कहत है मित्र, स्रवन सुनत प्रानहि चलहिं ।
अति ब्याकुल मन चित्त, सजल नैन भरि भरि ढरहिं ॥

तुम सुजान माधव सब जानहु । राज कहे कर विलग न मानहु ॥
राज सिद्ध धनमद जिहि होई । सकल बीच बस करै जु कोई ॥
कहि माधो सुनि तेरी चिन्ता । राज अपनो होइ न मिता ॥

राजा त्रिया सुनारि, बिटिया रोकष आगि जल ।
पाँसा साँपिनि हारि, ए दस होइ न आपने ॥

यह जिय जानि सोचि करि कहौं । दिन दस जाइ और पुर रहौं ॥
यह जग में बिधि कियो सँजोगु । जिहि मिलना तिहि होइ वियोगु ॥
कर्म रेख सों कछु न बसाइ । जो विधि लिख्यो सो मेटिन जाइ ॥
मिलन बिछोह बिधाता कीन्हां । दमयंती नल को दुख दीन्हां ॥
मिलि बिछुरै जानहिं दुख सोई । बिछुरि मिलन दुहु तन सुख होई ॥

आलम मिलन बिछोह, तीछ्ण सकल सँताप ते।
तपत अंग जनु लोह, बिरह अग्नि इमि पर जरहि ॥

बोलहि नारि बचन अन चैनी। माधव रहहु आजु की रैनी ॥
ललित कुसुम भरि सेज बिछावहुं। भुज भरि अकम भरि लपटावहुं ॥
परी साँझ भइ निसि अँधियारी। सखी पहुप भरि सेज सँवारी ॥
बहुरि सिंगार कंदला कीन्हें। अंग अंग लै भूखन दीन्हें ॥
करि सिँगार माधौ पै आई। जुगल सेज पर बैठे जाई ॥

आगम बिरह वियोग, बिछुरन मूल जु रहत जिय।
मिलत मैन संजोग, बचन वियोगिनि उच्चरै ॥

... ... न कंदला कहई। रजनी बीति अल्प ह्वै रहई ॥
ऐसा कछु कीजै ... ... । बाढै रैनि न होइ सकारा ॥
तब माधौ वीना कर लीन्हा। ... ... नयननि सुविलीन्हां ॥
सरस बजावहि वीन सुरंगा। टिक्यौ चंद थकि रहे तुरंगा ॥
... ... कुलानै। बाढ़ी रैनि न होइ बिहानै ॥

स ... , राहुजाइ सूरज गिलहु।
चलन कहत पिय प्रात, रैनि त्व निधि ॥

बढ़ी रैनि नहि होइ उँजियारा। तब माधव धरि वीन विहारा ॥
थक्यौ नाद मृग चल्यौ उदासा। अथयों चंद सूरज परकासा ॥
वीती रजनी पृथ्वी जागी। माधवनल उठि भयौ विरागी ॥
पुनि कामा सो अग्या लेई। आग्या लै मारग पगु देई ॥
कहै नारि हौं ही तुम थाहूं। हौं न कहौं माधौनल जाहू ॥

रसना पाकौ सोइ, चलन कहत जो मित्र को।
मंद द्रिस्टि मति होइ, जो निरखै बिछुरन सजन ॥

करि धोती पोथी करि बाँधै। उठ्यो विप्र वीना धरि काँधै ॥
गहि रही कामकंदला बाहीं। हौं तोहि जान दैउ जो नाहीं ॥
कहति काम ये मीत बताउ। कैं जु चले मन मोर लुभाउ ॥
अहो मीत सजन परदेसी। विद्याधर मनमोहन वेसी ॥
मारि कहा रिनि मेटौं दाहू। ता पाछैं तुम पर भुमि जाहू ॥

नैन झरत जिमि मेह, गरव देह भीजत सकल।
बिछुरत नयौ सनेह, मन ब्याकुल तन थकित भय ॥

कहै त्रिया पूजै आस तिहारी। कर अंजुल मुहि दीजौ वारी ॥
प्राननाथ अब क्यों इच्छा आवै। ताके आंसू भरि भरि आवै ॥
रति गति मति लै गवनहु मोरी। लै सुखु दै दुखु संघहु जोरी ॥
नेहु नाव तवगुन करि लीना। छांडि बियोग समुद महँ दीना ॥
बिन गुन नाउ लगहि नहिं तीरा। करि हा हीन झकोरहि नीरा ॥

नैन समुद तारंग, प्रीतम बिनु उमगे फिरहिं।
बिनु गुन बोहित अंग, बूड़हि सो त्रिय कंत बिन॥
तजि समीप जिनि करहु बियोगिनि। तुम बिछुरत ह्वैहौं हम जोगिन॥
कंथा पहिरि जटा सिर केसा। घर घर फिरहुं तपस्विनि भेसा॥
मुद्रा पहिरि भस्म सिर लाऊं। मुख माधौ माधौ गुहिराऊं॥
किंगरिय गहि दिन रैन बजैहौं। जोगिनि ह्वै माधौ गुन गैहौं॥
घर घर वन वन ढूढ़ौं तोही। सो कछु करौं मिलौ जो मोही॥
खंड खंड तीरथ करौं, कासी करवत लेहुं।
मन रच्छया करि मरि जियौं, ढूंढ़ि मित्र को लेउं॥
जिन दै जाहु बिरह के हाथा। पाइन परहुं लेहु मुहि साथा॥
ये हो मीत पंडित पंइडोही। बाट माँझ जिनि छाड़हु मोही॥
मोहिं मारि जाहु पिय नाहा। छाँड़हुं प्रान न छाड़हु बाँहा॥
चंद विलोकत सकल चकोरा। चकवी सती होई जो भोरा॥
नैन सकल निरखत भावंता। जिय दूखत सुनि बिछुरि भवंता॥
आलम प्रीतम के मिले, अंग अंग सुख होइ।
पलक ओट जग लाज तैं, रहौं सकल सुख होइ॥
कहै नारि सुनि विप्र उदासी। मेरे गृह जो करहु निवासी॥
जिहि मुख सुखद बचन सुनावहुं। तेहि मुख काहे चलन कहावहु॥
माधो नैन नीर भरि आये। कामकंदला बचन सुनाये॥
बोलै विप्र नैन बरसाहीं। सुनहूं नारिय छाँड़हु बाहीं॥
तब मुख निरखि नैन सुख पाऊं। बिछुरि जानि कै वहि मरि जाहुं॥
भावंता के बिछुरनै, नैन उमगि जल धार।
मन अधीर तन पीर अति, बिरह उदेग अपार॥

---

१ माधव-कामकंदलावियोग

सखी आइ कर बांह छुड़ाई । चल्यो विप्र त्रिय गई मुरझाई ॥
कांम मूर्छित धरनि मह परी । सखी आइ करि अंकन भरी ॥
लै करि सखी सेज पर धाई । तन व्याकुल जनु मिरगी आई ॥
अधर सूक जिय रहै निरासा । सखि जीवन की छांड़ी आसा ॥
मूदि नासिका छिरकहिं पानी । पुहुप मूरि औषध बहु आनी ॥

करि उपचार सखी थकी, रहीं बिसूरि बिसूरि ।
बिरह भुवंगम वा डँसी, ताकौ मंत्र न मूरि ॥ १

पुनि इकु मंत्र सखी मिलि थापहिं । कान लागि माधवनल जापहिं ॥
माधौ माधौ उहिं गुहिरावौ । जागि नारि विप्र जनु आयौ ॥
सुनत नांउ जब नैन उघारे । श्रवन नैन जल मानहुं नारे ॥
सूनौं भवन देखि बिनु मित्रा । भई पीत तन व्यापी चिंता ॥
बिन काँदव जिमि कमल सुखाई । बिना सूर्ज ज्यों तेज मुरझाई ॥

जैसे जल स्यौं मीन, घरी एक ज्यों बिछुरई ॥
सदा रहै तन छीन, छिन ही छिन दुख संचरै ॥ २

यह हिय वज्र वज तैं गाढ़ा । पाल्यौ वज्र वज्र मैं बाढ़ा ॥
जा दिन मीत बिछोहा भयऊ । तँवकि निखंड खंड है गयऊ ॥
बिछुरन जस भा ताल तरकै । पापी हियौ नेक नहिं फरकै ॥
ऐसे निलज रहत नहिं प्रांनां । मीत बिछोह सुनत किमि काना ॥
गये न प्रान मीत के संगा । ऐसे निलज रहत गहि अंगा ॥

आलम मीत विदेसिया, लै गयो संपति सुष्ष ।
नैन प्रान तन विरह बसि, रहे सहन को दुष्ष ॥ ३

गयो विप्र चित्त उचाटउ । अब कहं पांऊं मीत बतावउ ॥
तीन्या अपने होई न कोई । छिन इक बिछुरै नैन दुख होई ॥

चंदन जान नहिं पीर, तादिन भरहि चकोर दुख ।
व्याकुल रहै सरीर, निसि अँधियारी सांस धुनि ॥ ४

तजि सनेह हम धौन लगायौं । कामकंदला बहु दुख भयौं ॥
दिन बीतै रजनी ज्यों आवै । भरै नैन जल पलु न लगावै ॥
खिन माधौ माधौ गुहिरावै । खिन भीतर खिन बाहिर आवै ॥
बिरह ताप निसि सेजन सोवै । कर मीजै सिरु धुनि धुनि रोवै ॥
ऐसे दुख करि रैन बिहावै । कोटि जतन बासर नहि पावै ॥

जो दिन होइ तो निसि रटै, जो निसि होइ तो प्रात ॥
भा दिन सांतिन रैनि सुख, बिरह सतावत गात ॥
कामवंत बिरहा बसि भई। बिद्याबुद्धि सकल नसि गई ॥
नृत्य गीत गुन की चतुराई। गति मति आनि बिरह बौराई ॥
जिहि तन मन बिरहा संचरै। सो जिउ जीवै नहि पुनि मरै ॥
बिरह अनल सोइ लै सुख जारइ। रोम रोम वेदनि संचरई ॥
पाउ हर्ष सुख रहै न कोइ। जिहि सरीर बिरहानल होइ ॥
बुधि बिद्या गुन ग्यान, प्रेम चाव धुनि हर्ष बल।
सब तजि होइ अयान, जा घट बिरहा संचरै ॥
कामकंदला भई बियोगिनि। दुर्बल जनू बर्स की रोगिनि ॥
अंजन मंजन भोग बिसारे। सजल नैन बहैं जल के नारे ॥
वस्त्र मलीन सीस नहिं धोवे। लंक टेक माधौ मग जोवै ॥
नींद न भूख न भावै पानी। काया छीन दीन मुख बानी ॥
हा हा आइ स्वास के गाढ़े। छिन छिन बिरह अनल तन बाढै ॥
हा हा प्रान न संग गय, जब बिछुरे भावंत।
कर मीजै बस्तर धुनै, गहै अँगुरिया दंत ॥
पलक बाह नहि रहहिं नियारे। मंगन भये नैन के तारे ॥
माधौ पीर कंदलहिं व्यापी। मनमथ अंग तपति त्रिय तापी ॥
तोरै तनु मनु डारैं रहही। हृदै पीर नहिं का है कहही ॥
छिन अचेत छिन चेतहि आवहि। पुनि पुनि बिरह बिया तन तावहि ॥
स्वास लेत पिंजर ज्यों डोलहि। हाहा सजनी मुख नहि खोलहि ॥
रकत न रहै सरीर, पीत पत्र के बरन तन।
डोलत अतिहि अधीर, पवन तेज नहिं सहि सकत ॥
सखी आनि मुख नीर चुवाहीं। हिदै तपत घँसि चँदन लगावहिं
कुसुम सेज पर जो पगु धरई। तिहि छिन काम अग्नि पर जरई ॥
त्रिविध पवन त्रिय सहै न पारै। चंदन चँद अधिक तन जारैं ॥
पीक मधुर धुनि बोल सुनाबै। मदन घाउ पर जनु बिष लावैं ॥
गीत नाद रस कवित कहानी। श्रवन सुनत ये विष सम बानी ॥
अकुलाई तन बिरह के रस सँजोग रसुलीन।
ते सब काम बियोगि, निसि बासर दुख दीन ॥

---

३ माधव विरह वर्णन

बिछुरे कामकंदला नारी। माधौनल मन भय दुख भारी ॥
बिरह के साँस जु हिरदैं बाढ़ैं। गहि गहि आहि आहि कै काढ़ैं ॥
बन बन फिरै नैन जल धोवै। विरह सँताप नींद नहिं सोवै ॥
छिन बैरागी बीनु बजावै। सूखे गात अगिनि जनु लावै ॥
मन चिंता करि त्रिया वियोगी। गोरख ध्यान रहै जिमि जोगी ॥

अगम अथाह अलेख अति, विरह समुद्र अगाध।
प्रीति हिरानी बुद्धि जनु, भूले ब्रह्म समाध ॥

विरह समुद्र अगम अति आही। बूड़ि मरै नहिं पावै थाही ॥
बुधि बल स्यै कोउ पार न पावै। जौ नर सप्रँग गुन चढ़ि धावै ॥
विरह डसत नर जिऐ न कोई। जौ जीवहि तौ बौरा होई ॥
विरह चिनग जिहि तन पर जारैं। छिन छिन विरह अगिनि विस्तारैं ॥
सोइ अगिनि माधौनल लागी। बीनु बजाइ रहे बैरागी ॥

हिऐं हूक भरि नैनजल, विरह अनल अति हूम।
अतंर घर संवर बरै, स्वास प्रगट भइ धूम ॥ २

जिय बिनु सूक पत्र ज्यौं डोलै। सूल सहित माधौनल वोलैं ॥
निसि दिन विप्र पीर करि रोवहि। वन पंछी निसि नींद न सोवहि ॥
बाघ सिंहं कोइ निकट न आवहिं। चहुँ दिस विरह अग्नि अति धावहिं ॥
विरही नैन सजल मुख भरे। सीतल होत तपत जिहि हरे ॥
स्वासा वेग नैन भरि पानी। सानल गत बिरहा की जानी ॥

वस्त्र मलीन उदास तन, उभय स्वास बहु लेइ।
नींदं भूख लज्जा तजै, विरही लच्छन एइ ॥ ३

माधौ नैन रहे भरि आँसू। सूखो चर्म रुधिर अरु माँसू ॥
तब माधौ मन माहिं विचारहि। विरह वासु मन आपु सँभारहि ॥
अहो वन बिरह जोर मरि जाँहू। कामकंदलहि हौं न मिलाऊं ॥
अब खोजहु कोउ जग उपकारी। मिलवहि मोहि कंदला नारी ॥
ढूँढौ पर वेदनि जिहि होई। दुखखंडन नर जौ कहूं होई ॥

लच्छ दैन संकट हरन, जीवन प्रन मति धीर।
तिहि के कलि उत्तम क्रम, ते खंडहिं पर पीर ॥ ५

विक्रम सहायता खंड

यहै मंत्र माधवनल लागा । बल सँभारि कन तजि मग लागा ॥
कोइ न भयउ कलि त्रिया वियोगी । माधौनल जो भरथरि जोगी ॥
जग्य बिचारि माधौनल कहै । चल्यौ जहाँ नृप विक्रम रहै ॥
पर दुख हरन दसौं दिसि दैनी । सुनियतु विक्रम नग्र उजैनी ॥

सुध संगति बहु करत है, जो मन उत्तम होइ ।
पर दुख खंडन तौ गनै, नेह दान मुहि देइ ॥

काम के बस माधौनल चला । किहि विधि मिलै कामकंदला ॥
वीना विरह साथ जो लीन्हे । नींद भूंख प्यास बस कीन्हें ॥
मारग चलैं सकल दुख लैनै । पहुँच्यौ जाइ नगर उज्जैनै ॥
धर्मपुरी सब नगर सुहावा । हाट पटन बहु देखि बनावा ॥
चहुँ दिसि नगर बाग फुलवारी । ताल कूप सलिता बहु भारी ॥

कनक खचित मनि मंदिरनि, कलस धुजा फुहराति ।
राब रंक नहिं चीन्हिए, पूरन पुर जिहिं भाँति ॥

अति वियोग माधौ कौ भयऊ । ततखिन चलि मंदिर में गयऊ ॥
पुनि पुनि हाट पटन फिरि देखै । आनँद पुरी बराबरि लेखै ॥
छत्तिस पुरी नगर बैपारी । बैठे हाट महाजन भारी ॥
कहूँ नाच कहुँ पेखन होंई । कहूँ पवारा गावत कोई ॥
कहुँ रामायन भारथ होई । कहुँ गीता कहुँ भागवत होई ॥

कहुँ पंडित द्वै सहस हैं, कहूं करहिं कवि वाद ।
कहूँ मल्ल विह्वल भिरहिं, कहूँ गीत कहुँ नाद ॥

अति उदास माधौनल भयऊ । तब राजा के मंदिल गयऊ ॥
राजमँदिर मनिगन उँजियारा । कै विधना कैलास सुधारा ॥
द्वारैं पंडित तापस ज्ञानी । देस देस के भूपति जानी ॥
द्वार भीर नरपति कैं होई । नैकु जुहारु न पावहि कोई ॥
देखि विप्र मन भयउ उदासा । राज भैंट की तजि जिय आसा ॥

दिन उदास दहुं दिसि फिरहि, नैन द्दगन के नीर ।
येक न काहू सौं कहै, अंतर गति की पीर ॥

दिवस व्याधि माधौ कौं लागी । मन महँ कामकंदला जागी ॥
बिप्र एक संग करि लीन्हां । करि अहार माधौ मो दीन्हां ॥
करि अहारु माधौनल गयौ । नदी तीरक उदक जो भयौ ॥

हाटक यह धारे सकल, भरहिं वारि पनिहारि।
येक नारि मजन करहि, अंग मलाइ सुधारि ॥१

कनक कलस भरि सबरी नारी। धरि धरि सीस चलहि ते वारी ॥
मारग छाँड़ि चलहिं ते नारी। तोरहिं फल औ फूल उपहारी ॥
येकै चलैं घूँघट पट डारैं। चंदन वंदन तप अंगारैं ॥
लखि चरित्र माधौ मुख फेरा। दुख व्यापौ तहँ कामा केरा ॥
निसु दिन रहै तहां चितु लाई। पाहन रेख न मेटी जाई ॥

द्रग पूरन की तारिका, मूरति रही समाइ।
जित देखौ तित सो त्रिया, पलक न इत उत जाइ ॥५

दिन इक माधौ गयौ सुजाना। मंडप महादेव कौ जाना ॥
मंडप देखि भेख मन भावैं। तहां राइ विक्रम नित आवैं ॥
तिहिं मंडप माधौनल गयौ। विरह ताप व्याकुल मनु भयौ ॥
जामैं विरह व्यापै सोइ जानै। अन जानत मुख कहा वखानै ॥
मन उदास माधौनल भयऊ। दोहा लिखि मंदिर महँ गयऊ ॥

कहा करौं कित जाऊँ हौं, राजा रामु न आहि।
सिय वियोग संताप बस, राघौ जानत ताहि ॥६

रामचंद्र नहिं जग महँ आहीं। सिया वियोग किधौं दुख जाहीं ॥
राजा नल पृथिवी सौं गयऊ। जिहि बिछोह दमयती भयऊ ॥
वनवासी अरु भेद सँजोगी। राजा फूहर वाचर भोगी ॥
विछुरत त्रिया भयउ सो जोगी। भरत राज पिंगला वियोगी ॥
राजा रतनसेनि नहिं भयऊ। पदमावति लगि सिंघल गयऊ ॥

मधुकर कमलहि आहि, कोजि मालती वियोगु।
ये सब गये जगत्र मैं, विरही करि करि जोगु ॥७

दोहा लिखि माधौ वैरागी। गयौ नगर कामा अनुरागी ॥
तिहि मंडप राजा पगु धरई। महादेव की पूजा करई ॥
पूजा करि प्रदच्छिना देई। राज दृष्टि दोहा पर गई ॥
दोहा बाँचि राज यह कहई। विरह अग्नि किहि व्यापति अहई ॥
मोरैं पुर विरही कोउ आवा। विरह वियोग सताप सतावा ॥

आलम तै नर तुच्छ मति। जे पर हँथ मनु देहि।
सुख संपति लज्या तजैं, दुख विरहा सोइ लैंहि ॥८

राजा कहै सुनौ सब कोई। देखहु नर विरही सो होई ॥
मोरे नग्र दुखी जो रहई। सकवंसी मोसौं को कहई ॥
अब जो सों विरही नर पांउ। सुनि वेदनि सब तुरत नसांउ ॥
कोइ वह पुरुष ढूँढ़ि सो ल्यावइ। राजा कहै बच्छि सो पावइ ॥

दुख खंडन नृप दयानिधि, तन पीरे पर पीर ।
पुनि पुनि चितचिंता करहि, यह विक्रम मति धीर ॥ १०

राजा अन्न पान नहिं भावहि । मन बच जब लग जो नहिं आवहि ॥
नर नारी सब ढूँढ़न धाईं । विरही लच्छिन सकल बुझाई ॥
ढूँढ़हिं हाट पटन फुलवारी । ढूँढ़त बन महँ झूलत वारीं ॥
ज्ञानवती दूती इक आई । विरह वियोग खेल सब रहई ॥
सो चलि जिहि मंडप महँ जाई । माधौनल ता छन गयो आई ॥

तन दुर्बल अँखियाँ सजल, भरि भरि लेत उसास ।
चित उचात मन चटपटी, विरह उदोग उदास ॥ ११

मन उचाट छिन बीन बजावहि । जोरे सुनहिं तिहिं विरह सतावहि ॥
खिन खिन कामकंदला रटई । स्वाति बूंद को चातक चहई ॥
ज्ञानवती त्रिय सुनि मुख बानी । मन मह कही यहै सुग्यानी ॥
विरही पुरुष आइ यह सोई । जाकर दुखु राजा कौं होई ॥
कामकंदला त्रिया वियोगी । तन मन छीन भयौ सो जोगी ॥

मन मारैं वस्तर मलिन, द्रग भरि ऊँचे साँस ।
तन दुर्बल पिंजर झलक, रंचक रकत न मांस ॥ १२

ज्ञानवती छिन इक कहि बानी । सखी बीस दस आनि तुलानी ॥
कहै सखी सौं सो यह वह आही । नरनारी ढूँढ़त सब जाही ॥
अब लै चलहु वेगि गहि बाहीं । सखु पावइ विक्रम नर नाही ॥
पूछहि बात न नल मुख बोलहि । दुर्वल गात पवन ज्यौं डोलहिं ॥
जो कछु बोलहिं उतर नहिं देई । नीचे नैन स्वांस भरि लेई ॥

रहै ताहि को ध्यानु, मन माला हित मंत्र जपि ।
ज्यों जोगी करि ज्ञान, स्त्रवन सुनत नवगति मुखहि ॥ १३

बोलहि सखी सुनहु बैरागी । विरह ताप सुख संपति त्यागी ।
बोलहु बचन पीर सब कहहू । काहे दीन छीन तन रहहू ॥
ताकी सप्ति मानि मन बोलौं । जिहि वियोग विरहा बस डोलौं ॥
छिन एक बचन कहै छिन रोवहि । नीरज नैन कमल मुख धोवहि ॥

दुख को बात दुखिया कहै, दुख वेदनि सुख त्यागि ।
दुख समुद्र सोइ परयो जो, रहयो अंग दुख लागि ॥ १४

विछुरत कामकंदला नारी । माधौनलहि भयौ दुख भारी ॥
पुनि मुख कहै विरह की रीती । अपनी . कामकंदला प्रीती ॥
अति उचाट मुख विरह वखानै । जिहि यह ब्याप्यौ सोई जानै ॥
माधौ पीर सखी कौ ब्यापी । विरही वात सखी सब थापी ॥
सुनत बचन त्रिय अंग पसीज्यौ । नैननीर कंचुकि तन भीज्यौ ॥

हों वलि वलि जिहि जीव, पर वेदनि जिहि वेधियौ ॥
घृक ते पाहन हीय, नीदन भिदहिं पषान मैं ॥
बोलहि ज्ञानवती गुन नारी। चलहु विप्र अब नगर मँझारी ॥
हम राजा विक्रम की दासी। तुम वेदनि मन माहिं उदासी ॥
हम पठई राजा तुम पासा। चलहु वेगि मन पूजै आसा ॥
चल्यौ विप्र माधौ उहि संगा। त्रिय वियोग तनु रह्यौ न अंगा ॥
जहं सकवंधी हतौ नरेसा। राजा मंदिर कियौ प्रवेसा ॥
ज्ञानवती इमि उच्चरहि, सो विरही है आइ।
विप्र देखि राजा उठ्यौ, कीन्हौं आदर भाउ ॥
राजा वरन देखि कै कहैं। नख सिख विरह अनल तनु दहै ॥
मूरति नयन रोइ जल धारै। कूंदन देह नेह बस मारैं ॥
पूछहिं राइ सुनहु द्विज देवा। अज्ञा होइ करहुँ सो सेवा ॥
कवन देस जासौं पग धारे। दरसन देख्यौ भाग हमारे ॥
अपनो नाँउ कहौ वैरागी। किहि के नेह फिरहु सुख त्यागी ॥
किहि कारन भये बिरह बस, दुख सँग फिरहु उदास।
कहौ विथा हिय पीर सम, विधि पुजहिं सब आस ॥
राजा मो माधवनल नामा। उत्तम संग करहु बिस्रामा ॥
विद्या पढ़ेउं करन संगीता। समुद्रिक जोतिक गुन गीता ॥
काव्य कोक आ गमहि बखानहुं। पिंगल पढ़ेउं सकल गुन जानहुं ॥
कर मृदंग गति बीन बजाऊँ। षट रस राग रागिनि सँग गाऊं ॥
नृत्य चतुर्गन वेद विनानी। केलि चातुरी उकति कहानी ॥
पसु भाषा औ जल तरन, धातु रसाइन जानु।
रतन परख औ चातुरी, सकल अंग सग्यानु ॥
पुहुपावति नगरी मों ठाऊं। गोबिंद चंद राज को नाऊ ॥
कर्म रेख सन विर्गहु भयऊ। तिहिं मोहिं देस निकारौ दयऊ ॥
तव मैं आन उदास मनु कीन्हां। कामावति नगरी पगु दीन्हां ॥
कामसैनि राजा तहँ आही। सुरनर सकल सराहैं ताहीं ॥
तिहि पुर कामकंदला नारी। रूप राग विद्या दस चारी ॥
नैन लगे तिहि रूप, तजि गुनबुधि वल चातुरी।
ज्यों दादुर वस कूप, निकसत परहि जु विरह बस ॥
जा दिन मोर जन्म जग भयऊ। चित परि जहां ब्रह्म लिखि गयऊ ॥
मो त्रिय निरख न बिसरहिं काहू। चित कर ध्यान रहैं द्रिग वाहू ॥
अंपन रही ते अंपन लागीं। जिहि निरखत सुख सँपति त्यागी ॥
अनुपम रूप विधाता दीन्हां। आँखिनि निरखि जीउ हरि लीन्हां ॥
जिय बिनु सदा रहैं नहिं आसा। हिरदै नाहिं जु कियौ निवासा ॥

भावंता के मिलन कौं, हा हा पंख न कीन।
नैन तपत हैं दरस कौं, तन परसन को जीय ॥

पंडित गुनी सकल बुधि ग्यानी। देखि विप्र मुख रह्यौं बिनांनी ॥
राजा देखि अचंभौ रहई। कुछवक उतरु माधव कहं देई ॥
हौं पंडित तुम जग्त गुसाई। सब गुन पूरन काम की नांहीं ॥
तुम देखत त्रिभुवन वस होई। तुम ही वस्य करहि जो कोई ॥

यह मन मानिक वस करन, वाति अंत लै देहु।
विरह वस्त्र सुख त्यागि कै, दुख बियोग सब लेहु ॥

सुनि राजा माधौनल कहई। यह मनु जौ अपनै बस रहई ॥
नैन बसीठ डीठ अति आँहीं। आपहिं मनु दै फिर अकुलाहीं ॥
निरखत नैन कंदला नारी। लाग्यों मनु दीन्हौं तनु डारी ॥
तिहि विछुरत अन अंबु न भावहि। छिन छिन प्रेम अधिक मन आवहि ॥
मित्र वियोग विरह दुख होई। जिहि दुख रहैं जानै पै सोई ॥

विछुरत ऐस वियोगु, स्वास उर्द्धसी लैं रहै।
अब विधि करत सँजोगु, नातर प्रान विमुक्त है ॥

राजा कहैं सुनहु गुनरासी। गनिका सौं नहिं प्रीति गनासी ॥
राजा पूंछहि विप्र सुजाना। कहियौ उदासी पुनि ग्याना ॥
जब लगि माडो की नहिं रीती। तब लौंहीं गनिका सौं प्रीति ॥
गनिका प्रीति न सदा चलाई। धन सों प्रीत बिन धन चलि जाई ॥
केलि फूल दासी कौ हेतू। रूप रंग अंतरगति सेतू ॥

नैन अनत चैना अनत, अनतै चित्र निवास।
जनि पातर परतीत करि, विस्वा बिसु विस्वास ॥

बालहिं विप्र सुनहु नर भारी। आँखिन बीच सुदेखेहुं नारी ॥
जो जेहि राता सो तिहि भावहि। तेहि विनु सून द्रिस्टि जगु आवहि ॥
जो जाके मन मांह बसाई। तजि वंदन सालहि गज पाई ॥
सप्त समुद्र सलिता जलु वहई। चातक स्वाति बूंद कौं चहई ॥
तारा गगन भरे दुति मंदा। दुखित चकोर रहै बिनु चंदा ॥

जो जिहि राता होइ, निसि वासर सो मन वसहि।
ता बिनु जियै न कोइ, बिछुरत हर जल मीन ज्यौं ॥

जो चाहौ सो हम पर लेहू। तजौ विप्र गनिका सौं नेहू ॥
हौं तो तजौं नेह कर धरई। यह मन जौं अपनै बस होई ॥
गुन धन जीव कंदला लीन्हां। दुदं उदेग मोहि कर दीन्हां ॥
रकत मांस कछु रह्यो न चीन्हां। आँसू रुधिर हिदैं करि लीन्हां ॥

जब लगि जीवहुं मरि जियहुँ, सुर्ग नर्क विस्राम।
तब लगि रटौं विहंग ज्यौं, काम कंदला नाम ॥

सो मतिहीन वज्र तनु होई। संग्रह नेहु न जीवै कोई ॥
पूरब जन्म कोटि जौ करई। तब सो नैकु पंथ पगु धरई ॥
मानुस पसु अंतरु यह अहई। मानव सोइ नेहु जो बहई ॥
ब्रह्म ग्यान पावै पुनि सोई। जिहि तन तेज नेह कौ होई ॥
अंध कूप वरि देहु, गुप्त प्रगट कोइ नहिं लखहि ॥
जानै दीपक नेहु, तब सब देखैं रूप गुन ॥
माधौ बचन सुनै जो कोई। सकल सभा को आवै रोई ॥
जो रे सुनै सो देखन धावै। जो देखै तेहि विरह सतावै ॥
नारि बैठहीं है इक संगा। करैं बात तब दहैं अनंगा ॥
नगर एक आयौ बैरागी। अति सुदंर रस जान सुखत्यागी ॥
प्रेम नैम करि रैन दिन, अंग चढ़ायौ राखि।
सुनि धुनि सोई सीत कौं, दुदं बिरह अस भाव ॥
एक समै विक्रम नर नाहां। गहि लीनी माधव नल बाहां ॥
विप्र संग लै धाम सिधारा। दीप मसाल मनिगन उंजियारा ॥
मंदिर जोति मानौ कविलासा। चंदन मिली अनूपम वासा ॥
कनक भूमि पाटंवर वासी। कुंकुम छिरकत केसरिरासी ॥
तिहिं मंदिर सिंहासन छाजा। तिहिं पर बैठि विप्र अरु राजा ॥
कवित नाद गुन चातुरी, अर्थ ज्ञान सिंगार।
जो राजा मुखउच्चरहि, सो माधौ करै विचार ॥
जो बूझै विद्या नर नाहा। सो संपूरन माधौ माहा ॥
तब राजा उठि चरन पखारे। अहो विप्र तुम ईस हमारे ॥
माँगहु मन इच्छा जो होई। अर्थ द्रब्य हम पुजवहिं सोई ॥
मागौ यहई बात सुनि लीजै। मौं कह कामकंदला दीजै ॥
जिहि कारन हम तन मन खोदब। रकत धार निसि बासर रोयब ॥
वेगि देहु करतार, बिव अँखियन पुनि पंख वलु।
उड़ि देखौं इक बार, भांवता के दरस कौं ॥
राजा कहै सुनु विप्र गुसाईं। दिन दस रहौ नलन की नांहीं ॥
दल पैंदल सैना सँग लेऊं। लै तुहि कामकंदला देऊं ॥
वर वर बूझि जीति मुह मांगैं। राजा बांधि दैउं तुहि आग ॥
दिवस दिवस राजा बौरावहि। माँगि विप्र इहिंठा चित लावहि ॥
यह मन दियौ प्रैम चित मोहा। रह्यो लागि चुंबक जनु लोहा ॥
मोहन मूरति चित्र लखि, चित पर धरी सुधारि।
सो पलु भूलै महि कहूं, जो बीतैं जुग चारि ॥
विप्र संग विक्रम नल भारी। गयौ संग लै भूमि सँवारी ॥
ग्रंध्रव गुनी आये बहुभारी। राजा करहिं विप्र मनुहारी ॥

ताल पखावज बोलि मँगाये। गाइन गुनी कपरिया आये ॥
कमल बदन मृग नैन सुहाई। पातुर बीच काछिकैं आई ॥
मध्य छीन औ भूखन सोहैं। नैन निकट करि सब मन मोहैं ॥
एक भूमि वैडारिये, दामिनि ज्यों छिपि जाइ।
पुष्प लता जिमि पायन, धुनि अति चंचल फहराइ ॥
नर निक्रम औ विप्र उदासा। देखहु नैन करहु मन हासा ॥
करन कपोल विषै धरि हाथा। नैना भरि नीचै करिमाथा ॥
बोला राउ नैन कत भरहू। देखौ नाचर हंस जिय करहू ॥
मैं मांग्यौ कित सावक साजू। देखौ विप्र नृत्य तुम आजू ॥
माधौनल आगु करि लीन्हां। जिहि जहँ नेह पसारा कीन्हां ॥
धनि विक्रम सक बंधिया, पर दुख हरन नरेस।
विप्र काज कौं उठि चल्यौ, छाँड़ि धाम धन देस ॥

कंदलाप्रेम-परीक्षा खंड

जोजन दस नगरी जब रही। राजा सींव आनि पुनि गही ॥
राजा मंत्र एक जियं धरैं। इक रन बीच सैन दुइ करैं ॥
सँग खवास राजा असवारा। आयो नग्र लगी नहि बारा ॥
जाके नग्र विप्र हैं दुखी। सो त्रिय देखहू सुखी कि दुखी ॥

राजा पूछैं नग्र मैं, कामकंदला नाम।
कहियत गुनी विचित्र हैं, सो किहि दिसि ताकौ धाम ॥

मंदिर पूंछि सो लियौ नरेसा। उत्तर पौरि महँ कियौ प्रवेसा ॥
भीतर मंदिर पौरिया जाई। कामकंदला बात जनाई ॥
उत्तम पुरिष पौरि इक आया। राजबंस कोइ रूप दिखावा ॥
सुनि कै दासी पौरहि आई। राइ मँदिर लै गईं लिवाई ॥
चित्रसार राजा बैसारा। बहुत दीप दीपक उंजियारा ॥

कामकंदला बिरहवसि, वस्तर गात मलीन।
मुख माधौ माधौ रटै, होइ सो छिन छिन छीन ॥

नृत्य गीत विद्या चतुराइ। गई बिसरि गुन की अतुराई ॥
बदन मलीन पीत रँग भयऊ। रकत माँस सूखि सब गयऊ ॥
राजा बोलहि मीठे बैना। बिरहिनि नारि न जोरहि नैना ॥
राजा बोलहि उत्तर नहिं देई। वरुनी छूटि नैन भरि लेई ॥

गनिका गृध सौं काज, ऊँच नीच चीन्हैं नहीं।
बोलहिं बचन जै लाज, बस करि राखैं पर पुरिष ॥

ऐसे बचन ना कहौं भुवाला। विरह वसी जनु खाई काला ॥
सुनु विप्रहिं दषिन करि दीन्हा। देषत ताहि नैन हरि लीन्हां ॥
देखौं ताहि जौरे मन माई। तिहिं देखत दोउ नैन सिराई ॥
मन धन जीउ विप्र लै गयऊ। तिहि बिनु सून द्रिस्टि जग भयऊ ॥
सो प्रीतम दै गयौ ठगौरी। तजि गुन रूप भई हौं बौरी ॥

जेहि मारग प्रीतम गये, नैन गये तेहि मग्ग।
दै दूनौ दुखु विरकौ, करि सूनौ सब जग्ग ॥

तब बल पग परसै वरनारी। रोसवंत कीन्हौं सुख वारी ॥
कहै कंदला सुनु नृप भारी। जक्त पूज्य तुहि लाज हमारी ॥
ज्यों हिय माँझ गुप्त जिउ रहई। त्यों द्विज रहै सदा सुख दाई ॥
दुज मन मांहि निवास जो कीन्हां। बोलनि तजि रसना हरि लीन्हां ॥

आलम प्रान पयान अब, करत हिएं अन आस।
निसि वासर द्रग तारका, प्रीतम कियो निवास ॥
राजा बूझि देखु इमि बाता। यह वेहिं राती वह एहि राता ॥
इहि के विरह विप्र दुख लीना। विप्र के विरह त्रिया तन छीना ॥
दुहुं की प्रीत रहीं दुहुं छाई। दोऊ मन तन रहे भुलाई ॥
इन मैं अधिक विरह कौ टीका। जिमि आंखिनि कौ मारग नीका ॥
ज्यौं सरवर महं कमल रहाई। बिछुरत नींद रहै कुम्हिलाई ॥
मालति लुवधी अलिरसहि, अलि मालति मकरंद।
बिछुरन विरहा सूल सम, दही विरह के द्वंद ॥
नर के प्रान नारि के संगहिं। नारि के प्रान पुरिष के संगहिं ॥
राजा निरखि रीझि मन माहीं। इन महँ प्रीति कपट कछु नाहीं ॥
इहि जिय प्रीति रीति कौ गहई। त्रिया विरह लगि अति दुख दहई ॥
चाहौं नैन नींद नहिं आवहिं। दुहुं तन अन्न पान नहिं खावहिं ॥
ब्रह्म लोक अमीरस जानहुं। गुन गंधर्वहिं प्रीति बखानहु ॥
आलम ऐसी प्रीत, परतन मन दीजे धाई।
गुप्त प्रगट अंखियां मिलैं, दिवौ कपट पट जाइ ॥
राजा निरखि वियोगिनि नारी। पूंछहि गुरुजन सखी हँकारी ॥
किहि लगि इहि की सुधि बुधि गई। किहि के हेत नेह बस भई ॥
कहै सखी सब कामिनि पीरा। सुनत नैन भरि आवहि नीरा ॥
विप्र एक माधौनल नामा। तिहि के विरह यहि यह कामा ॥
सो प्रीतम दै गयउ ठगौरी। तन मन लाइ प्रेम की ठौरी ॥
यहं पपीह पिउ पिउ करै, छिनु अचेत छिनु चेत।
औरन सुख विरहा अनल, भयौ बरन तन सेत ॥
रूपवंत अति काम के भेसा। सो दुज छांडि गयौ परदेसा ॥
कैंधो चहइ इंदु ठगि गयऊ। कैधों बरस मदन कौं भयऊ ॥
मोहन रूप विप्र वह आवा। नैन लगाइ तिहि मन बौरावा ॥
ताकि चाह कोइ नहि कहई। तिहि विनु त्रिया बिरह बस भई ॥
अन्न नीर एहि नींदन आवहि। दिन उदेग निसि रोइ गंवावहि ॥
मित्र वियोगिनि नारि, धारावरि सहि नैन जल।
रही रोइ पचि हारि, तन तन दुंद उदेग करि ॥
कपट बचन राजा उच्चरई। दुहुं की प्रीति रीझि कैं रहई ॥
मैं देख्यौ माधौनल जोगी। पुर उजैन रह त्रिया वियोगी ॥
नारि वियोगु ताहि दुख भयऊ। विरह के सूल विप्र मरि गयऊ ॥
ऐसे बचन जब राज सुनाए। त्रिया बधन कहँ जम उठि धाए ॥
सुनत कंदला विस भरि गयऊ। धरनि पछार खाइ मरि गयऊ ॥

आलम मीत वियोग को, सबद परयौ जब कान।
लोभ न कीनौ स्वास कौ, गए आहि सँग प्रान ॥
सुनत पिंगला जैसो कीन्हा। ऐसे जीउ कंदला दीन्हा ॥
सखो आनि करि नारी रिखाई। मानहु काल बासुकी खाई ॥
बैठे दसन जीभ भइकारी। किलकै नहिं छुटि गइ जब नारी ॥
रोवै सखो छोरि कै केसा। राजा जिय मह करहि अँदेसा ॥
जिहि लगि विप्र इतो दुख लीना। सो त्रिय बचन कहत जिय दीना ॥
अति वियोग मालति सुनत, सूखे पल्लव मूल।
दुखित साल भये कलित बस, कलह सकत त्रिय सूल ॥
गये प्रान छिन में मरि गई। राजा के मन चिंता भई ॥
सीस धुनै राजा पछिताई। कइ अपराध कियौं मैं आई ॥
प्रथमै तिरिया बध मैं कीन्हां। घोलि हलाहल देखत दीन्हां ॥
जौ जनतेउँ त्रिय देइ पराना। कत हौं वचन सुनाएउँ काना ॥
उत्तर कवनु विप्र कौं देऊँ। वह मरि जाइ दोष द्वै लेऊँ ॥
गात सरोवर पंच वग, प्रान हंस उहिं वारि।
पिसुन बचन किये व्याधि विधि, दीनौ सकल बिडारि ॥
राजा कहै सखी सुनु बैना। विरह दुखित भइ मूँदे नैना ॥
विरह तेज मुर्छित तन नारी। लै आयउ गर रूधि हकारी ॥
यह के प्रान स्वर्ग नहिं गयऊ। पंच भूत आत्मा मूर्छित भयऊ ॥
यह त्रिय करे काल नहिं आयउ। आहि के संग प्रान उठि धायउ ॥
जा तन मैं विरहा नल रहई। सो तनु आइ कालु नहिं दहई ॥
गये प्रान तन फिरयौ न जिहिं, इहां गगन जिमि दूरि।
हौं पारस जिहि कर छुवौं, सीतल जीवन मूरि ॥
इहि विधि विक्रम भयौ उदासा। नारि उठि चल्यौ निरासा ॥
कर मीजै पछिताइ नरेसा। नीच माथ कै करै अदेसा ॥
ग्रंथ गँवाइ ज्यौं चलै लुवारी। तैसें चल्यौ राजा मनु मारी ॥
जाम तीन जामिन के भयऊ। राजा उतरि कटक मैं गयऊ ॥
जहँ तँबुआ साजै सै वारा। तिहिं तँबुआ राजा पगुधारा ॥
राजा नैननि नींद नहिं, अन्न न भावहि पान।
मन महँ झींतय जुरत ही, सोचत भयौ विहान ॥

माधव-प्रेमपरीक्षा

भयौ प्रात बैठ्यौ दरबारा। राजा माधौनलहिं हँकारा ॥
सभा माँझ नल बैठे आई। राजा विप्रहि बात सुनाई ॥
जब लगि विप्र कथा यह भई। सो त्रिय विरह ताप मरि गई ॥
सुनि बात माधौनल काना। तुम पर दिये कंदला प्राना ॥
सुनत बात दिज बिस भरि गयऊ। धरनि पछार खाइ मरि गयऊ ॥

दँव दाधी मालति सुनत, अति दाध्यौ तिहिं ठईं ।
अलि मालति विनु नहिं जिए, अलि बिनु मालति नाहिं ॥

राजा वचन सुनत द्विज काना। इहि के संग दिये मुहि प्राना ॥
माधौ सकल सभा उठि धाई। स्वास नासिका मूंदैं जाई ॥
पंडित गुनी वैद उठि धाए। जोगी मंत्र गारहू आए ॥
ओषधि मूर मंत्र करि थाके। फरे न एक जियहि गुन ताके ॥
सीतल गात विप्र कौं भयऊ। मन धन जीउ स्वास संग गयऊ ॥

आलम ऐसी प्रीति करु, ज्यों वारिज अरु वारि ।
वह सूखे वह ना रहै, रहै मूल दल जारि ॥

विक्रमचितारोहन खंड

करि उपचार लोग सब हारे। राजहिं देखि आँसु भरि ढारे ॥
प्रथमहि तिरिया बध मैं कीन्हां। पुनहि बिप्रहि जानत विष दीन्हां ॥
नर मारत कोइ मोखु न पावै। ब्रम्हन वध्य नर्क उठि धावै ॥
दोनों वध कीने मैं आई। चिहुरचि अग्नि जरौं मैं जाई ॥
मैं विस्वास गुप्त जिय धारा। छलु करि जीउ दोउ कर हारा ॥
प्रेम नैम निरखत रहत, यह नर नाहिन दोष।
भगत करत जिहि प्रीतमहि, तिहि नर नाहिन मोष ॥
सकल कटक मैं पर्‌यौ हिरोरा। छूटैं फिरैं हाँथि औ घोरा ॥
रिंध्या नाजु कोइ नहिं खाई। सैना उठी सकल अकुलाई ॥
जिहि कै कारन इतनौ कीन्हो। तिहि द्विज वचन सुनत जिउ दीन्हों ॥
उठि राजा विक्रम वल वीरा। वैठ्यौ जाइ नदी के तीरा ॥
मलयागिरि के काठ उठाए। चंदन अगर बहुत लै आए ॥
कियौ हेम संकल्प लै राजा, कर लैं वारि।
घीउ कलस जहँ डारि कै, साजी चिता संवारि ॥
लोग बैठि राजा समुझावैं। नेगी नेह लोग सब आवैं ॥
कहैं लोग राजा तुम जरहू। थोरी बात लागि तुम मरहू ॥
राजा येतौ दुख जिनि करही। कोतिक नारि पुरुष जो मरही ॥
उठि कै चलहु कटक कौं जाही। नातर जरै सैना संग याहीं ॥
घर भर लोग कटक मैं मरई। उठि किन चलहु सांति जब परही ॥
॥ जग समुद्र सुख दुख करम, नातिहि मेटन पार।
राज मरन व्यापहि सकल, जिहिं पृथिवी को भार।
राजा कहै सुनहु सब कोई। जिहि विधि हानि धर्म की होई ॥
इहि जग माँह मरन सब आये। राजा रंक काल सब खाये ॥
जाको सब जग अपजस करई। जीवत मुयौ पाछै का मरई ॥
शिक्षा दई सब ही गहि रहे। आप आप को चित गहि रहै ॥
उठि राजा कीन्हें अस्नाना। धोती पहिरि दिये बहु दाना ॥
गंगा जल अस्नान करि, द्वादस तिलक बनाइ।
नमस्कार करि भानु को, बैठि चिता मैं जाइ ॥

बैताल खंड

स्वर्ग लोक महँ बात चलाई। जीवत जरत है विक्रमराई ॥
देवी देवता सब उठि धाये। चढ़ि बिवान सब देखन आये ॥
गन गंधर्व किन्नर सब गुनी। तब बेताल बात यह सुनी ॥
जाकों मित्र बीर बेताला। सुनत बचन आयौ ततकाला ॥
राजा अग्नि दैन कौं चहई। तिहि छिन आइ बाहैं पुनि गहई ॥

तू सकबंधी चक्कवै, सिंह सूरपति सेस।
किहि कारन तू जरत है, पर दुख हरन नरेस ॥१

राजा कहै सुनहु बैताला। मैं बड़ पाप आय कौ घाला ॥
पहिले तिरिया बध मैं कीन्हा। पुनि मैं जीउ विप्र को लीन्हा ॥
जिहि कारन पावक मैं जरहूँ। जम के त्रास नर्क तैं डरहू ॥
कह बेताल राजा जनि जरहू। ऐसी बात लागि जनि मरहू ॥
खिन मैं अमृत ल्याऊँ जाही। विप्र नारि तुम देहु जियाही ॥

आलम उत्तम सोइ, अपजस तैंकर का करहि।
रहत न लज्जा होइ, आपु बुराई कान सुनि ॥२

कहि बैताल सुनहुँ बलबीरा। मैं लाऊँ जीवन कौ नीरा ॥
बेगहि गयो बीर बेताला। सुधाकुँड तहँ होते ब्याला ॥
परकत नयन बिलंब न लावा। तुरत बीर अमृत लै आवा ॥
पहिले लै माधौ कौं दीन्हा। तिहिं यह प्रेम पसारा कीन्हा ॥
सुधा पियत माधौनल जागा। आये प्रात सुंन भ्रम जागा ॥

नैन उघरि स्वासा चली, कियौ प्रान बिस्राम।
'कामकंदला कंदला, लेत उठ्यौ मुख नाम ॥३

उठ्यो विप्र राजा सुखु पावा। तिहि छिन उतरि चिता स्यौं आवा ॥
तब बैताल के चरन पखारे। प्रान जात तुम रखे हमारे ॥
कियो अनंद बाजा बहु बाजहिं। अर्ब खर्ब अति द्रव्य लुटावहिं ॥
सुनि सुख सकल कलक महँ होई। नर नारी की चिंता जाई ॥
राज कहै हौं तब सुख पाऊँ। लै अमृत कंदला जियाऊँ ॥

भूसुर दीन असीस, जुग जुग जीउ नरेस बहु।
लोभ न कर्‍यौ सरीर, प्रेम काल यौं चाहिये ॥

राजा-वैद खंड

कनक कलस अमृत भरि लीन्हां । राजा भेष वैद को कीन्हां ॥
काम कंदला के घर आवा । पौरि दार सों बात जनावा ॥
सुनि कैं वैदु पौरिया जाई । सखियन आगें बात जनाई ॥
सुनि कै वैदु सखी इक आई । मंदिर मैं लै गई बुलाई ॥
सुंदर वैद सुमूरति कामा । यह की मूरि जियहि यह बामा ॥

पंडित मीत विदेसिया, सुंदर गुनी सु आहि ।
सनसुख आवत देखि कै, सखी रही सब चाहि ॥ १

सखी बहुत कै आदर कीन्हां । पाटंबर बैठन को दीन्हां ॥
जहां कंदला मृतक पराई । वैदहि जाइ सो नारि गहाई ॥
सीतल गात देखि कै नारी । तब कछु बैद करहि उपचारी ॥
बैठि सखी सौं बोलहि गाता । नाहिन स्वास झूँठि सनिपाता ॥
नहिन रोग वेदन जिहि हरई । मिर्तक परा वैद कह करई ॥

स्वर्ग गये तेऊ फिरैं, प्रान जिये जम जाल ।
ताकौ मंत्र न मूरि कछु, डसी विरह कै व्याल ॥ २

सुनहु वैद जौ नारि जिवावहु । मुख मांगौ सोई तुम पावहु ॥
मृतक परयौ जौ वैद जियावहि । सो आपन को ब्रह्म कहावहि ॥
वैद रोग कों औषध करई । ताकौ कहा अचर्ज नर करई ॥
वचन निरास जब वैद सुनाये । सब के नैन नीर भरि आये ॥
सांचहु मरी कंदला नारी । परी खेह महँ खाइ पछारी ॥

गुन सुंदरता चातुरी, जब लगि तब लगि प्रान ।
स्वास गहैं इहि अंग तें, सब कोइ कहै समान ॥ ३

निरखि वैद जिय आस कराई । जिन कोउ सखी और मरिजाई ॥
कहै वैद जिनि तोरौ वारा । देखौं कछू करौं उपचारा ॥
सकल सखिनु कौ धीरजु दीन्हां । अमत वैद हाय करि लीन्हां ॥
जहां हती कंदला नारी । सींच्यौ अमृत बदन उघारी ॥

अमृत बूंद जब मुख पर्यौ, आयौ चलि घर स्वास ।
बोली नारी कंदला, भई सखी मन आस ॥ ४

प्रगटे प्रान कंदला जागी । उघरि नैन चिंता सब भागी ॥
लेत उठी मुख माधौ नामा । पंचभूत मै किय विश्रामा ॥
कहै सखिन सौ सखी सुहाई । केती बार नींद मुहि आई ॥
तब यह उतरु दीन्हौं वाला । तूं तौ मुई विरह के काला ॥
यह विषहर धन्वंतरि आयौ । मूर मंत्र पढ़ि तोहि जियायौ ॥

यह हनुमंत महावली, पर स्वारथ चल्यो दूरि ।
लक्ष्मण को संकट पर्यौ, आनि सजीवन मूरि ॥५

जब सुख काम कंदला भई । सबरी सखिनि की चिंता गई ॥
तब उठि वैद के चरन परवारे । गये प्रान तुम दये हमारे ॥
कहै वैद हौं दान न लेऊँ । मागै औरु सुमांगै देऊँ ॥
जौ जिय लोभ तौ गुनी न कहिये । गुन संकर वैगुन तै रहिये ॥

जौ जिय लोभ तौ गुन कहां, जौ गुन लोभ तौ काइ ।
गुन बिन रूपहिं ना गुनौ, गुन बिन पुरिष अपाइ ॥

कहै कंदला वैद सुनु मोही । वैद रूप नहिं देखौं तोही ॥
कै तुम देउ रूप चलि आये । सुख अमृत दै मोहि जिवाये ॥
मन बच बोलहु अपनी बाता । कहिये साँचु सप्त मैं साता ॥
हौं सकबंधी विक्रम राजा । पर की पीर हरहुँ करि काजा ॥
नगर उजैन राज तहँ करऊँ । दुखिया देखि सकल दुख हरऊँ ॥

माधौनल द्विज कारनै, चलि आयौ इहि देस ।
तुम तन मिर्तक देखि कै, कियौं वैद कर बेस ॥६

तोहिं मरन जब माधव सुनिऊँ । वह मरि गयउ सीस मै धुनिऊँ ॥
मैं छल रूप दोइ सिर लीन्हां । तब उपचार जरन का कीन्हां ॥
जरतैं सुनि कैं वीर वेताला । सो अमृत लायउ ततकाला ॥
प्रथमहि माधौनलहि जियायौं । तिहि पाछें हम तुम घर आयौं ॥
अब सब साजि सैनि लै अऊँ । युद्ध जीति तोहि विप्र मिलाऊँ ॥

उपकारन दुख हरन जे, अंगीकरन अभार ।
सरपुर तिहि कीरति करैं, जग मैं जस विस्तार ॥

ऐसे बचन जब राजा कहई । उठि चरन कंदला गहई ॥
दया निधान तुम रूप मुरारी । राजनि के राजा बुधि भारी ॥
यह संसार समुद्र अथाई । तहँ तुम तारन तरन गुसाईं ॥
विरह घाव जे वोषधि करई । ते नर दुहूं लोक जसु लहई ॥
बूड़त नाव जे पार लगावहिं । ते नर दुहूं लोक जस पावहिं ॥

बिरला नर पंडित गुनी, बिरला बूझन हार ।
दुख खंडन बिरला पुरिष, ते उत्तम संसार ॥

ऐसे चरित तुमहिं पर आवहिं । यह बुधि लोक वैद कहँ पावहिं ॥
पर उपकार करहु वलवीरा । बूड़त नाव लगावहु तीरा ॥
कीरति कहिय न जाइ तुम्हारी । धर्म कर्म वलि वीर मुरारी ॥
तुम समर्थ करि हौ सब काजा । हम संसार नरनि के राजा ॥

जो बुधिवंत महावली, नरसिर जे करतार ।
पर उपकार नर दुख हरन, जे अगवत पर भार ॥

कंदला-संदेस खंड

पायन लागौं सुनहु नरेसा। माधौनल सो कहउ सँदेसा ॥
गये प्रान लैगये उपाऊ। अब के गये न बहुरै आंऊ ॥
तुम सन भई विपति की पीरा। जोगी भेष न कीन्हौं फेरा ॥
अब विधि मोहि आनि दिखरावो। निरखि विरह की पीर बुझावो ॥
पंख होइ जो नैनन माहीं। छिन एक देखन को उड़ि जाहीं ॥
दृग पुतरिन की तारिका, निरखि मूरती मैन।
तब गुन माला कर लियैं, जपौं सु वासर रैन ॥ १

बिति की बात कहौ सब मेरी। नृपति कह कहहुं बिनती कर जोरी ॥
निसि दिन वहैं विरह दव देवा। हीयो तरकत सुनि जिय नेहा ॥
करि भर सेज नीद भरि होई। रजनी सकल सिराऊं रोई ॥
निसि दिन अग्नि गात ज्यों जरई। रोम रोम वेदनि संचरई ॥
सोचति रहौं निसि वासर जागी। नैम रहै तव मारग लागी ॥
कर कपोल औ करन ये, सदा रहत इक संग।
रोइ रकत ये नयन मग, सेत बरन भयो अंग ॥२

रितु बसंत मोहि कोकिल दहई। मलय समीर आगि जिमि बहई ॥
पावस रितु बरसै जब मेहा। झुकति मरौं हौं सुमिरि सनेहा ॥
चातक मोदनि षरिय सताई। दामिनि दमकि प्रान लै जाई ॥
सूर चंद्र सीतल सब कहई। मिलि समीर आगि जिमि बहई ॥
जे जे सीतल सुखद सहायक। ते सब मोहि भये दुख दायक ॥
चंदन चंद कँवलन कली, पिक चातक जु समीर।
ये सब वैरी मोहि तन, हौं क्यों राखौं धीर ॥

विरह बनावल सीतल रहई। उठत अगिनि नख सिख तन दहई ॥
मंजन अंजन कौन सिँगारा। सुनत न भावै नाद बिस्तारा ॥
माधौनल सो कहौं बुझाई। जौ आपनी विपत्ति जनाई ॥
विनवति हौं सकवंधी राई। बिरह द्रिष्टि सौं लेउ बुझाई ॥
सो उपकार करौ जिय मांई। दमवंती ज्यों नलहि मिलाई ॥
मालति अस संपति मिलै, पूरन ससिहि चकोर।
चकवी कौ चकवा मिलै, कँवल विगसि भये भोर ॥ ४

त्रिया विरह दुख राजा सुनिहू। देखत सुनत सीस कर धुनिहू ॥
काम कंदलहि धीरज दीन्हा। राजा जीव कटक पर कीन्हां ॥
सखी सकल मिलि देई असीसा। चिरंजीव राजा जुग बीसा ॥

तुरिय सिंगारि भये असवारा। आये कटक न लागी बारा ॥
सिघांसन पर बैठे जाई। लोक सभा सब लई बुलाई ॥
विरह कथा राजा कहै, निरखत बुधिजन लोग।
सुनत सकल सब थकित मे, प्रगट्यो विरह वियोग ॥
राजा कहै सुनौ सब लोई। यह जग ऐसो और न होई ॥
इहि की प्रीति इही जग जानी। जग मैं जुग जुग चलै कहानी ॥
कलि मैं अमर भयौ यह नेहा। विरह की अग्नि देहैं जिय देहा ॥
पुनि राजा मंत्री सौं कहई। सो कछु कहौं कथा निरवहई ॥
काम सैनि पहें पठ्यौ वसीठा। बुधिजन चतुर सभा महा डीठा ॥
उत्तम बंस स्वरूप, गुनन बुद्धि परवीन।
वरि धरि वंजन चतुर सो, पठ्यौ दै कर पान ॥

दूत-खंड

येहिलैं राजा पात जनाई। कामकंदला माँगि पठाई ॥
जो कछु माँगै दर्वि सु देऊं। नातर जुद्ध जीति कर लेऊं ॥
रघुवंसी इकु श्री पति नाऊं। पठ्यौ काम सैनि के ठाऊं ॥
चतुर दूत श्री पति चलि गयऊ। राजा द्वार सु ठाढ़ो भयऊ ॥
दूत सुनत आगे भएं, लेउ वेगि हँकारि।
आदर सो तिहि लैन को, उठि धाये जन चारि ॥

आयौ सभा बैठि तिहि ठाऊं। राजा कीन्हौ आदर भाऊं ॥
राजा दूतहि मुखै लगायौ। कहौ बचन तुम कौन पठायों ॥
बोल्यो दूत सुनौ बलवीरा। हौं पठ्यौ नृप विक्रम धीरा ॥
सक्कबंधी बल विक्रम राई। सो तुम देस पहुँच्यौ आई ॥
माँगत देउ कंदलानारी। विप्र काज आयौ बुधि भारी ॥
माधौनल के कारनै, नृप आयौ इहि देस।
कामकंदला विप्र को, माँगै देउ नरेस ॥

काम सैनि राजा तव कहई। रिस करि रूखे बचन न सहई ॥
निठुर बचन कस कहै बसीठा। बोलैं और सभा की दीठा ॥
जो तुम कामकंदला देऊं। सब दानिन मैं अपजस लेऊं ॥
देस देस के कहैं नरेसा। दीन्हौं दंड बचायौ देसा ॥
जब लग स्वास जीउ भरि लेउं। तब लग दंड न माँगे देउं ॥
बल करि आयौ राज अब, सूरवीर सँग लाइ।
मद गयंद दल साजि कै, उठि रन मंडौ जाइ ॥

कहै बसीठ राजा सुनि लीजै। येते लघु विग्रह नहिं कीजै ॥
देस गुरू राजा चलि आयौ। जाको सीस नरेस नवायौ ॥
आयौ विक्रमचंद नरेसा। जा कहं कपै सुरपति सेसा ॥
हय दल गज दल गवत न, आवै ही औसरः विचारि ॥
दुर्जन हू हँसि उठि मिलह, बोलहि रोस निवारि ॥

रानी कहै बसीठ सुनु बैना। भौंह चढ़ाइ रोस करि नैना ॥
काम सैनि नै पठ्यौ नेगी। कहौ राइ सौं आवै वेगी ॥
लै संदेस बसीठ उठि चलई। गयौ जहां नृप विक्रम रहई ॥
कहै बसीठ माँगे नहिं देई। क्रोधवंत मनु लै मनुलेई ॥
कहै बसीठ राजा सुनहु, उठि रन मडंहु जाई।
सिहं रूप गाजैं सुभट, वे मृग चलैं पराइ ॥

युद्ध-खंड

सुनि राजा तब बोलहि बैना। गयंद पैदल साजौ सैना ॥
साजौ मेघबरन गज कारे। चुवहिं गयंद घुमैं मतवारे ॥
पर्वत से आगै दै चलिऊ। धरनी धँसी दिकपति सब हलेऊ ॥
धूमर धूलि आन रथ जोती। छूटे सिंह रूप जिव होती ॥
जबर जंग गोला जब भारे। अस्टधात सांचै सों ढारे ॥

हयदल पयदल गज दल, जोतिहि जोति सुरंग।
सूरबीर बानै बनै, चली चूम चतुरंग।१

दुहूं दिसि ते उमगे असवारा। लोह लपेटैं अगम अपारा ॥
कूदहिं बाजी नाना रंगा। नाचैं यों ज्यों डह डहहिं कुरंगा ॥
उतिम जाति पछिम के ताजी। तिहि पर चढ़े सभट सब साजी ॥
बांधे विष करि धनुक कर लीन्है। लाँकहि कूटि सीस पर लीन्हैं ॥
साँग सेल फरसा चमकारा। चमकत लोह अगिनि की झारा ॥

रन मंडन खंडन दवन, आनदै सब सूर।
चलेति चंचल चाउ करी, डरै ठकाइर क्रूर ॥२

मेघ सबद जिमि बजैं निसाना। उठै अकूट अँबर घहराना ॥
भरे झांझ धुनि सुनै अडारू। सूर समूह अरु बाजहिं मारू ॥
मारू सब्द सुनहिं जिमि बीरा। पुलकत रोम रोम अरु धीरा ॥
इक दिसि तैं रथ जोरि चलाये। इक दिसि गज ढाढ़ सत भाये ॥
बीचहि लैकर पैदल भारा। तिहिं पाछे आवै असवारा ॥

सेल सोध कर रंग बिनु, पाये भंडन जूद।
बहुरि सुभट जे सुभट सौं, सिहं रूप है कूद ॥३

बिच विक्रम हस्ती असवारा। रन अभरन सब पहिरै सारा ॥
जामन चलत सेत सिर दंती। स्याम घटा मानहु बगपंती ॥
घंटक धुनि दिगपति थरहरइ। कर तजारत इंद्रासन डरई ॥
चहुं दिसि वीर परवरिया चले। दोनौं जूझ इहूं विधि भले ॥
मुंड कूट सूरन के सीनै। गज सिपाह आँगे करि लीने ॥

सिंहनि ऐसो पूत जनि, पर रन मंडहि जाइ।
कुंभ बिदारन गज दलन, अब रन मंडै जाइ ॥

जुद्ध राग प्रगटी सुनि काना। कामावति पुर सुन्यौ निसाना ॥
परी रोइ नगरी उकताइ। प्रजा पवन सब चले पराइ ॥
कामसैनि राजा तब बोला। चहुं दिसि देहु जुद्ध कहं ढोला ॥

ततखन सूर समिटि सब आये। करि सकूट चहूं दिसि धाये ॥
अब राजा आग्यां जौ देई। सब रन जाइ आगे है लेई ॥
जौ जगपतिहूं को सूनिय, मृग गन षुटि सब जाई।
सो हरजन की धाक सुनि, रहे न मंदिर माँहि ॥५
यके साज साजैं रजपूता। दुर्जन को लागैं है भूता ॥
तूंवर चढ़े बाँधि कै बानै। मिलि औ चले राव सब रानै ॥
काम सैनि राजा दल साजा। चलें लरन मारू जब बाजा ॥
चले बजाइ राव औ बानी। चढ़ी धौरहर देखति रानी ॥
अचरज सूरमा देखि कै, वली अनंद करेइ।
दुहुं बिधि मांग सिंदुर भरि, हाथ नारियर लेइ ॥६
इत तैं कामसैनि चढ़ि गयौ। राजा बिक्रम सनमुख भयौ ॥
एक खेत जब दो दल भये। एक एक सों सनमुख भयो ॥
हिंसहिं तुरंग चिकारैं हाथी। सोभैं हंक हंक मिलि साथी ॥
दुहुं दिसि युद्ध राज भल बाजा। कायर डरैं सूरमा गाजा ॥
बान वाधिजु बिरद सुगावहिं। सुनि सुनि सुभट उमगि करि आवहिं ॥
सुनि मारू कौ रागु, भुज फरकैं रन बीर के।
युद्ध जाइ मन लाइ, 'मारु' 'मारु' मुख उच्चरैं ॥
अगिन बान छुटैं दुहुं ओरा। चकित बिजुकित हाथी घोड़ा ॥
धुनुषहि धनुष वीर जो नाहा। अटकैं पंच बान सौं काहा ॥
चलै चक्र जो लै हथिनाला। पसरहिं धूम होइ अँधकाला ॥
छिन इक धनुष बान सौं लरई। हमकत बाहिर षग मँह परई ॥
भीर बान तें सहैं न पारैं। दुहुं दिसि तुरी भीरन को मारैं ॥
सूर गरजि काइर डरहिं, सुनि गज सिंहं सदूर।
षड्ग खोल तै जानियै, कोइ कायर कोइ सूर ॥ ८
रावत पर रावत चढ़ि धाये। धानष पर धानष चढ़ि आये ॥
पाइक सौं पाइक भये जोरा। लरत वार यौ मुष नहिं मोरा ॥
गज सौं गज कीन्हे चौ दंता। चिकरैं कुंजर मैमत मंता ॥
बाजै लोह उठै टंकारा। तापर फिरैं खड्ग की धारा ॥
फूटैं फूट मुंड कटि जाहीं। बाजैं सार सार छन जाहीं ॥
सेज खड्ग नेजै सहैं, खाँय खड्ग की मार।
सूर वीर पैते गनौ, सहैं लोह की मार ॥ ९
रावत सौं रावत जो भिरइ। एकहि मारि एक पग धरई ॥
हांकै सूर सूर सौं भिरही। घायल भूमि एक गिरि परहीं ॥
मारै खड्ग उतरि गये मुंडा। फिरैं राति धरती पर रुंडा ॥
सूर जूझि धर तेजे परही। रंडौ मार मार उच्चरहीं।

कर न करैं विस्राम, घाव जे सन्मुख सहि सकहिं।
जे जूझैं संग्राम, ते अपछर वर ह्वै रहहिं ॥ ९०

संकर मुंड वीनि करि लीन्हें। गूंथि गूंथि कर माला कीन्हें ॥
सन्मुख होइ जो देइ पराना। तिन कहं स्वर्ग ते आवैं बिमाना ॥
संग निसंगनि करैं उबारा। दुहुं दिसि चलैं रुधिर की धारा ॥
परहिं खड्ग टूटैं तरवारा। तब कर काढ़ी कमर कटारा ॥
सुभट वीर खोलि कैं लरहीं। दोनौ आनि भूमि महं परहीं ॥

गमि मारैं सनमुख लरैं, जे मारहि तजि छोह।
लोभी सूर लहरि मरैं, जो अपछर वरनै मोहि ॥

कंपै सूर वीर ते भारी। गज कंपै सहि सकैं कटारी ॥
लागै खड्ग गिरहिं ते दंता। टूटे सुँड रोवै मैमंता ॥
टूटैं मुंड होइं मुख भंगा। पर्वत से जनु परे भुवंगा ॥
गन गयदं रन जहं तहं परे। जनु धरनी मह पर्वत डरे ॥
लरि लरि सकल थमित ह्वै दरैं। इक जूझैं रन कानि न करैं ॥

सिंहनि ऐसो पूत जनि, सिंह बिदारन जोग।
घर सूरा रन भागना, जिन न हँसैये लोग ॥

बोलैं घाव 'मारू' उच्चरहीं। जहं तहं रकत के नारे ढरहीं ॥
फूटैं मुडं चलैं रन लोहुव। सुभटै सुभय फिरै जन कुहुरुव ॥
जोगिनी फिरैं भूतनी साना। बैठि करैं लोहुअ कर पाना ॥
भिरहिं धाइ लोथि लै जाहीं। लोहू पियैं मासु मिलि खाहीं ॥
जोवब जाल करालै करोलैं। लोथहि काटि सरो महि बोलैं ॥

जोगनि फोरैं खोपरी, जबुंक भखै जु मास।
सूरन की गति देखि कै, सूरज होई उदास ॥ ९३

लोहू भरे छूटै सिर वारा। सूते सूर वीर बिकरारा ॥
सुन्यौ सरन उमड़े ते भलैं। दहनै चुवहिं रुधिर के चलैं ॥
चिहुरो हाथ आव नहिं मेरैं। गुन ज्यों सिंह देखि डहि मरैं ॥
कहूं कहूं गावैं बरछा लैं कोऊ। कहूं दौर रागन गुन दोऊ ॥

पर दल खंडहिं लरि मरैं, खाय जु सन्मुख घाव।
स्वामी सँग ते ना तजैं, छत्री कुलहि सुभाव ॥ ९४

पहर चारि लौं विग्रह भयऊ। दुहुँ दिसि लोग जूझि सब गयऊ ॥
सुभट सूर विक्रम के बांचे। जूझे सुभट सूरमा साँचे ॥
कामसैनि सब सैनि जुझाई। जूझि गिरे सब रावत राई ॥
जूझे सुभट जे चढ़े बिवाना। गेये सकल रवि के अस्थाना ॥
स्वामि काज जे कटि कटि मरहीं। ते सब सूर अप्सरा बरहीं ॥

जूझंता सूरा भलै, घाव जै सन्मुख खाँहि।
जीवत मैं सुख भोगहीं, मरै त सुरपुर जाँहि ॥ ९५

माधव-कंदला मिलन खंड

कामसैनि राजा जो हारा । जाइ मिल्यो तजि के हथियारा ।।
हाथ जोरि के सनमुख आयो । विक्रम आगे सीस नवायौ ।।
सुनहु राज मैं दीन्ह्यौ देसा । सकबंधी पर हरौ कलेसा
चढ़तै थहराई सिर सेसा । विक्रम जा दिन करै प्रवेसा ।।
कामसैनि जब मिल्यौ जु जाई । फिरि पछितानौ सैन जुझाई ।।
मिलकरि राज नगर महँ चला । दीनी आनि कामकंदला ।।
मिली कंदला बहु सुख पावा । राजा माधौनलहिं बुलावा ।।

कलि महं विरह वियोगिनी, भरि भरि लेहि उसास ।
सीसु ठगौरी भोर भय, कीनौ सूर प्रकास ।।१

माधौनल औ कंदला मिलेउ । मिलि बिरही दोनौ दुख दलिऊ ।।
मिलि कें अधिक सुक्ख तिनि पावा । दुउ सँताप लै गंग बहावा ।।
मिल्यौ सोइ भावत भावंती । राजा नल रानी दमयंती ।।
मिले भरथरी अरु पिंगला । माधौनल औ कामकंदला ।।
पूरन ससि जिमि दुखित चकोरा । कुमुदिन चक्रवाक जिमि मोरा ।।
नित प्रति केलि करहिं सुख रहहीं । दिन दिन प्रीत अधिक मन करहीं ।।

भावंता जा दिन मिलै, ता दिन होइ अनंद ।
संपति हिएं हुलास अति, काटि विरहा दुख फंद ।।२

माधौकाम कंदला मिलाई । पुनि राजा उज्जैनै जाई ।।
संग विप्र माघौनल लीन्हां । जिहि कारन इतनौ जस कीन्हां ।।
राजा नगर उज्जैनै गयऊ । तबही अंत कथा कर भयऊ ।।
माधौ कामकंदला नारी । जानौ विधि रचि दई सँवारी ।।

अपनौ सुख तजि दुख लहैं, पर दुख खंडन जांइ ।
वार निबाहै एक सम, धनि सकबंधी राइ ।।३

कथा चौपही आलम कीन्हीं । पहिले कथा स्रवन सुनि लीन्हीं ।।
कहु कहु बीच दोहरा परै । कहू आनि सोरठा धरै ।।
सुनत स्रवन यह कथा सुहाई । अति रसाल पंडित मन भाई ।।
प्रीतिवंत है सुनै सो कोई । बाढ़ै प्रीति हिएं सुख होई ।।
कामी पुरिष रसिक जे सुनहीं । ते या कथा रैनि दिन सुनहीं ।।

पंडित बुधिवंता गुनी, कविजन अच्छर टेक ।
नाम नमित गुन उच्चरहि, कहि कहि कथा अनेक ।।४

———

कवि निसार-कृत

यूसुफ़-जुलेखा

आदि खंड

सुमिरौं प्रथम स्वरूप सुहावा। आदि प्रेम निज तन उपजावा ॥
उतपति प्रेम अगिन उपजावा। बहुरि पवन अंबुअ उपजावा ॥
आगिन तें पवन पवन तें पानी। पुनि पानी ते खेह उड़ानी ॥
यहि सब में उपज्यो संसारा। धरती सरग सूर ससि तारा ॥
चारि तंत में सब कुछ साजा। पँचवे सन आकास बिराजा ॥
मुनि रिष गँधरब दूत बिठाये। जंगम अस्थावर उपजाए ॥
प्रेम अगिन तेहि काहुँ सँभारा। रचा मनुष बहु बिधि बिस्तारा ॥
तेंहि सौंपा वह प्रेमक थानी। दीपक माँह धरा जस बाती ॥
तेहि बाती मँह आय छिपाए। होय परछिन पुन देह जराए ॥

प्रभुताई के बीच तें, को गत लीखन पार।
कहां स उत्तम अंस वह, कहँ निकसत तेहि झार ॥

रचा मनुष तेहि रूप सोहावा। प्रेम अंस तेहि हिएं छिपावा ॥
अस गुनवंत दयाल सयाना। तेहि निरगुन नर सब अग्याना ॥
जाकै रूप न रंग न रेखा। ताकिय रचना आव न लेखा ॥
वहै रूप वपु प्रेम क साना। दीन्ह झार कहि अलख सुजाना ॥
यहि बिधि सब जग परगट कीन्हा। एक ते एक उदित कर दीन्हा ॥
जब वह नेस्त करै पुनि सोई। एक ते एक अलोपित होई ॥
पानी खाइ खेह का लेई। पुन पानी कँह अगिन हेरेई ॥
पवन अगिन कहँ करे सँघारा। मिले आन तेहि अंस अपारा ॥
वह के संग जगत कर लेखा। नेस्त हेस्त सभ करे सरेखा ॥

अलख अमर अबिनासी, घट घट व्यापक होय।
सरब मई सुखदायक, दुख भंजन है सोय ॥

वह पूरन चौदह खँड मांही। वह बिन जिया जंतु कोउ नाहीं ॥
सब मँह आप सु खेले खेला। नट नाटक चाटक जस मेला ॥
ना वह मरे न मिटे न होई। अपरम मरम न जाने कोई ॥
जाकी रति सें सुख नित साजा। तन तिरिया मँह आय बिराजा ॥
कहँ रसना तेहि अस्तुति जोगू। रचा ताहि जो चीन्हे भोगू ॥
गुंजत ज्ञान ओ भेद अपारा। अगम आव घट तिन दहुं सारा ॥
कबहूँ आय अकेला रहई। कबहूँ यह रचना चित चहई ॥
नाटक खेल रच्यो संसारा। जा कहँ देख ज्ञान बल हारा ॥
एक रूप चारिहुं दिस देखा। दूसर अवर न जाय विसेषा ॥

अगनित बार सँवारा, तेहि जग अगम अपार।
जहां अलख संसार सब, जहं जग तिन्ह करतार ॥
वहि कर दरस दुओ जग पूरा। नर बाउर सो गिनहि अधूरा ॥
वह निर्गुन सौगुन सोउ रूपा। परघट गुपत सो दुओ अनूपा ॥
जो निर्गुन कहँ चाहिय देखा। अलख अमूरत जाय न देखा ॥
चौसर गगन तो रूप विसेषे। रूप अपार हिये जग देखे ॥
पै जब आप देखावै चाहिय। दिव्य दिष्ट निरभावै ताहिय ॥
पूरन चहुँ दिस जोत अपारा। बिना दिष्ट कोउ लिखे न पारा ॥
जो यह जग वह रूप न लेखा। वह जग केहि बिध जाय बिसेखा ॥
अनहद सब्द सुने सब कोई। का नहि दरस दिये तिन्ह सोई ॥
कत सरवन सुन बचन हुलासा। काहें ते नयन सो रहैं निरासा ॥
सुने सब्द सब कोऊ, अनहद दस परकार।
ताकर रूप देखें, कारन कवन बिचार ॥
तैं दयाल सुखदायक राजा। जिन अस मोहिं गरीब निवाजा ॥
इतेउं नेस्ति आधीन मिले ना। तैं करतार रहे मोहि कीन्हा ॥
मूरख इतेउं कीन्ह सज्ञाना। गुन विद्या सब कीन्ह निधाना ॥
गौरी सहन बंस अतवारा। दीन्ह स्वरूप भाउ उँजियारा ॥
तिन मोहिं दीन्ह सदा सुख भोगू। तिन्ह का देहुँ अहहुँ केहि जोगू ॥
संकट गाढ़ बड़े जब सहहीं। तिन पल मँह हर लेहि गुसाईं ॥
मैं तो अधम पातकी आहा। तैं निरभान कीन्ह जस चाहा ॥
गुंजत ज्ञान गिरा अनेक, दीरघ दया अपार।
तोरे गुन केहि लेहि कहे, तैं दाता करतार ॥
बरनौं ताहि आदि बेहि साजा। तेहि के जोति जगत उपराजा ॥
आदि साज तेहि अनत पठावा। बोहित साज सो पार लगावा ॥
तेहि के जोति सब सिष्ट सँवारा। जिया जंतु जोहि बार न पारा ॥
जो अस पुरुष न जग मँह आवत। ऊँच नीच को पार नप ावत ॥
जग बोहित वह सेवक देवा। केहि गुन पार उतारे खेवा ॥
जिन अवतार सो सबहिं सरेखा। कोउ निर्गुन कोउ सर्गुन देखा ॥
अस अवतार काहु नहिं लीन्हा। जिन निर्गुन सरगुन दोउ चीन्हा ॥
कोट कलाँत करे जो भावे। बिन वह नाम मुगत नहिं पावे ॥
वह कर नाम लिए एक बारा। पावे मोख मुगति निस्तारा ॥
आदि जोति जाके रचे, तेहिं तें सब कुछ कीन्ह।
मोख मुगत गुन पावे, जब नाम मोहम्मद लीन्ह ॥
चार मीत जस चार गरंथा, चारिउ सभा चारि सो पंथा ॥
पहिलें अबूबकर मग चीन्हां। नबी परापत राज जेहि कीन्हां ॥

दूजे उमर खिताब सोहाये। लिख सपंथ इबलीस पुराए ॥
तीजे उसमान पूरन लाजू। आदि करी चढ़ि कीन्हेउ राजू ॥
अली बली गुन कीरत भारी। आद इमाम जो पर उपकारी ॥
खंड खंड जेहि खंड अखंडा। लीन्हां दंड मंड भुज दंडा ॥
दीन नबी कर प्रोहित कीन्हा। मारि सत्रु कहँ सब जग कीन्हा ॥
तिन इमाम जग खेवक आये। पाप हरे गुन पाप लगाये ॥
हसन हुसेन महा जग तारन। दीन्ह सीस उम्मत के कारन ॥
होय असहाब सो करि चढ़े, वहि दीन सो प्रोहित कीन्ह।
आद अंत लहि जगत सब, अगम निगम करि दीन्ह ॥
आलम शाह हिन्दू सुलताना। तेहि के राज यह कथा बखाना ॥
देहली राज करे औ नीता। उमरावन तेहि कीन्ह अनीता ॥
कादिर खान सो अधम रुहेला। सो अपराध कीन्ह बद फेला ॥
पादशाह कहँ आँधर कीन्हा। सुत उतारि सब दुख तेहि दीन्हा ॥
कीन्ह अपत तैमूर घराना। राज प्रताप अधम तेहि माना ॥
वह चंडाल अधम अन्याई। पातशाह तैं कीन्ह बुराई ॥
जस वै कीन्ह नेक फल पावा। देइयं चरित खेल दिखरावा ॥
नेह विटप पुन जहर मिलाये। पातशाह सर छत्र भराए ॥
अंधधुंध सभ जग करि दीन्हा। तस आपुन देहलीपति कीन्हा ॥
कीन्हीं राज प्रताप जुत, रहिअ उतै कछु नाहँ।
तब सेवक सांई भये, सांई दुखित जग माँह ॥
चहुं दिस अंधधुंध सब छावा। अवध देस कां दियो बहावा ॥
येहिया खां आसफुद्दौला। जासु सहाय अहइ नित मौला ॥
हिन्दू सचिव वह बाली नरेसा। तेहि के धरम सुखी सब देसा ॥
दुओ गुन ताह सो धर्म बिधाना। धरम नींत जग इंदु समाना ॥
करै नीत कुछ और न भावे। धरम दान को सरवर पावे ॥
तेहि के राज नीत जग छाये। सूर सुजान न सके सताये ॥
करै न नीत धरम सुन्हि होई। मनुष समान सो परगट होई ॥
धरम नीत सब जग करे, परजा सुखी सरीर।
जुग जेग रहे सुदेस भी, यहि नव्वाब उज़ीर ॥
सेख पुरा उत गांव सुहावा। सेख निसार जनम तहँ पावा ॥
चारिउ ओर सुघन अमराई। अगम अथाह चहूँ दिस खाँई ॥
सेख हबीबुल्लाह सोहाये। सेख पूर जिन आन बसाये ॥
बादशाह अकबर सुलताना। तेहि के राज कर जगत बखाना ॥
अवध देस सूबा होय आये। बीस बरस लहि रहे सुहाये ॥
तेहि के शेख मुहम्मद नाऊँ। सो हम पिता सो ताकर गाऊं ॥

तेहि घर हौं बिधनें अवतारा। चारि दीप जस चौमुख बारा ॥
सभै बली सुपुरुष सुज्ञाना। रूपवंत औ बिद्यामाना ॥
बंस मौलबी रूम कै, सेख हबीबुल्लाह।
जेहि के मसनवी जगत मह, अगम निगम अवगाह ॥

अब आपन गुन करौं बखाना। हौं निरगुन कुछ भेद न जाना ॥
सबहे गुरू कर गुरू सुहावा। सो हम गुरू वह जग महँ आवा ॥
जेहि सो गुरू कि दोउ जग आसा। अवर गुरू की भूख न प्यासा ॥
चहै गुरू वह पार लगावै। चहै तो बार बार भटकावै ॥
वह कर प्रेम हिएँ महँ गोवा। अवर प्रेम सभ चित तन खोवा ॥
अच्छर एक पठावा सोई। बहुर गुरू वह कियो बिछोई ॥
भयो हिया जस समुद अपारा। किये गरंथ अनूप सँवारा ॥
झूँठ कथक कहि रैन बिहाये। अब यह समै भोर कै आये ॥
बंस मौलवी रूम कै, मौलैं लावा पंथ।
होय सिद्ध बुध मसनवी, निरगम अगम गरंथ ॥

सात गरंथ अनूप सोहाये। हिंदी और पारसी सोहाये ॥
संसकिरत तुरकी मन भाये। अरबी और फारसी सोहाये ॥
हीर निकारि के गेहूं खाने। रस मनोज रस गीत बखाने ॥
औ दिवान मसनवी भाखा। कर दोइ नसर पारसी राखा ॥
बार वेस महँ कथा बनाये। हीर निकारि अनूप सोहाये ॥
रस मनोज रस गीत सोहावा। सभै बात कार भेद बतावा ॥
हंस जवाहिर प्रेम कहानी। कहा मसनवी अमृत बानी ॥
इंशा कहे जहाँ लह भेदू। औ सब कथा जहाँ लह वेदू ॥
झूँठि जानि सब ते मन भाना। अब यह साँच कथा चित लागा ॥
तीन नसर एक मसनवी, औ निसाब दीवान।
सर दुई हीर निकार तिन, रस मनोज रस खान ॥

हिजरी सन बारह से पाँचा। बरनेउ प्रेम कथा यह साँचा ॥
अठारह सै सताईसा। संवत बिकरम सेन नरेसा ॥
सतरह सै बारह पुनि साका। सतरह सै नब्बे ईसा का ॥
सत्तावन बरख बीते आयू। तब उपज्यो यह कथा बँचाऊ ॥
सात दिवस महँ कथा समापत। दुरमति नाम रहे सो सम्मत ॥
गयो तरुन को तेज उमंगा। साथी गये छाँड़ि सब संगा ॥
बाएँ अँस उठि के जग माहीं। बिरिध दिवस अब कुछ रस नाहीं ॥
बना जनम को गोरख धंधा। अबहुं न समझे यह मन अंधा ॥
बार बंस औ बरुन सोहावा। गयो बीत तीसर पन आवा ॥

बजे नगारा कूंच का, करहु सुचेत सँभार ।
अगम पंथ साथी नहीं, केहि बिधि उतरब पार ॥
बिरिध बैस महँ कीन्ह बिचारा । केहि विधि होय मोर उद्धारा ॥
कहयों तो तंत्र कथा उत साँचा । जो क़ुरान मा सुना औ बाँचा ॥
सभ भाषा महँ कथा सोहाई । बरनन भाँति भाँति करवाई ॥
इबरी औ अरबी सुर बानी । पारस औ तुरकी मिसरानी ॥
भाषा मां काहू ना भाखा । मोरे अंस दइब लिखि राखा ॥
सो अब कथा कहौं चित लाई । जेहि तन मोख मुगति होइ जाई ॥
यूसुफ नवी विदित जग आवा । तारा गन्ह महँ चंद सोहावा ॥
जहँ लहि महा सिद्ध अवतारा । सब महँ रूप दीन्ह उँजियारा ॥
कथा अनूप जगत महँ सोई । प्रेम भगति सत धरम समोई ॥
यूसुफ नबी अनूप जग, प्रगट भये संसार ।
जाकी कथा तंत अब, बरनऊँ भजि करतार ॥
जो यह कथा सुनै चित लाई । नासै पाप पुन्न अधिकाई ॥
बाँझिन सुनै सो संतति पावे । अकट तरुनि माँझहि फरिआवे ॥
निरधन होय, होय धन आकर । निरगुन सुने होय गुन सागर ॥
दुःखी सुने सुक्ख अधिकाई । बंदी सुने तो मोख होइ जाई ॥
बिछुरे परे सो देय मिलाई । रोगी सुने रोग हरि जाई ॥
निरदायी कहँ दाया आवे । जोगी सुने जोग अधिकावे ॥
कैसेउ बिपति गाढ़ जो होई । सुनै कथा बुध डारै खोई ॥
सुने सती दिन दिन सत बाढ़ै । बिरही बिरह दीन दुख दाढ़ै ॥
प्रेमी सुने प्रेम अधिकावें । पंडित सुने महा रस पावें ॥
जो कोइ सुनै पढ़ै लिखै, होय सिद्ध संसार ।
वंस सुनत सुख पावे, देइ असीस निसार ॥
कथा अनूप अहै जग माहीं । दूसर कथा सो यह सँघ नाहीं ॥
नबी लागि यह कथा सुहाई । सरग लोक तिन दैव पठाई ॥
एक दिवस जबरैल जो आये । हसन हुसेन को दुःख सुनाये ॥
मारिन्ह तिन बैरिन निरदाई । पानी बूँद न दीन्ह कसाई ॥
सुनि के मरन नबी दुख माना । रोवै लाग दुखित होइ प्राना ॥
तब जबरैल कथा यह लाये । आन अरथ यह बाँच सुनाये ॥
जो इमाम कहँ उम्मत मारिन्ह । यूसुफ बंधु कूप महँ डारिन्ह ॥
कथा सत्त अब कहौं सुहाई । जेहि विधि सरग लोक तेहि आई ॥
चूक होय तो लेहु सँभारी । सुद्ध असुद्ध सो लिखहुँ बिचारी ॥
बरनौ कथा अनूप अब, प्रेम भरी औ साँच ।
मोख मुगति गति पावहिं, जो रे सुनावै पाँच ॥

किनाँ नगर जो 'नूह' बसावा। तहाँ नबी याकूब सोहावा ॥
जग महँ महा सिद्ध अवतारा। पूजै ताहिं सकल संसारा ॥
लूत नबी की सुता सुहाई। सो बियाहि इसहाक के आई ॥
भय इसहाक के दुइ सुत संगा। एक उदर दुइ रवि ससि रंगा ॥
एक ईस याकूब सो दूजा। तप जप विद्या कोउ न पूजा ॥
महा सिद्ध ता कहँ विधि कीन्हा। इसराईल नाम तिन्ह कीन्हा ॥
उपजे श्याम देस दोउ भाई। रहे किनाँ याकूब सोहाई ॥
भेजै ताह अलख संदेसा। लावै निगम पंथ सब देसा ॥
नीच ऊंच कहिं मारग लावै। औ गुरु मुख सब भेद बतावै ॥

करे तपस्या रैन दिन, जप तप बरत औ नेम।
जबराइल आवहि तहाँ, आन बढ़ावैं प्रेम ॥

सात इस्तरी सुखद सोहाई। बारह पुत्र दई अधिकाई ॥
रुबिया औ राहेल सुहाये। दोउ दुहिता सुत लूत के जाये ॥
दौहित विधनै नारि कुलीना। पाँच सहेली सुघर नगीना ॥
दुइ दुइ पुत्र दुहूँ के भये। आठ पुत्र दासी सन कहे ॥
बहुत गरंथ माँह अस हेरी। दोइ नागर तेहि के दुइ चेरी ॥
धरम दीन्ह राहेल स्वरूपा। महा सती औ ज्ञान अनूपा ॥
तेहि के कोख कीन्ह अवतारा। यूसुफ इबन अमीन दोइ बारा ॥
प्रथम दुहिता दुनियाँ नाऊँ। पुनि यूसुफ मानै तेहि ठाऊँ ॥
यूसुफ नबी जनम जब लीन्हा। परगट जोग जगत महँ कीन्हा ॥

दुइ अंसा यूसुफ नबी, पायो रूप अपार।
एक अंस विधि रूप महं, दीन्ह सबै संसार ॥

बुधि सरूप जब उतपति कीन्हा। दोइ अंसा यूसुफ कहँ दीन्हा ॥
एक अंस महँ सब जग पावा। धन वह रूप जो दइय बनावा ॥
यूसुफ नबी लीन्ह अवतारा। घर बाहर होइगा उँजियारा ॥
जो उपमा कबि दीन्ह बखानी। रूपवन्त जस यूसुफ सानी ॥
तेहि स्वरूप कर कहौं बखाना। जेहि कर रूप सो कीन्ह बखाना ॥
जब तिन जन्म सो यूसुफ लीन्हा। अलख सबहि सुख तिन्ह सो दीन्हा ॥
सत्रु अनेक भयो जरि छारा। जो इमलाक़ यहूदा मारा ॥
बड़े बंस सब बली सोहाये। एक तें एक सरिस अधिकाये ॥
सैन धनी गहि गदा पवारहिं। बन महँ सौंह सिंह कहँ मारहिं ॥

दस दिग्गज दस बंधुवै, दल गंजन बलवान।
सेवा करैं सु तात कै, जगत काज सुज्ञान।

दस भाई जो तरुन जुझारा। दुइ भाई लखि बालक बारा ॥
इब्न अमीन जब लीन्ह अवतारा। माता मुई छाँड़ि दुइ बारा ॥

निस दिन रखै नबी निज पासा । छिन बिछुड़े जब होय उदासा ॥
बहु बिद्या औ ज्ञान सोहावा । पितैं पुत्र का सभै पढावा ॥
और पुत्र जो एक छिन आवैं । वेद पढ़ाय सोकाज बढ़ावैं ॥
यूसुफ कहँ दिन रात पढ़ावैं । छिन नैनन नहिं ओट करावै ॥
जबराईल प्रान तजि दीन्हा । तब यूसुफ कहँ फूफहि लीन्हा ॥
प्रान तें अधिक रखै दिन राती । निस दिन रखैं लगाये छाती ॥
औ याकूब चहै मन मांहीं । फूफिहिं एक छिन छाँड़हिं नाहीं ॥

बहुत समय यूसुफ लिए, जायँ भूलि तप जोग ।
तेहि कारन बिधि कोप कै, दीन्हा पुत्र बियोग ॥

भगिनी बंधु रहै अस रीती । दोउ बाउर सम यूसुफ प्रीती ॥
बसन एक इसहाक सोहावा । बाँधहिं फाँट सो लीन्ह कढ़ावा ॥
एक दिन सोवत माँह छिपाये । यूसुफ फाँट सो फेंट बँधाये ॥
ऊपर और दुकूल पिन्हावा । ओ याकूब के पास बिठावा ॥
लाय सो भूलि फेंट कै चोरी । बसन बंधु तें बरबस छोरी ॥
भूलहिँ तेहि बहु सुख तें पाला । नैन ओट छिन होय बेहाला ॥
एक दिन यूसुफ बैठ्यौ पाटा । रूप तेज मनु बरै लिलाटा ॥
काहू केर मुकुरनी लीन्हा । तब अभिमान हियें महँ कीन्हा ॥
जो मोहिं का बेंचै लै जाई । को लै सकै दरब कहं पाई ॥
उदय अस्त लहि दरब पटोरा । मोरै मोल जोग सब थोरा ॥

यूसुफ कहँ निस दिन पिता, राखै प्रान समान ।
प्रान तें अधिक सपूत सुत, सुंदर सुघर सुजान ॥

नीक न लाग दइअ कहँ बाता । काहुक गरब न रखै बिधाता ॥
एक दिन यूसुफ रिस अधिकारा । कोपित भयौ दास कहं मारा ॥
औ मातहि मारा तिन दासा । भयौ हियें वह दास निरासा ॥
औ याकूब मियाँ के मारे । बोध न कीन्ह सो दास पुकारे ॥
करता कोप हिएँ महँ आने । दास होय तब यूसुफ जाने ॥
आयो एक सुरेख भिखारी । आन बार याकूब पुकारी ॥
कहा नबी तुम्ह आसन करहू । पावहु भोग छुधा कहँ हरहू ॥
कहि यह बात सो गयौ भुलाई । यूसुफ प्यार मतैं बिसराई ॥
ताके भूख रहै सुध नाहीं । दीन्ह सराप तपा हिय माँहीं ॥

बरस चारि महँ भूलहिं, जब कीन्हा सरग पयान ।
तब पावा याकूब तेहि, हिया अधिक हुलसान ।

वह मन भावन रूप सोहावा । औ जेहि दीन्ह रूप जग पावा ॥
आन स्वरूप हेत जो लाये । वह मन भावन ताहि सुहाये ॥
औ याकूब सिद्ध अवतारा । निस दिन यूसुफ रूप निहारा ॥

अलख सहाय क्रोध तब कीन्हा। यूसुफ बिरह सोग तेहि दीन्हा ॥
आँखी ओट पिता नहिं करई। छुधा त्रिषा मुख देखत रहई ॥
निस दिन रखै प्रान सम पासा। और पुत्र मन रहैं उदासा ॥
आवहिं पुत्र करहिं सब सेवा। काहु के ओर न देखै देवा ॥
चालिस सहस मेष चुन लीन्हा। तिर तिर सहस सबहन कहँ दीन्हा ॥
सात सहस यूसुफ कहँ दीन्हा। सौ दुंबे सब महँ चुनि लीन्हा ॥

सबहन हिये लखि क्रोध भा, देखि पिता कर प्यार।
लघु बालक कहँ दून तिन, दीन्ह अंस अधिकार ॥

नबी के अँगन एक द्रुम्म सुहावा। कलपवृच्छ सम ताकर छाया ॥
जब याकूब नबी सुत पावे। सुंदर सुता वृच्छ उपजावे ॥
ज्यों ज्यों पुत्र होय वहि बारा। त्यों त्यों बढ़े वृच्छे के डारा ॥
बालक तरुन होय सुख पावै। काट डार वह छड़ी बनावै ॥
यहि बिधि तेहि निकसे दस साखा। दसौ पुत्र पायो बैसाखा ॥
यूसुफ जन्म लीन्ह जग माहीँ। लोना द्रुम महँ निकसे नाहीँ ॥
कह्यो तात तिन पुत्र सोहाये। सबहि बंधु कहँ छड़ी सोहाये ॥
कस न दइव मोहिं आसा दीन्हा। तब अरदास दई तें कीन्हा ॥
आये जबराइल कै आसा। हरिहर रतन शाख कैलासा ॥

सो आसा यूसुफ नबी, पावा अभय हुलास।
लखि भाइन्ह कहँ क्रोध भा, जरैं हियें आभास ॥

हत्यो जो बंधु यहूदा नाऊँ। गये बंधु सब तेहि के ठाऊँ ॥
हम सब पितैं करहिं बड़ काजू। दिन दिन बढ़े सो ओकर राजू ॥
दिन भर रहैं सघन बन माहीँ। भूख प्यास कुछ जानहिं नाहीँ ॥
यह बालक कुछ करे न काजू। इन्हे दीन्ह दून कर साजू ॥
कछु दिन महँ सौंपे घर बारा। हमहिं रहहिं सेवक तिन्ह हारा ॥
बालक कुटिल पितैं बौरावा। तेहिं ते करन्ह सो बैग उपावा ॥
अबहिँ बिरिछ ना मूल सँभारे। डारहिं उत्पत ताहि उखारे ॥
जब वह मूल करै बिस्तारा। कैसेउँ कहै न चूक कुल्हारा ॥
देख अनुज कहँ कोपित ताता। बोला मरद यहूदा बाता ॥

वह बालक वै विरिध मैं, वै सौं पिता वह भाय।
दोऊ के दुख हिये महँ, दोऊ जगत नसाय ॥

यूसुफ रैन सपन एक देखा। बहुर पिता तिन कहा सरेखा ॥
जानहु गरह एकादस आए। रबि ससि मिल मोहिं सीस नवाये ॥
सुन याकूब सु कीन्ह हुलासा। राज पाट सुख भोग बिलासा ॥
जग महँ होहु महीधर राजा। सुद्ध बुद्ध नित आगर साजा ॥
पै यह सपन सुनै नहि भाई। नाहिन होहिं शत्रु दुखदाई ॥

मुख तिन बात निसारे कोई। अनत भेद वह परगट होई ॥
का होनार अनुज सों कहा। करहु विचार सपन कस अहा ॥
बंधुन कहा खोंट यह बारा। पितें ताह मुहँ लाय बिगारा।
रवि ससि मात पिता निरभाई। नखत एग्यारह हम सब भाई ॥
कीन्ह मता दस बंधु मिल, डारहि ता कहं मार।
नाहि तो हम सब दास सम, वह ठाकुर घर बार ॥
पिता आदि हम सब सिर नावहिं। सपन झूठ कहि नेह बढ़ावहि ॥
हत्यो निरिप इमलाक हठीला। देव कहाबे सुधर नवीला ॥
पिता सदा सो तासें लड़हीं। औ कबहूँ सरबर ना करहीं ॥
ताहि यहूदें छिन महँ मारा। घर कोपहिं महँ सिला पबारा ॥
जो अस बज्र न टारे टरई। ताहि मारि निहचिन्त सो करई ॥
ताहि सो पुत्र कर आदर नाहीं। यूसुफ हित राखै हिय माहीं ॥
बसीकरन जो पितहिं पढावा। सोइ पिता पर मंत्र चलावा ॥
जो वह झूठ कहत है बाता। जानहिं साँच सो ताकहँ ताता ॥
हम कोटिन जो बात सुनावें। उनहीं कू परतीत न आवै ॥
तेहिं यूसुफ कहँ मारिये, जहां न पावै नीर।
रक्त पिएं मिट जाय रिस, जो कुछ क्रोध सरीर ॥
करिकै मत आपस महँ सारा। पिता पास आए भिनसारा ॥
जो राउर हम आज्ञा पावहिँ। लै यूसुफ कहँ बनै सिधावहिँ ॥
जेहि बन मँह नित भेष चरावैं। यूसुफ देखि हिये सुख पावहिं ॥
बालक देख सो मन हुलसाहीं। वे खेलहिँ हम भेष चरावहिँ ॥
कहा जाउ हम भेड़ चरावै। यूसुफ का कहुँ बिक लै जावै ॥
मोर हिये उपजै यह संसा। जिन लैहि जाहु संग यह मंसा।
तब सबहि मिलि यूसुफ पहँ आए। खेल कूद कै बात सुनाये ॥
यूसुफ जाय पिता तिन कहा। हम हिय बहुत लालसा अहा ॥
सब भाइन्ह सँग बनहिं सिधावैं। दिन भर खेल कूद घर आवैं ॥
औ यूसुफ याकूब सन, बालक सम हठ कीन्ह।
दसो बंधु दस ओर नित, उत अँदोर करि लीन्ह ॥
हम यक यक अस बल बरबंडा। हैं गयंद बली भुज दंडा ॥
भागै सिंह हाँक एक मारैं। दसो बंधु दस दिग्गज टारैं ॥
मैंमंत गयंद न आनहि लेखै। काँपहि गैंडा सिंह बिसेखै ॥
का हम सौंहँ जो करै सु आना। बृथा सोच तुम हियें समाना ॥
यूसुफ तात सें बहुत हठ कीन्हा। होय व्याकुल तब आज्ञा दीन्हा ॥
अपने हाथ सें केस बनाए। और पितैं बागा पहिराए ॥
बार बार लै हिये लगावा। माया तें चख जल भरि आवा ॥

चले तात यूसुफ़ के संगा। जस दीपक सँग फिरै पतिंगा ॥
करै बिदा तेहि हिये लगावै। बिछुड़े प्रान महा दुख पावै ॥

केहि बन महँ लै जाहिं तोहिं, मन न धरै अब धीर।
कोमल गात गुलाब सम, सहै सो घाम सरीर ॥

लागहि छुधा जो बन के माहीं। तिरखा तें तुम अधर सुखावहिं ॥
तुम बालक वह बन अँधियारा। बिक जंबुक हैं भूत बैतारा ॥
पवन तेज ते तन कुम्हिलाई। धूप देख काया मुरझाई ॥
लागहि प्यास जो बारम्बारा। होय घाम देखि बिकरारा ॥
खड़े खड़े मुहँ दूभर भारी। होय कंठ सो प्रान दुखारी ॥
आयहु बेग न लावहु बारा। होइहि तात सो दुखित तुम्हारा ॥
चारि याम होय जुग चारी। साँझ परै सुठ होब दुखारी ॥
कहा पुत्र उपदेस हमारे। गाढ़ परे जिन दिहेऊ बिसारे ॥
मन सु सतै कछु होय जु ताता। सँवरहु एक निरंजन दाता ॥

कहा पिता रुबैल तें, सौंपहुँ तुम्हें परान।
दिन आछत लै आयहु, कियहु न साँझ निदान ॥

जो बिधि लिखा आन सो पूजा। करि न सकै कोऊ अब दूजा ॥
महा सिद्ध अब भए अधीरा। भूला अलख दयाल गँभीरा ॥
नीर छीर दुओ भा जनु भरा। सभउँ कहँ दीन्हों चित हरा ॥
जब वह प्यास लगे तब दीन्हो। औ आरत बहु भाँति सो कीन्हो ॥
बाहर नगर बिरिछ एक आहा। द्रुम बिछोह नाम तेहि काहा ॥
परदेसी जो कहूँ सिधारे। कुटुँब हितू तेहि लग पग धारे ॥
रोय रोय समधै तेहि लोगू। चख जल सींचहि बिरिछ बियोगू ॥
तहँ याक़ूब जो रोदन कीन्हा। औ यूसुफ जल मारग लीन्हा ॥
बहुत बेर लगि ठाढ़े रहै। तरवर बिरह बात जस कहै ॥

आगम बिरह बिछोह का, दीन्हा बिरिछ जनाय।
रोम रोम दुख व्याप्यो, लाग हिये पछताय ॥

डारहिं डार औ पातहिं पाता। सुना वृच्छ तिन बिरहक बाता ॥
जब लहिं पिता दिष्टि भर हेरे। आरत कीन्ह झूँठ बहुतेरे ॥
काहू अनुज सीस पर लीन्हा। काहू आप कहँ पाहन कीन्हा ॥
कोउ चूमै कोउ हिये लगावै। कोउ चूमैं कोउ काँध लगावै ॥
काहुन पीठ पर ताह चढ़ावा। जस तुरंग लै चहुँ दिस छावा ॥
कोई कहै सिरताज हमारा। कोउ कहै सम प्रान अधारा ॥
जब लै गये दिष्ट के ओटा। सिर से डार दीन्ह जस मोटा ॥
कोउ मारै कोउ बाँधै हाथा। कोउ साँसै बहु कोप कै साँसा ॥

तुम्ह बालक अस निडर भए, रचि रचि बचन अनेक।
हम ते पिता विमुख रहैं, यह तुम कीन्ह न नेक॥
रचि रचि बचन पितै बौरावा। तुम बालक अस विख बिखरावा॥
मै मै मरहि करहिं सब काजू। औ बैठे तुम बिलसहु राजू॥
अब सु कहौ का करौ उपाई। टूक टूक करि दैं हियँ भाई॥
जब मारहिं चहुँ दिसि निरदाइय। रोय रोय एक एक पहँ जाइय॥
मरतहिं लात परहिं तेहि दूरी। धावहिं लै निकासि कै छूरी॥
लै पाँवरि उन काटि बहावा। नांगे पाँव नबिय दौड़ावा॥
कँवल चरन महँ परै फफोला। प्यास ते जीभ भई जस ओला॥
यूसुफ नबी बंधु के आगे। साँसत देख सो रोवन लागे॥
बंधु तुम्हार अहैं लघु भ्राता। तुम्ह सो तात सन्ह सौंपेहु ताता॥
मोंहि मारे तुम दुख है, पिता मरहि तेहि रोय।
तेहिं से अब दाया करहु, धरहु छमा रिसि खोय॥
चहुँ दिसि तिन भाइन्ह तेहि मारा। भयो पियास तें बहु बिकरारा॥
यूसुफ तबहिं पाय के आसा। गयो भागि रोहेल के पासा॥
मोंहि पितें सौंपि तुम्ह दीन्हा। कौने दोख क्रोध तुम कीन्हा॥
मारि लात उठि दूर पवारा। कहा बोलावहु एकादस तारा॥
चंद सूरज जिन तोंहि सिर नाए। तेहि सँवरहु जो होंहि सहाए॥
तब समयू ते मांगा पानी। रोय दिखावा जीभ सुखानी॥
भाजन दीन्ह भूमि मँह डारे। क्रोधवंत होय मुख महँ मारे॥
गात गुलाब सछत करि डारा। क्रोधवंत होइ मुख महँ मारा॥
छुरा काढ़ि सिर काटन लागा। तब यूसुफ लादे पहँ भागा॥
होय तरास लाग्यो कहै, जिन काटहु तुम सीस।
देहु डारि मोंहि कूप महं, करै जो कछु जगदीस।
लातैं मारि जो दीन्ह पवारी। गयो पान कहं ढाढ़ पुकारी॥
तुम्ह पानी कर अहौ पियासा। हम प्यासे तुम खून के आसा॥
वे निरदाइ न दाया करहीं। जीना सबै सपन करि देहीं॥
गुफतालून जाद कै पासा। कहै बंधु मैं अहौं पियासा॥
कहे बंधु मोंहि पानी देहू। मरौं पियास से धरम सो लेहू॥
चाहा देहि यहूदा पानी। ढरकावा समयूं रिस मानी॥
सबहि बंधु बोलहिँ बिख बानी। चंद्र सूरज तें माँगहु पानी॥
गरह एकादस लेहु बोलाई। जो तोंहि पानी देहिं पिलाई॥
नौ भाई कोपित भये, कहै बंधु सन बात।
बैरी छोट न जानिये, ना छोटे दिन रात॥
कोउ कहै यहि डारहु मारी। पियहिँ रकत रिस मिटै हमारी॥

कोउ कहै बिष घोरि पिलावहिँ । कोउ कहै बन छाड़ि सिधावहिँ ॥
कहा यहूदा बंधु के मारे । होय बिनास नरसहिं कुल सारे ॥
पुनि मत कीन्ह सो होइ इकठाईँ । डारहिँ कूप माहँ बरियाईँ ॥
बन मां कूप अहै अँधियारा । चला जाय जो परै पतारा ॥
कुरता काढ़ि रक्त महँ भरहीँ । पिता पास चलि रोदन करहीँ ॥
कहहिं कि बिक यूसुफ कहँ खावा । कहा तुम्हार सो आगेहिं आवा ॥
यह कुरता लोहू कर भरा । हेरा बहुत सो पावा परा ॥
दिन दस पिता करहिं दुख सोचू । पुनि मिटि जाय पुत्र कर सोचू ॥
बन जारा कोउ आइहि, लेइह ताहि निसार ।
लेइ जाइहि परदेस कहँ, मिटै अँदेस हमार ॥
यही मता आपुस महँ कीन्हा । कुरता काढ़ि अंग तिन लीन्हा ॥
यूसुफ नबी जो रोदन करहीं । निरदाई कुछ दया न करहीं ॥
मोंहि कहँ नगन करहु जिन भाई । बसन समेत मोंहि देहु बहाई ॥
मृतक देइ बसन सब कोई । मोहि नगन मारे का होई ॥
रस्सी तासु गले महँ पिरुई । बहु मिनती माना नहिँ कोई ॥
आधे कूप जो पहुँचा बारा । समयू काट गुनी वहि डारा ॥
भाई सत्रु कूप महँ डारी । चलै सुचित होय काज बिगारी ॥
दीन्ह काटि जब गुन निरदाई । तब जबरैल सँभारेहु आई ॥
लै सो कूप महँ ताहि उतारा । भये जबरैल पिता अनुहारा ॥
कहा कि जिन चिंता करहु, धरहु हिये संतोष ।
सिद्ध कीन्ह करतार तोहि, करिय सहि बिधि पोष ॥
किये प्रबोध भोग फल धरै । बसन पिन्हाय सोच सब हरै ॥
यूसुफ नबी पिता कहँ देखै । रुदन कीन्ह औ पिता बिसेखै ॥
करुना कीन्ह पिता हिय लाये । तब जबरैल सो उझ्यो छोहाये ॥
जो निस दिन तुम्ह जोयहु गाता । सो अब कीन्ह रक्त रँग राता ॥
अधर पीत जामुन सम किये । गात लोग बदमेल सो भये ॥
नाँगे चरन धरमि दौरावा । रस्सी बाँध कूप लटकावा ॥
जेहि भाई पहँ रोवै जाई । मारि लात वह दूर पराई ॥
आधे कूप जो पहुँच्यो जाई । दीन्हा काट गुनी निरदाई ॥
जस दुख दीन्ह सो बंधु मोहि, बैरिहु नाहीं देय ।
गात सछत गये डारि, प्यास प्रान हरि लेय ॥
सुनि जबरैल न कियो सँभारा । लागे बहै नैन जल धारा ॥
मैं न होहुँ याकूब सोहावा । हौं जबरैल सरग तें आवा ॥
बाँधहु सत्त हिएँ औ धीरा । एक दिन दैव लगावहि तीरा ॥
दुख बैराग बीत सब जाई । औं याकूब तें देइ मिलाई ॥

करहिं बंधु तोरिय सेवकाई। होहु नबी जग राज कराई ।।
सब दुख हरै करै तोहिं राजा। बंधु दास होय करिहैं काजा ।।
जो करतार करहिं निज दाया। का सो करै वैरिय निरमाया ।।
कोटि सत्रु जो कीन्ह उपाइय। इब्राहिम कहँ लीन्ह बचाइय ।।
बैरी सबहि किये संहारा। भयहु ताह फुलवरी अँगारा ।।

दिये बहुत दुख संत कहं, करैं बहुत उद्धार।
जैसे कंचन कीजियै, खरा अगिन महँ डार ।।

करिकै नगन अगिन महँ तावा। इब्राहिम कहँ कुरता आवा ।।
सो कुरता न याकूब सुहावा। चित्र समान सो बसन बनावा ।।
जंत्र समान भुजा महँ बाँधा। भूत बयारि न आवै राँधा ।।
तब जबरैल नगन तेहिं देखा। भये दुखित लखि नगन सरेखा ।।
तब कुरता बाजू तन खोला। पहिरायौ सो बसन अमोला ।।
चौकी एक अनूप लै आवा। तेहि पर यूसुफ कहँ बैठावा ।।
जो अमरित ना सुना न देखा। सो यूसुफ कहँ दीन्ह सरेखा ।।
कहहु भोग सँवरहु करतारा। हरै दुख सो बेग तुम्हारा ।।
करि परबोध सो सरग सिधारा। यूसुफ तिन सो कहयो कै बारा ।।

महा सिद्ध तुम होहु कै, महाराज जग माँह।
मॉत पिता हत बंधु कुल, करहु तो सब पर छाँह ।।

अवया मार रकत रँग धारै। कुरता लै सो चलै हत्यारै ।।
बिरह बिछोह जो नगर निसारा। तहाँ ढाढ़ याकूब दुखारा ।।
ओ यूसुफ कै भगिनी दीना। पिता संग वहि हती मलीना ।।
भइय साँझ नहि यूसुफ आये। केहि कारन तेहि बिलँब लगाये ।।
बार बार वहि बाट निहारी। ओ यूसुफ कहँ पिता पुकारी ।।
यही समय आये हत्यारे। रोदन करत भूंठ वै सारे ।।
सुनि रोदन यह भा बिकरारा। हिरदै मनहुँ बान अस मारा ।।
दुनिया कहै कुसल है नाहीं। बिरन मोर नाहीं उन्ह माहीं ।।

बिन बीरन यह नगर सब, भयो सून अँधियार।
पिता मुए घर ऊजरा, काह कीन्ह करतार ।।

लखि दुनिया सो छार चढ़ाई। कहां छाँड़ि आयो मोर भाई ।।
रोय रोय दुनियाँ गोहरावा। आवहु यहां पिता दुख पावा ।।
रोवै लाग देखि कै ताहां। सबहु आयो मोर बीरन काहाँ ।।
रोवत गये पिता के पासा। बहु बिलाप वै किय परगासा ।।
काह कहै कछु कहा न जाई। हम सब गये सो छाँड़ि चराइय ।।
पसुन पास यह खेलत अहा। तहां सो आन भेडहिं वह गहा ।।
ढुँढत फिरै सभै बन झारा। तब लहि बिक तेहिं कीन्ह अहारा ।।

रकत भरा कुरता वह पावा। देख हिये करुना होइ आवा॥
तेहि ते पिता करो संतोखू। हम काहू कर आह न दोखू॥
बात तुम्हारे जीभ कै, कैसे अबिर्था जाय।
बिधि कर लिखा को मेटै, यूसुफ कहँ बिक खाय॥
सुनि याकूब सो मुरछित भयऊ। मानहु प्रान काल लै गयऊ॥
जबराइल धर्‍यो मुख हाथा। हरे साँस लखि धूमिल माथा॥
खाय पछाड यहूदा रोवा। वृथा प्रान पिता कर खोवा॥
का अस मरम बंधु तुम कीन्हा। पिता सिद्ध कै हत्या लीन्हा॥
रोय रोय दुनियन सिर फोरा। भयो कठिन दुख रोज अँदोरा॥
दिन भर बाट बिलोकत हारे। गये बार खिज बार सिधारे॥
व्याकुल पिता पुत्र कै काजा। सिर पर पडे अचानक गाजा॥
दिन भर रहैं बिलोकत बाटा। साँझ भये तेहि आयो घाटा॥
भये साँझ यह दुख कै कारी। के मेटै यह निस अँधियारी॥
बीरन मोर कहां पहँ गयऊ। जेहि बिन घर अँधेर सब भयऊ॥
वह बीरन जेहि बिन भयो, घर बाहर अँधियार।
दहुँ आये तजि सुवन बन, कै दहुँ कुप महँ डार॥
अस अज्ञान न कुरता मारा। लहू लाय ते आये सारा॥
ज्ञानी लोग जो कुरता देखैं। करहिं बिचार ओ झूँठ बिसेखहिं॥
जो बिक खात रहत कत सारा। टूक टूक होय जात नियारा॥
निस भर रहै बिकल बिसँभारा। आयो प्रान होत भिनसारा॥
जब जागै तब यूसुफ कहा। कहैं लोग कत यूसुफ कहा॥
तब रोवहिं अस छाँड डफारा। सरग दूत रोवहिं एक बारा॥
तब जबरैल भूमि पै आये। तो याकूब नबी समझाये॥
अब संतोष किये बनि आवै। रोदन किहें कोऊ न पावै॥
तुम्ह अवतार सिद्ध कर लीन्हा। सहौ दुख जो साईं दीन्हा॥
पुत्र गये संतोष करि, प्रान देहु जिन रोय।
रोदन करहु सदा हिए, पुत्र जो कियो बिछोह॥
तब याकूब सु चित्त सँभारा। रोवै लाग सँवर करतारा॥
कहा कि कहो पुत्र का भयऊ। प्रान न गयो प्रान कत गयऊ॥
तुम्ह कछु मरम दुखी कर जाना। करहु बोध कर सिस्ट बखाना॥
जीयत अहै कि मिरतक भयऊ। जेहि बिन घर अँधियर होय गयऊ॥
कहा कि मैं कछु भेद न जाना। बिन अज्ञा का करहुँ बखाना॥
मरन जियन जानै जमराजू। कै जानै जिन जग उपराजू॥
तब याकूब कहा सिर नाई। पूँछहु तुम यमराज ते जाई॥
कहो जाय याकूब सँदेसा। जहां होय यमराज नरेसा॥

बोला जम यूसुफ कर प्राना। मोरे पास न दूतन आना ॥
तब जबरैल सुनावा, वै संदेस अपार।
जेहि सौंपा तुम्ह पुत्र कहँ, तेहि सौं माँगहु बार ॥
सुनि याकूब डरै मन माहीं। अलख त्रास ते सुठि बिलखाहीं ॥
डरै हिएँ सिर दै मुंह मारा। मोंहि ते चूक भई करतारा ॥
मैं बाउर बड अवगुन कीन्हा। चहौं दुःख जो उत दुख दीन्हा ॥
कहा कि अब कीजै संतोषा। समरहु ताह करहिं जो मोषा ॥
तब याकूब सो कुटी बनावा। बाहर नगर तहाँ चलि आवा ॥
घर औ बार छाँड़ि सब लोगू। निस दिन करै कुटी महि जोगू ॥
काहू दरस ना देय सोहावा। औ कोऊ तहँ जाय न पावा ॥
रोदन भवन नाम तेहि राखा। यूसुफ नाम करै नित भाखा ॥
जो सोए तो यूसुफ कहै। जो जागै यूसुफ मुख छहै ॥
यूसुफ कहै भूख जब लागै। यूसफ कहै प्यास तन भागै ॥
नींद भूख औ प्यास महँ, यूसुफ नाम अधार।
सँवर सँवर मुख पुत्र का, रोदन करै अपार ॥
नींद भूख तज साधहिं जोगू। करहिं तपस्या बिरह बियोगू ॥
नित कुरता वह नैन लगावै। औ यूसुफ कहि कहि गोहरावै ॥
रोवत नयन भये दोउ अंधा। फाट न हिया सँवर चित बंधा ॥
गये नैन दोउ पुत्र वियोगू। जोगउ तें साधा तब जोगू ॥
यह बिध देख पिता कर हाला। भयै पुत्र सब हिए बेहाला ॥
रोदन जब याकूब करेई। सरग दूत कर जाप हरेई ॥
जब याकूब रोय जिव खोवहिं। जाय भुलाय दूत सब रोवहिं ॥
कहाँ प्रान तोहि भाइन्ह डारे। कहाँ छाँड़ि आये हत्यारे ॥
केहि दिस जाउँ कहाँ तेहि हेरौं। कौने बाट नाम कहि टेरौं ॥
निस दिन हिये लगाये, मैं तोहि सोवत पास।
सब निस जाग भयावन, रहौं बिचारत साँस ॥
मुख तुम्हार अब देखत नाहीं। ताते प्रान रखै घट माहीं ॥
एक घडी जो दरस न पाऊँ। रोवत फिरौं चहूं दिस धावहुँ ॥
जब लहि नाव लिये ना कोई। तब लहि जीवन दूभर होई ॥
अब तोर कौन सुनाइय नाऊं। तोहि बिन सून भयौ सब ठाऊं ॥
भयो भवन तोहि बिन अँधियारा। काटेव खाय सबहि घर बारा ॥
केहि बन महँ तुम्ह काँ परहेले। तुम्ह बालक कत फिरहु अकेले ॥
मोरे साथ रहे मन माहीं। सुख तुम्हार कुछ देख्यो नाहीं ॥
केहि बस करौं सो खोज तुम्हारी। कवन देस होय जाऊँ भिखारी ॥
अब केहि बिधि दिन बीतहि मोरा। केहि बिधि रैन बिहायहि मोरा ॥

यूसुफ नाम रैन दिन, लेत रहै याकूब।
दिन भर पलक न लावे, पुत्र बिछोह अनूप ॥
केहि सो साँझ लै हिये लगाउब। भोर होत केहि लाल जगाउब ॥
केहि के सुनब मधुर रस बाता। केहि कर हिये लगाउब गाता ॥
केहि के देखब चाल सोहाई। जेहि काँ देखि हंस मुरझाई ॥
केहि तें भेंट करब दिन राती। केहिं काँ देखि सिराइह छाती ॥
जब याकूब सो होंहि अधीरा। आवहिं जबराइल तिन्ह तीरा ॥
कहहिं कि तुम रोउब जिय खोवहिं। काँपे सरग दूत सब रोवहिं ॥
तुम अवतार कि सिद्ध सरीरा। ऐसे दुख जनि होहु अधीरा ॥
तब याकूब सो छाँड़ि डफारा। कहा कि काह करूँ करतारा ॥
ऐसे पुत्र काहे कहँ दीन्हा। मनहरिया फिर कस हर लीन्हा ॥
दाया कीन्ह अनेक विधि, दीन्ह पुत्र अस मोंहिं।
देखि रूप गुन विसुध भयो, तब मोंहिं दीन्ह बिछोह ॥
तब काहें का अस चित लावा। जो अब हाथ रहा पछतावा ॥
अलख ठाढ़ चित उन सो लावे। ताकर फल मानुस अस पावे ॥
दीन दयाल करै अस दाया। दिये अनूप सुखी करि साया ॥
तेहि दयाल कँह दइय बिसारे। देखे निस दिन नस्ट बिचारे ॥
फुलवारी बहु फूल बनाये। एक तें एक सुरंग बनाये ॥
जो मन पुहुप एक तिन लावे। जाय सूख कुछ हाथ न आवे ॥
चित्र अनेक जो रच्यो चितेरे। मोहित होय रूप रँग हेरे ॥
आवे चित्र काज कुछ नाहीं। चित्र काज सँवरहु मन मांहीं ॥
काहे न चित्र चितेरे लावहु। चित्र विचित्र रूप निरमावहु ॥
जो कुछ रहे न हाथ मँह, तेहि चित दीजिय काउ।
जो न मरे नहिं बीछुड़े, तेहि ते प्रीत लगाउ ॥
भोर होत फिर बन कहँ गये। अनुज सँघार सुचित मन भये ॥
यूसुफ मया मीत मन भयऊ। चोरिय एक यहूदा गयऊ ॥
जाय कूप मँह ताहि पुकारा। कहूयो बीर का हाल तुम्हारा ॥
यूसुफ नबी कहा बिकरारी। कहा यहूदा रोय पुकारी ॥
का पूँछो अब हाल हमारा। परे अकेल कूप अँधियारा ॥
बिच्छू साँप भरे तिन माँही। दिन एक जियन भरोसा नाहीं ॥
जब लग सुदिन न दीपक बारा। जाय न देइ पिता तिन बारा ॥
का अवगुन अस कीन्ह तुम्हारा। जो अस कूप अंध महँ डारा
कूप अंध दुख भयौ सँघाता। का पूछौ दुखिया कर बाता ॥
परे अँधेरे कूप महँ, कोऊ न संघी भाय।
बिच्छू साँप भरे तहां, केहि बिधि कुसल कराय ॥

मात पिता केहि सुख ते पाला। भाई अंध कूप महँ डाला॥
कह्यौ पिता तें जाय सँदेसा। पुत्र तुम्हार गयो परदेसा॥
मरत नाम जिन कह्यौ सुनाई। मरैं पिता निज प्रान नसाई॥
कियो पिता की बहु विधि सेवा। जेहि ते पार लगे तुम खेवा॥
छुधा तृखा जब लागे भाई। भूख हमार न दिहयो भुलाई॥
जब दुख पड़े बिपत अवगाहा। सँवरहु बंधु मोर दुख दाहा॥
बसन हीन तन नगन हमारा। सँवरहु बंधु औ किहयो बिचारा॥
सेवा किहेउ पिता कै भाई। जेहिते हम दुख जाइ भुलाई॥
जब मिरतक कोई देख्यो भाई। सँवरेहु मूरत मोर सुहाई॥

सुन यूसुफ उपदेस यहु, रोय यहूदा भाय।
कहा कि सँवरहु अलख कँह, जो दुख माँह सहाय॥

समयू बहुरि पकरि बिक लावा। करि मुख बिकतें रकत लगावा॥
लैके ढाढ़ पिता पहँ कीन्हा। यूसुफ खाइ यही बिक लीन्हा॥
आयो आज फेरि वहि ढाऊँ। लायो ताहि पकरि कै पाऊँ॥
तब याकूब सु छाँड़ि ढफारा। कहै लाग का तोर बिगारा॥
यूसुफ मुख लखि दया न आई। केहि विधि लीन्ह सो तेहिं कहँ खाई॥
कैसे मन पतिआयौ तोरा। लीन्हसु खाय परान तुम्ह मोरा॥
औ याकूब सीस भुइं लावा। अय दयाल सुखदायक रावा॥
अज्ञा होय कहे बिक बाता। यूसुफ रकत अहै मुख राता॥
पूँछि लेहुँ सम अरिन्ह अयारा। तिन्ह यूसुफ कहँ कीन्ह अहारा॥

भय आज्ञाँ जगदीस कै, बोला बिक धरि सीस।
कह्यो अरथ यूसुफ कर, लेहु हमार असीस॥

यूसुफ कहँ खायौं केहि ढाऊं। देहु बतायै तहाँ चलि जाऊँ॥
यूसुफ केस तहाँ एक पाऊँ। लेउँ सुदान बैन महँ लाऊँ॥
लाखन अजा मेख हमारे। का तोहि मिला प्रान के मारे॥
वह मुख देख दया नहिं लागे। उठे न घात मया के आगे॥
कहै लाग सुन बिक नरनाहा। दोस न लाग कछू हम माँहा॥
जहँ लै सिद्ध औ साध सरीरा। तेहि मानुस दुःखित हम पीरा॥
तुम अज्ञाँ तिन संघ न देखै। वहै पुत्र परान बिसेखै॥
यूसुफ रूप देख सर नावहिँ। तेहि कैसे हम खाय उड़ावहि॥
हम ते घाट भये कछु नाहीं। देहु असीस धरहु अब जाहीं॥

सावक मोर बिछुड गयो, ढूंढत फिरौं बे हाल।
पुत्र तुम्हार पकरि कै, लाय कीन्ह मुख लाल॥

तब याकूब सँवरन लागे। बिक तें पूँछन लाग सुभागे॥
तुम यूसुफ कर खोज बतावहु। कहौं सत्त संदेह मिटावहु॥

लाल हमार कहाँ लै डारा। जीयत अहै कि मारि सँघारा ॥
सावक तोर दई तोहिं दिये। यूसुफ सुधि कहै जस लिये ॥
तब बोला बिक भुँई धरि माथा। का हम से पूछहु नरनाहा ॥
पिसुन सरूप धरे मुख रहहीं। हम काहू कर दोख न करहीं ॥
दोस होय आवगुन के लाये। पाप परावा परैं सुनाए ॥
आन उपाय कहै जो कोई। पातक तासु ताहि सिर होई ॥
औ हम का जाने फिर भेदा। जानै सोइ रच्यो जिन भेदा ॥

तुम्ह सुअंस करतार के, आवहिं दूत तोंहि पास।
का पूँछहु हम से बिथा, पूछौं दइयं जो आस ॥

बिक टीले चढि जाय पुकारा। किन यूसुफ कहँ कीन्ह अहारा ॥
यूसुफ बंधु सो हत्या लावा। कहहिं कि बिक यूसुफ कहँ खावा ॥
हैं याकूब नबी रिस माँहा। रोदन करै मरै नरनाहा ॥
जो वह सराप देइ करतारा। सब बिक मरहिँ होहिं जरि छारा ॥
मैं करिया देइ भयौं अदोखा। अब ढूंढहु तुम आपन मोखा ॥
सुनि सारे बिक आरन केरे। आन बार याकूब सुघेरे ॥
कहा कि तुम नाहिंय कछु दोखा। करै अलख तुम सब कर मोखा ॥
कुटिय के आस पास चहुं ओरा। मारहि कूक ओ करहिं अँदोरा ॥
सुनि अँदोर याकूब दुखारा। आयो निकसि बिरह कै मारा ॥

चहुँ दिस बिक रोवत न ले, देखि नबी कर रोज।
कहै चलहु अब कीजिये, यूसुफ नबी कर खोज ॥

बिक अजया याकूब पहिँ आई। रोवै लाग सीस भुँई लाई ॥
सहस जंगम बन महँ आहे। हमें दोख केहि कारन कहे ॥
पुत्र तुम्हार हमें दुख दीन्हा। रकत हमार सुदोखित कीन्हा ॥
सो कुरता लोहूकर भरा। तुम्ह अपने नैयनन्ह पर धरा ॥
राउर नैन ज्योति हरि गई। यहि हत्या हम्ह सिर पर भई ॥
जनम जनम मैं औगुन दोखा। केहि बिधि करै दैव हम मोखा ॥
तब याकूब बोध तेहि कीन्हा। तुम्ह कहँ दोष दइय नहिं दीन्हा ॥
दोष तौंह जो तुमका मरा। यूसुफ बसन रकत रँग धारा ॥
कत कुरता यूसुफ कर सारा। अजया मार रकत सों भारा ॥

तुम्हें दोख कछु नाहिन, वै दोषी हत्यार।
जिन्ह यूसुफ तें मोहि कहँ, कीन्ह बिछोह निसार ॥

सात दिवस दुख भयो अपारा। उतरे तेहि बन माँ बन जारा ॥
मालिक नाम महा अस नायक। जात मिसर कहँ वहि सुखदायक ॥
आगे वै सपना महँ देखा। होय लाभ यह बन उन देखा ॥
सदा आप नायक यह बासा। करै सो वही बनै महँ बासा ॥

तोहि महँ आये एक बनजारा। जल हित डोल कूप महँ डारा ॥
यूसुफ नबी डोल गहि लीन्हां। रोवत ताहि हाँक पुनि दीन्हा ॥
डारि डोल भागा डर खावा। औ नायक तें जाइ जनावा ॥
जंतु एक है कूप के माहीं। डोल अडोल है डोलत नाहीं ॥
तब नायक वहँ आपसि धावा। तेहि के संघ मानुस बहु आवा ॥
अंध कूप तें ताह निसारा। होयगा बन सगरो उँजियारा ॥

पानी खोज जो कूप मँह, डारा डोल 'निसार'।
तँह यूसुफ कहँ पावा, धन नायक व्योपार ॥

नायक देख परान अस पावा। होय मोहित लै चला सोहावा ॥
लै यूसुफ कहँ चल्यौ चलाई। तब लहि पहुँचे वै दस भाई ॥
धाय आन सब कीन्ह पुकारा। कहाँ जाँव लै दास हमारा ॥
दिन पाँचक तें भाग परावा। खोजत फिरौं कहूं नहिं पावा ॥
यूसुफ चहा कहै निज बाता। नायक ते बरनै दुख भ्राता ॥
तब समयूँ इबरी महँ कहा। बोल न बचन जो जीवन चहा ॥
यूसुफ नबी मौन तब साधा। लाग्यौ कहै बँधु दुख बाधा ॥
भागे सदा दास बिन मारे। करे न काज भये हम कारे ॥
भोग न करै रहै नित रूसा। कब लहि रखें सो घाल मँजूसा ॥

दास हमार वो चोर हैं, सुन नायक निज बात।
मोल देहु लै जाहु तुम, मिटै कोप दिन रात ॥

मन महँ कहै लाख लहि देहू। यह बालक कहँ पुत्र करेऊँ ॥
मालिक कहा कहौ सो देहीं। यह सुदास दोखी कहँ लेहीं ॥
वह यूसुफ कर मोल न जाना। थोर दाम माँगा अज्ञाना ॥
तीन दोख यह मँह बड़ मारे। भाये चोर रोय बद कारे ॥
कहा लेउं मैं दोषी दासा। जाय तो जाय रहे तो पासा ॥
मोरे पास रोकट है थोरा। बिसह्यौँ मोल हस्ति औ घोरा ॥
बसन अतर औ पाट पटंबर। मृग कसतूरी केंसर अंबर ॥
कहा कि रोकर होय सो देऊ। यह सु दास दोषी कहँ लेहू ॥
तीन दरभ रोकर हम पासा। सो तुम लेहु देहु यह दासा ॥

अस कोरे हम दास तें, भय नायक दिन रात।
जो तुम देउ सो लेब हम, अवर न अब कहु बात ॥

कहा कि जो कुछ देहु सो लेहीं। का दोषित कर मोल करेहीं ॥
तुरतेहि दीन्ह न लायसि बारा। तब यूसुफ पुनि कीन्ह जोहारा ॥
मालिक कहा दाम भर लेहू। लै मोहि कहँ कागद लिखि देहू ॥
तब समयूं कागद लिख दीन्हा। मालिक मोल यूसुफ कहँ लीन्हा ॥
हम सब मोल दाम पर पावा। दास चोर कह बँचि अडावा ॥

लै कागद यूसुफ कहँ चला । कहा कि करम हत्यो मोर भला ॥
लागे कहै कि भागे दासा । रखियो बँद महँ निसि दिन प्यासा ॥
जो यह भागि जाय कहुँ नायक । हमें न दोख दियो सुख दायक ॥
तेहिं ते डारि देहु पग बेरी । ऊँट चढाय फिरहुँ चहुँ फेरी ॥
गयऊ सँकर पग बेरी, हाथ हथकडी नाय ।
टाट झूल पहिराय के, फिरहु सो ऊँट चढ़ाय ॥
कँवल चरन महँ बेरी नवावा । कुसुम्ह बाँह हतकरी पिन्हावा ॥
टाट झूल यूसुफ कहँ दीन्हा । बसन अनूप काट तिन्ह लीन्हा ॥
जब वह बँधि चले निर्दाई । यूसुफ रोय उठा अकुलाई ॥
आज्ञा देहु जाउँ उन्ह पासा । आवै समुद सो अस सो आसा ॥
नायक कहा मया तोहिं आई । वे जस सत्रु अहैं निरदाई ॥
कहा कि करत कोटि अनरीती । मोरे हियतें जाय न प्रीती ॥
पहने टाट झोल अस भारी । बेरी पकरि चला बनवारी ॥
यूसुफ बिदा रोय तहँ कीन्हा । एक एक कहँ अंकम दीन्हा ॥
वह रोवै वे हँसैं निर्दाये । टाट झूल लखि मन रहसाए ॥
भूँख प्यास दुख मृत्यु मँह, भूलि न जायहु मोह ।
सँवरेहु सदा हिये मोहिं, हम दुख बिरह बिछोह ॥
अनुज दास कहँ सँवरेहु भाई । तुमहिं सपथ जनि दिहेहु भुलाई ॥
अब हम जाहिं कहाँ किन देसा । कते रे मिलन कत जियन अँदेसा ॥
दास चोर बँधुआन बनावा । दहुँ आगे का चहिय दिखावा ॥
अब हम कहाँ, कहाँ तुम्ह भाई । जनम संग देइ बिधि बिलगाई ॥
तात चरन सिर लायहु भाई । मोरे आेर तें कहेउ सुनाई ॥
पिता न दिहेउ प्रान तुम्ह रोई । देहु असीस भेंट जेहि होई ॥
मोर मृत्यु जिन्ह ताह सुनायहु । फिर फिर सिर चरनन्ह लै लायहु ॥
मरहिँ न पिता करेउ अस काजू । नाहित होय दुओ जग लाजू ॥
रोय रोय सब बरन सुनावा । तब नायक तेहि बोलि भेजावा ॥
मात पिता जन परिजन, लोक कुटुँब परिवार ।
यूसुफ चला बिदेसु कहँ, किनआें नगर जोहार ॥
रोवत चला ऊभ लै साँसा । रहे न पिता मिलन की आसा ॥
चलै फेर देखहि उन आेरा । मकु भाई पूंछहिं दुख मोरा ॥
भाइन्ह कहा बिलम्ब जिन लावहु । नायक संग बिदेस सिधावहु ॥
यूसुफ नैन मघा झर लाये । नायक पास गयो बिलखाये ॥
यूसुफ हिये सँवर यह बाता । मुकुर देख मुख आपन राता ॥
ऐस रतन संपत उन्ह पावा । चला बेगि नहिं बार लगावा ॥
मन महँ जस कीन्हे अभिमाना । तस सुमोल आपन हम जाना ॥

तेहि अवगुन यह दुरगत भयऊ। दास चोर बँधुवा होय गयऊ ॥
चला सँगहि लै नायक, यूसुफ ऊँट चढ़ाय।
फिरि फिरि करै जुहार वह, किनआँ देस सिर नाय ॥
नायक पंथ मिसर का लीन्हाँ। चहै दास यूसुफ सँग कीन्हाँ ॥
लिये जात सँग वै निरदाई। मात गोर पर पहुँचा जाई ॥
यूसूफ़ नबी नैन भरि हेरा। रोय रोय माता कहँ टेरा ॥
लखि माता की कबर सुहाई। होय बिकरार गिरा मुरझाई ॥
पुत्र तुम्हार जात परदेसा। भएहुँ दास देख्यो नहिँ भेसा ॥
वै चरनन महँ देखहु बेरी। टाट झूल जो कबहुँ न हेरी ॥
लोटै पड़ा कबर पर रोई। खाय पछार जीव कत खोई ॥
देखि कबर पर दास अभागा। क्रोधवंत होइ मारन्ह लागा ॥
यहि अवगुन यह मोल बिकाने। अबहूँ आस हिये नहिँ माने ॥
बेचनहारन्ह सत कहा, भागि जाय यह दास।
मस्तक मारि सो लैचला, पकरि सो नायक पास ॥
जब सो दास यूसुफ कहँ मारा। मता कबर काँपै एक बारा ॥
प्रान हमार भयो तुम दासा। मारि तुम्हेँ करि दास निरासा ॥
पदुम बरन जो चरन तुम्हारा। तेहि चरनन महँ बेरी डारा ॥
कौन देस तोहिं कहँ लै जाहीँ। जहाँ सुमात पिता कोउ नाहीँ ॥
काँपै कबर औ यूसुफ रोवा। दास पुत्र तेँ मात बिछोहा ॥
आँधी उठी भयौ अँधियारा। सूझि परै नहिँ हाथ पसारा ॥
घन गरजै बादर चढ़ि आए। दामिनि कौँध चमक दिखराए ॥
आवै चमक जो नायक पासा। लखि मालिक मन भयो तरासा ॥
मैं तो दोष कीन्ह कुछ नाहीँ। केहि कारन दामिनि डरपाहीँ ॥
बार बार जो आवै जाई। मलिक देखि हिए डर खाई ॥
कौन पाप मोहि परगस्यो, कीन्ह दइय अस कोप।
जानि परै अँधकार महँ, सब मिलि होब अलोप ॥
तब एक दास आगे चलि आवा। औ मालिक तेँ भेद जतावा ॥
दास जो मोल लीन्ह तुम आजू। भयो कोप बिधि तेहि के काजू ॥
जैसे तेहि मारा बिन दोखू। तेहि सुदास तेँ माँगहु मोखू ॥
हत्यौ कबर पर रोवत दासा। तेहि मारत अँधेर चहुँ बासा ॥
तब मालिक यूसुफ पहँ आवा। नाय सीस कर जोरि मनावा ॥
करहु छमा औ देहु असीसा। जेहि तेँ छिमा करै जगदीसा ॥
तब यूसुफ दोउ हाथ पसारा। मिटि गा गरज कौँध अँधियारा ॥
कीन्ह बहुत हठ बेचन हारे। तेहि कारन बेरी पग डारे ॥
बैरी पाँव ते काटि बहावा। करि अशनान बसन पहिरावा ॥

मालिक देखि अधीन भा, कीन्ह बहुत अरदास।
जैसे पकरि मँगाय कै, सौंपि दीन्ह सो दास॥

लैआए यूसुफ कै पासा। कहा कि है दोषी यह दासा॥
जो तुम कहौ सो साँसति करहीँ। जेहि तेँ सबहि दास तोंहि डरहीँ॥
यूसुफ नबी बोल यह चेरा। निज बाहुन तेहि आनन फेरा॥
हत्यो जो रंग स्याम अँधियारा। चाँदी सम होयगा उँजियारा॥
मलिक देखि सो अचरज कीन्हा। वह सुदास यूसुफ कहँ दीन्हा॥
पुत्र समान रखै तेहि लागा। कहै कि भाग मोर अब जागा॥
नित नवीन बागा पहिरावै। अपने संग सो भोग खवावै॥
यूसुफ नबी करै नित रोवा। सँवर सँवर याकूब बिछोहा॥
मलिक भेद बहुत निरभावे। छुटि सुदास नहिँ और बतावे॥

मालिक साज समाज के, चला मिसिर के देस।
कहूँ बिरह दुख ताकर, कीन्ह जो मिसिर परबेस॥

जुलेखा बरनन खंड

अब बरनौं यह कथा सुनावा । जासु बिरह तेहिं मिसर लैआवा ॥
मगरिब देस सो नगर बखाना । तहँ तैमूस शाह सुलताना ॥
सबइ कछु ताहि दीन्ह करतारा । राज पाट सब कटक सँवारा ॥
संतति और न दीन्ह गोसाईं । सुता एक अछरी कै नाईं ॥
सो कन्या हुत बार कुमारी । नाम जुलेखा दई सँवारी ॥
भई तरुनि जग बास बसानी । रूप अनूप जगत सब जानी ॥
देस देस के नृप सुलताना । कीन्ह चाह सुलतान न माना ॥
दुहिता जोग रूप कहँ पावा । जेहि तें होय सँजोग मरावा ॥
कहँ यह जोग जगत महँ कोई । जो यह कन्या कर बर होई ॥

सात दीप से चाह उत, लागे आवे जाय ।
काहू देय न उतर नृप, तौ लै गरब सुभाय ॥

अब नख सिख बरनौं तेहि केरा । बाउर होय जो दरसन हेरा ॥
प्रथम कहौं माँग कै रेखा । सुरसती जमुना बिच देखा ॥
खरग धार वह माँग सोहाई । सेंदुर तहाँ न रकत लगाई ॥
औ ता महँ गूँथे गज मोती । राहु केत महँ नखत के जोती ॥
दुओ दस घन बादर जस छावा । मध्य कौंध चमकै दिखरावा ॥
दामिन अस वह माँग सोहाई । केस घमंड घटा जस छाई ॥
जस जमुना के नदी अपारा । माँग बाँध तिन्ह सुघर सँवारा ॥
सेत बंध तस माँग सोहाई । बिरही नैन बार जनु पाई ॥
जो न होत वह माँग अनूपा । डूबत नैन स्वरूप अनूपा ।

माँग सुहाई मुख बँधी, भाग अधिक तेहि दीन्ह ।
राहु केत दोउ दस तहाँ, मनहु किरन रब कीन्ह ॥

केस सीस का करौं बखाना । तक्षक देखि सो ताहि लजाना ।
मुख पर लरहिं जो होइ बेकरारा । तम संदेह करै संसारा ॥
कोउ कहै अहै तम राजा । सोहै तहवाँ जोत बिराजा ॥
कोउ कह अहै दिनेस सोहावा । बरत हेत कालिंदी आवा ॥
कोऊ कहै कि नागिन कारी । दीन्ह छाँड़ि मन सो उँजियारी ॥
कोऊ कहै श्याम अलि मोहा । पुहुप पराग आय तेहिं सोहा ॥
पुहुप चित्र महँ मृग मद बारा । खींची चित्र चितेरन्ह मारा ॥
केस सीस मानो निसि कारी । प्रात काल मुख कै उँजियारी ॥

केस रचत तज आस न पासा। का तेहिं जाय सो पावै मासा ॥
सिरिस फूल तहँ सोभा देई। औ चोटी लखि मन हरि लेई ॥
बेनी गूँथी लरी से, जग नागिन बन लीन्ह।
मूँगा चौकी पीठ पर, भान छाँड़ि तेहि दीन्ह ॥
अब लिलाट बरनौ सुखकारी। राका ससि तासों उँजियारी ॥
कनक खोर सो टीका दीन्हाँ। ससि गुरु कमल अंच ग्रह कीन्हाँ ॥
मंगल बूँद सुरंग सोहावा। ससि गुरु भुम्म एक ग्रह पावा ॥
राहु केत गज दोउ दस कारे। मध्य सोम पूरन उँजियारे ॥
तहाँ सो झलक किनारी देखा। जस ससि महँ दामिनि परबेसा ॥
इत अवरोध उधुंध सुहावा। दुओ दस राहु गुपुत दिखरावा ॥
गुर सुर कुज ससि कै यक ठाईं। सोहैं सदा लिलाट सोहाईं ॥
गिरवर गढ़ सोहै तिन्ह सारा। हाेय बिकल तेहिं देखन हारा ॥
जोत कहिय मन झूँठि कै जाना। उन के अंग बिकल भै आना ॥
चंद लिलाट न सोहै, पूरन जोत अपार।
वह कलंक बिकलंक नहिं, वह षट बुध लहि सार ॥
भौंह धनुक का बरनै कोई। जाय सो ग्यान तहाँ लखि खोई ॥
बरनै सर वह धनुख समाना। ताहि देख जग डरपै प्राना ॥
भौंह कमान चढ़ै नित रहै। सर संधान सो मारन्ह चहै ॥
गाछ गाछनैं सुन्दर सोहैं। लखि भृकुटी सो सूर मन मोहैं ॥
इन्द्र धनुक तेहि देखि लजाना। खीन बान होइ बेगि बिलाना ॥
धनु महँ जीव आप परबेसा। दुओ दस केस सोहावन केसो ॥
भौंह सरासन भृकुटी बाना। नैन बान इत बाँधहिं बाना ॥
देखि ताह थिर रहै न ग्याना। जाय भूलि सब सुद्धि पराना ॥
तिन्ह बेंदा कोटिन छबि देई। धनि मानहु जीवन हरि लेई ॥
धनु भौंहैं बिधनै रच्यौ, भृकुटी सनमुख बान।
देखि सरासन सिर चढ़ैं, काँपै जगत परान ॥
नैन देखि मन होय बेहाला। जासु कटाछ हिए महँ साला ॥
सेत साम औ अरुन सोहावा। बिखअमिरित मधु घोर दिखावा ॥
जाकहँ लखै भये चख राता। मरि मरि जियै रहै मदमाता ॥
अंबुज बरन दिधिग अरुनाई। भानु बरन होय गयो लुभाई ॥
अञ्जन जोर सदाँ मतवारे। घूमहिं निस दिन प्रेम अखारे ॥
दौ बोहित दोउ नैन सँवारा। लाज सनेह बोझ दोउ भारा ॥
दुअ अँबिरित कै सुभग कटोरी। ता महँ सरब हलाहल घोरी ॥
लहर कटाछ न जाय बखाना। जिन देखा तिन निश्चय माना ॥
दोइ खंजन सारद रितु माहीं। राका ससि निरभै लडाहीं ॥

दुओ सुनैन जग में किए, जाल सितासित साज।
लाय बिछावा मधुर बिध, मन मोहन के काज॥
दोउ सरवन दुइ सीप सुहाये। मोती भरा सदा दिखराए॥
करनफूल औ पात सुहाए। बाली तेहाँ अधिक छबि आए॥
बरनि न जाय सरव रस ताके। प्रेम बचन सुनि निसि दिन जाके॥
प्रथम प्रेम कर सरवन बासा। बिन नैनन कर करहिं पियासा॥
बहुरि हिए महँ करि बर बेसा। करहिं ताहि बाउर कै बेसा॥
पुनि सरूप सरबन सुख दाई। करन करन का बरन सोहाई॥
कान अनूप सो प्रेम नगीना। कानन ते उपज्यो नित हीना॥
कान न करहिं सो कान सोहाए। सुनहिं बचन सो वह मन भाए॥
सरवन अधिक सोहाने, दुअ दस रूप अनूप।
बिन कटाछ करतार कहँ, दुओ दस रतन सरूप॥
नासिक रसिक सदा रस गाहक। बास सुबास लिए जेहि लाहक॥
नथ बेसर छबि खेल कराए। मोती डोलत हिया डोलाए॥
मानहु हाथ सिकन्दर केरा। रूप भँवर ते लहरन फेरा॥
मोती पड़सि अधर पर आई। चिनगी मनो चकोर चुराई॥
सबहू मुख कै सोभा वह नासिक। सब रस लीन्ह औरहिं सो बासुकि॥
जस चंपै की कली सोहाई। खड़ग धार तेहि मन बिकसाई॥
नासिक रसिक महा सुकुमारा। निरखहिं मनुस अनेक अपारा॥
धन नासिक की रीत सोहाई। गुन अवगुन सबहू दीन बताई॥
सभै बदन कर अहै सिँगारा। बाँधै काम खरग कै धारा॥
नासिक सोभा का कहैं, सब मुख सोह बढ़ाय।
तापर ऊँच सुहाए, उत समुंद्र अधिकाय॥
अब कपोल बरनौ सुख दाई। गात गुलाब देखि मुरझाई॥
सबहिं कपोल सुरंग सुहावा। देखत काम ताहि छबि आवा॥
कँवल कपोल न जाइ बखाना। कहँ ससि पर जग ताहि समाना॥
बेसर देख सो ज्ञान लजाए। कहँ तेहि सम जेहि उपमा लाए॥
ता में दसन अनूप सोहावा। तिल कपोल छबिबरनि न आवा॥
बिसुकरमै लखि सुघर कपोला। दीठ परै तिल दीन्ह अमोला॥
ईँगुर आन कपोलन साना। उत सुरंग तिन्ह भँवर भुलाना॥
सिहर सुहावन बोल अनूपा। जाय रूप लखि जाय सुरूपा॥
रचा चतुर बिधि सुघर चितेरा। परी बूँद खसि केरिन हेरा॥
कँवल कपोल सोहाने, तिन सोहै तिल स्याम।
जस अलिन्द अरविंद पर, आन कीन्ह बिसराम॥
अधर सुधा धर बरनि न जाई। भये अनूठि वै जूँठन पाई॥

अँबिरित सम देवतन कर जूँठा । वह सो अधर पुहुप अनूठा ॥
जानि न परहिं अधर उत खीने । नित भाखैं वै मधुर नवीने ॥
सुनत बचन वै अधर सोहाए । ऊख पियूख बनूख सुखाए ॥
अधर सजीवन मूर सुहावा । सुधा पिडाक बिरंचि बनावा ॥
अधर खोल जब वह मुसकाई । खान सजीवन की खुलि जाई ॥
जब मुसकाय सखिन्ह सें गारी । झरहिं फूल औ होहिं अँजोरी ॥
अरुन मृदू औ अमिय सुधारा । रहत अधर पियूख अधारा ॥
जो वह अधर मधुर मुसकाई । तो मिरतक कहँ देत जियाई ॥
अधर सुधाधर मधुर उत , कीन्ह सुरँग सुख भाग ।
जेहितें बोलें औ हियें , सदा सजीवन पाग ॥
चिबुक सो ताहि का बरनै कोई । सिद्धि सदन महँ कूप सो होई ॥
देखत कूप होय बिकरारा । बूड़ै मरै जिऐ इक बारा ॥
प्यारे बदन सिद्ध करतारा । तहाँ कूप महँ चिबुक अपारा ॥
चढ़ै दिष्टि मुख देखै लागै । पड़े कूप महँ जाय सो थाकै ॥
भँवरन पड़ै डीठि वह जाई । टक टक रहे सो थाह न पाई ॥
चिबुक गाड़ उत सुडौल सँवारा । मज्जहिं जग मानुस बिसतारा ॥
वह सुझलक जेहि उपमा पाहीं । बूड़हिं तड़पहिं चित तेहि माहीं ॥
परे जबहिं डूबहिं उतराहीं । पार घाट तेहि पावत नाहीं ॥
गाड़ अनूप बार बिसतारा । चमकै सुभग सो दई सँवारा ॥
चिबुक सुहावन सुंदर , गाड़ अनूप अपार ।
को तिन महँ बूड़हि तरहिं , कतहुँ न पावे पार ॥
गिवँ अनूप बरनै का कोई । देखत पाप जाय तेहि धोई ॥
गीँव सुहावन सुभग अनूपा । जातरूप डरि जाइ सुरूपा ॥
कुंदन चाक चढ़ाय बनाए । देहि अदेहिन गार सों सुहाए ॥
चमकै अरुन सुहावन गोऊँ । कनक खोट जेहि लखि जाँऊँ ॥
बिसुकरमै उत सुंदर साजा । गीवा देखि हिये महँ लाजा ॥
लखि सुगीँव थिर रहै न ज्ञाना । साँचे ढार रचा सज्ञाना ॥
चंपक कली उर बसै अनूपा । कहँ भूखन जो गिवँ रस रूपा ॥
सभै अंग बिधि आप सँवारे । सभ ऊपर वह गीँव निवारे ॥
कंठ अमोल गोल उत सोहा । मुनि गँधरब रिषि ता लखि मोहा ॥
गीव उठावे गरब तें , पड़ै कूप अभिमान ।
रंभा सिध औ उरबसी , रमा मनोज लजान ॥
उर चमकै जस उदित जुन्हाई । तिन्ह उरोज दुइ मुरति सुहाई ॥
कोमल कुंच बन्यौ धरनीसा । बरन लरै फल रंग महेसा ॥
नारंगी सो उरज कठोरा । कुछ उपमा तेहि जाय न जोरा ॥

उर कुंदन पानी जस डारा। दुइ मूरति महँ आप उतारा ॥
दोउ लाल कै मूरति साजा। देखि सो लाल रंग वह लाजा ॥
कुँदन बागन क्यारि बनाई। दुइ अँबिरित फल तहाँ सोहाई ॥
कँवल कोबिदहि उरज सोहाई। चख अलिंद रस लीन्ह लुभाई ॥
मुरत मनोज देखि कै हारा। निज अँबधाय सो रख्यौ नगारा ॥
घुँघची सम तेहि रंग सोहावा। तहाँ स्यामता उत छबि पावा ॥
तहाँ हार औ मोहन माला। होय प्रान हाल बेहाला ॥

कुच कठोर देखत हरै। सुर नारी एक बार।
काम कला पूरन तहाँ, कीन्ह आप बैपार ॥

छतिय अनूप दुइ लहै सँवारा। पान फूल कै रहै अधारा ॥
रोमावलि रेखा तिन्ह सोहै। नैनन्ह देखि देखि ताहि मन मोहै ॥
अँबिरित कुंड सो नाम सोहाई। रहै नागिनी मुख लपटाई ॥
देखि गरुड़ वह चकिरित भई। नागिनि डहकि तहाँ रहि गई ॥
अँबिरित कुंड नाभिमुख पूरा। रहि पाछे मुख फेरि न मोरा ॥
छतिय निहारि सखिन्ह ललचाहीं। सुर नर मुनि कोउ देखा नाहीं ॥
जो देखे वह छतिय सोहावा। पूरन काम सो आन सतावा ॥
ता पर पीठि अनूप सँवारा। होय मलीन दीठि कै मारा ॥
कोमल बिमल पेट निरमाया। रोमावलि बेनी कै छाया ॥

रोमावलि बेनी बिरह, सोहै छत्र अनूप।
गात सोहावन उत बिमल, छाया अतुल सरूप ॥

का बरनै भुज सोभा कोई। रचा चित्र महँ चित्रित सोई ॥
भुज ते कर अँगुरिन लहि सारा। चढ़ा उतार सु चित्रित धारा ॥
पुहुप छत्र वह दंड सोहावा। काम चितेरै चाक फिरावा ॥
भुज भूखन कर भूखन सोहै। अँगुरिन मुंदरि लखि मन मोहै ॥
दोउ कर सोहै ललित कलाई। भले देख अच्छ पाय अछाई ॥
वह सावक चंदन कै साखा। लपटे रहैं करैं अभिलाखा ॥
कर भुज ते उत सुंदर साजा। रोम रोम छबि सिस्ट बिराजा ॥
भुज भूखन नौ रतन सोहावा। कर पहुँचीन जरत छबि पावा ॥
चित्त हरा लखि पावन रूपा। धनि पावन कर रूप अनूपा ॥

इंदु बुद्ध अरु मेंहदी, रतनक जनु तेहि बान।
तेहि इंगुर छबि देखि कै, रहै मोहि मन मान ॥

पीठहिं तेहि कर गोल बेयारी। ता पर परी जो चोटी कारी ॥
मूँगे की चौकी छबि देई। तिन बैठे नागिन छबि देई ॥
पीठ के तन को सकै निहारी। डँसै डीठ महँ नागिन कारी ॥
वह सो पीठि जेहि तजै न डीठी। देखा करै सदा वह डीठी ॥

देखत रहै पीठि चख हारी। पाछ परे रह डीठ न पारी ॥
सुंदर पीठि कनक रँग धारा। बिसुकरमैं जस साँचै ढारा ॥
पीठि देखि मन चक्रित होई। कुसल छेम लखै का कोई ॥
दुअ दल पीठि अपूरब देखा। सोहै बुद्ध कनक कई रेखा ॥
सो रेखा लखि ज्ञान हराई। कदलि रेख के पटतर लाई ॥
पीठि दीठि देखत सदा, होय हिए विकरार।
नागिन बेनी तिन्ह बसी, डँसी पीठि एक बार ॥
निसँक लंक बरनी नहिँ जाई। डीठि भार कत सकै उठाई ॥
रहैं सखी अचरज कै माहीँ। कोउ कह आह कोउ कह नाहीँ ॥
बार चाह कटि कोमल बेनी। देखि न सकै सो डीठि बिहूनी ॥
नारिन संग जहाँ पग धारा। लचि लचि जाय बार कै भारा ॥
चलत नारि मन संग करेई। दुमची लचि धनु हिया डराई ॥
कनक तार अस लंक सोहाई। कोंप दीठि सो रहै डराई ॥
धन चरित्र वह सुघर सँवारा। सहैं नारि सभ तिन कै भारा ॥
सभ तन देखैं नैन सोहाए। अंग संग लखि तेहि डर खाए ॥
कटी भाग छबि देह अपारा। मोहहिँ सुर मुन तेहिं झंकारा ॥
निरगुन सुरगुन पाव जस, तस कटि परै न देखि।
अवर अंग देखैं नयन, भागहिँ लंक बिसेख ॥
जंघ तंत का करौं बखाना। कँवल अमोल सुभग सुर ताना ॥
भारी जंघ तंत सोहावा। पिँडुरी जहाँ अधिक सुख पावा ॥
मूँगा की यह जंघ सुहाई। तस पिँडुरी अस चाँक सुहाई ॥
का बरनै ताकै सुकुमारी। सभ तन सौँह तासु अधिकारी ॥
औ पिँडुरी सोहै उत गोरी। नैनन भार होय मति थोरी ॥
पिँडुरी जंघ लखि रहै न ज्ञाना। लखि तँत जंघ तजहिँ सब प्राना ॥
जैस तंत तस जंघ सोहाए। तस पिँडुरी अस चाक फिराए ॥
चाक चढाय सँवार्‌यो ताही। होय अधीर नैन लखि जाही ॥
तिन्ह पायल पैजनी सोहाई। घुँघरू बिछिया बुद्धि हेराई ॥
जंघ सोहावन देखि कै, सत्ति धरम भजि जाहिँ।
पिँडुरी निरखत पाप दुख, हरै पला छिन माहिँ ॥
नख अमोल कछु बरनि न जाहीँ। कँवल चरन लखि संपुट गहहीँ ॥
जस अरबिंद सुरंग सुहावा। तस वह चरन अनूप बनावा ॥
देखि कमल होय रंग बिहीना। वह सुचरन सुख रँग रस लीना ॥
चरन बरन तेहि जाहिँ सोहाए। देखत पाप सोभाग हेराए ॥
औ अँगुरिय तेहि सुंदर आनी। मेहँदी ईँगुर ही के पानी ॥
यक नूपुर बिछिया उत सोहै। कोकिल सुनत सबद वह मोहै ॥

रूपौ चरन सब सोभा साधा। देखत चित्त रहे तेहि हाथा।
उत कोमल एँड़ीय सोहाई। देखि महाउर हिए लजाई॥
जब तरुनी भइ राजकुमारी। काम अनंग अंग संचारी॥
उत एँड़ी सुकुमार तेहि, अँबिरित लाल लगाय।
धरत पाँव वह बाल के, वासुकि देखि लजाय॥
सखिन्ह जो चाहें पाँव पखारा। चक्रित ज्ञान रंग लखि सारा॥
रूप अधिक तैं हिए उछाहा। भूखन रचि तिन गँधरब लाहा॥
निस दिन सखिन्ह संग फुलवारी। करै कुलाहल कोट धमारी॥
मदन प्रवेस हिए महँ कीन्हा। पेम सुरंग अंग महँ कीन्हा॥
देख सरूप सखिन्ह ललचाहीं। पवन बास तिन्ह पावत नाहीं॥
धाइ खिलाई सखिय सहेली। तेहि के संग करहि सुख केली॥
साज सिँगार औ अभरन जोरा। रूप गुमान न काहुन जोरा॥
मता पिता के प्रान अधारी। समय सोच नहिं जानै नारी॥
और रोग तेहि तैं मुरझाहीं। गात तंत उन्नत अधिकाहीं॥
भय बालापन बारी, सदा रूप अधिकाय।
मात पिता वहि तरुनि लखि, लागै हियै लजाय॥

स्वप्न खंड

एक रात जो करै सोहावन। प्रेम स्वरूप बिरह उपजावन ॥
प्रेम भरी रजनी उँजियारी। सखिन्ह साथ सोवै सो नारी ॥
आधि रात लहि जागि कुमारी। प्रेम कै बात सुनत सुखकारी ॥
आई नींद तमसि अलसानी। सोइ गईं सब सखी सयानी ॥
सोवा पहरू औ कोतवारा। सोवा सो उत घंट बजन्हारा ॥
सोवैं सुखी दुखी नर नारी। सोवैं खग मृग खेत करारी ॥
सब सोवा कोउ जागत नाहीं। जागत एक प्रेम जग माहीं ॥
सोवै लगि तेहि समय जुलेखा। यूसुफ कहँ सपने महँ देखा ॥
मीठी नींद सबै जग सोवा। प्रेम बीज हिय जा महँ गोवा ॥

भाँन सरूप तहँ आय गय, देखि रहै टक लाय।
लीन्ह प्रान तिन्ह काढ़ि कै, रूप अनूप दिखाय ॥

देखत नारि बिमोहित भई। निरख रूप बाउर होइ गई ॥
नैन बान ते बेधा हिया। बात न आउ मौन भइ तीया ॥
छिन एक ढाढ़ रहा रँगराता। पुन मुसकाय कीन्ह अस बाता ॥
हम तुम्ह का चाहा चित लाई। तुम्ह हियँ ते जिन देहु भुलाई ॥
कहि यह बात चहा उर लावा। जागि परी कुछ दिष्टि न आवा ॥
जागत कै चकचौंहट लागा। जस पंछी कर तें उड़ भागा ॥
हिरदै लागि प्रेम की गाँसी। भयौ सुज्ञान हानि तन नासी ॥
सोवत सुख जागत दुख पावा। रोम रोम तन बिरह अकुलावा ॥
मूरत एक सुदिष्ट दिखाई। हिए माहि जस गई समाई ॥

प्रेम फंद अरुझाने, गई ज्ञान मति भूल ॥
सँवर रूप अकुलाय मनु, उठै हिये महँ सूल ॥

उठि बैठी मुख सँवरत सोई। नई लगन कहि सकै न कोई ॥
जब सँवरै मुख तब बिलखाई। लै सुलाज तें रोय न जाई ॥
बिरह बान बेधा एक बारा। रोम रोम व्याकुल तेहि छारा ॥
चिनगी बिरह आगि कै लागी। सुलगै लाग हिए महँ आगी ॥
सखिन्ह देखि धन बदन मलीना। मन व्याकुल तन सुध बुध हीना ॥
पूँछै कत तुम्ह चित्त उदासा। कवन सोच तुम हिरदैं बासा ॥
तुम्ह सब कर जग प्रान अधारा। काहै लाग भई बिकरारा ॥
सम सुख तुम्हहिं बिधाता दीन्हाँ। मन मलीन केहि कारन कीन्हाँ ॥
पान न खाहु न सूँघहु फूला। अभरन अवर सिँगारहु भूला ॥

दिन भर मौन किये रहै, भूख प्यास गये भूल।
पान न खाय न रहि सकै, काँट भए सब फूल ।।

भूखन रतन उतारि जो डारा। दुख दायक भये सबहिँ सिँगारा ।।
मन महँ सोच करैं मुरझाई। लैगा प्रान स्वरूप दिखाई ।।
नाउँ ठाउँ कछु जानत नाहीं। कहाँ सो खोज करूँ जग माहीँ ।।
नियरें ठाढ़ि रहै वह मूरति। जेहि बिन तन मन प्रान बिसूरत ।।
रूप दिखाय सो चेटक लावा। मधुर बचन कहि अधिक लुभावा ।।
सेज परै जागै फिरि सोवै। लखै न रूप उठै फिर रोवै ।।
ना वहि मूरत ना वहि ठाऊँ। कौन हत्यो वह का नहिँ नाऊँ ।।
छूटै आँसु चलै जस मोंती। कहै के अय मनभावन जोती ।।
कहाँ गयो वह रूप दिखाई। नट नाटक चाटक अस लाई ।।

तोहिं संपति वहि दइ किये, जिन्ह कीन्हाँ तोंहि भूप।
एक बार फिरि आवहू, आनि दिखावहु रुप ।।

ज्ञान हेराय तो मूरत हेरानी। लागत आगि न बरसै पानी ।।
जातवेद होय सेज जराई। जानि बेध सब बेद भुलाई ।।
पावक झर से पवन जो लागे। रोम रोम लै सरागन दागे ।।
खिन उठ सेज परै बिकरारा। खिन उठ कै बैठे बिसँभारा ।।
खिन तन डहै से अगिन उदामा। खिन बरसै चख ऊदक झरना ।।
खिन सो उठै बिरह कै ज्वाला। खिन मुख सँवरत होय बेहाला ।।
कहै कि ए बैरी दुख देवा। का मै कीन्ह चूक अस खेवा ।।
खिन रोवै खिन नैन छिपावै। खिन सोवै पै नींद न आवै ।।
बिकल सरीर भयौ जस पारा। बिरह अगिन तें सुढि बिकरारा ।।

खिन चख बरसै अगिन जल, करत न बनै पुकार।
कल न परै पल ना लगै, सहै दुकूल न भार ।।

यहि बिधि निसि बीतै दिन आवै। सखिन्ह देख चख नीर छिपावै ।।
अधिक बिकल होय प्रान गँवावै। रोवत बनै न कहत सोहावै ।।
बैठहि मौन साध बैरागी। हिये सँभार बिरह कै आगी ।।
उठ धाईं सभ सखी सहेली। करत सदा जस कूकत बेली ।।
देखा आप जो प्रान पियारी। सखिन्ह होय अधिकौ बिकरारी ।।
निस दिन खोज करै सभ कोई। कँवल भेद का जानै कोई ।।
धाई लखा पेम कै पीरा। चरचा देखि मलीन सरीरा ।।
जब सु एकंत भई तब काहा। केहि बिधि अंबुज संपुट गहा ।।

कहौ भेद धनि आपन, जो कुछ बिरह बियोग ।।
करौं उपाय सो रोग कै, लै मेरऊँ तेहि जोग ।।

मैं तोहि का केहि चाह से पाला। दिन दिन देखि सो होहुँ बेहाला॥
बालापन तोहि हिएँ चढ़ाये। फिरौं चहूँ दिसि तोरे फिराये॥
पोखयों सो तन छीर अधारा। प्रान तें अधिक सो प्यार तुम्हारा॥
नित छाती पर तोहिं सोलावा। नैन ओट मोहिं चैन न आवा॥
तोर सो दुःख हरयो मोर चैना। कैसे दुखी लखौं निज नैना॥
सुनि यह बात चरन सिर लावा। आपन अरथ सो बरनि सुनावा॥
तुम माता तें अधिक पियारी। तोहि छुट अवर न हितू हमारी॥
औ तोहिं सम कोउ नाहिं सयानी। तोहिं सब बेद भेद जग जानी॥
पै दुख मोर कठिन है धाई। जेहि दुख कर कोउ नाहि सहाई॥
कहा हौं मोहयौं अछरी, कहु मानुख केहि मान।
जेहि कै नित मोहि आस है, कत दुख सहै परान॥
कह्यो लाज तें कहा न जाई, जो न कहौं कत प्रान रहाई॥
प्रान जात का भेद छिपाऊँ। कहौं बिथा जो औषध पाऊँ॥
धाय कहा तुइं प्रान अधारा। तोरें लाग तजौं घर बारा॥
सौं देखौं तोहिं चित्त उदासा। कहाँ मोहि अब रहै हुलासा॥
सो जानहु हम गुन अधिकारी। कस न कहहु तुम भेद उघारी॥
जानहु प्रेम कीन्ह तन रेखा। काहुन कहँ तुम नैनन देखा॥
तेहि कर करौं सो ओखष खोजू। हरौं सकल दुख डारौं रोजू॥
कहा जुलेखा सुन मोर बाता। मोर हिया कुठाउँ सुराता॥
सपने महँ वह रूप बिसेखा। जो कबहूँ ना सुना न देखा॥
करौ जतन अब धाय, न तो मरौं जिव खोय।
कहा भेद मैं तुम्ह तें, सुने न दूजा कोय॥
तेहि कर बिरह बान मोरे लागा। लागत रोम रोम तन जागा॥
चहहु प्रान तो करहु उपाऊ। हौं पंखिय जेहिं पंख न पाऊ॥
मोहि बारे बिधि हिये सँवारा। लाजन न मरों न जाय उघारा॥
जो निलज्ज होय प्रान लुटावँहु। जन परिजन महँ लाज गँवावँहु॥
धाई सुना प्रेम कै बाता। उपजयो रोम रोम दुख गाता॥
कहा बिरह पद कठिन अपारा। जेहि के प्रेम वार नहिं पारा॥
भये सपने लखि प्रान उदासा। पूंछि न लिह्यो नाउं औ बासा॥
नाउँ ठाउँ जेहि कर कुछ नाहीं। को जानै कछु उन जग माहीं॥
कै दुहुँ सरग लोक कर कोई। दैगा दुख दिखाय मुख सोई॥
कै दुहुँ कछु चाटक देखरावा। झूँठ साँच कोउ जान न पावा॥
काह करौं कत जाउँ चलि, कासों कहौं दुख रोय।
बिना नाउँ औ ठाँउ कर, का जाने को होय॥
सुनि यह बात सो भई अधीरा। बाढै अधिक प्रेम कै पीरा॥

भई अधीरज औ अज्ञाना । कहा कि कौन अहै सुलताना ॥
अहै सो मोर जीव लेनहारा । देउँ प्रान तो वहि हत्यारा ॥
आई सखी धाय चहुँ ओरा । लियें भोग औ कनक कटोरा ॥
बैठी रहै मौन की नाईं । सखिन्ह खवावहिँ भोग बरियाईं ॥
वह जिय अवर भोग कै जोगू । बिरह बिथा ओ प्रेम बियोगू ॥
भूला खेल औ भोग बिलासा । भूला सुख औ खेल हुलासा ॥
भूला बेद औ कथा कहानी । प्रेम के पंथ बँधहु अरुझानी ॥
भूला अभरन रोग सुहागा । सखिय भईं दारुन बिछ्नागा ॥

भूला खेल कोलाहल, सुख संपत गय लूट ।
प्रेम फंद अरुझाने, अवर फंद सब टूट ॥

चार जाम दिन यहि बिधि खोईं । बोलत बात सिखिहिँ मुख जोई ॥
निस काँ सेज बिछावै रोगी । धाइ पड़ै पट ओढ़ बियोगी ॥
चलैं आँसु जस झलझल सेजा । रोय बुझावै तपत करेजा ॥
सखिन्ह पाँव जो चापैं बैसे । बेधहिं बान सुदारुन ऐसे ॥
कहैं कथा जो सखिय सयानी । चित्त बियोग को सुनै कहानी ॥
फूल सो आन बिछावन सेजा । दहकै देह ओ तपै करेजा ॥
चंदन आनि बदन महँ लावें । लागि आगि तन दुगुन दुखावें ॥
भवन भाकस अस घर खाये । अभरन तनु जस काल डँसाये ॥
रोम रोम जारै दुख दीन्हाँ । भा तन फाँस बरन वह नेहाँ ॥

होय ब्याकुल बिलखाय, पल न लगे बेहाल ।
तज धीरज चख मूँदि कै, बिनवै दीनदयाल ॥

बूड़हि देहु थाह मँझधारा । बिछुड़े तोहि मिलावन हारा ॥
कहाँ सुरत औ ताकर वासा । कवन हतो जिन कीन्ह उदासा ॥
का तेहि नाँव ठाँव तेहि कीन्हीं । कलपौं नाथ जाऊ मैं ताही ॥
कहाँ रूप उपज्यौ करतारा । कहाँ सो अहै जीव लेनहारा ॥
पियुखन कै अस बचन बतावा । लैगा प्रान सो बोल सोहावा ॥
केस सीस वै कहाँ बनाये । कवन जाल तिन्ह प्रान फँसाये ॥
यहि बिधि रोवत जोवत आसा । सब निसि जात भरत ऊसाँसा ॥
निसि बीते यह दग्ध अपारा । बिरह बिहाय होय भिनुसारा ॥
कहाँ नैन औ रसभ कपोला । कहाँ सो अधर सुधाधर बोला ॥

मरै जियै लाजन डरै, करै न बिरह उघार ।
जेहि पर परै सो जानै, लगन कै अगिन अपार ॥

दिन भर सखिन्ह संग मुख जोवै । निसि एकंत होय झल झल रोवै ॥
भीजे सेज औ पाट बिछावन । सँवरै हिये रूप मन भावन ॥
नींद भूख सगरौ परिहरै । सोय रहै नित मोती भरै ॥

छुट रोदन औषदहिं अपारा। और न कुछ तेहि नींद अहारा ॥
बिरह बिथा हिय अंदर राखै। लाज खोय न काहू तें भाखै ॥
यहिं बिधि दिन बीतै निस आवै। रात दिवस धन रोय गँवावे ॥
देखैं सखी कँवल कुम्हिलानी। पै कछु भेद परै नहिं जानी ॥
पूंछे भेद कहै कछु नाहीं। बैठी रहै भवन कै माहीं ॥
कहाँ रैन वह चैन कै होई। जो फिर दरस दिखावै कोई ॥

दिन भर रहै सो बंद महँ, सूर जरावत दीन्ह।
दिन तें पीर बढ्यो सखि, निसि तें बढ़ै सनेह।

बीता बरख हरख तन त्यागा। रह्यो अकेल बिरह बैरागा ॥
भए अस दुखित छूटिगा भोगू। जोगउ तें साधा सुठ जोगू ॥
चरचै बिरह सो सखी सयानी। जेहि के मरम परै नहिं जानी ॥
माता देख भई बिन प्राना। कौन तुसार कंवल कुँभिलाना ॥
लीन्ह बुलाय हिये महँ लाई। लाय हिये महँ धीर बँधाई ॥
माता भेद सखिन्ह से पूँछे। का वै कहैं भेद सो पूँछै ॥
डरहिं सखिय तेहि देखि सुभावा। रहा निकट दुख कठिन नियावा ॥
निसि दिन जरै बिरह कै जारे। उतपत प्रेम भये सुख कारे ॥
देखि सुता जननी अकुलानी। आरत करै आप सुग्यानी ॥

चढ़ी माय कैलास पर, भोग दई से हाथ।
सेवा करै अनेक बिधि, राखै निसि दिन साथ ॥

कोटि जतन कै हारी सोई। एक दिवस बिधि आन सँजोई ॥
मूँघ चहै हिय परगट केरा। खोलन चह हिय केर अहेरा ॥
सोवै तन जागै वह जीऊ। हिये नैनन ते देखै पीऊ ॥
जेहि बिधि आदि परघट भो सोई। आवा फेर ना जानै कोई ॥
धाय नारि पाँव लै परी। हाथ जोरि आगे भइ खरी ॥
कहा कि प्रीतम लेहु न प्राना। देहु बिछोह किहेउ तन हाना ॥
तोरे दरस परस कै आसा। रह्यो आस घट पंजर साँसा ॥
तुम अस कंत भुलायो मोहीं। मैं नित जरेयौं सपन लखि तोहीं ॥
निस दिन सीस चढ़ायों खेहा। भसम बिरह तोहि अंबुज देहा ॥

तुम अस निठुर बिछोही, बहुरि न लीन्ह्यो चाह।
मुयौं सो विरह बिछोह तें, अब कछु करहु निवाह ॥

कहा कि अस मोहिं उपज्यो सोगू। तुम्ह तें अधिक सो बिरह बियोगू ॥
तुम पर कौन बिथा अस बीती। हौं जस सहौं सो प्रेम पिरीती ॥
तोरै बिरह भयो अज्ञाना। छाँड्यो देस औ नगर अपाना ॥
तोरै लाग भयो परदेसी। मिला न कोई प्रेम सँदेसी ॥
सो तुम मोहिं भुलावहु नाहीं। राख्यौ प्रीत सदा हिय माहीं ॥

सदा मोंहि तुम नियर विसेखो। दूजे पुरुख और जनि देखो॥
जो चाहो हम दरसन राता। दूजे तें जिन बोलहु बाता॥
जब सँवरों तब हौं तुम्ह पासा। हम तुम्ह आस रहौं तोरे आसा॥
होय बिलंव सोच जनि मान्यहु। प्रेम न कतहुँ अबिरथा जानहु॥
मोहिं भूल्यहु जिन प्यारी, औ सँवरहु दिन रैन।
करो सदा बैराग चित, तब पावहु सुख चैन॥
कहि यह बात चहा उर लावा। जागि परी कुछ दिष्टि न आवा॥
वहै सु सेज वहै सोउनारी। अधिक भई ब्याकुल बेकरारी॥
उठि बैठी औ लागी देखै। देखै सभै न ताहि विसेखै॥
कहा कि अरे प्रानपत मोरे। बँध्यो प्रेम फाँस मैं तोरे॥
कब देखहिं भरि नैन अघाई। केहि दिन हिय की प्यास बुझाई॥
कब वह घड़ी सो पल फेरि आवै। जेहि दिन दरस परस उन पावै॥
मैं बाउर कछु सुध न कीन्हाँ। नाऊँ औ ठाऊँ पूँछ नहिं लीन्हाँ॥
कहि तें कह्यौ सो आपन हारा। पूँछ न लिहयौं सो अरथ अपारा॥
प्रेम आय हिय में बसा, बसा सो आठों अंग।
दिन दिन वह बिरहिन दहै, कौन सु चरचै संग॥
दिन भर रहै मौन की नाई। रैन जाग और रोय बिहाई॥
परसन भयो जो सपने माहीं। नाऊँ ठाऊँ कुछ जान्यों नाहीं॥
अब की बेर फेर तोहिं पाऊँ। बरुनि सजल पग साँकर नाऊँ॥
राखैा नैन घालि बिलँभाई। मूदौं पलक देहुँ नहिँ जाई॥
आवत लख्यों न गोपित देखा। भयौ मोर बाउर कै लेखा॥
कहँ बिधिना अस करै सुभागा। मिलौं कनक जस कोंटि सुहागा॥
तोर जोति मोर हियै समानी। दूसर और कहा मै जानी॥
पिउ आए मै पापिन छूँछी। नाँउ ठाँउ कछु लेहु न पूँछी॥
जब लहि आवागवन करेहूँ। तब लहि अधिक बिरह दुख देहूँ॥
यह बिधि बीती रैन सभ, भयो चराचर रोर।
धाई आइ निकट उठि, और सखिन चहुँ ओर॥
तब धाई ते कहा उघारी। सपने दरस फेर चख चारी॥
कहा कि दरस भयौ परकासा। पूँछि न लेहुँ नाउँ औ बासा॥
रखै लाग चित अबिरम जोगू। भये मोहित लखि बिरह बियोगू॥
चित बैराग औ हियै उदासा। रही लूटि होय नाउँ कै आसा॥
वहिं के हियेसो बिरह बियोगू। जानहिं लोग भयौ कुछ रोगू॥
औषद देहिँ पिलावहिँ मूरी। औ सुख चैन दीन्ह तिन दूरी॥
माता देखि भई बैरागी। तन मन उठै कोख कै आगी॥
दुहिता रोग सुना सुलताना। औ सब नगर देस कुल जाना॥

भयौ प्रगट सभ जगत महँ, दुहिता रोग बिराग ।
बेल अंकूरे हिये महँ, बाढ़ि सरग कहँ लाग ॥
भइ बाउर तन सुध बुध त्यागी। चाहा जाय सु घर से भागी ॥
पातसाह तब बैद बुलाये। होय ब्याकुल नाड़िका दिखाये ॥
औषद भाँति भाँति कै कीन्हा। काढ़ा औ चूरन रस दीन्हा ॥
तेहिं ते अधिक बिथा तेहि बाढ़े। भागे बैदन कहि दिन गाढ़े ॥
प्रेम पीर तें भई अधीरा। होय ब्याकुल तन फारे चीरा ॥
उठि उठि चलै छाँड़ घर बारा। तन पर लागि चढावै छारा ॥
पातसाह तब लाज लजावा। दुहिता पग बैरी लै आवा ॥
बेरी परी न मानै नारी। निसि दिन सखी रहैं रखवारी ॥
कहै कि ए मन मोहन प्यारे। पग साँकर देखौ अनियारे ॥
मोरे मन सँकरी परी, तन सँकरी केहि मान ।
निज नैनन देखौ निरख, यह तन मन कै हान ॥
यक दिन पहरु धौराहर सोये। सँवर सँवर मुख ब्याकुल होये ॥
सँवरै वही स्वरूप अमोला। दुख तें नैन जल परलै खोला
कहा कि ऐ मोरे प्रान अधारा। भल दिये दरस बिछोहन मारा ॥
कहि के सपथ अय प्रीतम प्राना। जिन्ह तोहि दीन्ह रूप औ ग्याना ॥
नाँउ ठाँउ अब देहु बताई। एक बार फिर दरस दिखाई ॥
कै किरपा औ सहसन दाया। निज दासी पर फिर कर माया ॥
तोरे बिरह मरौं अब रोई। सोऊँ सेज रकत जल बोई ॥
सखी सहेली न जिऊँ सोहाई। मात पिता कुल कान गँवाई ॥
छाँड्यों भोग भुगत तोरे नेहाँ। छाँड़ सिँगार चढ़ायो खेहाँ ॥
छाँड्यो सब सुख दुख सह्यो, किह्यो जोग तेहिं लाग ।
एक बार फिर आवहु, आनि बुझावहु आगि ॥
एक रैन फिर आन तुलानी। आये समुख नींद अलसानी ॥
तीसर सपन फेर वैं देखा। वहै रूप जो आद बिसेखा ॥
जानहु आप फेर अस बोला। अमीकुंड अधरन तैं खोला ॥
मैं तोहि लाग तज्यों घर बारा। पर्यों कूप महँ मोहि निसारा ॥
मोर तोर प्रीत आदि लिखि राखा। करहु सो अंत भोग अभिलाखा ॥
तब दुख हटै होय सुख सारा। जब पाऊँ मैं दरस तुम्हारा ॥
यह सुन नारि भई तब ठाढ़ी। अरुझी बेल प्रेम की गाढ़ी ॥
अब की बेर जाय नहिँ देहूँ। जब लहि नाउँ पूँछि नहिँ लेहूँ ॥
अब लहि यहि जिव निकसि न गयऊ। जो फिर दरसन प्रापत भयऊ ॥
नाउँ ठाउँ बतलावहु, पठऊँ जहाँ सँदेस ।
होय जोगिन बैरागिन, चलि आवहुँ वहि देस ॥

तब मुसकाइ कहा सुन प्यारी। मिस्र देस महँ बास हमारी॥
मिस्र साह कर सचिव सोहावा। आवहु वहँ तब होय मेरावा॥
सचिऊ नाम जगत नित सोहै। और नाम बिरला कोउ कहै॥
मैं अपने बस महँ हौं नाहीं। आवहु वेगि मिस्र कै माहीं॥
कछु दिन सहौ विरह दुख दाहू। विन दुख प्रेम न प्रापत काहू॥
जो दुख तें नहिं होय उदासा। अंत होय सुख भोग बिलास॥
जस चाहौ तुम मों कहँ प्यारी। तस चाहौं तोहि अनत कुँवारी॥
सपने महँ सुनि भई हुलासा। जागि परी कोउ आस न पासा॥
रोय उठी गहबर अकुलानी। नाउँ ठाउँ सुनि कै बिलगानी॥

जिऊँ तो जाउँ मिसिर कहँ, मरूँ तो मारग माहँ।
छार होहुँ उड़ि जाउँ अब, जहाँ बसै मोर नाहँ॥

× × ×

जुलेखा बिरह खंड

सदा जुलेखा रोदन करै। यूसुफ रूप हिएं महँ धरै॥
रूप दिखाय कंत छल कीन्हीं। बिरह बियोग जोग दुख दीन्हीं॥
झूठ बात कहि मोहन बाता। काहे कियो सो छल कै बाता॥
मैं तोर बचन साँच परमाना। लाज गँवाय मिसिर कहँ आना॥
जो तेहि इते जराऊँ साधा। जरतिउँ बैठि तऊ दुख बाधा॥
रहत सत्त मोर यह संसारा। अब का करौं कठिन दुख डारा॥
मिटै रोग आवै हम पासा। सत्त धरम कर होइ बिनासा॥
हौं आपत पत राखहु लाजू। प्रान गए जीवन केहि काजू॥
खायों कुल कै लाज सुहावनि। भयों निलज जग ढीठ कहावनि॥

लाज धरम सब छाँड़ि कै, आयों मिसिर के देस।
चहौ प्रान पत मोर जो, करहु बेगि परबेस॥

जेहि कारन मैं लाज गँवावा। सो न भयो सब हत्यो छलावा॥
रोगिनि भई रहौं कब ताईं। यक दिन मरौं रोय हिय माहीं॥
तोर रूप मैं सपने देखा। भयो मोर अब तिहि कर लेखा॥
हेरै गयो हुमाय जो कोई। उलू मिला जो सरबस खोई॥
पानी हेरै गयो पियासा। रेती देखि सो भयौ तरासा॥
कोइ बोहित चढ़ि चाहत पारा। बोहित फट्यौ जाइ मँझधारा॥
बहा जात भा व्याकुल प्राना। आगे आनि काठ उतराना॥
भयो काठ वह प्रान अधारा। बूड़त बहत सो ताहि सँभारा॥
जब वह काठ नियर भा आई। काल सरूप भयौ दुख दाई॥

करम हमार है पातर, को अब करै सहाय।
गहिर अहै मँझधार महँ, परेउ काल बस आय॥

यूसुफ मूरत हिएँ उरेखै। धरै ध्यान निज आगे देखै॥
करै बिलाप कहै दुख सारा। का मोहिं बिरह अगिन महँ जारा॥
देहु दरस औ आस पुरावहु। कबहुँ न मिसिर नगर कहँ आवहु॥
करै मोर दुख परसन पाऊँ। निसि बासर दुख रोय गँवाऊँ॥
जो मोहिं आसा देत न दाता। करत्यौं वहै दिवस अपघाता॥
जेहि दिन दरस न तोर बिसेखा। सूर के ठाऊँ राहु मैं देखा॥
काहे क अब लहि जरत्यौं जारे। मरत्यौं वही दिवस बिन मारे॥
एक सपन दूजे सरग के बानी। किहेउ न तेहि असा जिवहानी॥
निसि दिन तोहि भरोस जिव राखैं। बार बार बिनती यह भाखैं॥

जेहि विधि सपन देखावहु, लायहु चित सो चित्त ।
तेहि विधि आनि जिआवहु, मरौं तोहि बिन नित्त ॥
कबहूँ कहै पवन तें रोई। करै बिलाप अधीरज होई ॥
मारुत सदा करहु परबेसा। फिरहु राति दिन देस बिदेसा ॥
कवन ठाउँ जहँ तुम नहि जाहू। काटहु मोर बिरह अधिकाहू ॥
जाहु जहाँ वह पीतम प्यारा। कहहु जाय दुख दुखद अपारा ॥
कहौ कि सपन माहँ गहि बाँहाँ। दिहेउ भुलाइ फेरि कस नाहाँ ॥
दै धोका मोहिं मिसिर बोलायहु। तुम अजहूँ लगि लाल न आयहु ॥
मैं जोऊँ नित बाट तुम्हारी। रहौं बंद महँ बिरह के मारी ॥
केहि कारन अस बाचा कीन्हयौ। देस छुड़ायो सुधि नहिं लीन्हयौ ॥
नैहर तज्यौं न पायों तोही। तेहि पर धरम करम करमोई ॥
धृक जीवन पिउ प्रान बिन, धृक बिन धरम परान ।
दुअ जग करिआ होय मुख, होय सत्त कै हान ॥

× × × ×

षड़ ऋतु खंड

रितु बसंत बन आदिन फूला । जोगी जती देखि रँग भूला ॥
पूरन काम कमान चढ़ावा । बिरही हिएँ बान अस लावा ॥
फूले फूल सिखी गुंजारहिँ । लागी आगि अनार के डारहिँ ॥
कुसुम केतकी मालति बासा । भूले भँवर फिरहिं चहुँ पासा ॥
मैं का करूँ कहाँ अब जाऊँ । मों कहँ नाहिं जगत महँ ठाऊँ ॥
टेसू फूल तो कीन्ह अँजोरा । लागी आगि जरै चहुँ ओरा ॥
तुन फूले औ आँब फुलाने । करुना करौं दिस बास बसाने ॥
फेरी त्यागि भिरिंग दुख दाहे । कानन भाँवर सदा सुनाए ॥
पीतम भूल गए सुख पाई । निरमोहीं कहँ दया न आई ॥

यह रितु चित कैसे रहै, सहै बिरह कै पीर ।
पूहुप देखि बसंत रितु, कैसेहु धरै न धीर ॥

कवित्त

भागे सोच वियोग बँजार सभै, बिन काम कुलाहल चाखहिँ ।
चाखे जोगी जती अनुराग, सों भँवर पतिंग सभै रस पावहिँ ॥
पाखे पेम सुरंग में दीन्ह, सनेह भरित ऋतु लाज जो लागहिँ ।
लागहिँ टेसू दवान चहूँदिसि, कौन दिसा होइ बिरहिनि भागहिँ ॥

सोरठा

हरे हरे ऋतुराज, बनि आवें लोहित भए ।
आवे कौने काज, कंत न पूछे बात मोंहिं ॥

ग्रीषम ऋतु उत परहिं अँगारा । घेरि अगिनि बिरहिन कहँ जारा ॥
यह ऋतु महँ सब जाय सुखानी । बिरह बेल अजहूँ न लहानी ॥
ग्रीषम तेज बिरह के आगे । मोरे हिए दाँउ अस लागे ॥
मंदिल छाय उसीर सोहावा । रवन भवन आवन मन भावा ॥
उमड़ि घुमड़ि घन चढ़ै अकासा । संजोगिन मन मुदित हुलासा ॥
बरै लाग पावस कर डेरा । फिर धिर (घर) कामक मठ घेरा ॥
तम तन मैन जरावै जीऊ । काह करै निरमोही पीऊ ॥
फल अँबिरित बौरे चहुँ ओरा । हम कहँ बिरह हलाहल घोरा ॥
निठुर कंत नहिं पूँछहि बाता । का हियँ लगे फल अँबिरित राता ॥

नीर घटा उमड़ी घटा, घटा मोर चख नीर ।
नैना घट समझहि सदा, घट घट ढेर सरीर ॥

कवित्त

सूखि समुंद्र गए रबितेज, सूखि गए सरिता जल धारी ॥
सूखि गए पुहुमी पति मंदिल, सूखि गए जल मेघ सुखारी ॥
सूखहिं कूप तड़ाग लता द्रुम, बेलि बली बन औ फुलवारी ॥
सुखहिं 'निसार' अंबुनल सूखहिं, नाहिन ये अँखियान दुखारी ॥

सोरठा

सूखि भए बेचैन, ग्रीषम ऋतुद्रुम बेलि बन।
एकन सूखे नैन, नित तरसहिँ बरसहिँ सखी ॥

ऋतु पावस घन घोर बिराजे। घोर घमंड घटा चढ़ि गाजे ॥
घन गरजै दामिनि लौंकाहीँ। नारि कंत के गोद छिपाहीँ ॥
ज्यों ज्यों चमक गरज अधिकाई। त्यों त्यों नाह नारि उर लाई ॥
हम केहि के गिउ लावें बाहीँ। पावस समय देहि बलनाहीँ ॥
खग मृग कबि औ मानुष सारा। साजि सदन सुख करहिं अपारा ॥
घर हमार सब भरिगा पानी। उत राजा हम बहि उतिरानी ॥
जिन के छिन पिउ तजहिं सुनाहीं। सुखी नारि पावस ऋतु माहीँ ॥
करम हमार भयो दुख दाई। का प्रीतम कहँ आस लगाई ॥
दोस हमार जो अवगुन कीन्हाँ। निरमोही का मन चित दीन्हाँ ॥

पावस घन अँधियार महँ, कैसे बचिहे प्रान।
होय रैन बज्जर कै, जो जागे सो जान ॥

कवित्त

बोलहिँ मोर बियोग भरे, कोकिल कूल हिया निज घोलहिँ।
झूलहिँ स्याम बिना घन स्याम, घमंड ते मेघ चहूँ दिस झूलहिँ ॥
डोलहिँ आसन जोगी जती के, 'निसार' महारस घूँघट खोलहिँ।
खोलहिँ मेघ बियोगिन को दुख, डूबहिं चित जो पिया मग कूलहिँ ॥

सोरठा

दादुर मोर अँदोर, एक ओर घन घोर उत।
सती पवन झकझोर, सूने मँदिल न जाइ रहि ॥

सारद ।समै रैनि उँजियारी। हँसि हँसि पिय हिय लागहिँ नारी ॥
देखि बियोगिन कंचन जोरी। सारद लाय दीन्ह जस होरी ॥
भा परकास अगस्त दिखरावा। सरिता सागर नीर सुखावा ॥
सरद चाँदनी निरमल देखा। भा हमार बाउर कर लेखा ॥
सब निसि बीती गिनत तराई। सुख सोवहिँ जिन के घर साईँ ॥
सेज अकेल सोभ तन जारी। जस घायल कहँ चाँदनि मारी ॥
सरद समय पिउ चाहन सेजा। धृक जीवन हिय फटै कलेजा ॥
सचिऊ के साजहि सुख साजा। बरन चाँदनी निसि उपराजा ॥

सेत बादला सेत किनारी। हीरा मोति चंद घन सारी।।
सभै सेज होय दुख अधिकाए। सेत बहुत सो घन कहँ भाए।।
सेत भभूत रमाय मुख, कर जोगिन कै तंत।
धूनी लाऊँ जाय तहँ, जहँ निरमोही कंत।।

कबित्त

हिव सो जरे विरहानल तें, दिन प्रीत रखै वह आगि जराए।
घायल प्रेम के बान मोहीं, करि है विन प्रीति सरूप लखाए।।
घायल और जगे न जिए, सभ लोग सहैं सन जोत दिखाए।
काहे ते प्रान तजो सजनी, नित रार करे सें संमुख धाएँ।।

सोरठा

लगे प्रेम के बान, जरै बिरह की अगिनि सों।
केहि बिधि तजै परान, सरद चांदनी के चुनी।।
अब हेमंत परघस्यो पाला। हिम तन उठहि बिरह कै ज्वाला।।
आवत जात न दिन निर माई। रैनि पहाड़ परै पुनि आई।।
भए जुरावन सभै सँजोगिन। औ कुफनू भय जरै वियोगिन।।
बदन जुरावा सभ नर नारी। बिछुरे प्रान जाय दुखारी।।
यक यक पंछी दुहूँ के होए। मिलि कै उठहिं उटेरे सोए।।
कुफनु पंछि सम यह रितु नाहीं। नित तन बिरह अगिनिं निकसाहीं।।
अपने मुख तें पावक छारा। अपने अगिन होय जरि छारा।।
होय चकई निसि जागि बितावे। जस बूड़त महँ थाह न पावे।।
बाढ़ा बिरह रैन जस बाढ़ै। अरुझे पेम फाँस हिय गाढ़े।।
निसि हेवंत पहाड़ भय, बिन पिउ कटै न रैन।
जागि बिहाऊँ रैन दिन, जाड़ करै बेचैन।।

कवित्त

छाय गयो सब सेत 'निसार', लगे खग खग घिर सरसों।
कैसे कटे यह रैन पहाड़ सों, बँधे जो हिया हिया सरसों।।
देखिए कौन बसंत समय जब, धाँक सती से बसें सरसों।
हेवंत गए अपने बिन संगहिं, अब आँखिन फूलि गई सरसों।।

सोरठा

हेवँत ऋतु उत गाढ़, बिरह जनावे आन तन।
घटा दिवस निसि बाढ़, जागे बिरह बिहाय तब।।
लाग सिसिर ऋतु चित बैरागी। पवन उदास भए अब लागी।।
लाग बसन सो लाग सुहावे। सिरी पंचमी चाह जनावे।।
राग हिएँ अँग कीन्ह अलसाहा। नर नारी हिय उपजे थाहा।।
भए हरख डफ बाजन लागे। कामिनि काम आय तन जागे।।

चहुँ दिसि उड़ै गुलाल अबीरा । केहि विधि धरें सुहियरें धीरा ॥
पुरब जनम कर पाप कमावा । जो यह समय बिरह दुख पावा ॥
पहिरहिँ सखिहिँ वसंती बागा । परगट भयो प्रेम अनुरागा ॥
खेलहिँ फाग जो साँवरि गोरी । हम तन लाय लीन्ह जस होरी ॥
बौरें आँब बास महकाने । फूले कुसुम चाह अधिकाने ॥
तिय से तैसे अउर भए, बौरे आँब लतान ।
मैं बौरी दौरी फिरौं, सुनि कोयल की तान ॥

सवैया

लाग तुषार परै चहुँ ओर, सखी तेहि अंबुज देह डहे को ।
पिउ बिन रैन दुहेली बिहाय, कैसे अकेली ह्वै दुःख सहेको ॥
आवे जाड़ जनावे तुषार, हिए बिरहानल जुआब भए को ।
बौरी सभै दौर फिरे ललिता सखि, बौरी लता फिर कैसे रहे को ॥

सोरठा

चहुँ दिस बेल निसान, हिएँ आन जागा मदन ।
केहि विधि रहे परान, बिरह बान बेधे सदा ॥

× × × ×

यूसुफ जुलेखा मिलन खंड

यूसुफ़ भयो मिसिर कर भूपा , न्याव दान नित करै अनूपा ।।
यक दिन हिये कीन्ह अस ज्ञाना । मो कहँ दई कीन्ह सुलताना ।।
बिन मंत्री जो होय महीपा । जैसे सदन होय बिन दीपा ।।
पै कोइ ऐस दिष्ट नहिँ आवे । जाह सचिव कै कोरे चढ़ावे ।।
जबराइल तेहि अवसर आये । सचिव कुरी कहँ अरथ जनाये ।।
भोर मँदिर तें बाहर आवहु । पहले मिले सो सचिव बनावहु ।।
यूसुफ़ भोर जो बाहर आवा । लकड़ी लिये जो मुख देखरावा ।।
उत दुरबल औ नृप बल हीना । महा मुखी औ जीरन दीना ।।
तब मन महँ निज कीन्ह बिचारा । कत उठावे यह जग कर भारा ।।
भये सोच महँ डाह तबाँई । जबरैल तब आइ सुनाई ।।

कौन सोच हिरदैं करो , औ मन होहु अधीर ।
सचिव करहु यह पुरख कहँ , दुरबल दीन्ह सरीर ।।

इन तुम्ह तें बहु कीन्ह भलाई । दई चहे तोहिं उरिन कराई ।।
यूसुफ़ कहा बहुत गत कीन्हा । दियो अरथ मैं ताह न चीन्हा ।।
कहा कि है बालक यह सोई । ताकर मरम न जानै कोई ।।
मिसिर सचिव तोहि चहा सँघारा । दै साखी तोर प्रान उबारा ।।
तें मानुस कर बालक अहा । जिन मुख बचन न्याव को कहा ।।
सो बालक यह दुरबल दीन्हा । जहाँ नाहि औ रूप बिहीना ।।
सचिव ज्ञान कर चाहै आगर । सो यह होय बुद्धि कर सागर ।।
तब यूसुफ़ तेहि हियें लगावा । औ ता कहँ हम्माम भेजावा ।।
करि असनान पन्हावा जोरा । तास बादला जोत अँजोरा ।।
कँलगी औ नवरतन पेन्हावा । ताह सचिव कै कोरि चढ़ावा ।।

अलख निरंजन न्याव कर , एकहि एक बिचार ।
काहू कै सेवा नृ-फल , करै न तनिक 'निसार' ।।

अब बरनौ वह बिरह बियोगिन । यूसुफ़ लाय भई जो जोगिन ।।
चालिस बरस जोग जिन्ह कीन्हा । दरब भँडार खोय सभ दीन्हा ।।
जेहि दिन नाँव लिये कोउ आए । तेहि दिन खंजन भोग कराए ।।
जेहि नाँव सुनै नहिं नारी । रोय रोय काटै निस सारी ।।
कुछ न रहा तब जोग कमाई । दरब अरथ सभ दीन्ह लुटाई ।।
रोवत नैन भये अँधियारे । रोम रोम तन बिरहिन जारे ।।
जब लहि नैन हुते वह केरे । तब लहि दरस प्रीतमहि हेरी ।।

गये नयन भइ रंक भिखारी। बिरह स्वरूप भई वह नारी॥
कूबर निकसि पीठ महँ आवा। वक्र अंग भा सूध सोहावा॥
लै लकुटी हेरत फिरै, नित यूसुफ कै बाट।
जो कोइ नाँव सुनावे, भुइँ महँ धरे लिलाट॥
बालक झूँठि सुनावहिँ आई। यूसुफ़ नाँउ सुनत बौराई॥
कहैं कि निकसी आज सवारी। धाई फिरै होत बलिहारी॥
जब लहि हत्यौ दरब ओ दाना। दीन्ह नाँव सुनि कौटि समाना॥
यूसुफ़ काज सबहि कुछ दीन्हा। कुछ न रहा तब काहु न चीन्हा॥
तब सब लोग सो बाउर कहैं। विपत परे कोउ संग न रहैं॥
पावहिँ अरथ दरब पहिरावा। खाहिँ भोग लै नाम सोहावा॥
जब न रहा कुछ सभ अलगाना। हत्यौ नेत्र सभ भये बेगाना॥
जेहि तें कहै बात पर नारी। सो रिस खाय देइ तेहि गारी॥
लगुटी लिये गली गली, फिरैं मंत्रि के आस।
सुनत सवारी मंत्रि कै, धाइ फिरै चहुँ पास॥
गई निकसि सभ दासी चेरी। अपने यक प्रीतम कहँ हेरी॥
सेवक दासी रहा न कोई। बिपत पड़े कोइ साथ न होई।
रहै बहुन महँ अकसर दुखी। होय अदरार रहै बिक मुखी॥
जो कुछ रहा सो सबूहै गँवावा। पिया प्रेम बिन अवर न भावा॥
हरयो भोग सुख नींद बिलासा। हरयो चैन औ हरयो हुलासा॥
जोबन हरयो रूप हरि गयो। बिरध स्वरूप सभै तन भयो॥
भयो अंग सबूह ढील समाना। पै न गयो तेहि प्रेम को बाना॥
भये तेज तन पौरुख हारा। नैनन मेटि गयौ उँजियारा॥
नास कीन बिधि, सब गयो, खोये सुख अरु चैन।
जोबन रूप न थिर रहा, रहा बिरह तन मैन॥
एक दिन एक नारि पहँ जाई। रोवे लागि सँवरि सुख दाई॥
तेहिके चरन सीस लै आवा। आवा पुनि सभ भेख देखावा॥
यूसुफ़ नवी कै मोंहि सवारी। देहु दिखाय होहुँ बलिहारी॥
सँवर नार पाछिल दिन सोई। लाखन दरब लीन्ह सब कोई॥
उठै मया भइ तेहि के संगा। जो दीपक सँग भई पतिंगा॥
चहुँ दिसि फिरै संग लै नारी। अकस्मात मिलि गई सवारी॥
उठै धूम तिल ऊपर भयऊ। चहुँदिस अरध अवध होय गयऊ॥
लै सो पाट पर ताहि बैठावा। कहा चेत अबं यूसुफ़ आवा॥
ओ यूसुफ़ तें कहा पुकारी। बैठे पाट जुलेखा नारी॥
नाम जुलेखा नार मुख, पड़ा जो यूसुफ़ कान।
मया मोह जब उपजै, हियें प्रेम कर मान॥

देखा बिरिध भई वह बाला। ना वह रूप न रंग न हाला ॥
कंठा एक करै महँ सोहै। पूछैं लोग कि यूसुफ़ को है ? ॥
नैन नाह जो देखै नारी। पौरुख नाह जो होय बलिहारी ॥
लगुटी लियें बाट पर ठाढ़ी। बक्र पंथ मँह चिंता गाढ़ी ॥
रोवत ठाऊँ ठाठ जो कोरी। जोबन रतन लीन्ह क्यों छोरी ॥
हर गये जोत नैन से पानी। माँस झुरान नसैं अरुझानी ॥
अंबुज रंग हरिद रँग भयऊ। रती माँस सभ झूरा भयऊ ॥
जो देखै सो निकट न जाये। देखि बिरिध मुख जाय हेराये ॥
जो सवार आये तेहि पासा। कहे न आव मंत्र कै बासा ॥

सब्ह सवार के पाछें, यूसुफ़ नबी जो आय।
कहा भये हैं यूसुफ़। जिन मोहि ऐस बनाय ॥

लखि यूसुफ़ मन भयो दुखारी। कौन हाल तुम्ह कीन्हों नारी ॥
औ कैसे मोहिं छीन्यहु बाला। नैन अंध औ हाल बेहाला ॥
सब्ह सवार आये तुम्ह पासा। काहू देखि न किह्यो हुलासा ॥
कहा नारि सुन सुन प्रेम पियारे। चालिस बरस बिरह दुख जारे ॥
जब तुरंग हम सौंह चलावा। चारिव घरी सो हियें चढ़ावा ॥
तुम्ह दौड़ाय तुरी लै आये। हम ऊपर खुर खंद कराये ॥
चालिस बरस बिरह कै आगी। मोरे हिये रैन दिन जागी ॥
कठिन बिरह को ताह सँभारे। छिन मँह अगिन जगत कंह जारे ॥
जो यह अगिन समुंद्र मँह डारैं। सोख समुंद्र मघवानल जारैं ॥

डारौं अगिन समीर पर, तो अंजन होय जाय।
घन सो हिया अति मूरख, जेहिं यह आगि समाय ॥

जस सो अगिन महँ रहै समुंदर। औ समुद्र महँ बसै जलंधर ॥
तस होऊँ यह समुंदर माहाँ। जीवन मोर अगिन कै माहाँ ॥
जो यह अगिन न हिय महँ होती। जस घट महँ वह पूरन जोती ॥
तो कत जीवन होत हमारा। बिरह अगिन मोर प्रान अधारा ॥
निस दिन अगिन हिये सुलगावै। हिय पसीज चख आँसू आवै ॥
बड़वानल तस प्रान हमारा। जिन यह अगिन प्रेम संभारा ॥
चित डौंडीं बुधि फेरी लावै। मन दूनौ कै भीड़ उठावै ॥
वह सो अगिन कर अहै पसीना। धरहिं नैन तें तेज बिहीना ॥
बिरह बुद्धि दोउ करहिं लराई। जस पारा लखि अगिन हेराई ॥

बसै समुँदर अगिन महँ, ताको जीवन सोय।
छिन बिछुड़ै तन लागे, पुन सो निर्जीवन होय ॥

यूसुफ़ कहा कि बात अपारा। हियें अगिन को राखै पारा ॥
राखि न सकै आगि यह कोई। दग्धै तनु जरि छार सो होई ॥

तुम्ह महँ हाल रहा कछु नाहीं। एक सो झूठ रहा तन माहीं ॥
झूठ प्रेम कर का फल पावै। झूठं बात कहि धरम नसावै ॥
कहा नारि सोचहु मन माहीँ। जग महँ अगिन कहाँ है नाहीँ ॥
अगिन धुंध जेहि ओर न छोरा। पूरन वहै अगिन चहुँ ओरा ॥
देखहु अगिन बीच कै छारा। सूरज अगिन जगत सब्ह जारा ॥
अगिन भार जरत होय लोका। गरज गरज महँ देख भभूका ॥
मधवानल वहि अगिन समानी। अगिन अगस्त सोखावत पानी ॥

आगिन सरग रबि ससि, चन्दन घन नखत निहार।
कत मानुख वहि अगिन तें, रहा न लोह 'निसार' ॥

अगिन तरुन नित लावत दाऊँ। अगिन बिरिछ महँ वहिं ठाऊँ ॥
अगिन बिपत तें करै प्रकासा। भूमि अगिन चढ़ि जात अकासा ॥
सब महँ अगिन परघट परचँड़ा। गूदर बाँस सरहर सरकण्डा ॥
जो नाहीं आगे दुख देखहु। काइ माँह वह अगिन बिसेखहु ॥
कहा कि तुम सब्ह पढ़ा औ जाना। प्रेम अगिन तेहि हियें समाना ॥
सुन यह बात जुलेखा रोवै। परघट अगिन हिये जो गोवै ॥
तोरे हाथ कुछ यूसुफ़ आहै। कहा कि जाकहँ ताजिना कहै ॥
कहा कि मोंह देहु पकराई। बिरह अगिन तब देहुँ दिखाई ॥
फुंदन लीन्ह कोंड़ कर हाथाँ। लै लायो ताकहँ हिय साथाँ ॥

फुंदन जरा तजियाना जारा, दस्ता जरै जो लाग।
डार दीन्ह तब यूसुफ़, देखि बिरह कै आग ॥

कहा जुलेखा सुन नर नाहा। राख्यों अगिन जो हिरदैं माँहा ॥
जबहीं बुध मानुख उपराजा। चार तत्त कर पंजर साजा ॥
यहै अगिन जो आद सँवारा। आद जोत वह अगिन सँचारा ॥
तेहि छुट दूत होय ससि सूरू। कोउ न सकेहु रखि प्रेम अँकूरू ॥
चकमक तें जस पथरी झारै। उठा भभूका हियेँ परचारै ॥
आद पिता कहँ अगिन सो दीन्हा। जेहि ते सभ नर परगट कीन्हा ॥
सब्ह तेहि सकेउ न आग सँभारी। पेमै हियें रख्यो पर चारी ॥
सो पावक मैं हिये निचोवा। चालिस बरस बीज जस गोवा ॥
तेहि सो आग कै एक चिंगारी। जगनायक यक्र सकेहु सँभारी ॥
पूरन चहुँदिस अगिन बिसाला। खाल माँह वदिह अगिन कै ज्वाला ॥

देख अवस्था नारि कै, औ हिरदैं कर आग।
सभै लोग अचरज करहिं, प्रेम हिये महँ जाग ॥

धन यह नार आग जिन बोई। बिरह बीज जस हियें निचोई ॥
अहै अगिन वह प्रेम कै थाती। दीपक माँह जरै जस बाती ॥
धनि वह हिया अगिन जिन राखा। धनि वह नारि प्रेम रस चाखा ॥

पीठि औ पेट सरापन लागा। अबहुन मिटेहु बिरह बैरागा ॥
ज्यों ज्यों बिरध होय सरीरा। लाजन बठै औ होय अधीरा ॥
यह मन कबहूँ मरे न मारा। जब वहि पड़े न तन पर भारा ॥
मन मारै सोई बड़ साई। धाय निसार पड़ै तेहि पाई ॥
भयो अँग सब्ह ढील समाना। निकसन तेहि तें प्रेम को बाना ॥
नैनन रूपन देखहुँ, कानन सौंह न बात।
केहि कारन पछिता करौं, भयौ रैन परभात ॥
धन संबत औ शब्द सुख साजा। बिनु पौरख सभ कौने काजा ॥
अब तन नैन गये सब्ह खोई। तबहुँ न दरस परायत होई ॥
तो कहँ देखि आय कहँ रोवा। मोरे लिखत सबै तुम खोवा ॥
कहाँ रूप वह जोबन जोरा। कहाँ नैन जस समुंद हिलोरा ॥
कहाँ अधर सुरंग अमोला। कहाँ मदन वह सिहर कमोला ॥
कहाँ कठं वह कोकिल बोली। कहँ कठोर गुजराती चोली ॥
कहाँ लंक जो बारम्बारा। लचि लचि जायँ बार कै भारा ॥
कहाँ चरन वह कंवल सोभावा। कहाँ अँग वह सूध सोहावा ॥
कहा कपोतहि जोबन बाला। सदा जो सौतिन कै तन साला ॥
कहा सरवर कहँ हसँ, वह मोती चुन चुन खाय।
लाग चुनै अब काँकर, भूरे में मरि जाय ॥
का भा तोर सरूप सोहावा। चाँद सुरज जेहि देखि लजावा ॥
कहा कि रूप तुम्हें सब्ह दीन्हा। तोरे बिरह अगिन हर लीन्हा ॥
कहा कि तें जो कीन्ह निठुराई। मैं जोबन औ जोर ँवाई ॥
कहा कि वह जीवन औ जोरा। जाकै सौंह न काहुन जोरा ॥
कहा कि नैन कटाच्छ सोहाये। कहा गये कोऊ हियें न लाये ॥
कहा कि रोय रोय मैं खोवा। गये नैन तोर बिरह बिछोहा ॥
कहाँ गये वह अमिरित बानी। जेहि तें भये आग औ पानी ॥
तोरे प्रेम सभै हरि लीन्हा। सभै बात मैं तोंहि कहँ दीन्हा ॥
कहाँ गये लाल जवाहर मोती। लेइ तेहि झलक सो रब कै जोती ॥
सुनेउँ नाँउ तोर मैं, दीन्हों सभै लुटाय।
सभ कुछ गयो न कुछ रहा, रहा प्रेम चित छाय ॥
कहाँ गये वह दासी चेरी। रूपवंत जो काहून हेरी ॥
तास बादला रंग हरीरा। असावरी कर करै को चीरा ॥
कहा कि टूक टूक करि डारा। तोरे बिरह बसन सब फारा ॥
अब तन पर कामरी टूका। हियें फिरावहिं बिरह भभूका ॥
तेहि कमरी पर देसी सोहै। प्रमै लोग देखि तेहि मोहै ॥
कहाँ गयो वह गरब तुम्हारा। जेहि तें न काहुक ओर निहारा ॥

दरब गरब औ जोबन जोरा। सब्ह यह अहै हरा मन तोरा ॥
नैन अधीन औ रंग नियावा। गरूड़ै कोऊ बैरन खावा ॥
तोरे प्रेम सभै कुछ खोवा। एक प्रेम निज हिरदैं गोवा ॥
तोरे बिरह हरयो सभै, नैन बैन गुन ज्ञान।
सब कुछ गयो न रहा कुछ, रहा एक तोर दगान ॥
लागै कहै रोय पर नारी। चालीस बरस बीत कै सारी ॥
निस दिन अगिन सो हियें निचोई। सुलगत रहै न चाँपा कोई ॥
यहि सो अगिन कै तेहि कर साना। थाँभहि निकरयो जगत सुलताना ॥
तुम्ह सुलतान करो सुख भोगू। का जानहु दुख बिरह श्रो सोगू ॥
चालिस बरस अगिन पर चारा। छुट तोर बिरह और सब्ह जारा ॥
जो कुछ दुःख सहयो दिन राती। का कोउ सहै बज्र कै छाती ॥
कागद सात अकास बनावै। सात समुंद्र भियानी लावै ॥
लिखनी बिरिछ होय जग सेरे। तीन लोक सब्ह होहिं लिखेरे ॥
चारिव जग बीतहिं तेहि माहीं। दुख हमार लिखि जाय सो नाहीं ॥
बारह मास बियोग दुख, यूसुफ़ से भयो हमार।
चालीस बरस बन जारे, तेहि सभ दुखद अपार ॥
चालीस बरस जे आग निजोई। बारह मास कहुँ दुख रोई ॥
यक यक दिन जुग होय बीता। कहँ लौं कहौं अहै सुनीता ॥
दिन यक दुख जे सुनहु हमारा। तुम्हो राज जुग जुग अधिकारा ॥
तोहिं बुध कीन्ह छत्र पुत भारी। सुनहु दुःख जो अहै दुखारी ॥
जा कहँ दई बड़ा कर देई। से दुखिया दुख कहा करेई ॥
कबहुँ मोर कहा न माना। व्याह न भयो गवन नियराना ॥
कबहूँ दिष्ट न मो तन फेरे। भयों अंध तब देखहुँ हेरे ॥
भयऊँ बिरिध अब मरत सँघाती। सुनहु बिरह दुख हुलसै छाती ॥
जो दुख सुनहु करो तुम दाया। मानहु दीन्ह अनेकन माया ॥
मैं तुम तें माँगहु यहै, सुनहु बिथा दुख मोर।
होय मीच सुख सो मरौं, रिझौं सो अवगुन तोर ॥
चैत मास तपि गयो बिछोये। तब ते रकत आँसु मैं रोये ॥
सब्ह जग होय बसंत धमारी। मो कहँ बिरह आगि ते जारी ॥
बन उनये हरियर होय फूला। केतक भिरँग तबस्ता फूला ॥
भँवर भुलान फिरै चहुँ ओरा। कुहकै कोकिल चातक मोरा ॥
पिव कर नाउ पपीहा लेई। बिरह हियें अधिकों दुख देई ॥
सीतल पवन अंग कहँ भावे। बिरहिन के तन आगि लगावै ॥
रित बसंत सोहै सखी, काह लगै बिन पंथ।
जग तरूर फूलै फलै, बिरहिन बेल उदंत ॥

कवित्त

चैत तरुवर फूल फूले भँवर सब्ह भूले फिरैं ।
पवन सीतल तन सेराने कवित के प्रानन करैं ॥
रित अनूप लखि स्याम सुँदिल सुख सज्जा करैं ।
आँसु की सरिता बढ़ै, निठुर बिरहिन बूड़े मरैं ॥

बारहु मास सोहावन आवा । रित बसंत संजोगिन भावा ॥
तन बसाय औ हिया भिगाये । भूले भँवर पवन महकाये ॥
कुंज छाँह बन लाग सोहावा । सीतल पवन हियें कहँ भावा ॥
उपजै सुभग समै अनुरागा । कामी आय काम तन जागा ॥
चितै सती तन गँधरय छावा । रित बसंत सब के मन भावा ॥
तैसे आग लाग मन माहीं । हरीं कहाँ भाग अब जाहीं ॥
अब अवगुन महँ भरे अँगारा । बिरहिन हिया सरागन जारा ॥
फूले फूल सुरंग कचनारन । लागे आग अनार के डारन ॥
कर माया मैं बसी चहुँ ओरा । बोलहिं कोकिल चातक मोरा ॥
सुख सोहाग के समय नहि , लोग कहैं रवराज ।
हमहि बसंत दुख दइ यह , सर पंजर सम साज ॥

कवित्त

मास माधो सनेह सोहावन , जगत सुख छायो सभै ।
बिटप फूलत फलत तरुवर , अंब सों बौरन भये ॥
बहुन सीतल छाँह सुंदर , सुख सँयोगिन कै रहे ।
कौन हरियर करै पिउ बिन , बेल बिरही से डहे ॥

सोरठा

सीतल छाँह गँभीर , अंग सोहाय सोकालिनी ।
सुख ओ भोग सरीर , सदा उसीर सोहाय अब ॥

लाग चैत अब तपै करेजा । कामी काम करे सुख सेजा ॥
फल पाके अमिरित रस पाके । काम आय कामिन तन जागे ॥
रैन घटी दिन बहुत बढ़ावा । बिरहिन आग अंग लै लावा ॥
कठिन घाम तन जरैं हमारा । भूखन मंदिल ओ सपर सँवारा ॥
सीसी लै गुलाब डरवावहिं । ओ कुमकुम कहिं अंग लगावहिं ॥
रोवँ रोवँ ओ सुख अधिकाये । बिसैं करत अंग सुख पाये ॥
बात कहत निसि जाय बिहाई । दिन कहँ भोग भगत अधिकाई ॥
चैत मास बिरहिन कहै जारा । दीन्हा आग लाय संसारा ॥
बरखा हितु अब तपै करेजा । करेज भयो रंगरेज क रंजा ॥
ग्रीषम रितु अगिन बैठ , ढूँढहिं सीतल छाँह ।
ऐसे समय बियोगिन , भाग सोख दस जाँह ॥

कवित्त

जेठ ग्रीषम विषम आगम पान भोग बिना करैं ।
'निसार' बियोगी छाँह तपिहै अंग कै सीतल करैं ॥
भुवन सीतल पवन आवैं रोवँ रोवँ मैं चित धरैं ।
गुपुत परघट एक पिव बिन बिरहिनै निसि दिन जरैं ॥

सोरठा

जेठ जरावे देह, नेह माहँ मारै सखो ।
चहुँ दिस उठै सनेह बिरहिन कै दारुन समै ॥

लाग असाढ़ सो गाढ़ जनाई । घन गरजै दामिन चमकाई ॥
उमड़ घमंड घन घोर बिराजै । काम बिसाल नवो खँड बाजै ॥
कूँधत माँह चकूँधत जीऊ । केहि के कंठ लगै बिन पीऊ ॥
पँछिय पतिंग सबहि घर साजा । जगत काम कर बाजन बाजा ॥
मोर कुटी के छावै पीऊ । केहि बिधि दय देइ मोहिं जीऊ ॥
दादुर मोर जो करहि अँदोरा । नार कंथ छिन तजहिं न कोरा ॥
बिछुड़े मुये सो दुओ दुखारी । बिकल जरा भा सभ नर नारी ॥
कोकिल कूक लूक हिय लावे । कुकनू सम भभूक रचावै ॥
कैसे कटै सो यह रितु भारी । बिन पिव घमँड घोर अँधियारी ॥

मांस असाढ़ सोहावें, पिव भावे निज सेज ।
देख घटा औ दामिनी, काँपै मोर करेज ॥

कवित्त

रितु असाढ़ घन घेर आयो, लाग चमकै दामिनी ।
रितु सोहावन देख मन, महँ हरख बैठ भामिनी ॥
रितु घमंड सों मेघं धाये, दिवँस भई जस जामिनी ।
रैन दिन करुना करैं, घर में अकेले सामिनी ॥

सोरठा

बीतो जात असाढ़, कंत भूल सुख महँ रहे ।
बिरहिन यह दिन गाढ़, पिव बिन कहु कैसे कटै ॥

आयो सखी सोहावन सावन । भावन रैन बिना मन भावन ॥
घर घर कामिन साज हिंडोला । देख समै सरगुर चित डोला ॥
जोगी जती के आसन छूटा । साध संत के मंका टूटा ॥
काहु के चित रहा थिर नाहीं । हरषित चित यहै रित माहीं ॥
भवन बियोगिनि काटै खाई । देखि देखि यह समै सोहाई ॥
परहिं जो आँसु भूमि पर टूटी । रँग चली जस बीर बहूटी ॥
जुगनू चमक चमक देखराहीं । बरसे अगिन जो सावन माहीं ॥
सावन मास सोहावन बीना । तन तन काम अपरबल बीना ॥

सावन मन भावन नहीं, जोवन बिरथा जाय।
काल न आवे यह समै, कैसे रैन बिहाय॥

कवित्त

भा सावन रितु सोहावन भावन मन भावे नांहीं।
काम कला पावा सखी छिन यक कल्पावे नांह॥
बैस बीती जात सजनी सेज सुख पावा नहीं।
जाहु सावन बहुर आवन कंत घर आवहिं नहीं॥

भादौं भुवन बेहावन भयो। देखत घटा प्रान हरि गयो॥
दिन ओ रैन जाय नहिं जानी। उनई घटा रहे भरि पानी॥
जल थल पूर सो नीर अपारा। हाेय गये एक नदी ओ नारा॥
जल परवाह जगत मां बाढ़ा। बिरही बिरह परा दुख गाढ़ा॥
घन गरजत लरजत तन मोरा। दामिन दमक चहै पिव कोरा॥
गरजै कूँध लखि मरि मरि जाई। बिना कंत को लेइ जियाई॥
ऐसे समय सो नारि अकेली। निठुर कंत जिन दुख परहेली॥
धन अकेलि औ भादौं राती। धन सो अई बजर कै छाती॥
धन भादों कै मास सँवारा। तासो नार ओ पुरुष सँचारा॥
भादौं रैन बिहावन केहि बिधि रहौं अकेली।
धृक जीवन तेहि नार का जेहिं सामी परहेली॥

कवित्त

मास भादों रैन कारी देख कर दूभर भई।
कंत बिन सखि सेज सोई नीद नैनन सें गई॥
मन हमार निपट व्याकुल स्याम बिन सब दुख हिये।
बिरह सरिता उमड़ि आई कैस क बचिये दई॥

सोरठा

भादों केहि रँग भीर, धरै धीर केहि बिधि हिया।
बाढ़ै बिरह-क पीर, कंथ न पूछै बात मोहिं॥

लाग कुआर सरद रितु आए। घटा जुनीर सब अंग सुखाए॥
जहँ तहँ पंथी तुरी पलाना। पीय प्रान बाहर बेहराना॥
जो कहु छाय रहे बंजारा। सो फिर कै परदेस सिधारा॥
हम पंछी तेहि सोच हमारे। ऐसे समय सो दीन्ह बेसारे॥
रहे नगर महँ लाल हमारा। नैनन मोंह कोट पहारा॥
जो निरदई करे नहिं दाया। का भा निकट रहे निरमाया॥
सहस कोस तेहि पाछे आवे। माया मोह हिया उपजावे॥
रहे मंदिर महँ करे न दाया। सहस कोस ता कहँ निरमाया॥
मास कुंआर घटा जल सारा। भय परकास मिटेहु अँधियारा॥

सारद समय सुहावन, मन भावन नहिं पास ।
भय सूरत लखावनी, जो हिय नहीं हुलास ॥

छंद

कुआर मास अब लाग सुंदर, चाँदनी निरमल भई ।
सरद रंग बेभाल सोहित, सरद आवत निरभई ॥
जल अंग सब सब सोन लीन्हो, नींद नैनन सो गई ।
चख बियोगिन के नहि सूखैं अवर जल सोखै दई ॥

सोरठा

यह रितु सोख्यो नीर, जब अगस्त ऊदित भयो ।
नयनन भयो अधार रितु, रात दिवस पूरन रह्यो ॥
कातिक मास महा उँजियारी । संजोगिन सुख समय पियारी ॥
देख चाँदनी करैं हुलासा । जिनके कंत रहैं नित बासा ॥
चहुँदिस होहि हरष अनुरागा । कामिन काम एक महँ लागा ॥
यह रित महँ सोहै उँजियारी । कैसे जियें बियोगिन नारी ॥
पिय कै लगन हिये अधिकाई । गगन नखत सखि रैन बेहाई ॥
सभै लगन संजोग समाना । काटे खाय न जाय बखाना ॥
बिरहिन बिरह अगिन से जारी । चंद चाँदनी डारै मारी ॥
घायल बिरह बियोगिन बाला । निरख चाँदनी होय बेहाला ॥
सरद समय बहु दुख अधिकारी । बिरहिन प्रान जुआ जस हारी ॥
मोही निदित जगावा, पिय मोही के लाग ।
कहँ मोहन अस पावा, मिटै हिये कै आग ॥

छंद

मास कातिक सुठ सहेला, चाँदनी लखि चित हरै ।
देख कै यह रितू सुंदर, नार कथ पिव परहरैं ॥
दुओ दिस बिरख फूले, देख कै बिरहिन चरै ।
सरद रितु की चाँदनी में, बिरह के मारे मरै ॥

सोरठा

कातिक बेहावन घन बैठ, भोग रजनी बैठ ।
बिरहिन बदन मलीन भय, देख रंगै सखी ॥
अगहन दिवस घटा निस बाढ़ै । बिरहिन बेल तुसारन डाढ़ै ॥
जाड़ आन तन माँह समाना । घर घर असन बसन अधिकाना ॥
साजहिं सौर सपेती नारी । हरियर सब मसियत रतनारी ॥
भयो चार ते प्रीतम प्यारी । जेहि तन तें नहिं होय निनारी ॥
पवन उदास बहै अब लागी । हम कुकनू सम भारहिं आगी ।
भाँति भाँति कै बसन सोहाये । संयोगिन प्रीतम सँग धाये ॥

सरसों फूल रही चहुँ ओरा। लाग तुसार परै निसि भोरा ॥
बाढ़ै रैन बढ़ा सँग भोगू। लागे केल करै सब लोगू ॥
बिरहिन भई रैन बहु भारी। जगत जाय सो बिरह दुखारी ॥
अगहन मास सोहावन, भा दूभर बिन कंथ।
सेज अकेले रैन महँ, मिलै न आवत कंत ॥

छंद

मास अगहन जाड़ ब्यापै, देह लागै थर थरे।
कंत बिना दूभर भये ढहि, रैन होय करवट परे ॥
निठुर कंत नहिं बात पूँछे, मास अगहन हर हरे।
सुख सोहागिन सेज सोहैं, एक दम बिरहिन जरे ॥

सोरठा

हेवँत रितू अनंग, जाड़ कँपावे देह कहँ।
मोहि प्रीतम की चाह, बात न पूँछे निठुर वह ॥

पूस जाड़ अधिकों तन लागा। घर घर नारि पुरुष अनुरागा ॥
बाढ़ै रैन तन काम समाना। घटा दिवस सुख साज हेराना ॥
लाग परे जग माँह तुसारा। कँवल बदन हम बिरहिन जारा ॥
अंबुज बदन भयो जर कारा। प्रगट जाड़ में काँपहि दारा ॥
छिन बिरही जिनके तेहि सामे। उनका यह रित कथ बिसरामे ॥
हम का करहिं जाहिं कब भागी। चहुँदिस जारी बिरह की आगी ॥
रैन पहाड़ न जाय बेहाई। काँप-काँप तन उठै झुराई ॥
है रे निठुर नाह दुख दाता। कबहूँ न पूँछा हम दुख बाता ॥
निठुर नाह नहि दाया आवै। हमहिं जाइ दिन रात सतावै ॥
पूस मास दिन घन अब, आवै जाय न बार।
बिरहिन निस दारुन भये, हाय के परे निहार ॥

छंद

पूस मास भये निस दिन, रैन जग सम होय गये।
तन तुसार सम कँवल के जर, छार बिरहिन के भये ॥
कंत तोहिं बिन सेज सूनी, रैन दूभर निरमई।
ऐस रितु में लाल बिन, कसे जिवें ललिता दई ॥

सोरठा

पूस भयो दिन छोट, रैन बेहाय न कंत बिन।
बिरहिन लाग न खोंट, निठुर कंत पूंछे नहीं ॥
माघ मास सोहै सुख साजा। तिल तिल दिन बाढ़ा दुख भाजा ॥
जेहि दिन पवन नीच अधिकाये। तेहि दिन देहि तुसार कराये ॥
कैसे बीते मास सोहावा। निठुर नाह नहिँ दरस देखावा ॥

सिरी पंचमी बौर सोहाये। माली बौर देखाये आये॥
रंग बसंत सो लाग सोहावा। बिरह बियोगिन दुख अधिकावा॥
यह सो मास बिन कंत बेहावै। प्रेम काज अब हिया जरावै॥
दारुन बिरह जरावे देहाँ। सून बसंत बिन उपजै नेहाँ॥
अब कैसे यह दिवस बेहाऊँ। बिना पीउ रँग बसँत गवाऊँ॥
धावै काम कमान चढ़ाये। बिरहिन हिया बोझ सिर लाये॥

माघ बिछोहें कंत जेहि, धृक कामिन तन सोय।
ऐसे रितु अकसर रहे, कैसे जीवन होय॥

छंद

माघ थिर थिर देह काँपे, निस अकेले सोय॥
नींद नैनन में न आवे, सँवर प्रीतम रोय॥
बैस सुंदर जातपिव बिन, आँसु से मुख धोय।
कंत बिन बिरहिन तपै तन, प्रान वर तेहि खोय॥

सोरठा

मोहन आये नाहि, कवन छाँह हम (कहँ) करै।
कठिन समै अवगाह, कैसे कै धीरज रहै॥

फागुन मास कीन्ह परगासा। घर घर उपज्यो रंग हुलासा॥
बाजे डफ मृदंग सोहाये। काम आय निज रूप देखाये॥
लागे पवन बहे हरिहरा। तरुवर पात सभै खसि परा॥
निस बिरहिन पुन भा पतझारा। रोम रोम तन बिरहिन जारा॥
संजोगिन सभ खेलहिं होरी। रंग गुलाल सो भर भर झोरी॥
डारहिं रंग सोरंग हँकारहिं। दुख दारिद कहँ मार निसारहिं॥
जिवँ जिवँ पवन तेज अधिकाई। बिरहिन हिये न रंग समाई॥
धृक जीवन जेहि कंत नियासा। मरे बियोगिन दरस के आसा॥
यह रित मां भा सुख परगासू। बिरहिन जेर बिरह दुख बासू॥

फागुन सभे सोहावने, मन भावन नहिं सेज।
रन तुरंग अरंग कहि, बिरहिन जरै करेज॥

छंद

मास फागुन सुठ सहेला, आन सुख परघट भयो।
काम पूरन जगत छावा, सोग दुख जग से गयो॥
यह समै पिव बिन सखी, यह देह बिरहिन के तयो।
दुख पुराये रह गयो यह, मास सभ सत कुछ गयो॥

सोरठा

खेलहिं लाल सु फाग, केसर बीर उड़ावहीं।
ज़रहिं बियोगिन भाग, फागुन सुक्ख न पावहीं॥

एक बरिस दुख बरन सुनावा। यहि बिधि चालिस बरिस बितावा ॥
सदा बसंत ओ पावस आवे। मोहिं कहँ उठि बिरह जरावे ॥
निस दिन लाग रहै जस होरी। दिये जराय बिरह तन कोरी ॥
वहै रैन वह दिन नित आवे। मास मास रितु अवर दिखावे ॥
मोंहि कहँ सदा गिरीषम रहा। बिरहानल दुख जाय न कहा ॥
चालिस बरस बिरह अधिकाना। नित उठ हिये लाग जस बाना ॥
दिन दिन बिरह तेज अधिकाई। चालीस बरस सो रोय गँवाई ॥
वहै भोर साँझहिं सो आवै। निस दिन बिरहिन हिये जरावै ॥
तुम प्रीतम कुछ कीन्ह न दाया। अस तुम्ह भूल गयो निरमाया ॥

प्रीतम बिरथा जाय जग, मैं सो जर्‌यौं जेहि लाग।
तुम्हरे मन उपज्यो नहीं, धिरिग मोर बैराग ॥

कहा जुलेखा प्रेम कहानी। नैने भरे जस पावस पानी ॥
रोय रोय सभ बरन सुनावा। सुन यूसुफ़ मन उठ्यो छोहावा ॥
सेवक संघ कै मँदिल पठावा। आय अहेर खेल लहरावा ॥
आयो मंदिर सेज पर गयऊ। हिये जुलेखा सो रत भयऊ ॥
कहा बोलाय चहो का नारी। सो अब देऊ जो होहुँ सुखारी ॥
जो माँगहु सो देऊँ मँगाई। सोन रूप नग बसन सोहाई ॥
कहा जुलेखा एक न चाहौं। धन लक्ष्मी सभ झार बहावों ॥
मँदिर गाँव मोरे बाग सोहाये। जो मांगै तेहि देउँ मँगाये ॥
लेउ गाँव ओ मँदिल सोहावा। चेरी दास लेउ चित भावा ॥
महा सिद्ध कै सुत कहलावहु। औ तुम्ह सिद्ध सदा सुख पावहु ॥
कीन्हों बहुत तपस्या जोगू। अलख तृसा तुम कीन्ह न भोगू ॥

माँगहु तुम्ह करतार तें, देहिं नैन कर जोत।
जेहि तें देखहुँ तोर मुख, चहौं न हीरा मोत ॥

तब याकूब यूसुफ़ तें कहा। जो कुछ अरथ भेद सब रहा ॥
सुना जुलेखा नबी कर नाऊँ। परे जाय याकूब के पाऊँ ॥
महा सिद्ध औ पर उपकारी। सुनहु कान दै बिथा हमारी ॥
जेहि का अंग बिरह दुख भेजे। सो दुखिया दुख दीन्ह पसीजे ॥
तुम्ह जस जर्‌यो सो बिरह कै आगी। तेहि तें अधिक जर्‌यों वहि आगी ॥
तुम्ह समुझ्यो मोरे दुख कै पीरा। पुत्र बिरह तुम डह्यो सरीरा ॥
वह निरदई न जाने प्रेमा। जानहिं सो जेहि धरम ओ नेमा ॥
तुम्ह सभ कुछ तेहि पंथ न पावहु। कस तेहि तें तुम प्रेम छिपावहु ॥
चालीस बरस जरायो देहाँ। वहि के हियें न उपज्यो नेहाँ ॥
तुम्ह अब न्याव हमार करेऊ। निरदाई सुन कहँ सुख देऊ ॥
सबहिं गरंथ तेहि देहु सिखाई। प्रेम के अच्छर न देहु पढ़ाई ॥

जेहि ते जानहि प्रेम वै, बेग पढ़ावहु सोय ।
देहु असीस उठाय कर, नैन जोत जेहि होय ।।
अब कुछ और न चाहूँ नाथा । रहौं सदा चेरी के साथा ।।
पाऊँ नैन दरस जो देखहुँ । जब लगि जिवों सरूप बिसेखहुँ ।।
किह्यों जनम भर मूरत पूजा । तेहि छुट अवर न जान्यों दूजा ।।
अब तेहि पर कीन्हों अनखानी । फोरथ्यों सीस रोय बिलखानी ।।
यूसुफ़ अलख सो अहै सोहावा । जेहि सेवक से भूप बनावा ।।
मैं सो जन्म भर सीस नवावा । तुइँ दर दर मोंहिं भीख मँगावा ।।
तुइँ मोर अलख किये यहि हाला । दर दर माँगहु भीख बेहाला ।।
जब मोर आस पुराई नाहीं । भयो क्रोध मोरे हिय माहीं ।।
तब रिसाय मैं मूरत फोरा । टूक टूक फेंक्यों चहुँ ओरा ।।
यूसुफ़ अलख तें अब मन लायों । औ मूरत ते हाथ उठायों ।।
वह दाता करतार जिन्ह, सभ यूसुफ़ कहँ दीन्ह ।
तेहि सो अलख आनंद कहँ, ग्यान ध्यान मैं कीन्ह ।।
तब याकूब सो हाथ उठावा । तेहि अवसर जबरैल सोहावा ।।
कहा जुलेखा कहँ लै जाहीं । कहो सखिन हम्माम कराहीं ।।
नार अनेक संघ कै दीन्हा । तब बरबस हम्माम सों कीन्हा ।।
मंजन औ अस्नान करावा । ईंगुर अँग चंदन तन भावा ।।
जब अस्नान कीन्ह वह नारी । चौदह बरस-क भई कुमारी ।।
आइ रूप जस हत्यो सुहावा । तेहि तें अधिक रूप छबि पावा ।।
चौदह बरस क भई कुमारी । नैन कटाच्छ तेज अधिकारी ।।
लाय सखी यक आरसि दीन्हा । देखत रूप सो अचरज कीन्हा ।।
धन करता हरता सुखदाई । तुइँ सभ दीन्ह सो कहत नियाई ।।
प्रेमी प्रेम न निरफल गयऊ । कस सो निरास जुलेखा भयऊ ।।
मैं तो तोहिं न जान्यो, जनम अकारथ खोइ ।
धन्य गरीब नेवाज तुइँ, को अस दूसर होय ।।
ईंगुर अंग मंजन असनाना । हरिहर मानख सुघर सुजाना ।।
लागे षट्-दश होय सिँगारा । चोटी गूँध सो माँग सँवारा ।।
तेल फुलेल लाय के साजा । पाटी पार माँग उपराजा ।।
बार बार गूँधे गज मोती । सेंदुर दीन्ह सुरज कै जोती ।।
गुल गेसुन कपोलन लावा । दै अंजन खंजनै बढ़ावा ।।
मेंहदी कर पग सोहाग सँवारा । बीर बहूटी कै रँग धारा ।।
दाँतन स्याम सो मसी जमाए । चमक सोभाग सो बरन न जाए ।।
मुख तँबोल गह्यो अपने पाना । अतर लगाय कीन्ह अरगाना ।।
फूल सो लाय पेन्हावें जोड़ा । पुहुप माल तन सोहे कोरा ।।

आयसु रहा सिंगार के, बारह अभरन लाय।
दीन्ह नार कुमार कहँ, सभ अभरन पहिराय॥

बारह अभरन साज बनावा। सहस फूल औ मंडन भावा॥
बेसर ओ कनफूल सोहावा। करन भूखन सब्हन पहिनावा॥
कंठा भूखन सोहें जेहि ताई। गर भूखन उर पास सोहाईं॥
कंठ माल बाजूबँद साजा। कर भूखन सो पहुँची बिराजा॥
अँगुरी मुँदरी उत छबि देहीं। नेवल बंद गुन ज्ञान हरेहीं॥
साज सिंगार सखी सब्ह मोहैं। रूप अपछुरा तासों सोहैं॥
धन वह अलख रूप जिन दीन्हा। भर के बार कुमार सो कीन्हा॥
लाय सेज पैठारहिं कोरी। मिले न तीन भुवन महँ जोरी॥
उर केसर फिर अधिक सोहाए। मंगल बूंद सो रंग बनाए॥

बैठी सेज सुनार, भूखन साज सिँगार।
अब नख सिख का बरनौं, सभ सुंदर सुघर निसार॥

अब माथे गूंथे गज मोती। राहु केत मनो चंद कै जोती॥
दुओ दस घन बाद जस छावा। मध्य कौंध चमकै देखरावा॥
दामिन अस वह माँग सोहाये। केस घमंड घटा जस छाये॥
जस जमुना कै नदी अपारा। माँग बाँध जस सुघर सँवारा॥
सेत बंद जस माँग सोहाए। बिरहिन नैन परे तेहि पाए॥
जो न होत अस माँग अनूपा। डूबत नैन स्वरूप सरूपा॥
चमकै माँग माँग कै बानी। सेंदुर रकत रंग तहँ सानी।
पहले कहूँ माँग के रेखा। जमुना बीच सरसुती देखा॥
खरग धार वह माँग सोहाए। सेंदुर तहाँ रकत रँग लाए॥

माँग सोहावन सुख भरे, भाग अधिक तहँ दीन्ह।
राहु केत दुओ दस तहाँ, रब-कि किरन अस कीन्ह॥

केस सीस का करौं बखाना। नागिन देख सो ताहु लजाना॥
मुख पर परै जो होय बेकरारा। तपा सदा करै संसारा॥
कोऊ कहै अहै तुम राजा। सोहै तहाँ जीत चँद राजा॥
कोऊ कहै सो दई सोहावा। ... ...॥
कोऊ कहै स्याम अति मोहा। पुहुप परान आय तहँ सोहा॥
पुहुप छत्र महँ मग मद तारा। खींचें चतुर चित्र तहँ मारा॥
केस सीस मानो निसि कारी। सोहैं परत काल उजियारी॥
सो प्रभात पर भयो दिखाये। स्याम लाय नित हाथ छिपाये॥

बेनी गूंथ लिलाट तें, मनो नागिन मन लीन्ह।
मूँगा चौकी पीठ पर, तहाँ छाँड़ तेहि दीन्ह॥

अब लिलाट बरनौं सुख कारी। रब, ससि, निसि औ उँजियारी॥

केसर खोर... ...। ...

तब जबरैइल कहा तेहि बाता। रूप नैन तेहि दीन्ह बिधाता॥
देखहु जाय जुलेखा सोई। प्रेम न सकत अबिरथा होई॥
को अस पुरुष प्रेम करेई। सुफल प्रेम पग दिन दुख हरई॥
दूसर जनम जुलेखा लीन्हा। सो दयाल अब तुमकाँ दीन्हा॥
तुम पूरुख वह नार तुम्हारी। दूजै बार सो दई सँवारी॥
जेहि तें रहै सो मुरत हुलासा। रहहु जुलेखा के नित पासा॥
वह के सुख दयाल सुख मानै। दुखी भये परभू दुख मानै॥
वह अज्ञा तज किह्यो न काजू। वह समान यह जगत न राजू॥
ना अस रूप न प्रेम न ज्ञाना। दई दीन्ह सब्ह ताह सुजाना॥

सुन यूसुफ़ सिर नाइ के, कीन्ह व्याह कै चार।
बाजै लाग जो नौबत, नाच गौड़ झंकार॥

जो कुछ होत व्याह कै चारा। सो सब्ह कीन्ह राग रँग सारा॥
सुफल घरी भा व्याह सोहावा। दुखिया दान दरब बहुपावा॥
आन्यो भोग छतीसो जाती। भये किनआँ के लोग बराती॥
तब याकूब निकाह पढ़ावा। देख जुलेखा बहु सुख पावा॥
बाढ़ा प्रेम धन नार सोहागिन। धन्य अलख जिन कीन्ह सोहागिन॥
सेज्ज सँवार सो रंग सोहाए। दुलहिन व्याह दुलह पहँ आये॥
यूसुफ़ देख हिए हुलसाना। धन वह अलख दीन्ह जिन दाना॥
जस मैं रूप आदि निरमाया। तेहि तें जोबन रूप सोहावा॥
रहस नार कहँ कँठ लगावा। जनम जनम दुख बिरह नसावा॥

प्रेम जुलेखा कहँ मिट्यो, यूसुफ़ कहँ दुख दाह।
भई जुलेखा भगत अब, यूसुफ़ कहँ दुख दाह॥

दिन दुइ चार कीन्ह रस भोगू। लागी करै जुलेखा जोगू॥
मैं बिरथा यह जनम गँवावा। प्रेम बिपत मानुख सो लावा॥
काहे न प्रेम अलख तें लाऊँ। जेहिं तें मोख मुगत पुन पाऊँ॥
का मानुख मानुख का चाहै। चाहै अलख मुगत कर लाहै॥
निस दिन लाग तपस्या करै। जब जोगिन ते प्रीत छबि धरै॥
अलख काज छुट अवर न काजू। यूसुफ़ देख बाढ़ उर लाजू॥
निस बासर जप तप कै माहीं। एको छिन प्रभु बिसरै नाहीं॥
यूसुफ़ प्रेम हिये तें भागा। अलख पेम आठौ अँग जागा॥
कुछ यूसुफ़ कै चिंता नाहीं। कबहूँ न सोच करै मन माहीं॥

निसि दिन वह तप जप करैं, सेवरै अलख सुजान।
जेहि की दाया तें मिला, अब रूप बैस गुन ग्यान॥

यूसुफ़ नबी सो रहे अधीरा। बाढ़ै हिये प्रेम कै पीरा॥

जब लहि दरस देइ नहिं नारी । तब लहि यूसुफ़ रहें दुखारी ॥
वह निस दिन राखै तेहि प्रीती । भई जुलेखा आन सो रीती ॥
कहै कि सँवरो वह करतारा । अंत काल जो लावै बारा ॥
मैं मानुख का प्रीत हमारी । जोबन रूप रहै दिन चारी ॥
बहुर न यहि जोबन नहिं रूपा । सँवरहु पुरुख अकाल अनूपा ॥
यूसुफ़ नबी करें मनुहारी । होय न सुचित जुलेखा नारी ॥
कहा जुलेखा मोहिं न सतावहु । जाय सो ध्यान अलख महँ लावहु ॥
मैं जोबन अरु रूप उतंगा । देख लीन्ह कुछ रहे न संगा ॥

जाय फूल कुँभिलाय, जब रहै रंग न बास ।
तेहिं ते सँवरहु एक वह, जेहि के दुओ जग आस ॥

यूसुफ़ कहा सुनो अब प्यारी । जतन नाह नित रहौं दुखारी ॥
बिन देखे मोहिं कल न परई । दारुन बिरह कठिन दुख धरई ॥
दया करो औ दरसन देहू । मोहिं दुखित जिन रार करेहू ॥
प्रान तें अधिक तुम्हें मैं जानहु । रूप तुम्हार हिये महँ आनहु ॥
निस दिन रहे सो ध्यान तुम्हारा । मन अधीन जस ब्याकुल पारा ॥
जस तुम्ह बिरह अगिन ते जारा । तस अब करहु भोग सुख सारा ॥
मोहिं दुखित जिन राख्यो प्यारी । छया मोख दुख देहु निनारी ॥
दई बढावा हम तुम प्रीती । राखहु दया प्रेम की रीती ॥
दई देह यह रूप सोहावा । मोहिं कारन तुम्ह फिर कै पावा ॥

मोहिं तें होहु न निठुर अब, हिये लखहु अब और ।
कहै जुलेखा नाम सुनहु, दास तुम मोर ॥

एक दिन बहुत कहा नहिं माना । कहा जान मोहिं दास समाना ॥
जस आगे तुम्ह राखब प्रीती । राखहु दया हियें तें रीती ॥
अब सो अलख कर दीन्ह सँजोगू । देहु मिटाय बिछोह बियोगू ॥
जस दुख सबहि करै अब प्यारी । जाय भुलाय बिरह दुख भारी ॥
चालीस बरस कीन्ह तप जोगू । रात दिवस तुम छोह बियोगू ॥
करहु सेज सुख भोग बिलासा । निस दिन होय सो दुख कै पासा ॥
कोट बिनति कै यूसुफ़ हारा । चाहा हाथ गले माँ डारा ॥
कहा जुलेखा मोंहि ना भावै । अलख ध्यान छुट आन न भावै ॥
मोंहि को एक अलख कै आसा । बिरथा यह सुख भोग बिलासा ॥
दिना पाँच का रूप सिँगारा । होइह अंत देह तेहि छारा ॥

जोबन रूप सिँगार सब, सँघ जाय तेहि खोय ॥
काहें न सँवर सो अलख कहँ, जानो मुकत कब होय ॥

अब मोंहि का सुख भोग न भावै । मृत्यु भये कुछ काज न आवै ॥
यहि जग मा छुट जीवन थोरा । अब जिन करहु खोज तुम मोरा ॥

निसि दिन लेहु अलख कर नाऊँ। जेहिं तें मिलै सरग माँ ठाऊँ ॥
मैं अब निजु जान्यो तेहि साईं। जिन सबइ दीन मोहिं बरियाईं ॥
सो साईं तज अवर न भावे। बिरथा सुक्ख भोग चित लावै ॥
यूसुफ नबी बहुत समुझावा। एक जुलेखा कान न लावा ॥
तब बरबस उठि हाथ चलावा। भागि जुलेखा यूसुफ धावा ॥
दामन फार रहा तेहि हाथाँ। गई भाग वह दार के हाथाँ ॥
धन चरित्र वह अलख देखावा। यह कर करा सो वह कर पावा ॥

एक दिन हत्यो जुलेखा, फारा यूसुफ़ पाट।
अब यूसुफ़ के हाथ तें, धन कर दामन फाट ॥

यह बिधि रहै जुलेखा भागी, यूसुफ लगन रहै नित लागी ॥
निसि दिन रहै नार से ध्याना। नार हिये उपज्यो अब ज्ञाना ॥
राज काज कुछ ताहि न भावे। नित चित हित बनिता तें लावै ॥
बरबस करै नारि से भोगू। आवै ताह जाय ओ जोगू ॥
यूसुफ कहै भयो तोहि काहा, का भा तोर प्रीत ओ चाहा ॥
कहा सुनो सामी सब बाता। तब सों मोर मन तोहँ सो राता ॥
मूरत तोर हिये महँ आन्यो। छुट तोर प्रीत आन नहिं जान्यो ॥
तब सो अलख कहँ जान्हों नाहीं। मूरत तोर रहै हिय माहीं ॥
अब सो अलख हिये तर बासा। तेहि कर ध्यान हिये पर कासा ॥

एक हिये दुई प्रेम अब, कैसे कहो समाय।
जग सामी कै प्रीत अब, रहै हिये महँ छाय ॥

बरबस करै भोग सुख सारा। सुत तिन दिये तेहिं करतारा ॥
पाँच पूत दुई दुहिता भयो। जब तप करै प्रान पर छयो ॥
दुहिता सुत सामी नहिं भावै। नित उठ चित्त अलख से लावै ॥
धाई कोर रहे सुत बारा। औ प्रतिपाल करै करतारा ॥
करै जुलेखा निसि दिन जोगू। भावै ना तेहिं सुख औ भोगू ॥
धन करता कहँ खेल सोहावा। करै सोय जो वह मन भावा ॥
कबहुँ पुरुष कहँ नारि कैं चेता। कबहुँ नार कहँ पुरुष कै मीता ॥
वहिक पास यह मन नित आवै। जेहि ... ... सोहावै ॥

बारह बँधु के बंस पुन, भये बहुत अधिकार।
करै राज सुख भोग सब, बढ़ै बहुत परिवार ॥

भये याकूब सुखी मन माहाँ। निसि दिन करै पुत्र पर छाहाँ ॥
सब सुख देख कुटिल परिवारा। तब लहि आय पुन काल हमारा ॥
बिरथा तेज नबी जब भयो। सेवा का यूसुफ चलि गयो ॥
सभै पुत्र का पास बोलावा। कीन्ह बहुत उपदेस सोहावा ॥
औ यूसुफ कहै सब परिवारा। सो तब आप सिवलोक सिधारा ॥

जब याकूब देह तजि दीन्हा। तब यूसुफ बहु रोदन कीन्हा ॥
औ रोवें सगरो परिवारा। बारह पुत्र ? ... सारा ॥
रोवैं सभै सुतन की नारी। औ रोवें दुहिता पुन सारी ॥
दुहित पुत्र कै बंस सोहाये। रोय रोय सिर छार चढ़ाये ॥
भा अँदोर सभ नगर महँ, रोवें नर औ नार।
ऐसे पुरुष सो चलि बसे, को दूसर संसार ॥
रोई बहुत जुलेखा नारी। सँवर मुरत तज भई दुखारी ॥
यूसुफ पिता अन्हवावा। औ पुत्रन सभ साज बनावा ॥
चले साज कै पिता जनाज़ा। दुख बाजन घर-घर महँ बाजा ॥
मिसिर नगर महँ परै अँदोरा। नारिन करै रोट चहुँ ओरा ॥
औ यूसुफ़ का भा दुख भारी। रोवें बहुत सो छाँड़ डफारी ॥
छाड़ सो लोग कुटँब परिवारा। होय अकेल अब पिता सिधारा ॥
बहुत बंस कुछ काज न आए। अकसर पिता सो सरग सिधाए ॥
सुत बिन बंधु पुत्र ओ नारी। सब्ह तजि गयो गयो पैयारी ॥
कोऊ न सँघ जाय तेहि गैला। गयो अकेल छाड़ सब्ह खेला ॥
छिन बिछुरे दुख होई। छिन-छिन राख सकै नहिं कोई ॥
... ... सभ साथ।
... ... राख न सकै कोऊ हाथ ॥
गयों समूल छाड़ कै नाऊँ, रहा सूख सब्ह ठावें ठाऊँ ॥
यूसुफ़ नबी साज सब साजा। स्याम देस लै गये जनाजा ॥
अयस नाम याकूब कै भाई। एक सँग बिधि जनम गँवाई ॥
तेहि दिन अयस मरे तेहि देसा। ओ याकूब पहुँच परवेसा ॥
एकै संग वै दूनौं भाई। रहै सोय दुओ खुमार समाई ॥
एकै संग जनम वै लीन्हा। एकै संग प्रान तजि दीन्हा ॥
एकै संग रहै यक पासा। एकै संग गये कैलासा ॥
जगत धन्ध सब छाड़ कै, गय अकेल निज धाम।
लोग कुटुँब परिवार सब्ह, कोऊ न आयो काम ॥
दोउ पिता कै गत पत कीन्हा। मुरत अमोल छार रख दीन्हा ॥
खावा भोग ओ भूल अँदेसा। धंधा लाग करै सब देसा ॥
फूल चढ़ाय फिरे सभ लोगू। लागे खाय अन्न ओ भोगू ॥
महा सिद्ध जग रहै न कोई। दूसर कौन अमर जग होई ॥
यूसुफ नबी बहुत दुख माना। बेद भेद कों करे बखाना ॥
अब न पिता देखब जग माँहीं। कवन करै हमहि अब छाँहीं ॥
कहि तें दुख सुख बरन सुनाऊँ। केहि तें अपरम मरम सो पाऊँ ॥
कवन करै हम कौ उपदेसा। कवन सुनाइह अलख सँदेसा ॥

काटिय गाढ़ सो कवन हमारी। कूट बचन बरनै को भारी ॥
गाढ़ परे केहि सँवरब, कूट साँच उपदेस।
अब ना पिता को देखियत, गये सो कौने देस ॥
तब जबरैल सरग तें आए। यूसुफ़ कहँ सुठ बचन सुनाए ॥
करहु पिता कर अब संतोखा। जेहि तें होय दुऔ जग मोखा ॥
पैठो तुम सो पिता के ठाऊँ। सँवरहु सदा अलख कर नाऊँ ॥
औ सुख देहु करहु सुख सारा। पूजै तुम्हें सभै संसारा ॥
तुम का नबी अलख अब कीन्हा। बुद्धि सुद्धि सभ तुम कौ दीन्हा ॥
तब यूसुफ़ सभ नगर बोलावा। अलख सँदेस सो बरन सुनावा ॥
सभ जग आय सो सीस नवावा। औ सुख भयो मंत्र सभ पावा ॥
तुम सो अहो याकूब के ठाऊँ। हम आधार सो राउर नाऊँ ॥
जस वे बेद भेद बतलावहिँ। हिन्दु तुरुक कहँ राउर नाऊँ ॥
सभ जग सीस नवावा, दीन्ह नबी कहँ हाथ।
दीन्हा सभ सुख पूजा, अवर भये सब साथ ॥
भयो बिरिध बालक घस्यो हारा। घट्यो चाह और घस्यो परहारा ॥
रूप रँग बल बुध सुख खाँगा। यूसुफ़ मीच देव तन्ह माँगा ॥
उपज्यो क्रोध औ काम हेराना। कामिन देख सो नैन लजाना ॥
रह्यो न रूप सो सभ जग चाहा। रह्यो न बल जेहि करब बेसाहा ॥
रह्यो न केस भँवर अस कारी। रह्यी न दसन दाडिवँ जेहि हारी ॥
रह्यो न सरवन सुरत अमोला। रह्यो न सुंदर स्वभाव कपोला ॥
रह्यो न द्रग मृग खंजन भंजन। रह्यो न बानी कोकिल गंजन ॥
नार पुरुष नहिं आदर करहीं। नारि बिरिध कर नाउँ सो धरहीं ॥
जेहि के ओर चाहे चख हेरा। देख बिरिध सो अब मुख फेरा ॥
रहै न हाथ पावँ कै सोभा। जेहि का देख सभै जग लोभा ॥
रह्यो न रंग रूप वह, जेहि चाहे संसार।
कँवल बदन कुँभिलात, नित मनसा तब गा हार ॥
जो मन चाहत रँग सोहागा। सो सब ... ... ॥
जो मन चाहत उड़न खटोला। लागे ... नहिं ... डोला ॥
हँस अमोल जो सरवन सोहा। जा कहँ देख सती जग मोहा ॥
बिन पानी अब हँस पियासा। लखि सरवर मन भयो उदासा ॥
कहाँ गये बे दिवस सोहाये। रूप रंग दिन दिन अधिकाये ॥
अब दिन दिन वह रोब घटाहीं। बल बुध जाह सो जात हेराई ॥
रहे न सुंदर मुरत न मानी, ठौर ठौर रह गये निसानी ॥
गये रैन भूला सुख चाहू। भयो भोर उठ गयो बटाऊ ॥
मोती लर जस चमक बतीसी। सो सँग छाड़ भयो परदेसी ॥

रूप भाव नहिं रह गये, डार कंठ ले हाथ।
भूल बात सब चल बसे, गये झाड़ कै हाथ॥

हँस हँस फूल भुम्म खसि परैं। देख सकामिन रोदन करैं॥
फूले फूल भये पत झारा। यहै हाल अब होय हमारा॥
तब लहि मोर बात नहिं मानै। जब पत झार होय तब जानै॥
औ दयाल तुई सबूह कुछ दीन्हा। सब दाता सोई मोहिं कीन्हा॥
दीन्ह जनम मोर नबी के बारा। नबी के सुन नहिं मोर अधारा॥
वहै रूप सबूह जग उपराहीं। वहै . . ... जग माहीं॥
भाइन मोहिं कूप महँ डारा। नबी कृपा कर मोहिँ निसारा॥
बहू देस सब गाहक मोरा। बंद डार तुम कीन्ह बहोरा॥
भये राज बाढ़ा सभ भोगू। मात पिता कीन्हे संयोगू॥
भाई लोग सभ भये अधीना। पिता मिलाय सभै दुख दीन्हा॥
दीन्हा नार जगत उमराहीं। दीन्हा सुख संतति जग माहीं॥

सभ कुछ दीन्ह दयाल तोहिं, कछु इंछा अब नाँह।
करौ कूच अब जगत सें, करो सो महि पर छाँह॥

यहि जग मा जस कीन्हे दाया। वह जग करो अभय निधि माया॥
मुनि रिखि सिद्ध रहें जेहिं ठाऊँ। तहँ मोर अलख कहावहु नाऊँ॥
अब मोहिँ अवर न इंछा मोहे। यही जगत मन व्याकुल होये॥
अब तहँ चलूँ जहाँ कै आसा। रहौं सदा जेहि मँदिल उदासा॥
अब यह जग मोहिं तनिक न भावै। चलौ अंत जहँ सब कोउ जावे॥
अब दिन दिन अवगुन अधिकाई। गयो रूप जेहि जगत लुभाई॥
अब जीवन से भला सो मरना। रस धावन ... ...॥
तेहि तें बेग उठावहु मोहीं। देखहु पिता जो कियो बिछोही॥

भोर आय नियराया, लेउँ न रैन बसेर॥
ज ... ..., चलना तहाँ सबेर॥

पुन दस बरस जो यूसुफ़ जिया। सत्त सोभाव जगत महँ किया॥
धरम नीति सें कीन्ह सो काजू। दीन्ह सुधार दुखी कर काजू॥
दरब दान दुखिया कौ दीन्हा। नीत छाँह परजा पर कीन्हा॥
धरम नीत औ न्याव करेहीं। बेद भेद सब्ह कौ सुख देहीं॥
पुत्र सयान हिये सुख माहीं। मात पिता के सर परछाहीं॥
बेद भेद सब सुख निरमावा। बंधु बंस कहँ बेद पढावा॥
यूसुफ नबी कौ अमर न बारा। जेहि घर मां मूसै अवतारा॥
ता कों अलख नबी अस पावा। आद गरंथ तुरंत भेजावा॥
दीन्हा अलख बंस अधिकारा। बारह कुटी बैठ संसारा॥

बारह पुत्र के बंस वै, इसराईल कहाहिं ।।
मिसिर नगर, लों बसा अधिकाहिं ।।
पातसाह सब के सुत आवा। सो फिरोज़ जग माँह कहावा ।।
इबन अमी सुत कै सुत मूसा। डार दीन्ह जग जान मँजूसा ।।
सो पुन कथा अहै बिस्तारा। कहौं कथा यूसुफ़ कर सारा ।।
दसमें बरस आय जम राजू। यूसुफ़ नबी प्रान कै काजू ।।
कहा अलख जो आशा कीन्हा। चहौं प्रान तोर मैं लीन्हा ।।
यूसुफ कहा जो आज्ञा होई। तो सम लेउँ सीस पर सोई ।।
देख लेउ मैं दरस जुलेखा। तब हम करहु जो अवगुन लेखा ।।
तब जमराज कहा यह बाता। आज्ञा नाह लखो मुख राता ।।
अब तुम तजो प्रेम वहि केरा। करहु प्रेम जो करहि निबेरा ।।
बहुत भाँति बिनती कै हारा। पाव न जुलेखा रूप निहारा ।।
यूसुफ चाहा बहुत मन, लखै जुलेखा रूप ।
पै जमराज न माना, अज्ञा अलख अनूप ।
जब लहि आय जुलेखा पासा। तब लहि फूल गयो तजि बासा ।।
आय नार जो पीव के तीरा। दखै परा सो सून शरीरा ।।
पुन निहार यूसुफ कहँ देखा। रह्यो न रूप रंग न रेखा ।।
मूँदे नयन खुलैं अब नाहीं, बैन हरे मुख बोलत नाहीं ।।
हाथ पाँव मुख सरवन नासा। सब तें हरत गए जस बासा ।।
सून सरीर परा बिन जीऊ। ठहक मार देखहि मुख पीऊ ।।
घँसक अहै हिय माँह समाना। गयो छांड़ जस देहँ सें प्राना ।।
मुरझ रहै नार बस फिरै। ... ... ।।
नार देख पिउ कर तन सूना। बिना प्रान सभ पिंड बिहूना ।।
कौन हंस सरवर हत्यो, केहि दिस गयो हेराय ।
जेहि पुन सून सरीर मै, काहु न कहा सोहाय ।।
परी जुलेखा होय बिन जीऊ। बहुर न देखा आयन पीऊ ।।
तब नहलाय साज सभ कीन्हा। लै गये सौंप घर कहँ दीन्हा ।।
छार मिलाय सो छार उड़ावा। थाती सौंप लोक फिर आवा ।।
जो जाकर तेहि सौंपा सोई। साथी संग रहा नहिँ कोई ।।
तीन दिवस दुख रह्यो अपारा। रहीं जुलेखा अतिहि बेकरारा ।।
पिव गवनब कछु जानत नाहीं। रहै सोनार सूख पट माहीं ।।
तिसरे दिवस भोर होय गयो। तब पुन चेत जुलेखा भयो ।।
देखा खोल नैन चहुँ ओरा। कहा कि आज भयो कस भोरा ।।
पिउ जागत सब मोहिँ जगावै। आज सखी कहुँ दिस न आवै ।।
अब मैं आज भोर कै जागी। अयो पीऊ कस अकसर भागी ।।

पिऊ कर मुख नहिं देखहु आजू। मोहिं तज अजहूं करत न काजू॥
जब लगि रहौं सेज पर, कंत न छाँड़हि मोंह।
अब राज त्याज कहाँ गयो, लाल सो मोहिं बिछोह॥

कहा सखी उन सरग सिधारे। हम काँ बिरह आग महँ जारे॥
सुन यह बात सो खाई पछारा। फिर फिर सीस भुम्म पर मारा॥
जहाँ सो पीउ होय निहि चिंता। तहँ लै चलो जहाँ मोर मिंता॥
चलै सखी सँग व्याकुल नारी। जहाँ कंथ सोवै सो नारी॥
तेहि के ढहर जाय सिर नावा। परथम केस तोर छितरावा॥
छितराइस मोतिन कै हारा। जूड़ा टूक टूक कर डारा॥
बार खसोट तुरंतहि डारा। अभरन तोर बहु सह सिंगारा॥
चूरी फोर सीसन तब फोरा। भार मिलाय दीन्ह वह चूरा॥
परै ढेर पर भार उड़ावहिं। बिपत-बिपत मुख बैन सुनावै॥
नैन काढ़ दोउ लिहिस, दीन्हेसि ढेर पर डार।
जेहि नैनन पिउ तोहिं लखैां, देखैां काह निहार॥

कहा कंत तुम कहँवा गयऊ। नैन बैन मुख सून सब भयऊ॥
गात गुलाब देख मुरभाई। सो तन भार लीन्ह अब खाई॥
जेहि मुख बोलत अमिरित बानी। अमृत बोल वे कहाँ हेरानी॥
नित मो प्रीतम करत जो दाया। कस अब लाल भयो निर्माया॥
मैं पापी तुम्ह सँग न लागी। अहौं करम की सदा अभागी॥
मोहिं छाड़ कत कंत सिधारे। नैन अेाट न करत बयारे॥
जब जमराज प्रान तोर लीन्हा। निठुर लाल मोहिं खबर न दीन्हा॥
मैं जम तें अस करत निहोरा। लिह्यो लाल सँग प्रान सो मोरा॥
एकहु छिन न मोहिं बिसारेहु। चलत बार मोहिं कसन पुकारहु॥
नैन अेाट कहुँ होत रहु, मोहिं ते आज्ञा लेहु।
एसै कंत बिदेस कहँ, मोर न खोज करेहु॥

चालिस बरस जो जोग कमावा। तब प्रीतम हम तुम कौ पावा॥
दरब अरथ सब देहु लुटाई। जोबन रूप अनूप गँवाई॥
कीन्ह दया तब अलख गोसाईं। दीन्हा रूप सोय सुख माहीं॥
तब महिमा मैं तोर न जानी। निसि-दिन रह्यों हिये अभिमानी॥
सो अब कंत कहाँ तोहिं पाओं। चरन लाय सिर तोहिं मनाओं॥
तुम्ह नित करो मोर मनुहारी। मैं न करौं कुछ कान तुम्हारी॥
का अब करहुँ मनाऊँ कैसे। बिनती करहुँ कीन्ह तुम्ह जैसे॥
तुम्ह साईं मैं चेरी मोरी। का अब करहुँ अहौं मति थोरी॥
नित सिर पर राख्यो तोर चरना। का अब करहुँ दई कर करना॥

सात बरस बँद राख्यों, लायो दोख न मोहिं ।
औगुन मोर छिपायो, कह्यो न तुम कछु मोहिं ॥

सात बरस राख्यों बँद माहीं । मन महँ रोस कियो कुछ नाहीं ॥
चलत बार तोर रूप न देख्यों । बचन न सुन्यों न बयन बिसेख्यों ॥
सो लालन तजि रहे अभागी । गई लाल मैं सोय न जागी ॥
जब तोहिं का बाहर बहिराए । बैरिन नींद कहाँ ते आए ॥
देख्यों जाग मँदिर तोर सूना । नगर कोट घर भयो बिहूना ॥
आयो फूल छाँड़ फुलवारी । काँटा रह्यो बाग महँ झारी ॥
गयो कंत सो बेग सुभागा । पाछे रहयो कलंक सो लागा ॥
दिह्यो उत्तर मोहिं कंत सोहाई । फाटै भुम्भ अब जाऊँ समाई ॥
यह कलंक अब दिह्यो मिटाई । उठ कै लाल लिह्यो सँग लाई ॥

ऐसो रतन मिला जग, छार समान्यो आय ।
धृक जीवन जो लाल बिन, जग माँ जियत रहाय ॥

यह घर बार सो देस तुम्हारा । भयो सून सब जग अँधियारा ॥
कवन बताइहि भेद करम था । भूलै कवन देखाइहि पंथा ॥
को तुम बिन यह भार उठाई । नेम धरम दिन-दिन अधिकाई ॥
अब तुम अस जग उपजा नाहीं । कौन सो करै दुखी परछाहीं ॥
तुम्ह समान जग फेरि न आई । को अस रूप ज्ञान बुध पाई ॥
भरम नींद रह्यो पिउ सोई । नार सो उत्त चेत न कोई ॥
तुम निहचिंत भयो पिव जाई । सोच हमार तज्यो सुख दाई ।
सभै लोग हैं यह संसारा । तुम्ह बिन कोऊ न अहै हमारा ॥
केहि-क देख मन हुलसै पीऊ । तृखा बुझाय पियासै जीऊ ॥

वह बसंत वह पावस, वहै फूल फल सोय ।
सब अपने रितु देखब, तुम्हें न देखै कोय ॥

वहै मंदिर औ सरवर तीरा । करहिं धमार सदा वह तीरा ॥
वहै फूल फूले चहुँ ओरा । वह चातक रँग खंजन मोरा ॥
वहै पावन जो फिर फिर आवै । वहै दिवस वह रैन दिखावै ॥
एक न तुम जेहि बिन संसारा । होयगा तीन भवन अँधियारा ॥
वह तरुवर वह पात सहावन । भावन एक बिना मन भावन ॥
एक दिन हत्यो सो भाग सोहावा । जेहिं दिन तोहि कहँ नायक लैआवा ॥
भये धूम सम मिसिर के देसा । उठ धावा सभ रंग नरेसा ॥
बैठ्यो नील करै असनाना । नर-नरेस सब्ह देख लोभाना ॥

यक दिन आज सो देख्यों, सो मुख छार छिपान ।
का भा रूप अनूप वह, जेहि संसार लुभान ॥

सपने देख बिमोह्यों तोहीं । उपजा बिरह तेज लखि तोहीं ॥

आयो मिसिर कंथ तोहिं लागी । कह्यों कि का गुन कीन्ह अभागी ॥
प्रेम हमार साँच बिधि कीन्हा । पाहन स्वरूप सो हम कहँ दीन्हा ॥
जब प्रीतम हम सें मुख मोरा । जीवन भयो दरस लखि तोरा ॥
चालीस बरस जोग मैं कीन्हा । सुन कै नाँव सबै कुछ दीन्हा ॥
जब तोर नाउँ सुनावै कोई । पावे लाख देऊँ जो होई ॥
बीस बरस रह्यों दरस अधारा । बीस बरस सुन नाम सँभारा ॥
अब तोर दरस हरा भुव माहीं । नाऊँ तुम्हार सुनब अब नाहीं ॥
देखहुँ दरस सुनहुँ नहिं नाऊँ । केहि के अधार रहौं यह ठाऊँ ॥

ना पिउ बोल सुनावहु , न अब दरसन देहु ।
करहु दया पति राखहु , यह जीवन आपन लेहु ॥

अब पत रहै जो जाय पराना । धृक जिव तुम बिन पुन छिन माना ॥
जिवन भला जब लहि पिउ होई । बिना पीव धृक जीवन सोई ॥
पिव बिन सून सभै संसारा । सुख संपत सभ पिव बिन जारा ।
बिन पिव कोई सँघाती नाहीं । केहि बिधि रहे प्रान घट माँहीं ॥
जरै जाय सुख संपत साजा । बिना पीउ आवै नहिं काजा ॥
पिव लै सँग जो होय भिखारी । बिन पिउ सुख संपत बलिहारी ॥
पिव के सँग ... ... । बिना पीव सुख बिलसै नाहीं ॥
तुम बिन कंत जगत अँधियारा । भयो उजार सभै संसारा ॥
निठुर प्रान जो अब लहि रह्यो । पाहन हिया निठुर दुख सह्यो ॥

खाय पछार जो छार पर , करै आह एक बार ।
पंछी प्रान सो उड़ गयो , रहे छार महँ छार ॥

यूसुफ निकट राख तेहि दीन्हा । बिरहिन प्रेम समापत कीन्हा ॥
धन वह सती प्रेम चितलावा । आद अंत लहि प्रेम लगावा ॥
जब लहि जियै प्रेम रस चाखै । पिव सँग गये प्रान पुन राखै ॥
जो कुछ अहै जो जीवन माहीं । मरै प्रांत निठुर कुछ नाहीं ॥
रिखि मुनि सिद्ध तपा ओ जोगी । प्रेम पुरुष ओ बिरह बियोगी ॥
पंडित कवी और सज्ञाना । मीर अमीर राव सुलताना ॥
रूपवंत गुनवंत सोहाई । तेजवंत बलवंत बनाई ॥
ऐसे लोग रहै ना पाये । केहि कारन यह जग माँ आये ॥

सब आए यहि जगत महँ , कीन्ह सो गुन बिस्तार ।
कोउ रहे पुनि आवा , खाय लीन्ह यह छार ॥

उपसंहार

उन तें गन कहै सँवर 'निसारा' । उठा रोय मनमहँ एकबारा ॥
जब ते जनम लीन्ह जग माहीं । छुट दुख और सो देख्यों नाहीं ॥
जब लहि जिऊँ पिऊँ दुख नीरा । माथहिं दीन्ह सो दुख कै पीरा ॥
अवर दुःख मैं सब कुछ सहा । भयो एक दुख बाउर महा ॥
पुत्र अनूप दई मोहिं दीन्हा । रूप अनूप बुध आगिर कीन्हा ॥
बाइस बरस रहा जग मांहीं । छुट विद्या उन जान्यों नाहीं ॥
नाम लतीफ़ अनूप सोहावा । सब गुन ज्ञान दईं अधिकावा ॥
बात भुलात नहिं पुत्र सोहावा । सायर सुधर सो ग्रंथ बनावा ॥

बाइस बरस के बयस महँ , छाड़ दीन्ह उन देह ।
सुरत अनूप गुलाब से , जाय मिले पुन खेह ॥

तब मैं भयऊँ सो बाउर भेसा । करे सदा अपकाल अँदेसा ॥
सबह औषध कीन्हा उपचारा । बिनति किह्यों सो बारम बारा ॥
जब तें लतीफ़ कर मरम बिसेख्यों । तब संपत अबिरथा देख्यों ॥
तब मैं कहा पुत्र से रोई । किरत सोहाय नहीं अब कोई ॥
मोहिं का जान पड़ा जग माहीं । कोइ ठाकुर अेा सूरत नाहीं ॥
तब उन कहा कहै का ताता । हमकां दोख होय यह बाता ॥
अहै सो सत्त एक करतारा । वह कर खेल सो अहै अपारा ॥
तुमको दोख होब अब ताता । दइ सुखियां कहँ दोख बिधाता ॥
जो कुछ ... ... मारा । सो पुन अहै को मेटन हारा ॥

जेहि दुख तें अकुलाव तुम , करहु पिता संतोष ।
बड़े लोग सब दुख सहै , होय मुगत गत दोख ॥

जेहि लहि नबी भये जग माहीं । छुट दुख और सो देखा नाहीं ॥
काहुँ कहै कवि लास निसारे । रोवत आद बीन कै सारे ॥
काहु बाँध अगिन महँ डारा । काहू अँध कीन्ह अँधियारा ॥
काहु कहँ आरसी चीरा । काहु कहँ सर तज्यो सरीरा ॥
काहु मीन के मुख महँ डारा । काहू कूप डार निसारा ॥
जेहि के लाग रच्यो संसारा । तेहि का दुख वार न पारा ॥
अेा श्याम दुख सब्द जगजानी । जब लग वै सो दुख निभानी ॥
जहिँ लहिं भये सिद्ध अवतारा । सभ का दुख दीन्हों करतारा ॥
कोऊ न यह जग दुख तें बाँचा । सहै आँच सो कुंदन साँचा ॥

रामचंद्र जो दुख सह्यो । सो जान्यो सब कोइ ॥
मानुष देह धर सभ, दुख तें व्याकुल होइ ॥
तेहि तें दुखित होइह जिन ताता । करहु न अब रोय अपघाता ॥
संत साधु कहँ वह दुख दई । कनक जराइ खरा कर लई ॥
अब तुम करहु मोर संतोखा । देहु असीस जो पाऊँ मोखा ॥
यह जग मा सुठ जीवन थोरा । अंत काल सुठ होइय मोरा ॥
कोउ दिन दस आगे कोउ पाछे । है नित काल सो काछे-काछे ॥
उन लोगन कै मेट न होना । होने हुए, सो हुए न होना ॥
देखउ यह जग को गत ताता । दई जनम भर मरन बिधाता ॥
जें कोइ जनम लीन्ह जगमाहीं । सो जान्यो एक दिन है नाहीं ॥
जनम साथ यह मरन है, मरन साथ गत मोंख ।
हिये बोल न गाँठहु ; करहु पिता संतोख ॥
कहि यह बात जियन मुख मोरा । गयो प्रान तजि प्रान सो मोरा ॥
सब सँवरहुँ वह लाल अमोला । हिया फाट मुख आव न बोला ॥
जस याकूब सो पुत्र बिछोहा । रह्यों प्रान सो निठुर बिछोहा ॥
तस यह प्रान निठुर अब रहे । यूसुफ बिरह नेह निर्दहे ॥
यूसुफ सभ कहँ पुत्र सोहावा । कहँ अस पुत्र सो जगभा आवा ॥
निसि दिन करै तपस्या जोगू । जब तप करै चहै सुख भोगू ॥
जाय जोग महँ रैन बहाई । तरुन बंस महँ बिरिध सोहाई ॥
कई ग्रंथ अनूप बनावा । जिन देखा चख नीर बहावा ॥
सँवर रूप गुन ज्ञान सोहावा । रात-दिवस जल चख बरसावा ॥
हिया बजर का भयो हमारा । को लै गयो सो लाल हमारा ॥
गयो लाल केहि देस कहँ, जेहि कै मिलै न खोज ।
होय सोइ निहिच्चिन्त, सो देइ हमें दुख रोज ।
सबै गये हौं रहा अकेला । पहिले पढहिं मोह पर हेला ॥
तेहि पाछें मोहि छाड़ सिधारा । ... ... ॥
यह जग छाड़ सोई निहचिंता । गये पैढ और सागर मीता ॥
जब सँवरौं वह सभै सोहाये । छाती फाट बेहर न जाई ॥
कहाँ गये औ कहाँ ते आये ; जान न परे भेद निरभाये ॥
सँवर सँवर वै लोग सुजाना । रोवें निस दिन होयँ अज्ञाना ॥
अपने मीत्र सँवर सुख पायहु । होय बोध मनका समुझावा ॥
वै सभ गये तुम्हीं यह देसा । केहि दिन कर अब करहुँ अँदेसा ॥
तुम का अंत वहै नहिं जाना । तेहि का कौन सोच पछिताना ॥
जेहिं पंथ सिधारें, सभैं बटाऊ लोग ॥
चलहु सुचित जेहि मारग, और न जोग न भोग ॥